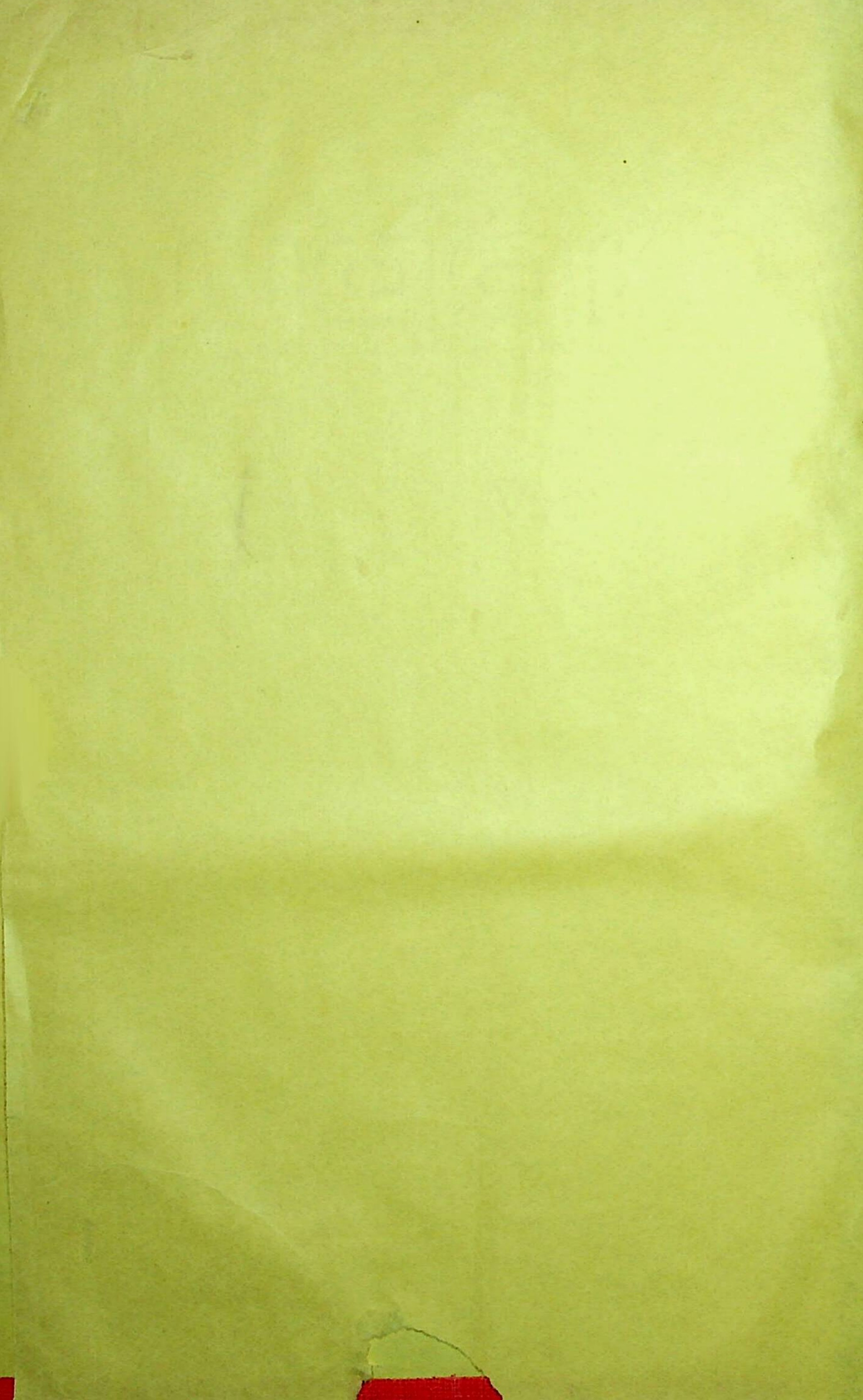


भूमिका।

यो देवः सचराचरेषु रमते रामाधिपो रासदो
लोकानां सुखदायको धृततनुर्धन्यो धरेशो धनी।
नित्यानन्दरतो निरामयपदो नारायणो ह्यव्यय-
स्तं वन्दे सुरवृन्दवन्दितपदं स्वाभीष्टसिद्ध्यै विभुम् ॥ १ ॥
प्रणम्य सच्चिदानन्दं सर्वाधारं निरामयम्।
सामुद्रिकस्य शास्त्रस्य भूमिकेयं वितन्यते ॥ २ ॥

उस सर्वजननायक महासुखविधायक परानन्ददायक सर्वात्मा परमात्मा को कोटिशः धन्यवाद दिया जाता है कि जिसकी परिपूर्ण कृपा से यह सामुद्रिकशास्त्र तैयार होकर अवनिमण्डल में अवतीर्ण हुआ है जिसके अन्वेषण करने में बाईस वर्ष व्यतीत हुए हैं क्योंकि इस कराल कलिकाल के आजाने पर पुरातन सामुद्रिकशास्त्र का लोप हो गया था जहां कहीं देखने में आता था वहां पूर्णरूप से नहीं देख पड़ता था इस कारण राजा-महाराजा-ताल्लुकेदार-जिमींदार-गुणगणमण्डित-पण्डित और सर्वसाधारण जनों के अवलोकनार्थ भविष्यपुराण, गरुड़पुराण, स्कन्दपुराण आदि, तथा वाल्मीकीय रामायण व अंगरेज़ी-फ़ारसी, बंगला व महाराठी आदिकों का सारांश लेकर यह सामुद्रिकशास्त्र बनाया गया है यह पुस्तक चार अङ्कों में विभक्त है, प्रथमाङ्क में पुराणों का संग्रह किया गया है जिसमें नखसे लेकर शिखापर्यन्त नरनारीगणों के लक्षण, छायाविचार, तौल का विचार, राजयोगाध्याय और आयुर्दाय का विचार वर्णित है, द्वितीयाङ्क में करतलों के बावन उदाहरण वर्णित हैं; तृतीयाङ्क में भालरेखा के अनेकानेक उदाहरण आदर्शित हैं और चतुर्थाङ्क में स्वप्नाध्याय, दुःस्वप्नाध्याय, मृत्युसूचक शकुनाध्याय, शारीरकाध्याय और शिवस्वरोदयाध्याय वर्णित है इन विषयों से संयुक्त पुस्तक को सर्व महोदयगणों के करकमलों में समर्पण कर आशा रखता हूं कि इसके संशोधन आदि में कहीं प्रमाद पाया जाता हो उसे विद्वान् लोग क्षमा प्रदान करेंगे—

गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः ॥ १ ॥

नवलकिशोरप्रेस
प्रधानपण्डित,
पण्डितशङ्कधरशर्मा.

अथ सामुद्रिकशास्त्रस्य पूर्वार्द्धे प्रथमाङ्कस्य सूचीपत्रम्।

इति पूर्वार्द्धे प्रथमाङ्कस्य सूचीपत्रम् ॥



अथ सामुद्रिकशास्त्रस्य

पूर्वार्धो व्याख्यायते ॥

नत्वा देवं गणपममरैरग्रपूज्यं त्रिलोक्यां
भाषाभाष्यं विशदमनिशं तस्य सामुद्रिकस्य ।
कुर्वे स्माहं सकलविदुषां चित्तकञ्जालिलील-
मल्पज्ञानाम्बहुसुखकरं बोधगम्यं नितान्तम् ॥ १ ॥

तीनों लोकों में देवताओं से प्रथम पूजनीय सुखदायक गणनायक को प्रणामकर उस सामुद्रिक शास्त्र का भाषाभाष्य जोकि निरन्तर निर्मलरूप से रहता हुआ समस्त विद्वज्जनों के चित्तरूपी कमलों में भौंरे के समान लीला करता व अल्पज्ञाताओं को बहुतसा सुख करता हुआ अत्यन्त बोधगम्य कहाता है उसको मैं करता हूं ॥ १ ॥

स० । गणनायक कोहि प्रणाम करौं पद माथ धरौं नितही अभिरामा ।
मुनिनारदवन्द्यसुशारदको निजशीश लचाय लहौं मनकामा ॥
यह सागरभाषित शास्त्र अनन्त अपार कह्यो द्विजशक्ति ललामा ।
जनकाज विचारि रचौं अनुवादको साज सचौं सबहीं सुखधामा ॥ १ ॥

कैलासाख्ये शुभे धाम्नि शिवा शंकरमब्रवीत् ।
नृनारीलक्षणं ज्ञातुमभिलष्ये दयानिधे ! ॥ १ ॥
पार्वत्या वचनं श्रुत्वा प्रहस्य जगदीश्वरः ।

प्रोवाच सुरशार्दूलो महादेवो महेश्वरः ॥ २ ॥
धन्यासि कृतपुण्यासि मान्यासि मम वल्लभा ।
नृनारीलक्षणं श्रोतुं यतो जाता मतिस्तव ॥ ३ ॥
तदहं संप्रवक्ष्यामि नाम्ना सामुद्रिकं प्रिये ।
यस्य विज्ञानमात्रेण कुशलो जायते नरः ॥ ४ ॥

कैलासनामक शुभदायक मन्दिर में शिवाजी ने शंकरजी से कहा कि हे दयानिधे! नरनारियों के लक्षणों को जानने के लिये मैं आपसे अभिलाषा करती हूं ॥ १ ॥ पार्वती जी का वचन सुनकर सुरश्रेष्ठ जगदीश्वर महेश्वर महादेवजी हँसकर बोले ॥ २ ॥ कि तुम धन्य हो व तुमने पुण्यों को किया है व मान्य होकर मेरी प्यारी हो क्योंकि नरनारियों के लक्षणों को सुनने के लिये तुम्हारी मति उपजी है इसलिये अहो प्रिये ! उस सामुद्रिक नामक शास्त्र को मैं भलीभांति कहूंगा जिसके विज्ञानमात्र से मनुष्य प्रवीण होजाता है यानी नरनारीलक्षणों को कहने के लिये समर्थ होता है ॥ ३ । ४ ॥

अथ तावत्पुरुषाणां लक्षणान्याह—

उन्मानमानगतिसारमनूकमादौ
स्नेहस्वरप्रकृतिवर्णससन्धिसत्त्वम् ।
क्षेत्रं मृजां च विधिवत्कुशलोवलोक्य
सामुद्रविद्वदति यातमनागतं च ॥ ५ ॥

सुदक्ष सामुद्रिक शास्त्रवेत्ता दैवज्ञ विद्वान् पहिले मनुष्यकी देहमें उच्चता, परिमाणता, गति, बल, मुखाकृति, चिकनई, स्वर, स्वभाव, वर्ण, सन्धिसमेत सत्त्व, क्षेत्र और लावण्यता को विशेषता से देखकर गत व अनागत शुभाशुभ को कहै ॥ ५ ॥

पादलक्षणमाह—

अस्वेदनौ मृदुतलौ कमलोदराभौ
श्लिष्टांगुली रुचिरताम्रनखौ सुपार्ष्णी ।
उष्णौ शिराविरहितौ सुनिगूढगुल्फौ
कूर्मोन्नतौ च चरणौ मनुजेश्वरस्य ॥ ६ ॥

---

१ अस्वेदितौ मृदुतलौ कमलोदरसन्निभौ । श्लिष्टाङ्गुली ताम्रनखौ पादावुष्णौ शिरोज्झितौ । कूर्मोन्नतौ गूढगुल्फौ सुपार्ष्णी नृपतेः स्मृतौ ॥

जिसके चरण पसीनारहित, कोमल तलवेवाले होकर कमलोदर के समान हों व जिनमें परस्पर अँगुलियां लपटी हों व मनोहर लालवर्णवाले नख हों व अच्छी एँड़ियां हों व गरम होकर नसों से रहित हों व बड़े छिपे हुए गण्ठोंवाले होकर कछुये के समान ऊंचे हों तो वह प्राणी मनुष्यों का स्वामी होता है यानी राजपद को पाता है ॥ ६ ॥

शूर्पाकारविरूक्षपाण्डुरनखौ वक्रौ शिरासन्ततौ
संशुष्कौ विरलाङ्गुली च चरणौ दारिद्र्यदुःखप्रदौ ।
मार्गीयोत्कटकौ कषायसदृशौ वंशस्य विच्छित्तिदौ
ब्रह्मघ्नौ परिपक्वमृद्द्युतितलौ पीतावगम्यारतौ ॥ ७ ॥

जिसके दोनों पैर सूप के समान होकर विशेषता से रूखे हों व जिनमें पीले नख हों व टेढ़े होकर नसों से व्याप्त हों व भली भांति सूखे होकर विरल अँगुलियोंवाले हों तो वह प्राणी दरिद्र व दुःख को भोगता है यानी उक्तचरण दरिद्रता व दुःख को देते हैं व जिसके पैर बड़े हों तो वह अत्यन्त दूर पथमें गमन करता है व जिसके दोनों पैर कषाय वर्ण वाले हों तो उस प्राणी के वंश को विनाशते हैं व जिसके पैर पकी हुई मिट्टी की कान्ति समान तलवोंवालेहों तो ब्राह्मणों को नाशते हैं यानी वह प्राणी ब्राह्मणों का मारनेवाला होता है व जिसके पैरतल पीले हों तो वह प्राणी अगम्या रमणी में आसक्त होता है ॥ ७ ॥

जङ्घलक्षणमाह—

प्रविरलतनुरोमवृत्तजङ्घाद्विरदकरप्रतिमैर्वरोरुभिश्च ।
उपचितसमजानवश्च भूपा धनरहिताःश्वसृगालतुल्यजङ्घाः ॥ ८ ॥

जिनकी जङ्घायें विरल व थोड़े रोमों से आवृत होकर गोलाकार होवें व जिनकी ऊरु (पतली जांघें) हाथी की सूंड़ के समान होवें व दोनों जानु (घुटुनू) बड़े होकर परस्पर समान होवें तो वे प्राणी राजा होते हैं व जिनकी जङ्घायें कुत्ते व सियार के समान होवें तो वे प्राणी धनरहित यानी दरिद्री होते हैं ॥ ८ ॥

---

१ सूर्पाकारौ विरूक्षौ च वक्रौ पादौ शिरालकौ । संशुष्कौ पाण्डुरनखौ निःस्वस्यविरलाङ्गुली । मार्गीयात्कटकौ पादौ कषायसदृशौ तथा । विच्छित्तौ चैव वंशस्य ब्रह्मघ्नौ पङ्कसन्निभाविति ॥

रोमलक्षणमाह—

रोमैकैकं[1] कूपके पार्थिवानां द्वे द्वे ज्ञेये पण्डितश्रोत्रियाणाम् ।
त्र्याद्यैर्निस्स्वा मानवा दुःखभाजः केशाश्चैवं निन्दिताः पूजिताश्च ॥९॥

जिनके रोम कूप में एक २ रोमा होवे तो वे प्राणी राजा होते हैं व जिनके रोमकूपों में दो २ रोमा होवें तो वे प्राणी पण्डित व वेदपाठी होते हैं व जिनके रोमकूपों में तीन २ व चार २ रोमा होवें तो वे मनुष्य धनरहित होकर दुःखभागी होते हैं ऐसे ही जिनके मस्तक में केश (बाल) होवें तो वे प्राणी त्रैलोक्यपूजित व निन्दित होते हैं ॥ ९ ॥

जानुलक्षणमाह—

निर्मांसजानुर्[2]म्रियते प्रवासे सौभाग्यमल्पैःप्रथितैर्दरिद्राः ।
स्त्रीनिर्जिताश्चापि भवन्ति निम्नै राज्यं समांसैश्च महद्भिरायुः॥ १० ॥

जिसके घुटनू मांस से रहित होवें तो वह प्राणी परदेश में मरता है व जिसके घुटनू अल्प मांसवाले होवें तो वह प्राणी सौभाग्यशाली होता है व जिनके घुटनू चौड़े होवें तो वे प्राणी दरिद्री होते हैं व जिनके घुटनू गहरे होवें तो वे प्राणी स्त्रियों से जीते हुए होते हैं व जिनके घुटनू मांसल होते हैं वे राज्य को पाते हैं व जिनके घुटनू बड़े भारी होते हैं वे दीर्घायु कहाते हैं ॥ १० ॥

लिङ्गलक्षणमाह—

लिङ्गेऽल्पे धनवानपत्यरहितः स्थूले विहीनो धनै-
र्मेढ्रे वामनते सुतार्थरहितो वक्रेऽन्यथा पुत्रवान् ।
दारिद्र्यं विनते त्वधोल्पतनयो लिङ्गे शिरासन्तते
स्थूलग्रन्थियुते सुखी मृदुकरोत्यन्तं प्रमेहादिभिः ॥ ११ ॥

अब लिङ्ग का लक्षण कहते हैं—कि जिसका लिङ्ग छोटासा होता है वह प्राणी धन-वान् होता है व जिसका लिङ्ग मोटा सा होता है वह सन्तानों से रहित होता है व जिसके

---

१ द्वे द्वे रोमे पण्डितानां श्रोत्रियाणां तथैव च । रोमत्रयं दरिद्राणां रोगी निर्मांसजानुकः महादारिद्र्यजं दुःखं भुंक्ते रोमचतुर्थके ॥

२ ऊरवो जानवस्तुल्या नृपस्योपचिताः स्मृताः । निर्मांसजानुस्सौभाग्यमल्पं निम्ने स्त्रियाः । विकटैश्च दरिद्राः स्युः समांसैराढ्य एव चेति ॥

लिङ्ग बायें तरफ़ झुका हो तो वह प्राणी धनरहित (दरिद्री) होता है व जिसका लिङ्ग टेढ़ा हो तो वह सन्तान व धनसे रहित होता है और जिसका लिङ्ग टेढ़ा न हो तो वह पुत्रवान् होता है व जिसका लिङ्ग नीचे तरफ़ लचा हो तो वह प्राणी दरिद्र को भोगता है व जिसका लिङ्ग नसों से घिरा हो तो वह प्राणी थोड़े सन्तानोंवाला होता है व जिसका लिङ्ग मोटी गाँठों वाला हो तो वह प्राणी सुखी रहता है और जिसका लिङ्ग ढीलासा हो तो प्रमेह, पथरी आदि घोर रोगों से उस प्राणी को विनाश करता है यानी वह प्राणी प्रमेहादि रोगों से पीड़ित होकर मरजाता है ॥ ११ ॥

लिङ्गवृषणमूत्राणां लक्षणमाह—

कोषनिगूढैर्भूपा दीर्घैर्भग्नैश्च वित्तपरिहीनाः।
ऋजुवृत्तशेफसो लघुशिरालशिश्नाश्च धनवन्तः ॥ १२ ॥
जलमृत्युरेकवृषणो विषमैः स्त्रीचञ्चलः समैश्च क्षितिपः।
ह्रस्वायुश्चोद्बद्धैः प्रलम्बवृषणस्य शतमायुः ॥ १३ ॥
रक्तैराढ्या मणिभिर्निर्द्रव्याः पाण्डुरैश्च मलिनैश्च।
सुखिनः सशब्दमूत्रा निःस्वा निःशब्दधाराश्च ॥ १४ ॥
द्वित्रिचतुर्धाराभिः प्रदक्षिणावर्तवलितमूत्राभिः।
पृथ्वीपतयो ज्ञेया विकीर्णमूत्राश्च धनहीनाः ॥ १५ ॥

जिनके कोष (अण्डकोष) छिपे हों यानी मांस से घिरे हों तो वे प्राणी पृथ्वी के पति होते हैं और जिनके कोष दीर्घ होकर भग्न होगये हों तो वे प्राणी धन से हीन रहते हैं व जिनका लिङ्ग सीधा होकर गोलाकार हो व जिनका लिङ्ग छोटा सा होकर नसों से व्याप्त हो तो वे प्राणी धनवान् होते हैं ॥ १२ ॥ जिनके एक ही वृषण (अण्ड-कोष) होता है वे प्राणी जल में मौत को पाते हैं जिसके वृषण विषम होते हैं वह प्राणी स्त्रियों में चञ्चल रहता है व जिसके वृषण सम होते हैं वह प्राणी राजा होता है व जिसके वृषण ऊपर को उठे होते हैं वह प्राणी अल्पायु होता है व जिसके वृषण बड़े लम्बे होते हैं वह प्राणी सौ बरस की आयु को पाता है ॥ १३ ॥ जिनके लिङ्ग की मणियां लाल हों तो वे प्राणी धनवान् होते हैं व जिनके लिङ्ग की मणियां पीली होकर मैली हों तो वे प्राणी दरिद्री होते हैं व जिनके मूतने में शब्द होता है वे प्राणी सुखी रहते हैं व जिनकी मूत्र-धारा में शब्द नहीं होता हो तो वे प्राणी दरिद्री होते हैं ॥ १४ ॥ व जिनके दाहिनी ओर

दो, तीन व चार धाराओं से मूत्र गिरता हो तो उन प्राणियों को राजा जानना चाहिये व जिनके विकीर्णभाव से मूत्र गिरता हो तो वे प्राणी धनसे हीन रहते हैं यानी दरिद्री होकर निर्वाह करते हैं ॥ १५ ॥

मूत्रधारामणिबस्तिशुक्रगन्धलक्षणमाह—

एकैव मूत्रधारावलिता रूपप्रधानसुतदात्री ।
स्निग्धोन्नतसममणयो धनवनितारत्नभोक्तारः ॥ १६ ॥
मणिभिश्च मध्यनिम्नैः कन्या पितरो भवन्ति निःस्वाश्च ।
बहुपशुभाजो मध्योन्नतैश्च नात्युल्बणैर्धनिनः ॥ १७ ॥
परिशुष्कबस्तिशीर्षैर्धनरहिता दुर्भगाश्च विज्ञेयाः ।
कुसुमसमगन्धशुक्रा विज्ञातव्या महीपालाः ॥ १८ ॥
मधुगन्धे बहुवित्ता मत्स्यसगन्धे बहून्यपत्यानि ।
तनुशुक्रः स्त्रीजनको मांससगन्धो महाभोगी ॥ १९ ॥
मदिरागन्धे यज्वा क्षारसगन्धे च रेतसि दरिद्रः ।
शीघ्रं मैथुनगामी दीर्घायुरतोन्यथाल्पायुः ॥ २० ॥

जिन प्राणियों के एकही मूत्रधारा चलती हो तो वह उनको रूप, प्रधानता व पुत्रों को देती है व जिनके लिङ्ग का अग्रभाग चिकना व ऊंचा होकर समान हो तो वे प्राणी धन व स्त्रीरत्न के भोगने वाले होते हैं॥ १६ ॥ व जिनकी मणियां बीच में गहरी हों तो वे प्राणी कन्याओं के पिता होकर दरिद्री होते हैं व जिनकी मणियां बीच में ऊंची हों तो वे प्राणी बहुतसे पशुओं को पालते हैं व जिनकी मणियां बहुत ऊंची न हों तो वे प्राणी धनवान् होते हैं ॥ १७ ॥ व जिनके पेड़ू व शिर सूखे हों तो उन प्राणियों को विशेषता से दरिद्री व दौर्भाग्यशाली जानना चाहिये व जिनके बीज में फूल कीसी गन्ध आतीहो तो उन प्राणियों को राजा जानना चाहिये ॥ १८ ॥ व जिनके बीज में शहद कीसी गन्ध आती हो तो वे प्राणी बड़े धनवान् होते हैं व जिनके शुक्र में मछली कीसी गन्ध आती हो तो वे प्राणी बहुतसे सन्तानों को पाते हैं व जिसके थोड़ासा बीज होता है वह प्राणी कन्याओं को उपजाता है व जिसके बीज में मांस कीसी गन्ध आती हो तो वह प्राणी महाभोगी होता है ॥ १९ ॥ व जिसके बीज में मदिरा कीसी गन्ध आती हो तो वह यज्वा (विधि से यज्ञ करनेवाला) होता है व जिसके बीज में क्षार कीसी गन्ध हो तो वह प्राणी दरिद्री होताहै और जिसके मैथुन करने में शीघ्रता होती हो तो वह प्राणी दीर्घायु

वाला है व जिसके मैथुन करने में बड़ीही बेर लगती हो तो वह प्राणी थोड़ी उमरवाला होता है ॥ २० ॥

स्फिक्लक्षणमाह—

निःस्वोतिस्थूलस्फिक्[1] समांसलास्फिक्सुखान्वितो भवति।
रोगी मध्यमस्फिङ्मण्डूकस्फिग्नराधिपतिः॥ २१ ॥

जिसके कूले बहुत मोटे हों तो वह प्राणी दरिद्री होता है व जिसके कूले मांसल होवें तो वह प्राणी सुखी होता है व जिसके कूले मध्यम होवें तो वह रोगी होता है व जिसके कूले मेंडकके समान होवें तो वह प्राणी नरपाल होता है ॥ २१ ॥

कट्युदरलक्षणमाह—

सिंहकटिर्मनुजेन्द्रः कपिकरभकटिर्धनैः परित्यक्तः।
समजठरा भोगयुता घटपिठरनिभोदराःनिःस्वाः॥ २२ ॥

जिसकी कमर सिंह की समान हो तो वह प्राणी राजा होता है व जिसकी कमर वानर व ऊंट के बच्चे की समान हो तो वह प्राणी दरिद्री होता है व जिनके पेट समान हों तो वे प्राणी भोगी होते हैं व जिनके पेट घड़ा व बटलोही के समान हों तो वे प्राणी दरिद्री होते हैं ॥ २२ ॥

पार्श्वकुक्षोदरलक्षणमाह—

अविकलपार्श्वा धनिनो निम्नैर्वक्रैश्च भोगसंत्यक्ताः।
समकुक्षा भोगाढ्या निम्नाभिर्भोगपरिहीनाः॥ २३ ॥
उन्नतकुक्षाः क्षितिपाः कुटिलाः स्युर्मानवा विषमकुक्षाः।
सर्पोदरा दरिद्रा भवन्ति बह्वाशिनश्चैव ॥ २४ ॥

जिनकी पसुरियां अविकल हों तो वे प्राणी धनी होते हैं व जिनकी पसुरियां गहरी होकर टेढ़ी हों तो वे प्राणी भोगों से विहीन होते हैं व जिनकी कोखियां समान हों तो वे प्राणी भोगों से संयुत होते हैं व जिनकी कोखियां गहरी हों तो वे प्राणी भोगहीन होते हैं व जिनकी कोखियां ऊंची हों तो वे प्राणी राजा होते हैं व जिनकी कोखियां विषम हों तो वे प्राणी कुटिल (टेढ़े) होते हैं व जिनके पेट सांप के उदर के समान हों तो वे प्राणी दरिद्री होकर बड़े खानेवाले होते हैं ॥ २३ । २४ ॥

---

१ अशीघ्रमैथुन्यल्पायुः स्थूलस्फिग्घनोज्झितः। मांसलस्फिक्सुखी स्याच्च सिंहस्फिक् भूपतिः स्मृतः॥

नाभिलक्षणमाह—

परिमण्डलोन्नताभिर्विस्तीर्णाभिश्च नाभिभिः सुखिनः ।
स्वल्पात्वदृश्यनिम्ना नाभिः क्लेशवहा भवति ॥ २५ ॥

जिनकी नाभि विस्तीर्ण होकर चारों तरफ़ ऊंची हो तो वे प्राणी सुखी होते हैं जिनकी नाभि छोटी तथा अदृश्य होकर गहरी हो तो वह उन प्राणियों के लिये क्लेशदायक होती है ॥ २५ ॥

बलिमध्यगता विषमा शूला बाधं करोति नैःस्वं च ।
शाठ्यं वामावर्ता करोति मेधां प्रदक्षिणतः ॥ २६ ॥

जिनकी नाभि बलियों के बीच प्राप्त होकर विषम हो तो वह उन प्राणियों को शूलरोग व दरिद्रता को करती है व जिनकी नाभि वामावर्त हो तो वह उन प्राणियों के लिये शठता को करती है और जिनकी नाभि दहिनावर्त हो तो वह उन प्राणियों को बुद्धि करती है यानी वे प्राणी मेधावी होते हैं ॥ २६ ॥

पार्श्वायता चिरायुषमुपरिष्टाचेश्वरं भवाढ्यमधः ।
शतपत्रकर्णिकाभा नाभिर्मनुजेश्वरं कुरुते ॥ २७ ॥

जिसकी नाभि दोनों ओर चौड़ी हो तो वह प्राणी दीर्घजीवी होता है व जिसकी नाभि ऊपरले भाग में चौड़ी हो तो वह उस प्राणी को धनी करती है व जिसकी नाभि नीचे तरफ़ चौड़ी हो तो वह उस प्राणी को गोगणशाली करती है और जिसकी नाभि कमलकर्णिका की समान हो तो वह उस प्राणी को राजा बनाती है ॥ २७ ॥

बलिलक्षणमाह—

शस्त्रान्तं स्त्रीभोगिनमाचार्यं बहुसुतं यथासंख्यम् ।
एकद्वित्रिचतुर्भिर्बलिभिर्विद्यान्नृपं त्वबलिम् ॥ २८ ॥

जिसके नाभि देश में एकही बलि हो तो वह प्राणी शस्त्राघात से मौत को पाता है व जिसके नाभिदेश में दो बलियां हों तो वे उस प्राणी को स्त्रीभोगी करतीं हैं व जिसके नाभिदेश में तीन बलियां हों तो वे उस प्राणी को आचार्य बनाती हैं व जिसके नाभिदेश में चार बलियां हों तो वे उस प्राणी को अनेक सन्तानोंवाला करती हैं व जिसके नाभिदेश में एकमात्र बलि नहीं देख पड़े तो उस प्राणी को नरपाल जानना चाहिये ॥ २८ ॥

---

१ एको बलिः शतायुः स्याच्छ्रीभोगी द्विबलिः स्मृतः । त्रिबलिः क्ष्माप आचार्य ऋजुभिर्बलिभिः सुखी । अगम्यगामी जिह्मबलिर्भूपाः पार्श्वैश्च मांसलैः ॥

विषमबलयो मनुष्या भवन्त्यगम्याभिगामिनःपापाः ।
ऋजुबलयः सुतभाजः परदारद्वेषिणश्चैव ॥ २९ ॥

जिनकी बलियां विषम होवें तो वे मनुष्य अगम्यागामी होकर पापी होते हैं व जिन की बलियां सीधी होवें तो वे प्राणी सुतभागी होकर परदाराओं से विरोध रखतेहैं ॥२९॥

पुनःपार्श्वलक्षणमाह—

मांसलमृदुभिः पार्श्वैः प्रदक्षिणावर्तरोमभिर्भूपाः ।
विपरीतैर्निर्द्रव्याः सुखपरिहीनाः परप्रेष्याः ॥ ३० ॥

जिनके पार्श्वदेश मांसल व कोमल तथा प्रदक्षिणावर्त होकर रोमों से घिरे हों तो वे प्राणी राजा होते हैं व जिनके पार्श्वदेश विपरीत हों तो वे प्राणी दरिद्री तथा सुख से विहीन होकर पराये दास होते हैं ॥ ३० ॥

चूचकलक्षणमाह—

सुभगा भवन्त्यनुद्बद्धचूचका निर्धना विषमदीर्घैः ।
पीनोपचितानिमग्नैः क्षितिपतयश्चूचकैः सुखिनः ॥ ३१ ॥

जिनकी चूचियों की ढेपुनी ऊंची न हों तो वे प्राणी सौभाग्यशाली होते हैं व जिन की चूचियों की ढेपुनी विषम होकर दीर्घ हों तो वे प्राणी निर्धनी होते हैं और जिनकी चूचियों की ढेपुनी स्थूल व ऊंची होकर निमग्न हों तो वे प्राणी राजा होकर सुखी रहते हैं ॥ ३१ ॥

हृदयलक्षणमाह—

हृदयं[1] समुन्नतं पृथुलमांसलं च नृपतीनाम् ।
अधमानां विपरीतं खररोमचितं शिरालञ्च ॥ ३२ ॥

जिनका वक्षःस्थल ऊंचा व चौड़ा होकर मांसल हो तो वे प्राणी राजा होते हैं व जिनका वक्षःस्थल विपरीत व कर्कशरोमों से पूर्ण होकर शिराओं से व्याप्त हो तो वे प्राणी नराधम होते हैं ॥ ३२ ॥

सम[2]वक्षसोऽर्थवन्तः पीनैः शूरास्त्वकिञ्चनास्तनुभिः ।
विषमं वक्षो येषां ते निःस्वाः शस्त्रनिधनाश्च ॥ ३३ ॥

जिनका वक्षःस्थल समान हो तो वे प्राणी धनवान् होते हैं व जिनका वक्षःस्थल

१ समोन्नतं च हृदयमकम्पं मांसलं पृथु । नृपाणामधमानां च खररोमशिरालकम् ॥
२ अर्थवान्समवक्षाः स्यात्पीनैर्वक्षोभिरूर्जितः । वक्षोभिर्विषमैर्निःस्वाः शस्त्रेण निधनास्तथेति ॥

मोटा हो तो वे प्राणी वीर होते हैं व जिनका वक्षःस्थल पतला हो तो वे प्राणी दरिद्री होते हैं व जिनका वक्षःस्थल विषम हो तो वे प्राणी निर्धनी होकर शस्त्राघात से मौत को पाते हैं ॥ ३३ ॥

जत्रुलक्षणमाह—

विषमैर्विषमो जत्रुभिरर्थविहीनोऽस्थिसन्धिपरिणद्धैः ।
उन्नतजत्रुर्भोगी निम्नैर्निःस्वोऽर्थवान्पीनैः ॥ ३४ ॥

जिसकी हँसुली असमान हो तो वह प्राणी दुश्चरित्र होता है व जिसकी हँसुली अस्थि सन्धियों से बँधी हुई हो तो वह प्राणी धनहीन होता है व जिसकी हँसुली ऊंची हो तो वह प्राणी भोगी होता है व जिसकी हँसुली निचली हो तो वह प्राणी दरिद्री होता है और जिसकी हँसुली मोटी हो तो वह प्राणी धनवान् होता है ॥ ३४ ॥

ग्रीवालक्षणमाह—

चिपिटग्रीवो निःस्वः शुष्का साशिरा च यस्य वा ग्रीवा ।
महिषग्रीवः शूरः शस्त्रान्तो वृषसमग्रीवः ॥ ३५ ॥

जिसकी ग्रीवा (घींच) चपटी हो या जिसकी ग्रीवा नसों से व्याप्त होकर सूखी हो तो वह प्राणी निर्धन होता है व जिसकी ग्रीवा भैंसा के समान हो तो वह प्राणी सूरमा होता है और जिसकी ग्रीवा बैल के समान हो तो वह प्राणी शस्त्राघात से मौत को पाता है ॥ ३५ ॥

कम्बुग्रीवो राजा प्रलम्बकण्ठः प्रभक्षणो भवति ।
पृष्ठमभग्नमरोमशमर्थवतामशुभदमतोऽन्यत् ॥ ३६ ॥

जिसकी ग्रीवा शंख के समान (तीनरेखा से अङ्कित) हो तो वह प्राणी राजा होता व जिसका कण्ठ लम्बा हो तो वह प्राणी बहुभोजी होता है और जिनकी पीठ अभग्न होकर रोमों से हीन हो तो वे प्राणी अर्थशाली होते हैं और इससे अन्यभाँति पीठ हो तो प्राणियों को अशुभदायक होती है ॥ ३६ ॥

कक्षालक्षणमाह—

अस्वेदनपीनोन्नतसुगन्धिसमरोमसंकुलाः कक्षाः ।
विज्ञातव्या धनिनामतोऽन्यथार्थैर्विहीनानाम् ॥ ३७ ॥

जिनकी कक्षायें पसीनारहित, मोटी, ऊंची तथा सुगन्धित होकर समान लोमों

आवृत हों तो उन प्राणियों को विशेषता से धनशाली जानना चाहिये और इससे विपरीत निर्धनियों की जानना चाहिये यानी जिनकी कक्षायें उक्तलक्षणोंवाली न हों तो वे प्राणी दरिद्री होते हैं ॥ ३७ ॥

स्कन्धलक्षणमाह—

निर्मांसौ रोमचितौ भग्नावल्पौ च निर्धनस्यांसौ ।
विपुलावप्युन्नतौ सुश्लिष्टौ सौख्यवीर्यवताम् ॥ ३८ ॥

जिसके दोनों कन्धे मांसरहित, रोमों से व्याप्त व भग्न होकर क्षुद्र हों तो वह प्राणी निर्धन होता है व जिनके कन्धे चौड़े व ऊंचे होकर भली भाँति लिपटे हों तो वे प्राणी पराक्रम समेत सौख्यशाली होते हैं ॥ ३८ ॥

बाहुलक्षणमाह—

करिकरसदृशौ वृत्तावाजान्ववलम्बिनौ समौ पीनौ ।
बाहू पृथिवीशानामधमानां रोमशौ ह्रस्वौ ॥ ३९ ॥

जिनकी दोनों बाहैं गोलाकार, हाथीसूंड़के समान, परस्पर बराबर और मोटे होकर घुटनूपर्यन्त लम्बे हों तो वे प्राणी भूपाल होते हैं यानी पृथ्वीके पालक होते हैं और जिनकी दोनों बाहैं रोमों से व्याप्त होकर छोटी हों तो वे प्राणी नराधम होते हैं यानी निर्धनी होते हैं ॥ ३९ ॥

हस्ताङ्गुलिलक्षणमाह—

हस्ताङ्गुलयो दीर्घाश्चिरायुषामवलिताश्च सुभगानाम् ।
मेधाविनां च सूक्ष्माश्चिपिटाः परकर्मनिरतानाम् ॥ ४० ॥

जिनके हाथकी अँगुलियाँ दीर्घ हों तो वे प्राणी दीर्घजीवी होते हैं व जिनकी अँगुलियाँ वलियों से रहित हों तो वे प्राणी बड़े भागवाले होते हैं व जिनकी अँगुलियाँ पतली हों तो वे प्राणी बुद्धिमान् होते हैं और जिनकी अँगुलियाँ चपटी हों तो वे प्राणी पराये कर्म में परायण होते हैं यानी दासकर्म के करनेहारे होते हैं ॥ ४० ॥

स्थूलाभिर्धनरहिता बहिर्नताभिश्च शस्त्रनिर्याणाः ।
कपिसदृशकरा धनिनो व्याघ्रोपमपाणयश्च पापाः ॥ ४१ ॥

जिनके हाथ की अँगुलियां मोटी हों तो वे प्राणी निर्धनी होतेहैं व जिनकी अँगुलियों का अग्रभाग लचासा हो तो वे प्राणी शस्त्राघात से मौत को पाते हैं व जिनके हाथ वानर

के हाथ के समान हों तो वे प्राणी धनवान् होते हैं और जिनके हाथ बाघ के हाथ के समान हों तो वे प्राणी पापी होते हैं ॥ ४१ ॥

मणिबन्धलक्षणमाह—

मणिबन्धैर्निगूढैर्दृढैश्च सुश्लिष्टसन्धिभिर्भूपाः ।
हीनैर्हस्तच्छेदः श्लथैस्सशब्दैश्च निर्द्रव्याः ॥ ४२ ॥

जिनके मणिबन्ध (कब्जे) छिपे हुए मजबूत होकर सन्धियों से लिपटे हों तो वे प्राणी पृथ्वीपति होते हैं व जिनके कब्जे हीन होकर सन्धियों से ढीले हों तो उन प्राणियों का हाथ काटा जाता है और जिनके कब्जे शब्द समेत हों तो वे प्राणी धनरहित होते हैं ॥ ४२ ॥

करतललक्षणमाह—

पितृवित्तेन विहीना भवन्ति निम्नेन करतलेन[१] नराः ।
संवृतनिम्नैर्धनिनः प्रोत्तानकराश्च दातारः ॥ ४३ ॥

जिनके करतल गहरे हों तो वे प्राणी पैतृकधन से रहित होते हैं व जिनके करतल गोलाकार होकर गहरे हों तो वे प्राणी धनवान् होते हैं और जिनके करतल उन्नत हों तो वे प्राणी दाता होते हैं ॥ ४३ ॥

विषमैश्च पापा निःस्वाश्च करतलैरीश्वरास्तुलाक्षाभैः ।
पीतैरगम्य वनिताभिर्गामिनो निर्द्धना रूक्षैः ॥ ४४ ॥

जिनके करतल विषम (असमान) हों तो वे प्राणी पापी होकर निर्धनी होते हैं व जिनके करतल लाक्षावर्ण के समान लालवर्ण हों तो वे प्राणी समर्थ होकर धनवान् होते हैं व जिनके करतल हल्दी के समान पीले हों तो वे प्राणी अगम्या रमणी में रमण करते हैं और जिनके करतल रूखे हों तो वे धनरहित होते हैं ॥ ४४ ॥

नखवर्णनमाह—

तुषसदृशनखाः क्लीबाश्चिपिटैः स्फुटितैश्च वित्तसन्त्यक्ताः ।
कुनखविवर्णैः परतर्कुकाश्च ताम्रैश्च भूपतयः ॥ ४५ ॥

जिनके नख तुषसदृश यानी भूसी के समान हों तो वे प्राणी हिजड़े होते हैं व जिनके नख चिपिटे होकर फूटे से हों तो वे प्राणी धनरहित होते हैं व जिनके नख बुरे वर्णवाले

---

१ पितृवित्तविनाशश्च निम्नात्करतलान्नराः । संवृतैश्चैव निम्नैश्च धनिनः परिकीर्तिताः प्रोत्तानकरदातारो विषमैर्विषमा नरा इति॥ करैः करतलैश्चैव लाक्षाभैरीश्वरस्तनैः । परदाररताः पीतैरूक्षैर्निःस्वा नरा मताः ॥

होकर कुत्सित हों तो वे प्राणी कुदृष्टि से निहारते हैं और जिनके नख ताम्रवर्ण होकर लाल हों तो वे प्राणी पृथ्वीपाल होते हैं ॥ ४५ ॥

अङ्गुष्ठाङ्गुलिलक्षणमाह—

अंङ्गुष्ठयवैराढ्यास्सुतवन्तोङ्गुष्ठमूलगैश्च यवैः ।
दीर्घाङ्गुलिपर्वाणः[1] सुभगा दीर्घायुषश्चैव ॥ ४६ ॥

जिनके अँगूठे में जव का चिह्न हो तो वे प्राणी धनी होते हैं व जिनके अँगूठे की जड़ में जव का निशान हो तो वे प्राणी पुत्रवान् होते हैं व जिनकी अँगुलियों की पर्वें दीर्घ हों तो वे प्राणी बड़े भागवाले होकर दीर्घजीवी होते हैं ॥ ४६ ॥

स्निग्धा निम्ना रेखा धनिनां तद्व्यत्ययेन निःस्वानाम् ।
विरलाङ्गुलयो निःस्वा धनसंचयिनो घनाङ्गुलयः[2] ॥ ४७ ॥

जिनकी करतल की रेखायें चिकनी होकर गहरी हों तो वे प्राणी धनवान् होते हैं व जिनकी रेखायें चिकनी होकर गहरी न हों तो वे प्राणी निर्धनी होते हैं व जिनकी अँगुलियां बिरली हों तो वे प्राणी धनहीन होते हैं और जिनकी अँगुलियां घनी हों तो वे प्राणी धनका संचय करते हैं ॥ ४७ ॥

तिस्रो रेखा मणिबन्धनोत्थिताः करतलोपगा नृपतेः ।
मीनयुगाङ्कितपाणिर्नित्यमन्नप्रदो भवति ॥ ४८ ॥

जिसके मणिबन्धन (कब्ज़े) से उठी हुई तीन रेखायें करतल के समीप पहुँचगई हों तो वह प्राणी राजा होता है व जिसका हाथ दो मीनरेखाओं से अंकित हो तो वह प्राणी सदैव अन्नका दान करता है ॥ ४८ ॥

वज्राकारा धनिनां विद्याभाजान्तु मीनपुच्छनिभाः ।
शंखातपत्रशिबिकागजाश्वपद्मोपमा नृपतेः ॥ ४९ ॥

जिनके करतल में वज्र का निशान हो तो वे प्राणी धनवान् होते हैं व जिनके करतल में मछली की पूँछ का निशान हो तो वे प्राणी विद्यावान् होते हैं और जिसके करतल में शंख, छाता, पालकी, हाथी, घोड़ा और पद्मका निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी राजा होता है ॥ ४९ ॥

---

१ ताम्रैर्भूपा धनाढ्याश्च अङ्गुष्ठैस्सयवैस्तथा । अङ्गुष्ठमूलजैः पुत्री स्याद्दीर्घाङ्गुलिपर्वकः ॥

२ हस्ताङ्गुलय एवस्युर्वायुद्वारनिभाः शुभाः । मेधाविनां च सूक्ष्मास्युर्भृत्यानां चिपिटाः स्मृताः ॥ स्थूलांगुलीभिर्निःस्वाःस्युर्नराः स्युः सुकृशैस्तथेति ॥

कलशमृणालपताकांकुशोपमाभिर्भवन्ति निधिपालाः ।
दामनिभाभिश्चाढ्याः स्वस्तिकरूपाभिरैश्वर्य्यम् ॥ ५० ॥

जिनके करतल में कलश, मृणाल=कमलकी नाल, पताका और अंकुश का निशान हो तो वे प्राणी धनाधिपति होते हैं व जिनके करतल में रस्सी या माला का निशान हो तो वे प्राणी धनी होते हैं और जिनके हाथ में स्वस्तिक का निशान हो तो वे प्राणी ऐश्वर्य को पाते हैं ॥ ५० ॥

चक्रासिपरशुतोमरशक्तिधनुःकुन्तानिभा रेखाः ।
कुर्वन्ति चमूनाथं यज्वानमुलूखलाकाराः ॥ ५१ ॥

जिनके करतल में चक्र, तलवार, कुठार, शक्ति, धनुष और भाला के समान रेखायें हों तो वे उन प्राणियों को सेनापति बनाती हैं व जिनके करतल में उखली के निशान हों तो उन प्राणियों को यज्वा करते हैं यानी वे प्राणी विधि से यज्ञ के करनेवाले होते हैं ॥ ५१ ॥

मकरध्वजगोष्ठागारसन्निभाभिर्महाधनोपेताः ।
वेदीनिभेन चैवाग्निहोत्रिणो ब्रह्मतीर्थेन ॥ ५२ ॥

जिनके करतल में मकर, ध्वजा, गोष्ठ और मन्दिर के आकार रेखा हों तो वे प्राणी बड़े धन से संपन्न होते हैं व जिनके ब्रह्मतीर्थ यानी अँगूठा के मूलमें वेदी का निशान हो तो वे प्राणी अग्निहोत्री होते हैं ॥ ५२ ॥

वापीदेवगृहाद्यैर्धर्मं कुर्वन्ति च त्रिकोणाभिः ।
अङ्गुष्ठमूलरेखाःपुत्राः स्युर्दारिकाः सूक्ष्माः ॥ ५३ ॥

जिनके करतल में बावली, देवमन्दिर तथा त्रिकोण का चिह्न देखपड़े तो वे प्राणी धर्म को करते हैं और जिनके अँगूठे की मूल में बड़ी बड़ी जितनी रेखायें लक्षित हों उतनी ही पुत्र पैदा होते हैं व जिनके अँगूठे की मूल में छोटी छोटी जितनी रेखायें प्रतीत हों उतनीही कन्यायें पैदा होती हैं ॥ ५३ ॥

ऊर्ध्वरेखालक्षणमाह ॥

रेखाः प्रदेशिनीगाः शतायुषां कल्पनीयमूनाभिः ।
छिन्नाभिर्द्रुमपतनं बहुरेखारेखिणो निःस्वाः ॥ ५४ ॥

जिनके करतल में ऊर्ध्वरेखा तर्जनीपर्यन्त पहुँच गई हों तो वे प्राणी सौवरस की अवस्था को पाते हैं और यदि तर्जनी तक ऊर्ध्वरेखा नहीं गई हो तो वे प्राणी कम उमर को पाते

हैं और यदि ऊर्ध्वरेखा छिन्न होगई हो तो वे प्राणी वृक्ष से गिरते हैं और जिनके करतल में बहुतसी रेखा हों अथवा रेखामात्र लक्षित हों तो वे प्राणी धनरहित होते हैं ॥ ५४ ॥

चिबुकाधरलक्षणमाह—

अतिकृशदीर्घैश्चिबुकैर्निर्द्रव्या मांसलैर्धनोपेताः ।
बिम्बोपमैरवक्रैरधरैर्भूपास्तनुभिर्निःस्वाः ॥ ५५ ॥

जिनकी चिबुक (दाढ़ी) बहुत पतली या लम्बी हो तो वे प्राणी दरिद्री होते हैं व जिनकी चिबुक मांसल हो यानी मांस से भरी हो तो वे प्राणी धनवान् होते हैं एवं जिनके अधर कुंदरू के समान होकर टेढ़े न हों तो वे प्राणी पृथ्वीपाल होते हैं और जिनके अधर पतले हों तो वे प्राणी निर्धनी होते हैं ॥ ५५ ॥

ओष्ठदशनदंष्ट्रालक्षणमाह—

ओष्ठैः स्फुटितविखण्डितविवर्णरूक्षैश्च धनपरित्यक्ताः ।
स्निग्धा घनाश्च दशनाः सुतीक्ष्णदंष्ट्रास्समाश्च शुभाः ॥ ५६ ॥

जिनके ओठ स्फुटित, विखण्डित और विवर्ण होकर रूखे हों तो वे प्राणी धनहीन होते हैं और जिनके दाँत बड़ी तीखी दाढ़ोंवाले, चिकने व सघन होकर समान हों तो वे उन प्राणियों के लिये शुभसूचक होते हैं ॥ ५६ ॥

जिह्वाताल्लुलक्षणमाह—

जिह्वा[2] रक्ता दीर्घाश्लक्ष्णा सुसमा च भोगिनां ज्ञेया ।
श्वेता कृष्णा परुषा निर्द्रव्याणां तथा तालु[3] ॥ ५७ ॥

जिनकी जीभ लाल, लम्बी व पतली होकर भलीभाँति समान हो तो उन प्राणियों को भोगी जानना चाहिये यानी ऐसे प्राणी भोगी होते हैं और जिनकी जीभ सफ़ेद या

---

१ द्वात्रिंशद्दशनो राजा भोगीस्याद्देकहीनकः । त्रिंशद्दन्ताः स्युः सुखिनो विनैकेन सुदुःखिनः ॥ दन्तास्तु विकटा यस्य नीचवन्नीचकर्मकृत् । प्रगल्भो दन्तुरः सत्यं देशान्तररतो भवेत् ॥ दुःखितैर्विकृतैरूक्षैर्दन्तमूषिकसन्निभैः । सौभाग्यं मिलितैर्दन्तैर्विद्यावान्दन्तुरः पुनः ॥ कदाचिद्दन्तुरोमूर्खः कदाचिल्लोमशोऽसुखी ॥

२ यस्य जिह्वा भवेद्दीर्घा नासाग्रं लेढि सर्वदा । योगी भवति निर्वाणः पृथ्वीं भ्रमति सर्वदा ॥ जिह्वेष्टमिष्टभोक्त्री स्याच्छोणा मृद्वी तथासिता । दुःखाय मध्यसंकीर्णा पुरोभागस्तुविस्तरा ॥ कृष्णजिह्वा भवेद्यस्य स नरो दुःखभाजनः । यः स्पृशेज्जिह्वया नासां सभवेत्पापकारकः ॥ स्थूलजिह्वा क्रूरजिह्वा स नरोऽमृतभाषितः । श्वेतजिह्वा नरा ये च तेष्याचारविवर्जिताः ॥ रक्तजिह्वा भवेद्यस्य विद्यां लक्ष्मीं स चाप्नुयात् ॥

३ कृष्णतालु नरा ये तु भवन्ति कुलनाशकाः । पद्मपत्रसमस्तालुः स नरो भूपतिर्भवेत् ॥ श्वेततालु नरा ये तु धनवन्तो भवन्ति हि । रक्ततालु नरा ये तु धनाढ्या मानवाश्रिणः ॥

काली होकर कर्कश हो तो वे प्राणी निर्धन होते हैं वैसेही जिनका तालु लाल, लम्ब व कोमल होकर समान हो तो वे प्राणी भोगी होते हैं और जिनका तालु सफ़ेद या काला होकर खरखरा हो तो वे प्राणी धनहीन होते हैं ॥ ५७ ॥

मुखलक्षणमाह—

वक्रं सौम्यं संवृतममलं श्लक्ष्णं समं च भूपानाम् ।
विपरीतं क्लेशभुजां महामुखं दुर्भगाणां च ॥ ५८ ॥

जिनका मुख सुशोभन, गोल, अमल व कोमल होकर समानाकार हो तो वे प्राणी राजा होते हैं और जिनका मुख पूर्वोक्त लक्षणों से विपरीत हो तो वे प्राणी क्लेशभागी होते हैं और जिनका मुख बड़ाभारी हो तो वे प्राणी बुरे भागवाले होते हैं ॥ ५८ ॥

स्त्रीमुखमनपत्यानां शाठ्यवतां मण्डलं परिज्ञेयम् ।
दीर्घं निर्द्रव्याणां भीरुमुखाः पापकर्माणः ॥ ५९ ॥

जिनका मुख स्त्रीमुख के समान हो तो वे प्राणी सन्तानरहित होतेहैं व जिनका मुख मण्डलाकृति हो तो उन प्राणियों को शठ जानना चाहिये व जिनका मुख लम्बा हो तो वे प्राणी निर्धनी होते हैं और जिनका मुख डरौंधासा हो तो वे प्राणी पापकर्मकारी होते हैं ॥ ५९ ॥

चतुरस्रं धूर्तानां निम्नं वक्रं च तनयरहितानाम् ।
कृपणानामतिह्रस्वं सम्पूर्णं भोगिनां कान्तम् ॥ ६० ॥

जिनका मुख चौकोनं हो तो वे प्राणी धूर्त होते हैं व जिनका मुख निचला हो तो वे प्राणी सन्तानरहित होते हैं व जिनका मुख बहुत छोटासा हो तो वे प्राणी कृपण होते हैं और जिनका मुख सम्पूर्ण मनोरम हो तो वे प्राणी भोगी होते हैं ॥ ६० ॥

श्मश्रुलक्षणमाह—

अस्फुटिताग्रं स्निग्धं श्मश्रुशुभं मृदु च सन्नतं चैव ।
रक्तैः परुषैश्चौराः श्मश्रुभिरल्पैश्च विज्ञेयाः ॥ ६१ ॥

जिनकी दाढ़ी मोछ अग्रभाग में विकसित न हो अथवा चिकनी व कोमल होकर सन्नत हो तो वे प्राणी शुभसम्पन्न होते हैं और जिनकी दाढ़ी मोछ लाल व कर्कश होकर अल्प हो तो उन प्राणियों को चोर जानना चाहिये यानी ऐसी दाढ़ीवाले प्राणी चोर होते हैं ॥ ६१ ॥

---

१ चन्द्रबिम्बोपमो वक्त्रो धर्मशीलः सदा भवेत् । मृगमूषिकवक्त्राश्च ते नरा भाग्यवर्जिता इति।

कर्णलक्षणमाह—

निर्मांसैः कर्णैः पापमृत्यवश्चिपिटैः सुबहुभोगाः ।
कृपणाश्च ह्रस्वकर्णाः शङ्कुश्रवणाश्च भूपतयः ॥ ६२ ॥

जिनके कान मांस से रहित हों तो वे प्राणी पापकर्म से मौत को पाते हैं व जिनके कान चपटे हों तो वे प्राणी बड़ेही भोगशाली होते हैं व जिनके कान छोटे हों तो वे प्राणी कृपण होते हैं और जिनके कान शङ्कु के समान हों तो वे प्राणी पृथ्वीपाल होते हैं ॥ ६२ ॥

रोमशकर्णा दीर्घायुषस्तु धनभागिनो विपुलकर्णाः ।
क्रूराः शिरापनद्धैर्व्यालम्बैर्मांसलैः सुखिनः ॥ ६३ ॥

जिनके कान रोमोंसे व्याप्त हों तो वे प्राणी बड़ी उमरवाले होते हैं व जिनके कान विस्तारवाले हों तो वे प्राणी धनभागी होते हैं व जिनके कान नसों से व्याप्त होकर विशेषता से लम्बे हों तो वे प्राणी क्रूर होते हैं और जिनके कान मांसल हों यानी मांस से भरे हुए लम्बे हों तो वे प्राणी सुखी होते हैं ॥ ६३ ॥

गण्डनासिकालक्षणमाह—

भोगीत्वनिम्नगण्डो मन्त्री संपूर्णमांसगण्डो यः ।
सुखभाक् शुकसमनासश्चिरजीवी शुष्कनासश्च ॥ ६४ ॥

जिसका गण्डस्थल निचला न हो तो वह प्राणी भोगी होता है व जिसका गण्डस्थल सम्पूर्ण मांसविशिष्ट हो तो वह प्राणी मन्त्री होता है व जिसकी नासिका शुक (तोता) की चोंच के समान हो तो वह प्राणी सुखभागी होता है और जिसकी नासिका सूखी हो तो वह प्राणी चिरजीवी होता है ॥ ६४ ॥

छिन्नानुरूपयागम्यगामिनौदीर्घया तु सौभाग्यम् ।
आकुञ्चितया चौरः स्त्रीमृत्युः स्याच्चिपिटनासः ॥ ६५ ॥

जिनकी नासिका (छिन्न) कटीसी हो तो वे प्राणी अगम्या रमणी में गमन करते हैं व जिनकी नासिका दीर्घ हो तो वे प्राणी सौभाग्य को पाते हैं व जिनकी नासिका टेढ़ी हो तो वे प्राणी चोर होते हैं और जिनकी नासिका चपटी हो तो वे प्राणी स्त्रीसे मृत्युको प्राप्त होते हैं ॥ ६५ ॥

धनिनोऽवक्रनासा दक्षिणवक्राः प्रभक्षणाः क्रूराः ।

---

१ दन्ताश्च विरला यस्य गण्डे कूपोपि जायते । परस्त्रीरमणो नित्यं परवित्तेन वित्तवान् ॥

ऋज्वी स्वल्पच्छिद्रा सुपुटा नासा सुभाग्यानाम् ॥ ६६ ॥

जिनकी नासिका का अग्रभाग टेढ़ा हो तो वे प्राणी धनी होते हैं व जिनकी नासिका दक्षिण भाग में टेढ़ी हो तो वे प्राणी बड़े खानेवाले होकर क्रूर होते हैं और जिनकी नासिका सीधी व अल्पछिद्रोंवाली होकर गोल पुटोंवाली हो तो वे प्राणी बड़े भाग्यवाले होते हैं ॥ ६६ ॥

क्षुतलक्षणमाह—

धनिनां क्षुतं सकृद्द्वित्रिपिण्डितं ह्लादि सानुनादं च ।
दीर्घायुषां प्रमुक्तं विज्ञेयं संहतं चैव ॥ ६७ ॥

जिनकी छींक एकही समय दो, तीन हों व पीछे से उनका शब्द सुनने योग्य हो तो वे प्राणी धनी होते हैं और जिनकी निकली हुई छींक गम्भीर हो तो वे प्राणी बड़ी उमर वाले होते हैं ॥ ६७ ॥

लोचनलक्षणमाह—

नेत्रपरीक्षा

पद्मदलाभैर्धनिनो रक्तान्तविलोचनाः श्रियो भाजः ।
मधुपिङ्गलैर्महार्था मार्जारविलोचनाः पापाः ॥ ६८ ॥

जिनके दोनों नयन पद्मदल के समान हों तो वे प्राणी धनी होते हैं व जिनके लोचन लाल वर्ण हों यानी नेत्रों के किनारे लाल हों तो वे प्राणी लक्ष्मीसम्पन्न होते हैं व जिनके लोचन मधु होकर पीले हों तो वे प्राणी बड़े अर्थशाली होते हैं और जिनके लोचन बिलार के समान हों तो वे प्राणी पापी होते हैं ॥ ६८ ॥

हरिणाक्षा मण्डललोचनाश्च जिह्मैश्च लोचनैश्चौराः ।
क्रूराः केकरनेत्रा गजसदृशदृशश्च भूपतयः ॥ ६९ ॥

जिनके लोचन हरिण के समान हों या मण्डलाकार हों या टेढ़े हों तो वे प्राणी चोर होते हैं व जिनके लोचन ढेर या कञ्जे हों तो वे प्राणी क्रूर होते हैं और जिनके लोचन हाथी के समान हों तो वे प्राणी पृथ्वीपाल होते हैं ॥ ६९ ॥

ऐश्वर्य्यं गम्भीरैर्नीलोत्पलकान्तिभिश्च विद्वांसः ।

१ अनिम्नाक्षाश्च ये काणा बधिराः स्थूलदेहिनः । स्थूलाश्च खञ्जगतयो नरा दुष्टा न संशयः । शतं काणे च खञ्जे च अशीतिर्भण्डचारयोः । खर्वे च षष्टि दोषाः स्युः कुब्जस्यान्तं न विद्यते ॥ १ ॥

अतिकृष्णतारकाणामक्ष्णामुत्पाटनं भवति ॥ ७० ॥
मन्त्रित्वं स्थूलदृशां श्यावाक्षाणां च भवति सौभाग्यम्।
दीना दृङ्निःस्वानां स्निग्धा विपुलार्थभोगवताम् ॥ ७१ ॥

जिनके लोचन गम्भीर हों तो वे प्राणी ऐश्वर्य को पाते हैं व जिनके लोचन श्यामकमल के समान हों तो वे प्राणी विद्वान् होते हैं व जिनके लोचनों की तारकायें बहुत काली हों तो उन प्राणियों की आंखें उखाड़ी जाती हैं ॥ ७० ॥ जिनके लोचन स्थूल हों तो वे प्राणी मन्त्री होते हैं व जिनके लोचन पिङ्गल (पीले) वर्ण हों तो उन प्राणियों के लिये सौभाग्य होता है व जिनके लोचन दीन हों तो वे प्राणी दरिद्री होते हैं और जिनके लोचन स्निग्ध (चिकने या प्यारे) हों तो वे प्राणी बड़े अर्थशाली व भोगी होते हैं ॥ ७१ ॥

भ्रूकुटिलक्षणमाह —

अभ्युन्नताभिरल्पायुषो विशालोन्नताभिरतिसुखिनः।
विषमभ्रुवो दरिद्रा बालेन्दुनतभ्रुवः सधनाः ॥ ७२ ॥

जिनकी भौंहें बड़ी ऊंची हों तो वे प्राणी अल्पायु होते हैं व जिनकी भौंहें विशाल होकर ऊंची हों तो वे प्राणी बड़े सुखी होते हैं व जिनकी भौंहें विषम हों तो वे प्राणी दरिद्री होते हैं और जिनकी भौंहें बालचन्द्रमा के समान होकर लची हों तो वे प्राणी धनी होते हैं ॥ ७२ ॥

दीर्घासन्त्यक्ताभिर्धनिनः खण्डाभिरर्थपरिहीनाः।
मध्यविनतभ्रुवो ये तु सक्तास्त्रीष्वगम्यासु ॥ ७३ ॥

जिनकी भौंहें दीर्घ होकर परस्पर मिलीं या अलग हों तो वे प्राणी धनवान् होते हैं व जिनकी भौंहें खण्डित हों तो वे प्राणी धनहीन होते हैं और जिनकी भौंहें बीच में लची हों तो वे प्राणी अगम्यारमणी में आसक्त होते हैं ॥ ७३ ॥

ललाटलक्षणमाह—

उन्नतविपुलैः शंखैर्धन्या निम्नैः सुतार्थसन्त्यक्ताः।
विषमललाटा विधना धनवन्तोऽर्धेन्दुसदृशेन ॥ ७४ ॥

जिनके शंख (ललाट की पार्श्वों की हड्डियां) उन्नत होकर विशाल हों तो वे प्राणी धन्य गिनेजाते हैं व जिनके शंख निचले हों तो वे प्राणी पुत्रों व धनोंसे रहित होते हैं व

जिनके ललाट विषम हों तो वे प्राणी दरिद्री होते हैं और जिनका ललाट अर्धचन्द्राकार हो तो वे प्राणी धनवान् होते हैं ॥ ७४ ॥

शुक्तिविशालैराचार्यता शिरासन्ततैरधर्मरताः ।
उन्नतशिराभिराढ्याः स्वस्तिकवत्संस्थिताभिश्च ॥ ७५ ॥

जिनके कपाल विशाल होकर सीप के समान हों तो वे प्राणी आचार्य पदवी को पाते हैं व जिनके भाल नसों से व्याप्त हों तो वे प्राणी अधर्म में परायण होते हैं और जिनके कपाल की नसें ऊंची होकर त्रिकोणाकार प्रतीत हों तो वे प्राणी धनाढ्य होते हैं ॥ ७५ ॥

निम्नललाटा वधबन्धभागिनः क्रूरकर्मनिरताश्च ।
अभ्युन्नतैश्च भूपाः कृपणाः स्युः संकटललाटाः ॥ ७६ ॥

जिनके ललाट निचले हों तो वे प्राणी वधबन्धभागी होते हैं यानी वे प्राणी मारे जाते हैं या बँधुआ होकर दुःख को भोगते हैं और बुरे कामों में लगे रहते हैं व जिनके भाल ऊंचे हों तो वे प्राणी पृथ्वीपाल होते हैं और जिनके कपाल संकीर्ण हों तो वे प्राणी कृपण होते हैं ॥ ७६ ॥

रुदितलक्षणमाह—

रुदितमदीनमनश्रुस्निग्धं च शुभावहं मनुष्याणाम् ।
रूक्षं दीनं प्रचुराश्रु चैव न शुभप्रदं पुंसाम् ॥ ७७ ॥

जिनका रोना दीनता रहित व अश्रुपातविहीन होकर प्यारा हो तो उन प्राणियों को शुभदायक होता है व जिनका रोना रूखा व दीनतासूचक होकर बड़े आँसुवों वाला हो तो उन प्राणियों को शुभदायक नहीं होता है ॥ ७७ ॥

हसितलक्षणमाह—

हसितं शुभदमकम्पं सनिमीलितलोचनं च पापस्य ।
हृष्टस्य हसितमसकृत्सोन्मादस्यासकृत्प्रान्ते ॥ ७८ ॥

जिनके हँसने में शरीर कांपता न हो तो उन प्राणियों के लिये शुभदायक होता और जिसके हँसने में आँखें मूंद जावें तो वह प्राणी पापी होता है व जिसका हँसना वारंवार हो तो वह प्राणी हर्षित (सुखी) होता है और जो सारी कथा को सुनकर आख़िरी में वारंवार हँसता है तो वह प्राणी उन्मादी (पागल) होता है ॥ ७८ ॥

ललाटरेखालक्षणमाह—

तिस्रो रेखाः शतजीविनां ललाटायताः स्थिता यदि ताः ।
चतसृभिरवनीशत्वं नवतिश्चायुःसपञ्चाब्दा ॥ ७९ ॥

जिनके ललाट में यदि तीन रेखा चौड़ी होकर स्थित हों तो वे प्राणी सौवर्ष पर्यन्त जीते हैं और जिनके ललाट में चार रेखा हों तो वे प्राणी राजपदवी को पाकर पञ्चानवे वर्ष जीते हैं ॥ ७९ ॥

विच्छिन्नाभिश्चागम्यागामिनो नवतिरप्यरेखेण ।
केशान्तोपगताभी रेखाभिरशीतिवर्षायुः ॥ ८० ॥

जिनके ललाट में रेखा छिन्न भिन्न होकर प्रतीत हों तो वे प्राणी अगम्या रमणी में गमन करते हैं व जिनके कपाल में रेखा न हों तो वे प्राणी नब्बे वर्ष जीते हैं व जिनके कपाल में रेखायें यदि केशों (बालों) के समीपतक पहुँच गई हों तो वे प्राणी अस्सी वर्ष पर्यन्त जीते हैं ॥ ८० ॥

पञ्चभिरायुःसप्ततिरेकाग्रावस्थिताभिरपि षष्टिः ।
बहुरेखेण शतार्द्धं चत्वारिंशच्च वक्राभिः ॥ ८१ ॥

जिनके कपाल में पांच रेखा हों तो वे प्राणी सत्तर वर्ष जीते हैं व जिनके कपाल में रेखा एकाग्रावस्थित हों तो वे प्राणी साठि वर्ष जीते हैं व जिनके कपाल में बहुतसी रेखा हों तो वे प्राणी पचास वर्ष जीते हैं व जिनके कपाल में रेखा टेढ़ी हों तो वे प्राणी चालीस वर्ष की आयु पाते हैं ॥ ८१ ॥

त्रिंशद्भूलग्नाभिर्विंशतिकश्चैव वामवक्राभिः ।
क्षुद्राभिः स्वल्पायुर्न्यूनाभिश्चान्तरे कल्प्यम् ॥ ८२ ॥

जिनके ललाट में रेखायें यदि भौंहों में मिली हों तो वे प्राणी तीसवर्ष जीते हैं व जिनके ललाट में रेखायें बायें तरफ़ टेढ़ी हों तो वे प्राणी बीस वर्ष जीते हैं व जिनके कपाल में रेखायें बड़ी छोटी २ हों तो वे प्राणी स्वल्पायु होते हैं और जिनके कपाल में रेखा कम हों तो उन प्राणियों की अल्पायु की कल्पना करना चाहिये ॥ ८२ ॥

शिरोलक्षणमाह—

परिमण्डलैर्गवाढ्याश्छत्राकारैः शिरोभिरवनीशाः ।
चिपिटैः पितृमातृघ्नाः करोटिशिरसां चिरान्मृत्युः ॥ ८३ ॥

जिनके मस्तक मण्डलाकार (गोल) हों तो वे प्राणी गोधन से संपन्न होते हैं व जिन शीश छत्राकार (छाता के समान) हों तो वे प्राणी पृथ्वीपाल होते हैं व जिनके शी चपटे हों तो वे प्राणी यौवनकाल में माता पिता के मारने वाले होते हैं और जिनके शी दीर्घ हों तो वे प्राणी दीर्घजीवी होते हैं ॥ ८३ ॥

घटमूर्द्धाध्यानरुचिर्द्धिमस्तकः पापकृद्धनैस्त्यक्तः ।
निम्नन्तु शिरो महतां बहुनिम्नमनर्थदं भवति ॥ ८४ ॥

जिसका शीश घड़ा के समान हो तो वह प्राणी ध्यान में परायण रहता है व जिस दो शीश हों तो वह प्राणी पापकारी होकर निर्धनी होता है व जिनका शीश लचा हो वे प्राणी महन्त होते हैं और जिनका शीश बहुत ही गहरा हो तो उन प्राणियों को अ नर्थदायक होता है ॥ ८४ ॥

एकैकभवैः स्निग्धैः कृष्णैराकुञ्चितैरभिन्नाग्रैः ।
मृदुभिर्न चातिबहुभिः केशैः सुखभाक् नरेन्द्रो वा ॥ ८५ ॥

जिनके मस्तक के एक एक रोमकूप में एक एक बाल हों यदि वे बाल चिकने काले व टेढ़े हों व जिनका अग्रभाग भिन्न न हो व कोमल होकर बहुतसे न हों तो वह प्राणी सुखभागी या राजा होता है ॥ ८५ ॥

बहुमूलविषमकपिलाः स्थूलस्फुटिताग्रपरुषह्रस्वाश्च ।
अतिकुटिलाश्चातिघनाश्च मूर्धजा वित्तहीनानाम् ॥ ८६ ॥

जिनके मस्तक के एक एक रोमकूप में बहुतसे बाल हों यदि वे समान न होक पीले हों व अग्रभाग में मोटे होकर टूटे हों व कर्कश, छोटे व बहुतसे टेढ़े होकर अ घने हों तो वे प्राणी निर्धनी होते हैं ॥ ८६ ॥

गात्ररूक्षतालक्षणमाह —

यद्यद्गात्रं रूक्षं मांसविहीनं शिरापनद्धं च ।
तत्तदनिष्टं प्रोक्तं विपरीतमतः शुभं सर्वम् ॥ ८७ ॥

देह में जो जो गात्र रूखा व मांसहीन होकर नसों से व्याप्त हो वह वह अनिष्ट क गया है इससे विपरीत स्निग्ध, मांसविशिष्ट व अव्यक्त शिराविशिष्ट हो तो वह स शुभदायक होता है ॥ ८७ ॥

गात्रगंभीरादिलक्षणमाह—

त्रिषु विपुलो गम्भीरस्त्रिष्वेव षडुन्नतश्चतुर्ह्रस्वः ।

सप्तसु रक्तो राजा पञ्चसु दीर्घश्च सूक्ष्मश्च ॥ ८८ ॥

जिसकी देह के तीन स्थानों में चौड़ा हो व तीन स्थानों में गहरा हो व छः स्थानों में ऊंचा होकर चार स्थानों में ह्रस्व हो व सात स्थानों में लाल व पांच स्थानों में दीर्घ व सूक्ष्म हो तो वह प्राणी राजा होता है ॥ ८८ ॥

नाभ्यादीनां लक्षणमाह—

नाभिःस्वरं सत्त्वमिति प्रदिष्टं गम्भीरमेतत्त्रितयं नराणाम् ।
उरो ललाटं वदनं च पुंसां विस्तीर्णमेतत्त्रितयं प्रशस्तम् ॥ ८९ ॥

जिनकी नाभि, स्वर व शक्ति ये तीनों गंभीर हों तो वे पुरुष भाग्यवाले होते हैं और जिनके वक्षःस्थल, ललाट व मुख ये तीनों विस्तार वाले हों तो उन प्राणियों के लिये शुभदायक होते हैं ॥ ८९ ॥

वक्षआदिह्रस्वादिलक्षणमाह—

वक्षोऽथ कक्षानखनासिकास्यं कृकाटिका चेति षडुन्नतानि ।
ह्रस्वानि चत्वारि च लिङ्गपृष्ठं ग्रीवा च जङ्घे च हितप्रदानि ॥ ९० ॥

जिनके वक्षःस्थल, कक्षा (बगल) नख, नासिका, मुख और घांटी ये छः ऊंचे हों और लिङ्ग, पीठ, घींच और जंघा ये चार छोटे हों तो उन प्राणियों के लिये हितदायक होते हैं ॥ ९० ॥

नेत्रान्तपादादीनां रक्तादिलक्षणमाह—

नेत्रान्तपादकरताल्वधरोष्ठजिह्वा
रक्ता नखाश्च खलु सप्त सुखावहानि ।
सूक्ष्माणि पञ्च दशनाङ्गुलिपर्वकेशाः
साकं त्वचा कररुहाश्च न दुःखितानाम् ॥ ९१ ॥

जिनके नेत्रकोण, पादतल, करतल, तालु, निचला ओष्ठ, जिह्वा और नख ये सात लालवर्ण हों तो उन प्राणियों के लिये सुखदायक होते हैं और जिनके दांत, अँगुलियों के पर्व, केश (बाल) खाल और नख ये पांच छोटे हों तो वे प्राणी दुःखी होते हैं ॥ ९१ ॥

हन्वादीनां दीर्घलक्षणमाह—

हनुलोचनबाहुनासिकाः स्तनयोरन्तरमत्र पञ्चमम् ।
इति दीर्घमिदन्तु पञ्चकं न भवत्येव नृणामभूभृताम् ॥ ९२ ॥

जिनके हनु (ठुड्डी) लोचन, बाहु, नासिका (नाक) और स्तनों का अन्तर (मध्य ये पांच स्थान दीर्घ हों तो वे प्राणी राजा होते हैं और राजाओं से अन्य पुरुषों के पूर्वोक्त पञ्चस्थान दीर्घ नहीं होते हैं ॥ ६२ ॥

छायालक्षणमाह—

छाया शुभाशुभफलानि निवेदयन्ती
लक्ष्या मनुष्यपशुपक्षिषु लक्षणज्ञैः ।
तेजोगुणान्बहिरपि प्रविकाशयन्ती
दीपप्रभा स्फटिकरत्नघटस्थितेव ॥ ६३ ॥

छाया कान्ति या शरीर की शोभा शुभ व अशुभ फलों को निवेदन करती है इसलिये लक्षणज्ञाता विद्वानों को मनुष्य, पशु व पक्षियों में उसको लखना चाहिये जोकि बाहर भी तेज व गुणों को प्रकाशती है जैसे कि स्फटिक रत्नों के बने घड़े में टिकी हुई दीपक की प्रभा होती है ॥ ६३ ॥

पृथ्वीछायालक्षणमाह—

स्निग्धद्विजत्वङ्नखरोमकेशच्छाया सुगन्धा च महीसमुत्था ।
तुष्ट्यर्थलाभाभ्युदयान्करोति धर्मस्य चाहन्यहनि प्रवृत्तिम् ॥ ६४ ॥

यदि दाँत, खाल, नह, रोम और केश ये चिकने होकर सुगन्धित हों तो पृथ्वीतत्त्व से उपजी छाया (शरीर की शोभा) जानना चाहिये वह प्राणियों के लिये सन्तोष, धन लाभ और ऐश्वर्य को करती है और दिन दिन में धर्म की प्रवृत्ति कराती है यानी अस्थि मांस, नख, खाल और लोम ये पृथ्वी के गुण हैं यदि सुगन्धित पुरुष हो तो बुधजन पृथ्वीकी छाया मानना चाहिये ॥ ६४ ॥

जलच्छायालक्षणमाह—

स्निग्धासिताच्छहरितानयनाभिरामा
सौभाग्यमार्दवसुखाभ्युदयान्करोति ।
सर्वार्थसिद्धिजननी जननी च चाप्या
छायाफलं तनुभृतां शुभमादधाति ॥ ६५ ॥

यदि किसी प्राणी के शरीर की शोभा चिकनी, सफ़ेद, साफ़ व सब्ज़ होकर नयनों रमानेवाली हो तो उसे जलकी छाया जानना चाहिये वह प्राणियों के लिये सौभा कोमलता, सुख व ऐश्वर्य को करती है और माता के समान होकर समग्र अर्थों

सिद्धिको उपजाती हुई शुभदायक फलको धारती है यानी शुक्र, शोणित, मज्जा, मल और मूत्र ये पांच जल के गुण हैं यदि प्राणी मिष्टरसभोजी हो तो चन्द्रशुक्र कृत जल की छाया मानना चाहिये ॥ ९५ ॥

अग्निच्छायालक्षणमाह—

चण्डा धृष्या पद्महेमाग्निवर्णा युक्ता तेजो विक्रमैः सप्रतापैः।
आग्नेयीति प्राणिनां स्याज्जयाय क्षिप्रं सिद्धिं वाञ्छितार्थस्य धत्ते ॥ ९६ ॥

यदि शरीर की शोभा प्रचण्ड, भयजनक, कमल, सुवर्ण व आगी के समान वर्णवाली होकर प्रताप समेत तेज व विक्रमों से संयुक्त हो तो उसे अग्नि की छाया जानना चाहिये वह प्राणियों की जयके लिये होती है और शीघ्रही वाञ्छित अर्थ की सिद्धि को धारती है यानी निद्रा, क्षुधा, प्यास, क्लान्ति और आलस्य ये अग्नि के गुण हैं यदि अतीव रूपवान् होकर पुरुष सुकान्त हो तो सूर्य भौमकृत आग्नेयी छाया जानना चाहिये ॥ ९६ ॥

वाय्वाकाशच्छायालक्षणमाह—

मलिनपरुषकृष्णा पापगन्धानिलोत्था
जनयति वधबन्धव्याध्यनर्थार्थनाशान् ।
स्फटिकसदृशरूपा भाग्ययुक्तात्युदारा
निधिरिव गगनोत्था श्रेयसां स्वच्छवर्णा ॥ ९७ ॥

यदि शरीर की शोभा मैली, कठोर व काली होकर दुर्गन्धित हो तो उसे वायु की छाया जानना चाहिये जोकि पुरुषों के लिये वध, बन्ध, व्याधि, अनर्थ व अर्थनाश को उपजाती है यानी धावन, चालन, क्षेपण, संकोचन व प्रसारण ये ५ वायु के गुण हैं यदि पावों का स्पर्शन कोमल हो तो शनैश्चरकृत वायवी छाया जानना चाहिये और यदि शरीर की शोभा स्फटिकसदृश होकर निर्मल हो तो आकाश की छाया जानना चाहिये जोकि भाग्यसूचक, औदार्यशाली होकर निधि के नाईं पुरुषों के लिये शुभदायक होती है यानी काम, क्रोध, लोभ, मोह व लज्जा ये पांच आकाश के गुण हैं यदि पुरुष के वचन कानों को सुखकारी हों तो गुरुकृत नाभसी छाया मानना चाहिये ॥ ९७ ॥

---

१ ईश्वर उवाच । अस्थि मांसं नखं चैव त्वग्लोमानि पञ्चमम् । पृथ्व्याः पञ्चगुणाः प्रोक्ता ब्रह्मज्ञानेन भाषते १ शुक्रं शोणितमज्जे च मलमूत्रं च पञ्चमम् । अपां पञ्चगुणाः प्रोक्ता ब्रह्मज्ञानेन भाषते २ निद्रा क्षुधा तृषा क्लान्तिरालस्यं चैव पञ्चमम् । तेजः पञ्चगुणाः प्रोक्ता ब्रह्मज्ञानेन भाषते ३ धावनं चालनं क्षेपः संकोचं प्रसरन्तथा । वायोः पञ्चगुणाः प्रोक्ता ब्रह्मज्ञानेन भाषते ४ कामः क्रोधस्तथा मोहो लज्जा लोभश्च पञ्चमम् । नभः पञ्चगुणाः प्रोक्ता ब्रह्मज्ञानेन भाषते ५ । (इति ज्ञानसंकलिनीतन्त्रे) ॥

छायादेवतालक्षणमाह—

छाया[1]ः क्रमेण कुजलाग्न्यनिलाम्बरोत्थाः
केचिद्वदन्ति दश ताश्च यथानुपूर्व्वाः।
सूर्याब्जनाभपुरुहूतयमोडुपानां
तुल्यास्तु लक्षणफलैरिति तत्समानाः॥ ९८॥

पृथ्वी[2], जल, अग्नि, वायु, आकाश इन तत्त्वों से उपजी हुई क्रम से पांच छाया हैं उन को कितेक आचार्यों ने यथानुपूर्वी दश कहा है सूर्य, विष्णु, इन्द्र, यमराज और चन्द्रमा ये ५ पूर्वोक्त छायाओं के ५ देवता हैं उन्हीं के तुल्य छाया हैं लक्षण व फलों से प्राणी उन्हींके समान होते हैं यानी जिस प्राणी में जिस तत्त्व की छाया के लक्षण व फल घटित हों उन्हींके समान प्राणियों को लक्षण व फल बतलाना चाहिये॥ ९८॥

स्वरलक्षणमाह—

करिवृषरथौघभेरीमृदङ्गसिंहाब्दनिःस्वनाः।
गर्दभजर्जररूक्षस्वराश्च धनसौख्यसंत्यक्ताः॥ ९९॥

जिसका शब्द हाथी, बैल, रथसमूह, भेरी, मृदंग, सिंह और मेघ के समान हो तो वह प्राणी राजा होता है और जिसका शब्द (कण्ठध्वनि) गदहे के समान व जर्जर होकर रूखा हो तो वह प्राणी धन व सुखों से रहित होता है॥ ९९॥

सप्तसारलक्षणमाह—

सप्त भवन्ति च सारा मेदो मज्जात्वगस्थिशुक्राणि।
रुधिरं मांसं चेति प्राणभृतां तत्समानफलम्॥ १००॥

मेदा, मज्जा, त्वचा, अस्थि, शुक्र, रुधिर और मांस ये सात प्राणियों के शरीर में सारपदार्थ हैं उन्हींके समान फल को कहै॥ १००॥

रक्तसारलक्षणमाह—

तालोष्ठदन्तपाली जिह्वा नेत्रान्तपायुकरचरणैः।
रक्तैस्तु रक्तसारा बहुसुखवनितार्थपुत्रयुक्ताः॥ १॥

जिनके तालु, ओठ, दाँत, कर्णरन्ध्र, जिह्वा, नेत्रप्रान्त, गुदा, हाथ और पैर ये लाल

---

१ छायां महाभूतकृतां च सर्वेभिव्यञ्जयन्ति स्वदशामवाप्य। कम्ब्वग्निवाय्वम्बरजा गुणांश्च नासास्यदृक्त्वक्श्रवणानुमेयानिति (बृहज्जातके)॥

२ गन्धो रसस्तथा रूपं स्पर्शः शब्दश्च पञ्चम इति वेदान्तिनां मते पृथिव्यागन्धः जलस्यरसः, अग्नेः रूपम्, वायोः स्पर्शः, आकाशस्य शब्दस्तन्मात्रा इति॥

वर्ण हों तो उन प्राणियों में रक्ताधिक्य जानना चाहिये और वे प्राणी बहुसुखशाली, स्त्री-समन्वित व धनी होकर पुत्रवान् होते हैं ॥ १ ॥

मज्जामेदस्सारलक्षणमाह—

स्निग्धत्वचा धनिनो मृदुभिः सुभगा विचक्षणास्तनुभिः ।
मज्जा मेदः साराः सुशरीराः पुत्रवित्तयुक्ताः ॥ २ ॥

जिनकी खाल चिकनी हो व शरीर कोमल हो तो उन प्राणियों में त्वचा का सार जानना चाहिये और वे प्राणी धनी व सौभाग्यशाली होकर बड़े पण्डित होते हैं व जिन का शरीर अतिसुशोभन हो तो उन प्राणियों में मज्जा व मेदा का सार जानना चाहिये और वे प्राणी पुत्रवान् होकर धनशाली होते हैं ॥ २ ॥

अस्थिशुक्रसारलक्षणमाह—

स्थूलास्थिरस्थिसारो बलवान् विद्यान्तगः सुरूपश्च ।
बहुगुरुशुक्राः सुभगा विद्वांसो रूपवन्तश्च ॥ ३ ॥

जिसके शरीर की हड्डियाँ मोटी हों तो उस प्राणी में अस्थि का सार जानना चाहिये और वह प्राणी बलवान् व विद्यावान् होकर बड़े रूपवाला होता है और जिनके शरीर में शुक्र व गुरु अधिक हो तो उन प्राणियों में शुक्रसार जानना चाहिये और वे प्राणी सौभाग्यशाली व विद्वान् होकर रूपवान् होते हैं ॥ ३ ॥

संघातलक्षणमाह—

उपचितदेहो विद्वान् धनी सुरूपश्च मांससारो यः ।
संघात इति च सुश्लिष्टसन्धिता सुखभुजो ज्ञेयाः ॥ ४ ॥

जिसकी देह भलीभाँति पुष्ट हो तो उसमें मांस का सार जानना चाहिये और वह प्राणी विद्वान् व धनवान् होकर बड़ा रूपवान् होता है व जिनकी देहसमुदाय में समग्र सन्धियां मजबूत हों तो उन प्राणियों को सुखभोगी जानना चाहिये ॥ ४ ॥

स्निग्धलक्षणमाह—

स्नेहः पञ्चसु लक्ष्यो वाग्जिह्वादन्तनेत्रनखसंस्थः ।
सुतधनसौभाग्ययुताः स्निग्धैस्तैर्निर्धनारूक्षैः ॥ ५ ॥

पाँच स्थानों में स्निग्धता देखना चाहिये जोकि वाक्य, जिह्वा, दन्त, नेत्र और नखों में रहती है जिनके पांचों स्थानों में स्निग्धता प्रतीत हो तो वे प्राणी पुत्रवान् व धनवान् होकर सौभाग्यशाली होते हैं और जिन के पँचो स्थानों में रूक्षता लक्षित हो तो वे प्राणी निर्धनी होते हैं ॥ ५ ॥

वर्णलक्षणमाह—

द्युतिमान् वर्णः स्निग्धः क्षितिपानां मध्यमः सुतार्थवताम् ।
रूक्षो धनहीनानां शुद्धश्शुभदो न संकीर्णः ॥ ६ ॥

जिनका वर्ण तेजस्वी होकर चिकना हो तो वे प्राणी पृथ्वीपाल होते हैं व जिनका वर्ण मध्यम हो तो वे प्राणी पुत्रवान् होकर धनवान् होते हैं व जिनका वर्ण रूखा हो वे प्राणी निर्धनी होते हैं व जिनका वर्ण शुद्ध हो तो उन प्राणियों को शुभदायक होता है और जिनका वर्ण मिश्रित हो तो वे प्राणी बड़े दीन होते हैं ॥ ६ ॥

मुखस्वभावलक्षणमाह—

साध्यमनूकं वक्राद्गोवृषशार्दूलसिंहगरुडमुखाः ।
अप्रतिहतप्रतापा जितरिपवो मानवेन्द्राश्च ॥ ७ ॥

मुख से स्वभाव को साधना चाहिये इसलिये जिनका मुख गौ, बैल, वाघ, सिंह और गरुड़ के समान हो तो वे प्राणी राजा होते हैं जिनका प्रताप सब कहीं बना रहता है और युद्ध में वैरिवर्गों को पराजित करते हैं ॥ ७ ॥

वानरादिमुखलक्षणमाह—

वानरमहिषवराहाजतुल्यवदनाः सुतार्थसुखभाजः ।
गर्दभकरभप्रतिमैर्मुखैः शरीरैश्च निःस्वसुखाः ॥ ८ ॥

जिनके मुख वानर, भैंसा, शूकर और बकरे के समान हों तो वे प्राणी पुत्रवान् व धनवान् होकर सुखभागी होते हैं व जिनके मुख और शरीर गदहे व ऊंट के समान हों तो वे प्राणी दरिद्री होकर दुःखी बने रहते हैं ॥ ८ ॥

शरीरांगुलप्रमाणमाह—

अष्टशतं षण्णवतिः परिमाणं चतुरशीतिरिति पुंसाम् ।
उत्तमसमहीनानामङ्गुलसंख्यास्वमानेन ॥ ९ ॥

जिनका शरीर अपने अंगुल परिमाण से एकसौ आठ १०८ अंगुल ऊंचा हो तो वे प्राणी उत्तम होते हैं व जिनका शरीर ९६ छानवे अंगुल ऊंचा हो तो वे प्राणी मध्यम होते हैं व जिनका शरीर चौरासी ८४ अंगुल ऊंचा हो तो वे प्राणी अधम होते हैं ॥ ९ ॥

भारार्धतनुः सुखभाक् तुलितोऽतो दुःखभाग्भवत्यूनः ।
भारोतीवाढ्यानामध्यर्द्धः सर्वधरणीशः ॥ १० ॥

---

१ "भारः स्याद्विंशतिस्तुला इत्यमरः" इस प्रमाण से बीस तुला का भार होताहै अथवा दोहज़ार पल या आठ हज़ार तोले का भार कहाता है अथवा २॥ऽ मन का होता है ॥

जिसका शरीर तौलने में आधभार यानी एकमन हो तो वह प्राणी सुखभागी होता है व जिसका शरीर तौलने में आधेभार से भी कम हो तो वह प्राणी दुःखभागी होता है व जिसका शरीर तौलने में एकभार यानी दोमन हो तो वह प्राणी 'धनाढ्य' होता है और जिसका शरीर तौलने में डेढ़भार यानी तीनमन हो तो वह प्राणी सारी पृथ्वी का स्वामी होता है ॥ १० ॥

मानवर्षप्रमाणमाह—

विंशतिवर्षा नारी पुरुषः खलु पञ्चविंशतिभिरब्दैः ।
अर्हति मानोन्मानं जीवितभागे चतुर्थे वा ॥ ११ ॥

जिस समय नारी बीसवर्ष की हो और पुरुष पचीसवर्ष का हो तो मान व उन्मान के योग्य होता है यानी उच्चता व वज़न का फल कहना चाहिये अथवा वायु के चौथे भाग में उच्चता व वज़न को जानकर फलादेश कहना चाहिये ॥ ११ ॥

भूजलशिख्यनिलाम्बरसुरनररक्षःपिशाचकतिरश्चाम् ।
सत्त्वेन भवति पुरुषो लक्षणमेतद्भवत्येषाम् ॥ १२ ॥

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, देवता, मनुष्य, राक्षस, पिशाच और पशु इन्हों के स्वभाव के समान स्वभाववाला पुरुष हो तो इन्हों के ये लक्षण होते हैं उनका आगे विवरण करते हैं ॥ १२ ॥

महीजलस्वभावलक्षणमाह—

महीस्वभावः शुभपुष्पगन्धः संभोगवान् सुश्वसनः स्थिरश्च ।
तोयस्वभावो बहुतोयपायी प्रियाभिलाषी रसभोजनश्च ॥ १३ ॥

जिसका स्वभाव पृथ्वी का सा हो तो उस प्राणी के शरीर में उत्तम फूल के समान गन्ध आती है और वह बड़ा भोगवान् व अच्छी श्वासवाला होकर स्थिर रहता है व जिसका स्वभाव जल के समान हो तो वह प्राणी बहुत से जलको पीता व प्यारे की अभिलाषा करता हुआ रसों को खाता है ॥ १३ ॥

अग्निवायुस्वभावलक्षणमाह—

अग्निप्रकृत्या चपलोऽतितीक्ष्णश्चण्डः क्षुधालुर्बहुभोजनश्च ।
वायोः स्वभावेन चलः कृशश्च क्षिप्रं च कोपस्य वशं प्रयाति ॥ १४ ॥

जिसका स्वभाव अग्नि के समान हो तो वह प्राणी चपल व बड़ा तीखा व कोपी तथा क्षुधावान् होकर बहुत से भोजनों को करता है व जिसका स्वभाव वायु के समान

हो तो वह प्राणी चंचलबुद्धिवाला व दुबला होकर वेगही कोप के वश में आकर न हो जाता है ॥ १४ ॥

आकाशस्वभावलक्षणमाह—

खप्रकृतिर्निपुणो विवृतास्यः शब्दगतौ कुशलः शुषिराङ्गः ।
त्यागयुतः पुरुषो मृदुकोपः स्नेहरतश्च भवेत्सुरसत्त्वः ॥ १५ ॥

जिसका स्वभाव आकाश के समान हो तो वह प्राणी निपुण व बगरे मुखवाल तथा शब्दशास्त्र में कुशली होकर शरीर में गड़हे का रखनेवाला होता है और जिसक स्वभाव देवता के समान हो तो वह प्राणी दानशाली व अल्पक्रोधी होकर प्रेम परायण रहता है ॥ १५ ॥

मनुजसत्त्वलक्षणमाह—

मर्त्यसत्त्वसंयुतो गीतभूषणप्रियः ।
संविभागशीलवान्नित्यमेव मानवः ॥ १६ ॥

जिसका स्वभाव मनुष्य के समान हो तो वह प्राणी गानेवाला व भूषणों का प्यार करनेहारा व भलीभांति विभागवान् होकर सदैव शीलवान् रहता है ॥ १६ ॥

रक्षःपिशाचलक्षणमाह—

तीक्ष्णप्रकोपः खलचेष्टितश्च पापश्च सत्त्वेन निशाचराणाम्[२] ।
पिशाचसत्त्वश्चपलो मलाक्तो बहुप्रलापी च समुल्बणाङ्गः ॥ १७ ॥

जिसका स्वभाव राक्षसों के समान हो तो वह प्राणी तीखे कोपवाला व खलों के समान चेष्टारखनेहारा होकर पापी होता है व जिसका स्वभाव पिशाच के समान हो तो वह प्राणी चपल, मैला व बकवादी होकर बड़े डीलडौलवाला होता है ॥ १७ ॥

पशुसत्त्वलक्षणमाह—

भीरुः क्षुधालुर्बहुभुक्च यः स्याज्ज्ञेयः ससत्त्वेन नरस्तिरश्चाम्[३] ।
एवं नराणां प्रकृतिः प्रदिष्टा यल्लक्षणज्ञाः प्रवदन्ति सत्त्वम् ॥ १८ ॥

जिसका स्वभाव पशुओं के समान हो तो उस प्राणी को डरपोक, क्षुधार्त

---

१ शुचिरत्यन्तदाता च भूमिजीवी च गोहितः । चातुर्वर्ण्याः समाजाता ज्ञातव्याः क्रमशो बुधै स्थूलाङ्गामलिनाश्चैव रमकाः प्राणहारकाः । मांसप्रियानास्तिकाश्च ते जाता व्याधयोनय

२ कालस्कन्धा महोक्षाश्च भीमाभीमपराक्रमाः । बह्वाशिनःसर्ववैरास्ते पूर्वे राक्षसाःस्मृता

३ त्रासयुक्ताः कर्मरताः स्वोदराभरणेयुताः । व्यवहारविहीनाश्च ते पूर्वे पशुजातय इतस्ततो भ्रमेन्नित्यं गहनेषु पृषोदरः । भीतियुक्ताः स्वल्पकायास्ते जाताः पक्षियोनयः ॥ ब कार्येषु ये क्षुद्रास्ते पूर्वं क्षुद्रजातयः ॥

हुभोजी जानना चाहिये इस प्रकार पुरुषों का स्वभाव कहागया जिस स्वभाव को लक्षण-ज्ञाता लोग कहते हैं ॥ १८ ॥

गतिलक्षणमाह—

शार्दूलहंससमदद्विपगोपतीनां तुल्या भवन्ति गतिभिः शिखिनां च भूपाः।
येषां च शब्दरहितं स्तिमितं च यातं तेपीश्वरा द्रुतपरिप्लुतगा दरिद्राः॥१९॥

जिनका गमन बाघ, हंस, मतवाला हाथी, बैल और मोर के समान हो तो वे प्राणी राजा होते हैं व जिनका गमन शब्दरहित होकर निश्चल हो तो वेभी प्राणी समर्थवान् होते हैं और जिनका गमन शीघ्रता से हो तो वे प्राणी दरिद्री होते हैं ॥ १९ ॥

श्रान्तस्य यानमशनं च बुभुक्षितस्य पानं तृषा परिगतस्य भयेषु रक्षा।
एतानि यस्य पुरुषस्य भवन्ति काले धन्यं वदन्ति खलु तं नरलक्षणज्ञाः॥२०॥

थकेहुए को सवारी देना, भूखे को भोजन खिलाना, प्यासे को पानी पिलाना व भय में प्राप्तहुए पुरुष को अभयदान देना ये जिस पुरुष को समय पर होते हैं उस प्राणी को नरलक्षणों के ज्ञाता लोग निश्चयकर धन्यवाद देते हैं ॥ २० ॥

पुरुषलक्षणमुक्तमिदं मया मुनिमतान्यवलोक्य समासतः।
इदमधीत्य नरो नृपसंमतो भवति देवि जनस्य च वल्लभः॥ २१ ॥

अहो देवि! मुनियों के मत को देखकर मैंने संक्षेप से पुरुषों के ये लक्षण कहे इनको पढ़कर प्राणी राजाओं से संमत होकर सर्वजनों का प्यारा होता है ॥ २१ ॥

इति बृहत्सामुद्रिके पण्डितशक्तिधरसंकलिते भाषाभाष्ये पुरुषलक्षणंनाम प्रथमं प्रकरणम् ॥ १ ॥

अथ स्त्रीणां लक्षणं व्याख्यायते॥

अथातः संप्रवक्ष्यामि नारीणां लक्षणं प्रिये!।
श्रूयतां देवदेवेशि समाधाय मनोऽमलम् ॥ १ ॥

अब इसके उपरान्त अहो प्रिये! मैं नारियों के लक्षण भलीभाँति कहूंगा इसलिये हे देवदेवेशि! अपने अमल मन को सावधान कर सुनिये ॥ १ ॥

नखपादादिलक्षणमाह—

स्निग्धोन्नताग्रतनुताम्रनखौ कुमार्याः
पादौ समोपचितचारुनिगूढगुल्फौ।

श्लिष्टाङ्गुलीकमलकान्तितलौ च यस्या-
स्तामुद्वहेद्यदि भुवोधिपतित्वमिच्छेत् ॥ २ ॥

जिस कुमारी के नख चिकने होकर ऊंचे हों व जिनका अग्रभाग पतला हो व तांबे समान वर्ण हो व दोनों पैर समान व कुछेक मोटे होकर मनोरम हों व जिनमें गंठे (टखने) छिपे हों व अंगुलियाँ परस्पर मिली हों व तलवे कमल के समान शोभावाले हों तो उस कुमारी को सुलक्षणा जानना चाहिये यदि कोई प्राणी पृथ्वीपति होने की चाहना करे तो उस कुमारी को अपने साथ विवाह करै ॥ २ ॥

मत्स्यादिचिह्नयुतपादजङ्घादिलक्षणमाह—

मत्स्यांकुशाब्जयववज्रहलासिचिह्नावस्वेदनौ मृदुतलौ चरणौ प्रशस्तौ ।
जङ्घे च रोमरहिते विशिरे सुवृत्ते जानुद्वयं सममनुल्बणसन्धिदेशम् ॥ ३ ॥
ऊरू घनौ करिकरप्रतिमावरोमावश्वत्थपत्रसदृशं विपुलं च गुह्यम् ।
श्रोणीललाटमुरुकूर्मसमुन्नतं च गूढो मणिश्च विपुलां श्रियमादधाति ॥४॥

जिसके चरणतल में मछली, अंकुश, कमल, यव, वज्र, हल और तलवार के चिह्न हों व जिनमें पसीना न आता हो व तलवे कोमल हों तो उस नारी के वे चरण प्रशस्त होते हैं व जङ्घायें रोमरहित व नसों से विहीन होकर गोलाकार हों व दोनों घुटनू समान होकर सन्धिदेश में मांसल हों व दोनों ऊरु घने व हाथी के सूंड़ के समान होकर रोमों से रहित हों व गुह्याङ्ग पीपलपत्र के समान होकर विस्तीर्ण हो व कमर तथा ललाट चौंड़े होकर कछुवे के समान ऊंचे हों और मणि छिपी हो तो वह नारी बड़ी संपदा को धारती है ॥ ३ । ४ ॥

नितम्बनाभिलक्षणमाह—

विस्तीर्णमांसोपचितो नितम्बो गुरुश्च धत्ते रसनाकलापम् ।
नाभिर्गभीरा विपुलाङ्गनानां प्रदक्षिणावर्तगता प्रशस्ता ॥ ५ ॥

यदि स्त्रियों का नितम्ब (कटिपश्चाद्भाग) विस्तीर्ण व मांसल होकर गुरुतर हो वह करधनियों के समूह को धारता है और यदि नारियों की नाभि गंभीर व विपुल होकर प्रदक्षिणावर्त को प्राप्त हो तो वह प्रशस्त होती है ॥ ५ ॥

स्त्रीकट्यादिलक्षणमाह—

मध्यं स्त्रियास्त्रिवलिनाथविरोमशं च वृत्तौ घनावविषमौ कठिनावुरस्यौ

रोमापवर्जितमुरो मृदु चाङ्गनानां ग्रीवा च कम्बुनिचितार्थसुखानि धत्ते ॥६॥

यदि स्त्रियों का मध्यभाग त्रिवलीयुक्त होकर रोमों से रहित हो व दोनों स्तन घने व अविषम होकर कठिन हों व वक्षःस्थल कोमल होकर रोमों से विहीन हो और ग्रीवा (घींच) शङ्ख के समान हो तो वह नारी धनवती होकर सुखों को धारती है ॥ ६ ॥

स्त्रीणामधरलक्षणमाह—

बन्धुजीवकुसुमोपमोधरो मांसलो रुचिरबिम्बरूपभृत् ।
कुन्दकुड्मलनिभाः समाद्विजा योषितां पतिसुखामितार्थदाः ॥ ७ ॥

जिन स्त्रियों का अधर दुपहरियाफूल के समान होकर मांसल हो अथवा पके कुंदरू फल के समान हो और दाँत कुन्दकली के समान होकर बराबर हों तो वे स्त्रियाँ पति को सुखी करती हुई वे प्रमाण धन को देती हैं ॥ ७ ॥

स्त्रीणांचित्तादिलक्षणमाह—

दाक्षिण्ययुक्तमशठं परपुष्टहंसवल्गुप्रभाषितमदीनमनल्पसौख्यम् ।
नासा समा समपुटारुचिरा प्रशस्ता दृग्नीलनीरजदलद्युतिहारिणी च ॥ ८ ॥

जिन स्त्रियों का चित्त दयाशील होकर कपट से रहित हो व जिनका शब्द कोकिला व हंसशब्द के समान मनोहर होकर दीनतासूचक न हो तो वे स्त्रियाँ बड़े सौख्य को पाती हैं व जिनकी नासिका सम व समान पुटवाली होकर दर्शनीय हो तो प्रशस्त जानना चाहिये व जिनके दोनों नेत्र नील कमलदल के समान हों तो अच्छे कहाते हैं ॥ ८ ॥

भ्रूललाटलक्षणमाह—

नो संगते नातिपृथू न लम्बे शस्ते भ्रुवौ बालशशाङ्कवक्रे ।
अर्धेन्दुसंस्थानमरोमशं च शस्तं ललाटं न नतं न तुङ्गम् ॥ ९ ॥

स्त्रियों की दोनों भौंहें यदि संलग्न व अतिविस्तृत व बहुत लम्बी न होकर बालचन्द्रमा के समान टेढ़ी हों तो प्रशस्त कहाती हैं व जिनका ललाट अर्धचन्द्राकार व लोमों से रहित होकर न लचा हो न ऊंचा हो तो प्रशस्त जानना चाहिये ॥ ९ ॥

कर्णकेशलक्षणमाह—

कर्णयुग्ममपि युक्तमांसलं शस्यते मृदुसमं समाहितम् ।
स्निग्[1]धनीलमृदुकुञ्चितैकजा मूर्धजाः सुखकराः समं शिरः ॥ १० ॥

---

१ स्निग्धकेशी विशालाक्षी सुरुथा वीरा मृदुत्वचा । सुमुखी सुभगा कन्या तां कन्यां वरयेद्बुधः ॥

स्त्रियों के दोनों कान मांसल, कोमल व समान होकर अचल हों तो प्रशस्त कहाते व केश चिकने, काले, कोमल व टेढ़े होकर रोमकूपों से एक २ उपजे हों तो सुखका होते हैं और यदि शिर समान हो तो सुखदायक होता है ॥ १० ॥

रमणीनांराजलक्षणमाह—

भृङ्गारासनवाजिकुञ्जररथश्रीवृक्षयूपेषुभि-
र्मालाकुण्डलचामरांकुशयवैः शैलैर्ध्वजैस्तोरणैः ।
मत्स्यस्वस्तिकवेदिकाव्यजनकैः शङ्खातपत्राम्बुजैः
पादे पाणितलेपि वा युवतयो गच्छन्ति राज्ञीपदम् ॥ ११ ॥

जिन स्त्रियों के करतल व पादतल में झारी, आसन, घोड़ा, हाथी, रथ, श्रीफल वृक्ष, यूप, बाण, माला, कुण्डल, चामर, अंकुश, यव, पर्वत, ध्वजा, तोरण, मछली, त्रिकोण, वेदिका, पंखा, शङ्ख, छाता और कमल इन्हों के चिह्न प्रतीत हों तो वे स्त्रियाँ रानी के पदको पाती हैं ॥ ११ ॥

मणिबन्धादिलक्षणमाह—

निगूढमणिबन्धनौ तरुणपद्मगर्भोपमौ
करौ नृपतियोषितां तनुविकृष्टपर्वाङ्गुलौ ।
न निम्नमतिनोन्नतं करतलं सुरेखान्वितं
करोत्यविधवां चिरं सुतसुखार्थसंभोगिनीम् ॥ १२ ॥

जिनके हाथ छिपे मणिबन्धनोंवाले होकर नवीन कमलगर्भ के समान हों कि जिनमें सारी अंगुलियाँ पतली होकर विरल हों तो वे स्त्रियां राजपत्नी (रानी) होती हैं और जिनका करतल गहरा व ऊंचा न होकर सुरेखाओं से संयुत हो तो उन स्त्रियों को अविधवा करता हुआ व बहुत समयतक पुत्रवती, सुखवती व धनवती रखता हुआ संभोगिनी बनाता है ॥ १२ ॥

ऊर्ध्वरेखालक्षणमाह—

मध्याङ्गुलिं या मणिबन्धनोत्था रेखा गता पाणितलेऽङ्गनायाः ।
ऊर्ध्वस्थिता पादतलेथवा या पुंसोथवा राज्यसुखाय सा स्यात् ॥१३

जिसके करतल में मणिबन्धन से उठी जो ऊर्ध्वरेखा मध्यमा के मूल में विद्यमान हो तो वह स्त्री रानी होती है अथवा इसीभांति पादतल में ऊर्ध्वरेखा टिकी हो तो भी

रानी होती है अथवा अपने पुरुष को राज्यसुख के लिये होती है अथवा जिस पुरुष के करतल या पादतल में ऊर्ध्वरेखा उपस्थित हो तो वह प्राणी भी राजा होता है ॥ १३ ॥

परमायुर्लक्षणमाह—

कनिष्ठिकामूलभवा गता या प्रदेशिनी मध्यमिकान्तरालम् ।
करोति रेखा परमायुषः सा प्रमाणमूना तु तदूनमायुः ॥ १४ ॥

जिन स्त्रियों के करतल में कनिष्ठा अँगुली की मूल से उपजीहुई जो रेखा तर्जनी व मध्यमा के बीच में विद्यमान हो तो वह उन स्त्रियों को परमायु करती है और जो प्रमाण से कम हो तो कम आयु को देती है ॥ १४ ॥

अंगुष्ठमूलरेखाज्ञानमाह—

अंगुष्ठमूले प्रसवस्य रेखा पुत्रा बृहत्यः प्रमदास्तु तन्व्यः ।
अच्छिन्नदीर्घा बृहदायुषां ता अल्पायुषां छिन्नलघुप्रमाणाः ॥ १५ ॥

स्त्रियों के अँगूठे की मूल में सन्तान की रेखायें होती हैं उनमें जो बड़ी रेखा हों तो पुत्रकी रेखा जानना चाहिये और जो छोटी रेखा हों तो कन्याओं की रेखा जानना चाहिये और जो रेखा छिन्न भिन्न न होकर दीर्घ हों तो बड़े उमरवालों की होती हैं और जो छिन्नभिन्न होकर छोटी रेखा प्रतीत हों तो कम उमरवालों की कहाती हैं ॥१५॥

इतीदमुक्तं शुभमङ्गनानामतो विपर्यस्तमनिष्टमुक्तम् ।
विशेषतोनिष्टफलानि यानि समासतस्तान्यनुकीर्तयामि ॥ १६ ॥

इसप्रकार जो स्त्रियों के शुभदायक लक्षण कहे हैं उनसे जो उलटे हैं वे अनिष्टदायक कहे गये हैं इसलिये विशेषता से जो अनिष्टफलदायक हैं उनको मैं संक्षेप से कहता हूं ॥ १६ ॥

पादाङ्गुलिलक्षणमाह—

कनिष्ठिका वा तदनन्तरा वा महीं न यस्याः स्पृशती स्त्रियाः स्यात् ।
गताथवाङ्गुष्ठमतीत्य यस्याः प्रदेशिनी सा कुलटाऽतिपापा ॥ १७ ॥

जिस स्त्री के गमनकाल में पैरकी कनिष्ठा व अनामिका अँगुली पृथ्वी का स्पर्श न करती हो अथवा जिस स्त्री के पैरकी तर्जनी अँगुली अँगूठे को उलांघ कर पहुँचगई हो तो वह स्त्री कुलटा (व्यभिचारिणी) होकर पापकारिणी होती है ॥ १७ ॥

पिण्डिकोदरलक्षणमाह—

उद्बद्धाभ्यां पिण्डिकाभ्यां शिराले शुष्के जङ्घे रोमशे चातिमांसे ।

वामावर्तं निम्नमल्पं च गुह्यं कुम्भाकारं चोदरं दुःखितानाम् ॥ १८ ॥

जिन स्त्रियों की पेंडुरियाँ ऊँची हों व जङ्घायें लोमोंवाली व अतिमांसल या सू होकर नसों से व्याप्त हों यानी नसें झलझलाती हों और जिनका गुह्यदेश वामावर्त हो व गहरा व छोटासा प्रतीत हो और जिनका उदर घड़ा सा हो तो वे स्त्रियाँ दुःखभागि होती हैं ॥ १८ ॥

ग्रीवालक्षणमाह—

ह्रस्वयातिनिःस्वता दीर्घया कुलक्षयः ।
ग्रीवया प्रथूत्थया योषितः प्रचण्डता ॥ १९ ॥

जिन स्त्रियों की ग्रीवा (घींच) बहुत छोटी हो तो वे दरिद्रिणी होती हैं व जिनकी ग्रीवा दीर्घ हो यानी लम्बी हो तो वे स्त्रियाँ वंश को विनाशती हैं व जिनकी ग्रीवा चौड़ी होकर ऊँची हो तो वे स्त्रियां कोप में परायण रहती हैं यानी आठों पहर कोपही किया करती हैं ॥ १९ ॥

नेत्रगण्डकूपलक्षणमाह—

नेत्रे यस्याः केकरे पिङ्गले वा सा दुःशीला श्यावलोलेक्षणा च ।
कूपो यस्या गण्डयोश्च स्मितेषु निःसंदिग्धं बन्धकीं तां वदन्ति ॥ २० ॥

जिसके दोनों नेत्र टेढ़े होकर पिंगलवर्ण (पीले) हों तो वह स्त्री दुश्चरित्रा होती है अथवा जिसके नेत्र पिङ्गलवर्ण हों और चञ्चल चितवनि हो तो भी वह स्त्री दुश्चरित्रा होती है और जिसके हँसने के समय गालों में गड़हे पड़जाते हों तो उस स्त्री को मुनियों ने निःसंदेह बन्धकी (असती) कहा है ॥ २० ॥

ललाटलक्षणमाह—

प्रविलम्बिनि देवरं ललाटे श्वशुरं हन्त्युदरे स्फिजोः पतिं च ।
अतिरोमचयान्वितोत्तरोष्ठी न शुभा भर्तुरतीव या च दीर्घा ॥ २१ ॥

जिसका ललाट बहुत लम्बा हो तो वह स्त्री देवर को विनाशती है व जिसका पेट लम्बा हो तो वह स्त्री ससुर को नाशती है व जिसके कूले लम्बे हों तो वह स्त्री पति को मारती है व जिसके ऊपरले ओठ में बहुत से रोम होवें यानी मूछें सी निकल आई हों तो वह स्त्री भर्ता (स्वामी) को शुभदायक नहीं होती है वरन अशुभों को बढ़ाती है और जो स्त्री पति की अपेक्षा लम्बी हो तो वह स्वामी को अतीव दुःखदायक होती है ॥ २१ ॥

स्तनकर्णदन्तलक्षणमाह—

स्तनौ सरोमौ मलिनोल्बणौ च क्लेशं दधाते विषमौ च कर्णौ ।
स्थूलाः कराला विषमाश्च दन्ताः क्लेशाय चौर्याय च कृष्णमांसाः ॥ २२ ॥

जिनके स्तन (दूध) रोमों समेत व मैले होकर बड़े हों और कान विषम (छोटे, बड़े) हों तो उन स्त्रियो के लिये क्लेश को धारते हैं और जिनके दाँत मोटे व कराल होकर विषम हों तो उन स्त्रियों को दुःखदायक होते हैं और जिनके मसूड़ों के मांस काले पड़गये हों तो वे स्त्रियां चोरी करती हैं यानी चोरके कार्य में परायण रहती हैं ॥ २२ ॥

करतलेक्रव्यादिरेखाज्ञानमाह—

क्रव्यादरूपैर्वृककाककङ्कसरीसृपोलूकसमानचिह्नैः ।
शुष्कैः शिरालैर्विषमैश्च हस्तैर्भवन्ति नार्यः सुखवित्तहीनाः ॥ २३ ॥

जिनके हाथों में मांसभक्षी बाज आदि पक्षी, भेड़िया, कौवा, ऊजली चील और घुग्घू इन्हों के समान निशान प्रतीत हों व जिनके हाथ सूखे होकर नसों से व्याप्त हों व जिनके हाथ विषम (छोटे बड़े) हों तो वे स्त्रियां सुख व धन से रहित रहती हैं ॥ २३ ॥

ओष्ठकेशलक्षणमाह—

यातूत्तरोष्ठेन समुन्नतेन रूक्षाग्रकेशी कलहप्रिया सा ।
प्रायो विरूपासु भवन्ति दोषा यत्राकृतिस्तत्र गुणा भवन्ति ॥ २४ ॥

जिन स्त्रियों का ऊपरला ओठ ऊंचा हो और केशोंका अग्रभाग रूखा हो तो वे स्त्रियां लड़ाई करने में प्रेम रखती हैं और प्रायः विरूप स्त्रियों में दोष होते हैं व जिनमें अच्छा रूप होता है उनमें गुण बसते हैं ॥ २४ ॥

दशाफलविचारे वर्षज्ञानमाह—

पादौ सगुल्फौ प्रथमं प्रदिष्टौ जङ्घे द्वितीयं च सजानुचक्रे ।
मेढ्रोरुमुष्कं च ततस्तृतीयं नाभिः कटिश्चेति चतुर्थमाहुः ॥ २५ ॥
उदरं कथयन्ति पञ्चमं हृदयं षष्ठमतः स्तनान्वितम् ।
अथ सप्तमं सजत्रुणी कथयन्त्यष्टममोष्ठकन्धरे ॥ २६ ॥

---

१ संक्षेपतस्ते कथितं मयैतद्विलक्षणं चारुनितम्बिनीनाम् । प्रायो विरूपासु भवन्ति दोषा यत्राकृतिस्तत्र गुणा वसन्ति ॥

नवमं नयने च सभ्रुणी सललाटं दशमं शिरस्तथा ।
अशुभेष्वशुभं दशाफलं चरणादेषु शुभेषु शोभनम् ॥ २७ ॥

अहो प्रिये ! नरनारी गणों की देह दशभाग में विभक्त है प्रतिभाग में बारह बारह की एक एक दशा होती है इस भांति दश दशाओं की १२० वर्ष होती हैं अब उन का क्रम कहते हैं कि, पाद व गुल्फ (गंठे) यह प्रथमभाग पहलीदशा होती है इस संख्या बारह वर्ष की है, जानुओं समेत जंघा दूसराभाग दूसरी दशा कहाती है इस संख्या १३ से लेकर २४ तक रहती है । भग, ऊरू व वृषण यह तीसरा भाग तीसरी दशा कहाती है इसकी संख्या २५ से लेकर ३६ तक रहती है । नाभि व कमर यह चौथा भाग चौथी दशा कहाती है इसकी संख्या ३७ से लेकर ४८ तक रहती है । उदर यह पाँचवांभाग पाँचवीं दशा कहाती है इसका प्रमाण ४९ से लेकर ६० तक रहता है हृदय स्तनों समेत होकर छठाभाग छठीदशा कहाती है इसका प्रमाण ६१ से लेकर ७२ तक रहता है हसुली समेत बाहैं सतवांभाग सातवीं दशा कहाती है इसका प्रमाण ७३ से लेकर ८४ तक रहता है । ओठ और ग्रीवा यह आठवां भाग आठवीं दशा कहाती है इस का प्रमाण ८५ से लेकर ९६ तक रहता है । भौहैं समेत आँखें यह नववां भाग नवमी दशा कहाती है इसका प्रमाण ९७ से लेकर १०८ तक रहता है और भाल समेत शीश यह दशवांभाग दशवीं दशा कहाती है इसका प्रमाण १०९ से लेकर १२० तक रहता है और यदि चरणआदि अङ्ग अशुभलक्षणों से प्रतीत हों तो दशाफल अशुभदायक होता है और यदि चरणादि अङ्ग शुभलक्षणों से प्रतीत हों तो दशाफल शुभदायक होता है ॥ २५ । २७ ॥

इति बृहत्सामुद्रिके स्त्रीलक्षणम् ॥

अथ पुनरपि स्कन्दपुराणान्तर्गतकाशीखण्डात्स्त्रीसामुद्रिकमादाय स्त्रीलक्षणान्युच्यन्त इत्याह-

स्कन्द उवाच—

सदा गृही सुखं भुङ्क्ते स्त्रीलक्षणवती यदि ।
अतः सुखसमृद्ध्यर्थमादौ लक्षणमीयते ॥ १ ॥

स्कन्दजी अगस्त्यजी से कहते हैं कि यदि स्त्री लक्षणोंवाली हो तो गृहस्थ पुरुष सदैव सुखको भोगता है इसलिये सुख व समृद्धि के लिये पहले लक्षणों को देखना चाहिये ॥ १ ॥

तत्र प्रथमं लक्षणाधिकरणं निर्दिशति—

वपुरावर्तगन्धाश्च छाया सत्त्वं स्वरोगतिः ।
वर्णश्चेत्यष्टधा प्रोक्ता बुधैर्लक्षणभूमिका ॥ २ ॥

हस्वादि अवयवों से रहित अंग, हाथ व नाभि आदिकों में लोमों का दक्षिणावर्त, गन्ध, कान्ति, शील, स्वर, गमन और गौर आदिवर्ण यह आठ प्रकार लक्षणों की भूमिका पण्डितों ने कही है ॥ २ ॥

आपादतलमारभ्य यावन्मौलिरुहं क्रमात् ।
शुभाशुभानि वक्ष्यामि लक्षणानि मुने शृणु ॥ ३ ॥

पावों से लेकर बालोंपर्यन्त क्रम से शुभ व अशुभ लक्षणों को कहूंगा अहो मुनिजी ! सुनिये ॥ ३ ॥

आदौ पादतलं रेखास्ततोऽङ्गुष्ठाङ्गुलीनखाः ।
पृष्ठं गुल्फद्वयं पार्ष्णी जङ्घे रोमाणि जानुनी ॥ ४ ॥
ऊरू कटी नितम्बस्फिग्भगो जघनबस्तिके ।
नाभिः कुक्षिद्वयं पार्श्वोदरमध्यबलित्रयम् ॥ ५ ॥
रोमाली हृदयं वक्षो वक्षोजद्वयचूचुकम् ।
जत्रुस्कन्धांसकक्षादोर्मणिबन्धकरद्वयम् ॥ ६ ॥
पाणिपृष्ठं पाणितलं रेखाङ्गुष्ठाङ्गुलीनखाः ।
पृष्ठिः कृकाटिका कण्ठे चिबुकं च हनुद्वयम् ॥ ७ ॥
कपोलौ वक्त्रमधरोत्तरोष्ठौ द्विजजिह्विकाः ।
घण्टिकाताल्हसितं नासिकाक्षुतमक्षिणी ॥ ८ ॥
पक्ष्मभ्रूकर्णभालानि मौलिसीमन्तमौलिजाः ।
षष्टिः षडुत्तरा योषिदङ्गलक्षणसत्खनिः ॥ ९ ॥

पहले दोनों पादतल[1], व उन्हों की रेखा, अंगूठा, अँगुलियाँ, नख, पीठ, दोनों गंठे, एँड़ियां, जंघायें, रोम, घुटुनू, निर्रोह, कमर, चूतड़, कूले, योनि, पेंडू, मूत्रस्थान, नाभि, दोनों कोखि, पसुरियां, पेट के बीच की तीनों वलियां, रोमपंक्ति, हृदय, वक्षःस्थल, स्तन, कुचाग्र, हँसुली, कन्धा, भुजशीश, कांखैं, बाहैं, कब्जा, दोनों हाथ, हाथ की पीठ, दोनों करतल व उन्हों की रेखा, अँगूठा, अँगुलियाँ, नख, पीठ, घांटी, कण्ठ, दाढ़ी, कनपटी, कपोल, मुख, निचला होठ, ऊपरला होठ, दाँत, जीभ, घण्टिका, तालु, हसना, नासिका,

---

१ दोनों करतल व दोनों पादतल इसभांति मानने से रमणियों के अङ्ग में सही सही ६६ लक्षण होते हैं ॥

छींक, आँखें, भौंहें, कान, ललाट, शीश, जूड़ा और केश ये छांछठ नारियों के शु
लक्षणों की समीचीन भूमियाँ हैं ॥ ४ । ६ ॥

पादतललक्षणमाह—

स्त्रीणां पादतलं स्निग्धं मांसलं मृदुलं समम् ।
अस्वेदमुष्णमरुणं बहुभोगोचितं स्मृतम् ॥ १० ॥

जिन स्त्रियों के पैरों के तलवे चिकने, मांस से भरे हुए कोमल होकर समान हों जिनमें पसीना न आता हो व गरम होकर लाल हों तो उन स्त्रियों को बड़ा भो प्राप्त होता है ॥ १० ॥

रूक्षं विवर्णं परुषं खण्डितप्रतिबिम्बकम् ।
सूर्पाकारं विशुष्कं च दुःखदौर्भाग्यसूचकम् ॥११॥

जिनके पैर के तलवे रूखे, वर्णविहीन होकर कठोर हों व जिनके धरने पर बालू आदिकों में निशान नहीं हो व सूप के समान होकर विशेषता से सूखे हों तो उन स्त्रियों को दुःखदायक होकर बुरेभाग्य को बतलाते हैं ॥ ११ ॥

पादतलेचक्रादिलक्षणमाह—

चक्रस्वस्तिकशंखाब्जध्वजमीनातपत्रवत् ।
यस्याः पादतले रेखा सा भवेत्क्षितिपाङ्गना ॥ १२ ॥

जिसके पादतल में चक्र व त्रिकोणाकार रेखा प्रतीत हो तथा शंख, कमल, ध्वजा, मछली और छाता के निशान हों तो वह रानी होती है ॥ १२ ॥

ऊर्ध्वरेखादिज्ञानमाह—

भवेदखण्डभोगायोर्ध्वामध्याङ्गुलिसंगता ।
रेखाखुसर्पकाकाभा दुःखदारिद्र्यसूचिका ॥ १३ ॥

जिसके पादतल में ऊर्ध्वगामिनी रेखा यानी भाग्यरेखा चलकर मध्यमा अँगुली तक पहुँच गई हो तो स्त्रियों को अखण्ड भोग देती है व जिसके पादतल में मूषक (मूसा सांप और कौवा के आकारवाली रेखा प्रतीत हो तो उस स्त्री को दुःख व दारिद्र्य को प्रदान करती है ॥ १३ ॥

पादाङ्गुष्ठादिलक्षणमाह—

उन्नतो मांसलोङ्गुष्ठो वर्तुलोतुलभोगदः ।

वक्रो ह्रस्वश्च चिपिटः सुखसौभाग्यभञ्जकः ॥ १४ ॥

जिसके पैर का अँगूठा ऊंचा व मांसल होकर गोल हो तो उस स्त्री को अतुल भोग-दायक होता है और जिसका अँगूठा टेढ़ा व छोटा होकर चपठा हो तो सुख व सौभाग्य को विनाशता है ॥ १४ ॥

विधवा विपुलेन स्याद्दीर्घाङ्गुष्ठेन दुर्भगा ।
मृदवोऽङ्गुलयः शस्ता घनावृत्ताः समुन्नताः ॥ १५ ॥

जिसके पैर का अँगूठा बड़ा विशाल (चौड़ा) प्रतीत हो तो वह स्त्री विधवा (रांड़) होती है व जिसके पैर का अँगूठा लम्बा प्रतीत हो तो वह स्त्री दुर्भगा (अभागिनी) होती है और जिसके पैरकी अँगुलियां कोमल, घनी, गोल होकर बड़ी ऊंची प्रतीत हों तो वे शुभदायक कहाती हैं ॥ १५ ॥

पादाङ्गुलिलक्षणमाह—

दीर्घाङ्गुलीभिः कुलटा कृशाभिरतिनिर्धना ।
ह्रस्वायुष्या च ह्रस्वाभिर्भुग्नाभिर्भुग्नवर्तिनी ॥ १६ ॥

जिसके पैर की अँगुलियां दीर्घ (लम्बी) प्रतीत हों तो वह स्त्री कुलटा (छिनारि) होती है व जिसके पैर की अँगुलियां पतली प्रतीत हों तो वह स्त्री धनरहित होती है व जिसके पैर की अँगुलियां छोटीसी प्रतीत हों तो वह स्त्री कम उमरवाली होती है और जिसके पैर की अँगुलियां टेढ़ीसी प्रतीत हों तो वह स्त्री कुटिल व्यवहारवाली होती है ॥१६॥

चिपिटाभिर्भवेद्दासी विरलाभिर्दरिद्रिणी ।
परस्परं समारूढाः पादाङ्गुल्यो भवन्ति हि ॥ १७ ॥
हत्वा बहूनपि पतीन् परप्रेष्या तदा भवेत् ।
यस्याः पथि समायान्त्या रजो भूमेः समुच्छलेत् ॥ १८ ॥
सा पांसुला प्रजायेत कुलत्रयविनाशिनी ।

जिसके पैर की अँगुलियां चपठी हों तो वह स्त्री दासी होती है व जिसके पैरकी अँगुलियां बिरल हों तो वह स्त्री दरिद्रिणी होती है व जिसके पैर की अँगुलियां परस्पर मिली हुई हों तो वह स्त्री बहुत से पतियों को मारकर पराधीन होती है और मार्ग में जिस स्त्री के चलते हुए भूमि से धूलि उछलती हो तो वह व्यभिचारिणी होकर तीनों कुलों को विनाशती है ॥ १७ । १८ । ३ ॥

गमने कनिष्ठिकादिलक्षणमाह—

यस्याः कनिष्ठिका भूमिं न गच्छन्त्याः परिस्पृशेत् ॥ १६ ॥
सा निहत्य पतिं योषा द्वितीयं कुरुते पतिम् ।
अनामिका च मध्या च यस्या भूमिं नहि स्पृशेत् ॥ २० ॥
पतिद्वयं निहन्त्याद्या द्वितीया च पतित्रयम् ।
पतिहीनत्वकारिण्यो हीने ते द्वे इमे यदि ॥ २१ ॥

चलती हुई जिस स्त्री की कनिष्ठिका अँगुली भूमिको नहीं स्पर्श करती हो तो वह स्त्री पतिको मारकर दूसरा पति करती है और जिस स्त्री की अनामिका व मध्यमा अँगुली भूमि को नहीं छूती हो यानी जिसकी अनामिका अँगुली भूमि का स्पर्श नहीं करे तो वह स्त्री दो पतियों को मारती है और जिसकी मध्यमा अँगुली भूमि को नहीं छूती हो तो वह स्त्री तीन पतियों को मारती है और यदि अनामिका व मध्यमा ये दोनों अँगुलियां हीन हों तो वे पति को विनाशती हैं ॥ १६ । २१ ॥

प्रदेशिन्यादिलक्षणमाह—

प्रदेशिनी भवेद्यस्या अङ्गुष्ठादतिरेकिणी ।
कन्यैवाकुलटा तु स्यादेष एव विनिश्चयः ॥ २२ ॥
राज्ञित्वसूचकं स्त्रीणां पादपृष्ठं समुन्नतम् ।
स्निग्धाः समुन्नतास्ताम्रा वृत्ताः पादनखाः शुभाः ॥ २३ ॥

जिसके पैर की तर्जनी अँगुली अँगूठे से बड़ी हो तो वह कन्याकी अवस्था में ही यानि विना ब्याह किये ही पुंश्चली होजाती है यह विशेषता से ही निर्णय करना चाहिये यदि स्त्रियों के पैर का पीठ ऊंचा हो तो वह रानी के पदको सूचित करता है और जिसके पैर के नख चिकने व ऊंचे तथा ताम्र सरीखे होकर गोलाकार प्रतीत हों तो शुभदायक होते हैं ॥ २२ । २३ ॥

पादपृष्ठमध्यनम्रादिलक्षणमाह—

राज्ञित्वसूचकं स्त्रीणां पादपृष्ठं समुन्नतम् ।
अस्वेदमशिराढ्यं च मसृणं मृदु मांसलम् ॥ २४ ॥
दरिद्रा मध्यनम्रेण शिरालेन सदाध्वगा ।
रोमाढ्येन भवेद्दासी निर्मांसेन च दुर्भगा ॥ २५ ॥

यदि स्त्रियों के पैरका पीठ ऊंचा पसीना से रहित व नसों से विहीन व चिकना तथा कोमल होकर मांसयुक्त हो तो वह रानी के पदको सूचित करता है जिसके पैर की पीठ बीचमें लची हो तो वह स्त्री दरिद्रा होती है व जिसके पैर की पीठ नसों से व्याप्त हो तो वह स्त्री सदैव मार्ग में गमन करती है व जिसके पैर की पीठ रोमोंवाली हो तो वह स्त्री दासी होती है और जिसके पैर की पीठ मांससे रहित हो तो वह स्त्री दुर्भगा (बुरे भागवाली) कहाती है ॥ २४ । २५ ॥

गुल्फादिलक्षणमाह—

गूढौ गुल्फौ शिवायोक्तावशिरालौ सुवर्तुलौ।
स्थपुटौ शिथिलौ दृश्यौ स्यातां दौर्भाग्यसूचकौ ॥ २६ ॥
समपार्ष्णिः शुभा नारी पृथुपार्ष्णिश्च दुर्भगा।
कुलटोन्नतपार्ष्णिः स्याद्दीर्घपार्ष्णिश्च दुःखभाक् ॥ २७ ॥

जिनके पैरके गंठे नसों से व्याप्त होकर छिपेहुए गोलाकार प्रतीत हों तो उन स्त्रियों के लिये कल्याणदायक होते हैं व जिनके पैरके गंठे निचले होकर ढीलेसे देखे जाते हों तो बुरेभाग को बतलाते हैं यानी ऐसे गंठोंवाली स्त्रियां दुर्भगा कहाती हैं व जिसके पैर की एँड़ी समान प्रतीत हो तो वह स्त्री शुभदायक होती है व जिसकी एँड़ी चौड़ीसी प्रतीत हो तो वह स्त्री दुर्भगा होती है व जिसकी एँड़ी ऊंचीसी प्रतीत हो तो वह स्त्री छिनारि होती है और जिसकी एँड़ी लम्बी प्रतीत हो तो वह स्त्री दुःखभागिनी होती है॥२६।२७॥

जङ्घारोमलक्षणमाह—

रोमहीने समे स्निग्धे यज्जङ्घे क्रमवर्तुले।
सा राजपत्नी भवति विशिरे सुमनोहरे ॥ २८ ॥
एकरोमा राजपत्नी द्विरोमा च सुखावहा।
त्रिरोमा रोमकूपेषु भवेद्वैधव्यदुःखभाक् ॥ २९ ॥

जिसकी जंघायें रोमों से हीन, समान, चिकनी व क्रम से गोलाकार व नसोंसे विहीन होकर मनोहर हों तो वह स्त्री राजपत्नी होती है व जिसके रोमकूपों में एकही रोम प्रतीत हो तो वह स्त्री राजपत्नी (रानी) होती है व जिसके रोमकूपों में दो २ रोम प्रतीत हों तो वह स्त्री सुखको पाती है और जिसके रोमकूपों में तीन २ रोम प्रतीत हों तो वह स्त्री विधवा होकर दुःखभागिनी होती है ॥ २८ । २९ ॥

---

१ जङ्घे च रोमरहिते सुवृत्ते विशिरे शुभे । रोमजङ्घे च नारीणां महादुःखप्रदायिके ॥ १ ॥

जानुलक्षणमाह—

वृत्तं पिशितसंलग्नं जानुयुग्मं प्रशस्यते ।
निर्मांसं स्वैरचारिण्या दरिद्रायाश्च विश्लथम् ॥ ३० ॥

जिसके दोनों जानु (घुटनू) गोलाकार होकर मांससे भरे हों तो वह स्त्री भली होती है व जिसके घुटनू मांसरहित हों तो वह स्त्री अपनी चाहना से घूमती है और जिसके जानु मज़बूत न हों तो वह स्त्री दरिद्रा होती है ॥ ३० ॥

ऊरुलक्षणमाह—

विशिरैः करभकारैरूरुभिर्मसृणैर्घनैः ।
सुवृत्तै रोमरहितैर्भवेयुर्भूपवल्लभाः ॥ ३१ ॥
वैधव्यं रोमशैरुक्तं दौर्भाग्यं चिपिटैरपि ।
मध्यच्छिद्रैर्महादुःखं दारिद्र्यं कठिनत्वचैः ॥ ३२ ॥

जिनकी ऊरु (पतली जांघें) नसों से रहित, हाथी की सूंड़ के समान, चिकनी व घनी व गोल होकर लोमों से हीन हों तो वे स्त्रियां राजाओं की प्यारी (रानी) होती हैं व जिनकी ऊरु रोमों से संयुत हों तो उन स्त्रियों के लिये वैधव्ययोग कहा है यानी वे स्त्रियां विधवा (रांड़ें) होजाती हैं व जिनकी ऊरु चपटी हों तो वे स्त्रियां दौर्भाग्य को प्राप्त होती हैं व जिनकी ऊरुओं के बीच में नसों से गड़हा सा प्रतीत हो तो वे स्त्रियां महादुःख को पाती हैं और जिनकी ऊरुओं की खाल कठोर सी प्रतीत हो तो वे स्त्रियां दारिद्र्य को भोगती हैं ॥ ३१ । ३२ ॥

कटिलक्षणमाह—

चतुर्भिरङ्गुलैः शस्ता कटिर्विंशतिसंयुतैः ।
समुन्नतनितम्बाढ्या चतुरस्रा मृगीदृशाम् ॥ ३३ ॥
ह्रस्वा रोमयुता नार्या दुःखवैधव्यसूचिका ।
विनता चिपिटा दीर्घा निर्मांसा संकटा कटिः ॥ ३४ ॥

यदि मृगनयनी रमणियों की कमर चौबीस अंगुल की प्रतीत हो तो शुभदायक होती है व जिसकी कमर बड़े ऊंचे नितम्बोंवाली होकर चौकोण प्रतीत हो तो वह स्त्री धनवती होती है व जिसकी कमर लची, चपटी व लम्बी होकर निर्मांस प्रतीत हो तो उस स्त्री को संकटदायक होती है और जिसकी कमर छोटी होकर रोमों से संयुत हो

उस स्त्री के लिये दुःखदायक होकर विधवापने को बताती है यानी वह स्त्री दुःखों को भोगती हुई विधवा होजाती है ॥ ३३ । ३४ ॥

नितम्बादिलक्षणमाह—

नितम्बबिम्बो नारीणामुन्नतो मांसलः पृथुः ।
महाभोगाय संप्रोक्तस्तदन्योऽशर्मणे मतः ॥ ३५ ॥
कपित्थफलवद्वृत्तौ मृदुलौ मांसलौ घनौ ।
स्फिचौ बलिविनिर्मुक्तौ रतिसौख्यविवर्धनौ ॥ ३६ ॥

यदि स्त्रियों के नितम्बों का मण्डल ऊंचा व मांस से लदा होकर चौड़ा प्रतीत हो तो बड़े भोगों के लिये कहा है और जो उससे अन्यथा प्रतीत हो तो अमंगल के लिये माना गया है और यदि कूले कैथाफल के समान गोलाकार, कोमल तथा मांसल व घने होकर बलियों से रहित हों तो विशेषता से रतिसौख्य को बढ़ाते हैं ॥ ३५ । ३६ ॥

भगलक्षणमाह—

शुभः कमठपृष्ठाभो गजस्कन्धोपमो भगः ।
वामोन्नतस्तु कन्याजः पुत्रजो दक्षिणोन्नतः ॥ ३७ ॥

जिसकी भग (योनि) कछुआ की पीठ के समान होकर हाथी के कन्धे के समान ऊंची प्रतीत हो तो शुभदायक होती है व जिसकी योनि बायें तरफ़ ऊंची हो तो कन्याओं को उपजाती है और जिसकी योनि दाहिने तरफ़ ऊंची हो तो पुत्रों को उपजाती है॥३७॥

आखुरोमा गूढमणिः सुश्लिष्टः संहतः पृथुः ।
तुङ्गःकमलपर्णाभः शुभोश्वत्थदलाकृतिः ॥ ३८ ॥
कुरङ्गखुररूपो यश्चुल्लिकोदरसन्निभः ।
रोमशो विवृतास्यश्च दृश्यनासोतिदुर्भगः ॥ ३९ ॥

जिसकी योनि मुसरिया के रोमों के समान रोमवाली हो व जिसकी मणि छिपीसी हो व जो लिपटी हुई मज़बूत होकर फैली हो तथा ऊंची हो व कमलपत्र के समान होकर पीपलपत्ते के आकारवाली हो तो शुभदायक होती है और जो योनि हिरन के खुरके समान होकर चूल्हे के उदर के समान प्रतीत हो व जो रोमोंवाली होकर बगरे मुखवाली हो व जिसकी नाक देख पड़ती हो तो वह योनि बुरी कहाती है यानी दुःखदायक होती है ॥ ३८ । ३९ ॥

शङ्खावर्तो भगो यस्याः सा गर्भमिह नेच्छति ।
चिपिटः खर्पराकारः किंकरीपददो भगः ॥ ४० ॥
वंशवेतसपत्राभो गजरोमोच्चनासिकः ।
विकटः कुटिलाकारो लम्बगल्लस्तथाऽशुभः ॥ ४१ ॥

जिसकी योनि शंखावर्त हो यानी तीन रेखाओं से संयुत हो तो वह गर्भ की चाहना न करती है यानी बांझ होती है व जो योनि चपटी होकर खपरे के आकारवाली हो वह दासीपद को देती है व जो भग बांसपत्र व वेतसपत्र के समान हो व जिसके लो हाथीरोम के समान हों व जिसकी नासिका दीर्घ हो तथा विकट व कुटिल आकारवा होकर लम्बे गलवाली हो यानी नीचे का भाग दीर्घ मुखवाला हो तो वह स्त्रियों अशुभदायक होती है ॥ ४० । ४१ ॥

भगभाललक्षणमाह—

भगस्य भालं जघनं विस्तीर्णं तुङ्गमांसलम् ।
मृदुलं मृदुलोमाढ्यं दक्षिणावर्तमीडितम् ॥ ४२ ॥
वामावर्तं च निर्मांसं भुग्नं वैधव्यसूचकम् ।
संकटं स्थपुटं रूक्षं जघनं दुःखदं तथा ॥ ४३ ॥

भगका ऊपरी भाग जघनदेश चौड़ा, ऊंचा, मांसल, कोमल तथा नरम रोमों से संयु होकर दहिनावर्त प्रतीत हो तो शुभदायक होता है और जो जघनदेश वामावर्त व निर्मां होकर टेढ़ा प्रतीत हो तो वह विधवापने को सूचित करता है और जो जघनदेश सङ्क व गहरा होकर रूखा प्रतीत हो तो वह स्त्रियों को दुःखदायक होता है ॥ ४२ । ४३ ॥

बस्तिलक्षणमाह—

बस्तिः प्रशस्ता विपुला मृद्वी स्तोकसमुन्नता ।
रोमशा च शिराला च रेखाङ्का नैव शोभना ॥ ४४ ॥

जिसकी पेडू विशाल व कोमल होकर कुछेक ऊंची प्रतीत हो तो शुभदायक होती और जो पेडू रोमों व नसों से व्याप्त होकर रेखाओं से अंकित हो तो वह शुभदायक न होती है ॥ ४४ ॥

नाभिलक्षणमाह—

गम्भीरा दक्षिणावर्ता नाभी स्यात्सुखसंपदे ।
वामावर्ता समुत्ताना व्यक्तग्रन्थिर्न शोभना ॥ ४५ ॥
सूते सुतान्बहून्नारी पृथुकुक्षिः सुखास्पदम् ।
क्षितीशं जनयेत्पुत्रं मण्डूकाभेन कुक्षिणा ॥ ४६ ॥

जो नाभि गहरी होकर रोमों या रेखाओं से दाहिनावर्त प्रतीत हो तो वह सुख व संपदा के लिये होती है और जो नाभि बहुत ऊंची होकर वामावर्त प्रतीत हो व जिसका मध्यभाग प्रकट में दीखता हो तो वह शुभदायक नहीं होती है और जिसकी कोखि विशाल होकर चौड़ीसी प्रतीत हो तो वह स्त्री बहुत से पुत्रों को पैदा करती है और जिसकी कोखि मेंढक के उदरसमान प्रतीत हो तो वह स्त्री सुखधाम, पृथ्वीपालक पुत्र को उपजाती है ॥ ४५ । ४६ ॥

कुक्षिलक्षणमाह—

उन्नतेन बलीभाजा सावर्तेनापि कुक्षिणा ।
वन्ध्या प्रव्रजिता दासी क्रमाद्योषा भवेदिह ॥ ४७ ॥

जिसकी कोखि आवर्त समेत होकर ऊंची हो तो वह स्त्री बन्ध्या (बांझ) होती है व जिसकी कोखि ढीले खालवाली हो तो वह स्त्री संन्यासिनी होती है और जिसकी कोखि आवर्त समेत प्रतीत हो तो वह स्त्री दासी होती है ॥ ४७ ॥

पार्श्वलक्षणमाह—

समैः समांसैर्मृदुभिर्योषिन्मग्नास्थिभिः शुभैः ।
पार्श्वैः सौभाग्यसुखयोर्निधानं स्यादसंशयम् ॥ ४८ ॥
यस्या दृश्यशिरे पार्श्वे उन्नते रोमसंयुते ।
निरपत्या च दुश्शीला सा भवेद्दुःखशेवधिः ॥ ४९ ॥

जिनकी पसुरियां समान, मांस समेत व कोमल व शुभदायक होकर छिपी हड्डियों वाली प्रतीत हों तो वे स्त्रियां निःसन्देह सुख व सौभाग्य की आश्रयरूपिणी होती हैं

१ नाभिः प्रशस्ता गंभीरा दक्षिणावर्तिका शुभा । मत्स्योदरा बहुधना नाभिभिः सुखिनः स्मृताः ॥ विस्तीर्णाभिर्बहुलाभिर्निम्नाभिः क्लेशभोगिनः । बलिमध्यगता नाभिः शूलबाधां करोति हि ॥ वामावर्ता च साध्यं वै मेधां च दक्षिणस्तथा । पार्श्वायता चिरायुः स्यादूपरिष्ठाद्धनेश्वरः ॥ अधोगवाढ्यं कुर्याच्च नृपत्वं पद्मकर्णिका ॥

यानी खज़ानारूपही होती हैं और जिसके दोनों पार्श्व देखे नसोंवाले व ऊंचे हो रोमों से संयुत हों तो वह स्त्री सन्तानरहित व बुरे स्वभाववाली होकर दुःख का खज़ा ही होती है॥ ४८ । ४६ ॥

उदरलक्षणमाह—

उदरेणातितुच्छेन विशिरेण मृदुत्वचा ।
योषिद्भवति भोगाढ्या नित्यं मिष्टान्नसेविनी ॥ ५० ॥
कुम्भाकारं दरिद्राया जठरं च मृदङ्गवत् ।
कूष्माण्डाभं यवाभं च दुष्पूरं जायते स्त्रियाः ॥ ५१ ॥

जिसका पेट बहुत सूक्ष्म व नसों से रहित होकर कोमल त्वचावाला प्रतीत हो वह स्त्री भोगों से संयुत होकर हमेशा मीठे अन्न को सेवन करती है और जिसका पे घड़े के आकारवाला प्रतीत हो तो वह स्त्री दरिद्रिणी होती है और जिसका पेट मृदंग समान होकर कुम्हड़े वा यवों के आकार प्रतीत हो तो उस स्त्री का पेट बड़े दुःख भरता है ॥ ५० । ५१ ॥

विशालजठरादिलक्षणमाह—

सुविशालोदरी नारी निरपत्या च दुर्भगा ।
प्रलम्बजठरा हन्ति श्वशुरं चापि देवरम् ॥ ५२ ॥
मध्यक्षामा च सुभगा भोगाढ्या सबलित्रया ।
ऋज्वी तन्वी च रोमाली यस्याः सा शर्मनर्मभूः ॥ ५३ ॥

जिसका पेट बहुत चौड़ासा प्रतीत हो तो वह स्त्री सन्तानरहित होकर बुरे भागवाल होती है और जिसका पेट बड़ा लम्बा प्रतीत हो तो वह स्त्री ससुर व देवर को मारती है जिसका मध्यभाग पतलासा प्रतीत हो यानी जो स्त्री कृशोदरी हो तो वह बड़े भागवा होती है व जिसका पेट तीन वलियों से संयुत हो तो वह स्त्री भोगवाली होती है अ जिसके रोमों की पांति सीधी होकर पतलीसी प्रतीत हो तो वह स्त्री सुख व क्रीड़ा भूमि होती है ॥ ५२ । ५३ ॥

रोमराज्यादिलक्षणमाह—

कपिला कुटिला स्थूला विच्छिन्ना रोमराजिका ।
चौरवैधव्यदौर्भाग्यं विदध्यादिह योषिताम् ॥ ५४ ॥

निर्लोमहृदयं यस्याः समं निम्नत्ववर्जितम्।
ऐश्वर्यं चाप्यवैधव्यं प्रियप्रेम च सा लभेत् ॥ ५५ ॥

जिसके रोमों की पांति कपिलवर्णवाली, टेढ़ी व मोटी होकर छिन्न भिन्नसी प्रतीत हो तो उन स्त्रियों को इसलोक में चोरी, विधवापन और बुरे भाग्यको विधान करती है यानी वे स्त्रियां चोरी करती हुई विधवा होकर बुरे भागको भोगती हैं और जिसका हृदय रोम-रहित व समान होकर गहराई से वर्जित हो तो वह स्त्री ऐश्वर्य को भोगती हुई विधवा न होकर प्यारे के प्रेमको पाती है ॥ ५४ । ५५ ॥

हृदयलक्षणमाह—

विस्तीर्णहृदया योषा पुंश्चली निर्दया तथा।
उद्भिन्नरोमहृदया पतिं हन्ति विनिश्चितम् ॥ ५६ ॥
अष्टादशाङ्गुलततमुरः पीवरमुन्नतम्।
सुखाय दुःखाय भवेद्रोमशं विषमं पृथु ॥ ५७ ॥

जिसका हृदय विस्तारवाला हो तो वह स्त्री पुंश्चली (छिनारि) होकर दयारहित होती है और जिसके हृदय में रोम निकले हों तो वह स्त्री निश्चयकर पतिको मारती है और जिसका वक्षःस्थल अट्ठारह अंगुल चौड़ा व मोटा होकर ऊंचा प्रतीत हो तो वह सुखदायक होता है और जिसका वक्षःस्थल रोमों से संयुत तथा विषम होकर चौड़ा प्रतीत हो तो दुःखदायक होता है ॥ ५६ । ५७ ॥

स्तनलक्षणमाह—

घनौ वृत्तौ दृढौ पीनौ समौ शस्तौ पयोधरौ।
स्थूलाग्रौ विरलौ शुष्कौ वामूरूणां न शर्मदौ ॥ ५८ ॥

जिनके दोनों स्तन (दूध) कठोर, गोल, दृढ़ व स्थूल होकर समानाकार प्रतीत हों तो उन स्त्रियों के लिये शुभदायक होते हैं और जिनके स्तनों के अग्रभाग मोटे हों व विरल होकर सूखे प्रतीत हों तो उन स्त्रियों को सुखदायक नहीं होते हैं ॥ ५८ ॥

दक्षिणोन्नतवक्षोजा पुत्रिणी त्वग्रणीर्मता।
वामोन्नतकुचा सूते कन्यां सौभाग्यसुन्दरीम् ॥ ५९ ॥
अरघट्टघटीतुल्यौ कुचौ दौश्शील्यसूचकौ।

---

१ समवक्षा हि भोगाढ्या निम्नवक्षा धनोज्झिता । विस्तीर्णहृदया योषा पुंश्चली निर्दया तथेति ॥

पीवरास्यौ सान्तरालौ पृथूपान्तौ न शोभनौ ॥ ६० ॥

जिसका दहिना स्तन ऊंचा प्रतीत हो तो वह स्त्री पुत्रवती होकर श्रेष्ठ मानी जाती और जिसका बायां स्तन ऊंचा प्रतीत हो तो वह स्त्री सौभाग्यसुन्दरी कन्याको उपजा है और जिसके दोनों स्तन रहट के समान प्रतीत हों तो बुरे स्वभाव को सूचित करते और जिन स्तनों के मुख मोटे हों व फासिले पर होकर उपान्त में चौड़े से प्रतीत हों वे शुभदायक नहीं होते हैं ॥ ५९ । ६० ॥

चूचकलक्षणमाह—

मूले स्थूलौ क्रमकृशावग्रे तीक्ष्णौ पयोधरौ ।
सुखदौ पूर्वकाले तु पश्चादत्यन्तदुःखदौ ॥ ६१ ॥
सुदृढं चूचकयुगं शस्तं श्यामं सुवर्तुलम् ।
अन्तर्मग्नं च दीर्घं च कृशं क्लेशाय जायते ॥ ६२ ॥

जिनके स्तन मूल में मोटे व क्रम से पतले होकर अग्रभाग में तीखे प्रतीत हों तो उन स्त्रियों को पहले सुखदायक होकर पीछे बड़ेही दुःखदायक होते हैं व जिनके स्तनों के अग्रभाग बड़े मज़बूत होकर काले व बहुतही गोल प्रतीत हों तो शुभदायक होते हैं और जो स्तनों के अग्रभाग (ढेपुनी) भीतर छिप गये हों व दीर्घ होकर पतले हों तो क्लेशदायक होते हैं ॥ ६१ । ६२ ॥

जत्रुस्कन्धलक्षणमाह—

पीवराभ्यां च जत्रुभ्यां धनधान्यनिधिर्वधूः ।
श्लथास्थिभ्यां च निम्नाभ्यां विषमाभ्यां दरिद्रिणी ॥ ६३ ॥
अबद्धावनतौ स्कन्धावदीर्घावकृशौ शुभौ ।
वक्रौ स्थूलौ च रोमाढ्यौ प्रेष्यवैधव्यसूचकौ ॥ ६४ ॥

जिसकी हँसुलियां मोटीसी प्रतीत हों तो वह स्त्री धन व धान्य की निधान होती व जिसकी हँसुलियां ढीली हड्डियों वाली व गहरी होकर विषम प्रतीत हों तो वह स्त्री दरिद्रिणी होती है व जिसके कन्धे बँधे व लचे हुए न हों तथा लम्बे व पतले न हों तो वे शुभदायक होते हैं और जिनके कन्धे टेढ़े व मोटे होकर रोमों से संयुत हों तो वे दासीपन व विधवापन को सूचित करते हैं ॥ ६३ । ६४ ॥

अंसलक्षणमाह—

निगूढसन्धी स्रस्ताग्रौ शुभावंसौ सुसंहतौ ।

वैधव्यदौ समुच्चाग्रौ निर्मांसावतिदुःखदौ ॥ ६५ ॥

जिनके पुट्ठे छिपे हुए सन्धिवाले हों व जिनके अग्रभाग गिरे होकर मज़बूत हों तो वे शुभदायक होते हैं व जिनके पुट्ठे अग्रभाग में बड़े ऊंचे होकर निर्मांस प्रतीत हों तो वे वैधव्यदायक होकर अत्यन्त दुःखदायक होते हैं ॥ ६५ ॥

कक्षलक्षणमाह—

कक्षे सुसूक्ष्मरोमे तु तुङ्गे स्निग्धे च मांसले ।
शस्ते न शस्ते गम्भीरे शिराले स्वेदमेदुरे ॥ ६६ ॥

जिनकी कांखें बहुत पतले रोमोंवाली, ऊंची व चिकनी होकर मांस से भरी हों तो उन स्त्रियों को शुभदायक होती हैं और जिनकी कांखें गहरी व नसोंवाली होकर पसीने से चिकनी हों तो शुभदायक नहीं होती हैं ॥ ६६ ॥

भुजालक्षणमाह—

स्यातां दोषौ सुनिर्दोषौ गूढास्थिग्रन्थिकोमलौ ।
विशिरौ च विरोमाणौ सरलौ हरिणीदृशाम् ॥ ६७ ॥
वैधव्यं स्थूलरोमाणौ ह्रस्वौ दौर्भाग्यसूचकौ ।
परिक्लेशाय नारीणां परिदृश्यशिरौ भुजौ ॥ ६८ ॥

यदि मृगनयनी रमणियों की भुजायें छिपी हुई हड्डियों व गांठियों वाली होकर कोमल हों तथा नसों व रोमों से रहित होकर सीधीसी प्रतीत हों तो वे दोषों को नहीं उपजाती हैं व जिन नारियों की भुजायें मोटे रोमोंवाली हों तो वे स्त्रियां विधवा होती हैं व जिनकी भुजायें छोटीसी प्रतीत हों तो वे बुरे भागको सूचित करती हैं और जिनकी भुजायें चारों तरफ़ नसों से घिरी हुई प्रतीत हों तो उन स्त्रियों को दुःखदायक होती हैं ॥ ६७। ६८ ॥

कराङ्गुष्ठतललक्षणमाह—

अम्भोजमुकुलाकारमङ्गुष्ठाङ्गुलिसंमुखम् ।
हस्तद्वयं मृगाक्षीणां बहुभोगाय जायते ॥ ६९ ॥
मृदु मध्योन्नतं रक्तं तलं पाण्योररन्ध्रकम् ।
प्रशस्तं शस्तरेखाढ्यमल्परेखं शुभश्रियम् ॥ ७० ॥

यदि मृगनयनी नारियों के दोनों हाथ अँगूठा व अङ्गुलियों के सामने फूलती कमल कली के आकार प्रतीत हों तो घने भोगों को उपजाते हैं और जिनका करतल कोमल,

बीच में ऊंचा, लालवर्ण व छेदरहित होकर समीचीन रेखाओं से संयुत हो तो शु
दायक होता है व जिनका करतल अल्परेखाओं से संयुत हो तो शुभदायक होकर ल
को देता है ॥ ६९ । ७० ॥

पाणितलपृष्ठलक्षणमाह—

विधवा बहुरेखेण विरेखेण दरिद्रिणी ।
भिक्षुकी सुशिराढ्येन नारी करतलेन वै ॥ ७१ ॥
विरोमविशिरं शस्तं पाणिपृष्ठं समुन्नतम् ।
वैधव्यहेतु रोमाढ्यं निर्मांसं स्नायुमत्त्यजेत् ॥ ७२ ॥

जिसका करतल बहुत रेखाओं से संयुत हो तो वह स्त्री विधवा होती है व जिस
करतल रेखाओं से रहित हो तो वह स्त्री दरिद्रिणी होती है व जिसका करतल बहुत
नसों से घिरा हुआ प्रतीत हो तो वह स्त्री भिक्षुकी (भीख मांगनेवाली) होती है औ
जिसके हाथ का पीठ रोमों व नसों से रहित होकर ऊंचा प्रतीत हो तो वह शुभदाय
होता है व जिसके हाथ का पीठ रोमों से संयुत व मांसरहित होकर नसोंवाला प्रतीत
तो वह वैधव्य का कारण होता है उसको त्याग देवै ॥ ७१ । ७२ ॥

कररेखावर्णज्ञानमाह—

रक्ता व्यक्ता गभीरा च स्निग्धा पूर्णा च वर्तुला ।
कररेखाङ्गनायाः स्याच्छुभा भाग्यानुसारतः ॥ ७३ ॥
मत्स्येन सुभगा नारी स्वस्तिकेन वसुप्रदा ।
पद्मेन भूपतेः पत्नी जनयेद्भूपतिं सुतम् ॥ ७४ ॥

जिसके हाथ की रेखा लालवर्ण, व्यक्त, गभीर, चिकनी व पूर्ण होकर गोलाक
प्रतीत हो तो उस स्त्री को भाग्यानुसार शुभदायक होती है व जिसके हाथ में मछली
रेखा प्रतीत हो तो वह स्त्री बड़े भागवाली होती है व जिसके हाथ में त्रिकोणाकार रे
प्रतीत हो तो वह धनदायक होती है और जिसके हाथ में पद्म का निशान देख पड़े तो
राजाकी रानी होकर पृथ्वीपालक पुत्रको उपजाती है ॥ ७३ । ७४ ॥

करतलत्रिकोणादिचिह्नमाह—

चक्रवर्तिस्त्रियाः पाणौ नन्द्यावर्तः प्रदक्षिणः ।
शङ्खातपत्रकमठा नृपमातृत्वसूचकाः ॥ ७५ ॥

तुलामानाकृती रेखे वणिक्पत्नीत्वहेतुके ।
गजवाजिवृषाकारा करे वामे मृगीदृशाम् ॥ ७६ ॥

जिसके हाथ में दाहिनावर्त त्रिकोणाकार रेखा प्रतीत हो तो वह स्त्री चक्रवर्ती (शाहंशाह) की रानी होती है व जिसके हाथ में शङ्ख, छाता व धनुष के आकार रेखा प्रतीत हों तो वे स्त्रियां राजाओं की माता होती हैं व जिसके हाथ में तराजू व बांटों की रेखा प्रतीत हों तो वह स्त्री विना कारण बनिये की पत्नी होती है व जिन मृगनयनी रमणियों के वायें हाथ में हाथी, घोड़े व बैल के आकार रेखा प्रतीत हों ॥ ७५ । ७६ ॥

रेखा प्रासादवज्राभा सूयुस्तीर्थकरं सुतम् ।
कृषीवलस्य पत्नी स्याच्छकटेन युगेन वा ॥ ७७ ॥
चामराङ्कुशकोदण्डे राजपत्नी भवेद्ध्रुवम् ।
अङ्गुष्ठमूलान्निर्गत्य रेखा याति कनिष्ठिकाम् ॥ ७८ ॥
यदि सा पतिहन्त्री स्याद् दूरतस्तां त्यजेद्बुधः ।

तथा देवमन्दिर या राजमहल व वज्र के समान रेखा प्रतीत हों तो वे स्त्रियां तीर्थाटनकारी या शास्त्रकारी पुत्रको उपजाती हैं और जिसके हाथ में, गाडा वा जुवां की रेखा प्रतीत हो तो वह स्त्री किसान की प्यारी होती है व जिसके हाथ में चमर, अंकुश व धनुष के समान रेखा प्रतीत हों तो वह स्त्री निश्चयकर राजा की रानी होती है और यदि अँगूठा की मूल से निकल कर रेखा कनिष्ठिका अँगुली के पास चली जावे तो वह स्त्री पतिको मारती है इसलिये विद्वान् लोग उसको दूरही से त्याग देवें ॥ ७७ । ७८ । ३ ॥

करतलत्रिशूलादिचिह्नान्याह—

त्रिशूलासिगदाशक्तिदुन्दुभ्याकृतिरेखया ॥ ७९ ॥
नितम्बिनी कीर्तिमती त्यागेन पृथिवीतले ।
कङ्कजम्बूकमण्डूकवृकवृश्चिकभोगिनः ॥ ८० ॥
रासभोष्ट्रबिडालाः स्युः करस्था दुःखदाः स्त्रियाः ।

जिसके हाथ में त्रिशूल, तलवार, गदा, शेल व नगाड़े के आकार रेखा प्रतीत हों तो वह स्त्री पृथ्वीमण्डल में दान के द्वारा कीर्तिवाली होती है और जिसके हाथ में उजली चील्ह, सियार, मेढक, भेड़िया, बीछू, सांप, गदहा, ऊंट और बिलार के समान रेखा प्रतीत हों तो वे स्त्रियों को दुःखदायक होती हैं ॥ ७९ । ८० । ३ ॥

करांगुष्ठाङ्गुलिलक्षणमाह —

शुभदः सरलोङ्गुष्ठो वृत्तो वृत्तनखो मृदुः ॥ ८१ ॥
अङ्गुल्यश्च सुपर्वाणो दीर्घा वृत्ताः शुभाः कृशाः ।
चिपिटाःस्थपुटा रूक्षा पृष्ठरोमयुजोऽशुभाः ॥ ८२ ॥
अतिह्रस्वाः कृशा वक्रा विरला रोगहेतुकाः ।
दुःखायाङ्गुलयः स्त्रीणां बहुपर्वसमन्विताः ॥ ८३ ॥

जिसका अँगूठा सीधा, गोल व गोल नखोंवाला होकर कोमलसा प्रतीत हो तो स्त्री को शुभदायक होता है व जिसकी अँगुलियां सुन्दर पोरोंवाली लम्बी व गोल कर क्रमसे पतली प्रतीत हों तो शुभदायक होती हैं और जिसकी अँगुलियां चपटी छोटी व गहरी होकर रूखी प्रतीत हों व जिनकी पीठ रोमों से संयुक्त हो तो अशुभदा होती हैं और जिनकी अँगुलियां बहुत छोटी, पतली व टेढ़ी होकर विरली प्रतीत हों रोगदायक होती हैं और जिनकी अँगुलियां चौड़े पर्वों (पोरों) से संयुक्त हों तो उन स्त्रि को दुःखदायक होती हैं ॥ ८१ । ८३ ॥

नखलक्षणमाह—

अरुणाः सशिखास्तुङ्गाः करजाः सुदृशां शुभाः ।
निम्ना विवर्णा शुक्त्याभाः पीता दारिद्र्यसूचकाः ॥ ८४ ॥
नखेषु बिन्दवः श्वेताः प्रायः स्युः स्वैरिणी स्त्रियाः ।
पुरुषा अपि जायन्ते दुःखिनः पुष्पितैर्नखैः ॥ ८५ ॥

यदि शोभननयनी रमणियों के नख रक्तवर्ण व शिखा समेत होकर ऊंचे से प्रतीत हों शुभदायक होते हैं और जिनके नख गहरे, विवर्ण व सीपी के समान होकर पीले प्र हों तो उन स्त्रियों को दारिद्र्य सूचित करते हैं और जिनके नखोंमें सफ़ेद बिन्दु (कौ प्रतीत हों तो वे स्त्रियां प्रायः पुंश्चली (छिनारि) होती हैं और यदि पुरुषों के न में सफ़ेद चिह्न प्रतीत हों तो वे भी दुःखीही होते हैं ॥ ८४ । ८५ ॥

वंशास्थिपृष्ठिलक्षणमाह—

अन्तर्निमग्नवंशास्थिपृष्ठिः स्यान्मांसला शुभा ।
पृष्ठेन रोमयुक्तेन वैधव्यं लभते ध्रुवम् ॥ ८६ ॥

जिनके पीठका वंश (बांस) भीतर छिप गया हो तथा पीठ मांस से भरी हो तो

स्त्रियों के लिये शुभदायक होती है और जिनकी पीठ रोमों से संयुक्त हो तो वह स्त्री निश्चय कर वैधव्य को पाती है ॥ ८६ ॥

ककाटादिलक्षणमाह—

भुग्नेन विनतेनापि सशिरेणापि दुःखिता ।
ऋज्वी ककाटिका श्रेष्ठा समांसा च समुन्नता ॥ ८७ ॥
शुष्का शिराला रोमाढ्या विशाला कुटिलाऽशुभा ।
मांसलो वर्तुलः कण्ठः प्रशस्तश्चतुरङ्गुलः ॥ ८८ ॥

जिसकी पीठ टेढ़ी व नसों से संयुक्त होकर लचीसी प्रतीत हो तो दुःखदायक होती है और जिसकी घांटी (उपजिह्वा) या घोंटा सीधी व मांसल होकर ऊंचीसी प्रतीत हो तो शुभदायक होती है और जिसकी घांटी सूखी, नसों से घिरी, रोमों से संयुक्त तथा चौड़ी होकर टेढ़ीसी प्रतीत हो तो उस स्त्रीके लिये अशुभदायक होती है और जिसका कण्ठ मांसल व गोल होकर चार अंगुलवाला प्रतीत हो तो शुभदायक होता है ॥ ८७ । ८८ ॥

ग्रीवालक्षणमाह—

शस्ता ग्रीवा त्रिरेखाङ्का त्वव्यक्तास्थिःसुसंहता ।
निर्मांसा चिपिटा दीर्घा स्थपुटा न शुभप्रदा ॥ ८९ ॥
स्थूलग्रीवा च विधवा वक्रग्रीवा च किंकरी ।
वन्ध्या हि चिपिटग्रीवा ह्रस्वग्रीवा च निःसुता ॥ ९० ॥

जिसकी ग्रीवा (घींच) तीन रेखाओं से अङ्कित व अप्रकटित हड्डीवाली होकर अतीव मज़बूत प्रतीत हो तो उस स्त्री को शुभदायक होती है तथा जिसकी ग्रीवा मांसरहित, चपठी व लम्बी होकर गहरी प्रतीत हो तो शुभदायक नहीं होती है और जिसकी ग्रीवा मोटीसी प्रतीत हो तो वह स्त्री विधवा होती है व जिसकी ग्रीवा टेढ़ीसी प्रतीत हो तो वह स्त्री दासी होती है व जिसकी ग्रीवा चपठी हो तो वह स्त्री वन्ध्या (बांझ) होती है और जिसकी ग्रीवा छोटीसी प्रतीत हो यानी कोतागर्दनिया हो तो वह स्त्री संतानरहित होती है ॥ ८९ । ९० ॥

चिबुकलक्षणमाह—

चिबुकं द्व्यङ्गुलं शस्तं वृत्तं पीनं सुकोमलम् ।
स्थूलं द्विधा संविभक्तमायतं रोमशं त्यजेत् ॥ ९१ ॥

हनुश्चिबुकसंलग्ना निर्लोमा सुघना शुभा ।
वक्रा स्थूला कृशा ह्रस्वा रोमशा न शुभप्रदा ॥ ६२ ॥

जिसकी चिबुक (दाढ़ी) गोल, मोटी व बड़ी कोमल होकर दो अंगुलवाली प्र
हो तो उस स्त्री के लिये शुभदायक होती है व जिसकी चिबुक मोटी होकर दो भाग
बँटी हो तथा चौड़ी होकर रोमोंवाली हो तो उस स्त्री को दूरसे ही त्याग देवे और जि
की हनु (ठुड्डी) चिबुक में लगी हुई निर्लोम होकर बड़ी मज़बूत हो तो शुभदायक हो
है तथा टेढ़ी, मोटी, पतली व छोटी होकर रोमोंवाली हो तो शुभदायक नहीं हो
है ॥ ६१ । ६२ ॥

कपोललक्षणमाह—

शस्तौ कपोलौ वामाक्ष्याः पीनौ वृत्तौ समुन्नतौ ।
रोमशौ परुषौ निम्नौ निर्मांसौ परिवर्जयेत् ॥ ६३ ॥

जिसके गाल मोटे व गोल होकर ऊंचे प्रतीत हों तो उस स्त्री के लिये शुभदा
होते हैं और जिसके गाल रोमोंवाले, कठोर व निचले होकर मांसरहित प्रतीत हों
उस स्त्री को त्याग देवे ॥ ६३ ॥

मुखलक्षणमाह—

समं समांसं सुस्निग्धं स्वामोदं वर्तुलं मुखम् ।
जनेतृवदनच्छायं धन्यानामिह जायते ॥ ६४ ॥

जिनका मुख समान व समांस तथा चिकना व गोल होकर सुगान्धित प्रतीत हो
जिसमें पितृमुख की शोभा भासती हो तो वे स्त्रियां इस लोक में धन्यवाद देने योग्य हो
हैं यानी ऐसा मुख धन्य स्त्रियों का होता है ॥ ६४ ॥

अधरलक्षणमाह—

पाटलो वर्तुलः स्निग्धो लेखाभूषितमध्यभूः ।
सीमन्तिनीनामधरो धराजानिप्रियो भवेत् ॥ ६५ ॥
कृशः प्रलम्बः स्फुटितो रूक्षो दौर्भाग्यसूचकः ।
श्यावः स्थूलोधरोष्ठः स्याद्वैधव्यकलहप्रदः ॥ ६६ ॥

जिनका अधर (निचला ओठ) रक्तवर्ण व गोल होकर चिकना प्रतीत हो व जि
बीचमें रेखा भूषित हो तो वे स्त्रियां राजाओं की रानी होती हैं और जिनका अधर पत

तम्बा व फूटा होकर रूखासा प्रतीत हो तो उन स्त्रियों को दौर्भाग्यसूचन करता है यानी ऐसे अधरवाली स्त्रियां अभागिनी या बुरे भागवाली होती हैं और जिनका अधर कपिल वर्ण होकर मोटासा प्रतीत हो तो उन स्त्रियोंके लिये वैधव्य व लड़ाईको देताहै॥९५।९६॥ २०

उत्तरोष्ठलक्षणमाह—

मसृणो मत्तकाशिन्याश्चोत्तरोष्ठः सुभोगदः ।
किञ्चिन्मध्योन्नतो रोमा विपरीतो विरुद्धकृत् ॥ ९७ ॥

जिस उत्तम गुणवाली स्त्री का ऊपरला ओठ चिकना प्रतीत हो तो महाभोगदायक होता है और बीच में कुछेक ऊंचा होकर रोमरहित हो तो भी घने भोगों को देता है और जो पूर्वोक्त लक्षणों से विपरीत लक्षणोंवाला प्रतीत हो तो विरुद्धकारी होता है ॥ ९७ ॥

दन्तलक्षणमाह—

गोक्षीरसन्निभाः स्निग्धा द्वात्रिंशद्दशनाः शुभाः ।
अधस्तादुपरिष्टाच्च समास्तोकसमुन्नताः ॥ ९८ ॥
पीताः श्यावाश्च दशनाः स्थूला दीर्घा द्विपङ्क्तयः ।
शुक्त्याकाराश्च विरला दुःखदौर्भाग्यदायकाः ॥ ९९ ॥
अधस्तादधिकैर्दन्तैर्मातरं भक्षयेत्स्फुटम् ।
पतिहीना च विकटैः कुलटा विरलैर्भवेत् ॥ १०० ॥

जिनके दांत गोदूध के समान तथा चिकने होकर बत्तीस संख्यावाले हों तथा नीचे व ऊपर समान होकर कुछेक ऊंचेसे प्रतीत हों तो उन स्त्रियों को शुभदायक होते हैं और जिनके दांत पीले व कपिलवर्णवाले, मोटे, लम्बे, दो पांतिवाले तथा सीपी के आकारवाले होकर बिरले प्रतीत हों तो उन स्त्रियों के लिये दुःख व दौर्भाग्य को देते हैं और जिसके दांत नीचे तरफ़ अधिक प्रतीत हों तो वह स्त्री माता को विनाशती है व जिसके दांत विकटाकार प्रतीत हों तो वह स्त्री पति से हीन होती है और जिसके दांत बिरले प्रतीत हों तो वह स्त्री पुंश्चली (छिनारि) होती है ॥ ९८ । १०० ॥ २१

जिह्वालक्षणमाह—

जिह्वेष्टमिष्टभोक्त्री स्याच्छोणा मृद्वी तथा सिता ।
दुःखाय मध्यसंकीर्णा पुरोभागसविस्तरा ॥ १ ॥

१ दन्तस्नेहेन सौभाग्यं लभते नात्र संशयः । केशस्नेहेन सौभाग्यं नेत्रस्नेहेन वस्नता । सर्वाङ्गेन च यः स्निग्धः प्राप्नोति विपुलं धनम् ॥

सितया तोयमरणं श्यामया कलहप्रिया ।
दरिद्रिणी मांसलया लम्बयाऽभक्ष्यभक्षिणी ॥ २ ॥
विशालया रसनया प्रमदातिप्रमादभाक् ।

जिसकी जीभ लाल व कोमल होकर कुछेक सफ़ेदीसी लिये प्रतीत हो तो वह अभिलषित पदार्थों को पाकर मीठे भोजनों को करती है तथा जिसकी जीभ बीच में स होकर अग्रभाग में चौड़ीसी प्रतीत हो तो उस स्त्री को दुःखदायक होती है और जि जीभ सफ़ेदही प्रतीत हो तो वह स्त्री जलमें डूबकर मरजाती है व जिसकी जीभ काली प्रतीत हो तो वह स्त्री बहुतही लड़ाई करती है यानी उसके दिलमें झगड़ा फ़िसा बसारहता है व जिसकी जीभ मांस से लदी हुई मोटीसी प्रतीत हो तो वह स्त्री दरिद्रि होती है व जिसकी जीभ बहुतही लम्बीसी प्रतीत हो तो वह स्त्री अभक्ष्य पदार्थों खानेवाली होती है और जिसकी जीभ बहुतही चौड़ीसी प्रतीत हो तो वह स्त्री बड़े मादोंकी यानी भूलोंकी सेवनेवाली होती है ॥ १ । २ । ३/२ ॥

तालुलक्षणमाह—

स्निग्धं कोकनदाभासं प्रशस्तं तालु कोमलम् ॥ ३ ॥
सिते तालुनि वैधव्यं पीते प्रव्रजिता भवेत् ।
कृष्णेऽपत्यविहीनार्ता रूक्षे भूरिकुटुम्बिनी ॥ ४ ॥

जिसका तालु (तरुवा) चिकना तथा लालकमल के समान होकर कोमलसा प्र हो तो उस स्त्रीके लिये शुभदायक होता है व जिसका तालु सफ़ेद हो तो वह स्त्री वि होजाती है व जिसका तालु पीला प्रतीत हो तो वह संन्यासिनी होती है व जिस तालु काला प्रतीत हो तो वह स्त्री सन्तानरहित होकर दुखिया रहती है और जिस तालु रूखा प्रतीत हो तो वह स्त्री घने भाई बन्धुओंवाली होकर बड़े परिवारवाली ह है ॥ ३ । ४ ॥

कण्ठघण्टिकादिलक्षणमाह—

कण्ठे स्थूला सुवृत्ता च क्रमतीक्ष्णा सुलोहिता ।
अप्रलम्बा शुभा घण्टी स्थूला कृष्णा च दुःखदा ॥ ५ ॥
अलक्षितद्विजं किञ्चित् किञ्चित्फुल्लकपोलकम् ।
स्मितं प्रशस्तं सुदृशामनिमीलितलोचनम् ॥ ६ ॥

जिसकी घांटी कण्ठ में मोटीली व गोली व क्रमसे तीखी व लाली होकर

लम्बी नहीं प्रतीत हो तो उस स्त्री के लिये शुभदायक होती है और जिसकी घांटी मोटी होकर काली प्रतीत हो तो उस स्त्री को दुःखदायक होती है और सुनयनी नारियों का हँसना या मुसुक्याना कि जिसमें दांत नहीं देख पड़ते हों व गाल कुछेक फूलेसे प्रतीत हों व आंखें मिची हुई न हों तो शुभदायक होता है ॥ ५ । ६ ॥

नासालक्षणमाह—

समवृत्तपुटा नासा लघुच्छिद्रा शुभावहा ।
स्थूलाग्रा मध्यनम्रा च न प्रशस्ता समुन्नता ॥ ७ ॥
आकुञ्चितारुणाग्रा च वैधव्यक्लेशदायिनी ।
परप्रेष्या च चिपिटा ह्रस्वा दीर्घा कलिप्रिया ॥ ८ ॥

जिसकी नासिका (नाक) समान गोल पुटोंवाली व हलके छेदोंवाली प्रतीत हो तो उस स्त्री को शुभदायक होती है और जिसकी नासिका अग्रभाग में मोटी व मध्यभाग में लचीसी होकर ऊंचीसी प्रतीत हो तो उस स्त्री को शुभदायक नहीं होती है और जिसकी नासिका टेढ़ी होकर अग्रभाग में लालवर्णवाली प्रतीत हो तो उस स्त्री के लिये विधवा-पन व दुःखोंकी देनेवाली कहाती है व जिसकी नासिका चपठी होकर छोटीसी प्रतीत हो तो वह स्त्री पराई दासी होती है और जिसकी नासिका लम्बी हो तो वह स्त्री लड़ाई लड़ती है ॥ ७ । ८ ॥

क्षुतलोचनपक्ष्मलक्षणमाह—

दीर्घायुष्कृत् क्षुतं दीर्घं युगपद्द्वित्रिपिण्डितम् ।
ललनालोचने शस्ते रक्तान्ते कृष्णतारके ॥ ९ ॥
गोक्षीरवर्णविशदे सुस्निग्धे कृष्णपक्ष्मणी ।
उन्नताक्षी न दीर्घायुर्वृत्ताक्षी कुलटा भवेत् ॥ १० ॥

जिनकी छींक दीर्घ होकर एकही काल में दो तीन लगातार आजावें तो उस स्त्री को दीर्घायु करती है और जिनके लोचन (आंखें) आखिरी में लाल वर्णवाली होकर कालेतारा (तिल) वाली प्रतीत हों तो उस स्त्री को शुभदायक होते हैं और जिनकी आंखें गऊ के दूध के समान व साफ़ व चिकनी होकर काली पलकोंवाली प्रतीत हों तो भी शुभदायक होती हैं और जिसकी आंखें ऊंचीसी प्रतीत हों तो वह स्त्री दीर्घायु को नहीं पाती है और जिसकी आंखें गोलाकार प्रतीत हों तो वह स्त्री व्यभिचारिणी (छिनारि) होती है ॥ ९ । १० ॥

नेत्रलक्षणमाह—

मेषाक्षी महिषाक्षी च केकराक्षी न शोभना ।
कामगृहीला नितरां गोपिङ्गाक्षी सुदुर्वृता ॥ ११ ॥
पारावताक्षी दुःशीला रक्ताक्षी भर्तृघातिनी ।
कोटरा नयना दुष्टा गजनेत्रा न शोभना ॥ १२ ॥
पुंश्चली वामकाणाक्षी वन्ध्या दक्षिणकाणिका ।
रमणी मधुपिङ्गाक्षी धनधान्यसमृद्धिभाक् ॥ १३ ॥

जिसकी आंखैं मेढ़ा या भैंसे के समान होकर कञ्जीसी प्रतीत हों तो उस स्त्री शुभदायक नहीं होती हैं बरन वह स्त्री बड़ी कामुकी होती है और जिसकी आंखैं गऊ समान होकर पीलीसी प्रतीत हों तो वह स्त्री बड़े बुरे चरित्रोंवाली होती है व जिस आंखैं कबूतर के समान प्रतीत हों तो वह बुरे स्वभाववाली होती है व जिसकी आं लालवर्णवाली प्रतीत हों तो वह स्त्री पतिको विनाशती है व जिसकी आंखैं वृक्षछि (खोंखल) के समान प्रतीत हों तो वह स्त्री दुष्टा होती है और जिसकी आंखैं हाथी समान प्रतीत हों तो शुभदायक नहीं होती है और जिसकी बाईं आंख कानी प्रतीत तो वह स्त्री पुंश्चली (छिनारि) होती है और जिसकी दाहिनी आंख कानी प्रतीत तो वह स्त्री वन्ध्या (बांझ) होती है और जिसकी आंखैं रसीली होकर पीली प्र हों तो वह स्त्री धन, धान्य और समृद्धियों की सेवनेवाली होती है ॥ ११ । १३ ॥

पक्ष्मलक्षणमाह—

पक्ष्मभिः सुघनैः स्निग्धैः कृष्णैः सूक्ष्मैः सुभाग्यभाक् ।
कपिलैर्विरलैः स्थूलैर्निन्द्या भवति भामिनी ॥ १४ ॥

जिसकी आंखों की विन्नियां (बरौनियां) बड़ी घनी, चिकनी व काली होकर सू प्रतीत हों तो वह स्त्री बड़े भागवाली होती है और जिसकी बरौनियां पीली व विर होकर मोटीसी प्रतीत हों तो वह स्त्री निन्दाके योग्य होती है ॥ १४ ॥

भ्रूलक्षणमाह—

भ्रुवौ सुवर्तुले तन्व्याःस्निग्धे कृष्णे असंहते ।
प्रशस्ते मृदुरोमाणौ सुभ्रुवः कार्मुकाकृती ॥ १५ ॥

---

१ चन्द्रानना च या कन्या बालसूर्यसमप्रभा । विशालनेत्रा रक्ताक्षी तां कन्यां वरे बुधः ॥ १ ॥

खररोमा च पृथुला विकीर्णा सरला स्त्रियाः।
न भ्रूः प्रशस्ता मिलिता दीर्घरोमा च पिङ्गला॥ १६॥

जिसकी भौंहें गोल, चिकनी, काली, परस्पर नहीं मिली हुई, कोमल रोमोंवाली होकर धनुषाकार प्रतीत हों तो उस स्त्री को शुभदायक होती हैं और जिसकी भौंहें खरखरे रोमोंवाली चौड़ी, विकीर्ण, सीधी व मिली हुई तथा दीर्घ रोमों वाली होकर पीलीसी प्रतीत हों तो शुभदायक नहीं होती हैं॥ १५। १६॥

कर्णलक्षणमाह—

लम्बौ कर्णौ शुभावर्तौ सुखदौ च शुभप्रदौ।
शष्कुलीरहितौ निन्द्यौ शिरालौ कुटिलौ कृशौ॥ १७॥

जिसके कान लम्बे होकर शुभदायक घेर से प्रतीत हों तो उस स्त्री को सुखद होकर बड़े शुभदायक होते हैं और जिसके कान शष्कुली (कुचियों) से रहित, नसोंवाले व टेढ़े होकर पतले प्रतीत हों तो उन स्त्रियों के लिये निन्दनीय होते हैं॥ १७॥

ललाटलक्षणमाह—

भालः शिराविरहितो निर्लोमार्धेन्दुसन्निभः।
अनिम्नस्त्र्यङ्गुलो नार्याः सौभाग्यारोग्यकारणम्॥ १८॥
व्यक्तस्वस्तिकरेखं च ललाटं राज्यसम्पदे।
प्रलम्बं मस्तकं यस्या देवरं हन्ति सा ध्रुवम्॥ १९॥
रोमशेन शिरालेन प्रांशुना रोगिणी मता॥ २०॥

जिसका भाल नसों से रहित व लोमों से हीन आधे चन्द्रमा के समान तथा गहिरा न होकर तीन अंगुलवाला प्रतीत हो तो उस स्त्री के लिये सौभाग्य व आरोग्य का कारण होता है व जिसका ललाट प्रकटित त्रिकोण रेखावाला प्रतीत हो तो राज्यसंपदा के लिये होता है व जिसका मत्था लम्बा प्रतीत हो तो वह स्त्री निश्चयकर देवर को मारती है और जिसका भाल रोमोंवाला तथा नसोंवाला होकर ऊंचासा प्रतीत हो तो वह स्त्री रोगिणी मानी जाती है॥ १८। २०॥

सीमन्तशिरोलक्षणमाह—

सीमन्तः सरलः शस्तो मौलिः शस्तः समुन्नतः।
गजकुम्भनिभो वृत्तः सौभाग्यैश्वर्यसूचकः॥ २१॥

स्थूलमूर्धा च विधवा दीर्घशीर्षा च बन्धकी ।
विशालेनापि शिरसा भवेद् दौर्भाग्यभाजनम् ॥ २२ ॥

जिसका शीश का जूड़ा सीधासा प्रतीत हो तो उस स्त्री के लिये शुभदायक होता और जिसका मस्तक ऊंचासा प्रतीत हो तो भी उस स्त्री को शुभदायक होता है जिसका शीश हाथी के कुम्भ के समान होकर गोलाकार प्रतीत हो तो उस स्त्री के लि सौभाग्य और ऐश्वर्य को देता है और जिसका मस्तक मोटासा प्रतीत हो तो वह विधवा (रांड़) होती है व जिसका शीश लम्बा प्रतीत हो तो वह स्त्री छिनारि होती और जिसका शीश चौड़ासा प्रतीत हो तो वह स्त्री बुरेभागकी भाजन होती है ॥२१।२

केशलक्षणमाह—

केशा अलिकुलच्छायाः सूक्ष्माः स्निग्धाः सुकोमलाः ।
किञ्चिदाकुञ्चिताग्राश्च कुटिलाश्चातिशोभनाः ॥ २३ ॥
परुषाः स्फुटिताग्राश्च विरलाश्च शिरोरुहाः ।
पिङ्गला लघवो रूक्षा दुःखदारिद्र्यबन्धदाः ॥ २४ ॥

जिनके केश भ्रमरसमूह के समान काले, पतले, चिकने व कोमल तथा अग्रभा घुँघुराले होकर टेढ़ेसे प्रतीत हों तो उन स्त्रियों को अत्यन्त शुभदायक होते हैं और जि केश कठोर व अग्रभाग में टूटे व बिरले व पीले व छोटे होकर रूखेसे प्रतीत हों तो स्त्रियों को दुःख, दारिद्र्य और बन्धन को देते हैं ॥ २३ । २४ ॥

" एवं षट्षष्टीनामङ्गानां शुभाशुभलक्षणं प्रोच्य प्रसंगान्मशकादीन्याह— "

भ्रुवोरन्तर्ललाटे वा मशको राज्यसूचकः ।
वामे कपोले मशकः शोणो मिष्टान्नदः स्त्रियाः ॥ २५ ॥
तिलकं लाञ्छनं वापि हृदि सौभाग्यकारणम् ।
यस्या दक्षिणवक्षोजे शोणे तिलकलाञ्छने ॥ २६ ॥
कन्याचतुष्टयं सूते सूते सा च सुतत्रयम् ।

इस प्रकार छांछठ अंगों के शुभाशुभ लक्षणों को कहकर प्रसंग से मशकादिकों कहते हैं कि जिसके भौंहों के बीच या ललाट में मशेका चिह्न प्रतीत हो तो वह रा

१ यस्याः कुटिलकेशाश्च नेत्रमुत्पलसन्निभम् । नाभिश्च दक्षिणावर्ता सा नारी सु मेधते ॥ अतिनीला स्निग्धकेशी सुमुखी च सुमध्यमा । सुभ्रुजङ्घा सुनासा च सा कन्या सु मेधते ॥ या सुवर्णा प्रसन्नाक्षी सुलोमा च मृदूदरी । पद्मपत्रसमाक्षी च पुत्रैः सार्धं प्रवर्धे

सूचक होता है व जिसके बायें गाल में लाल मशा का चिह्न प्रतीत हो तो उस स्त्री को मिष्टान्नदायक होता है और जिसके हृदय में तिल का निशान प्रतीत हो तो उस स्त्री को सौभाग्यदायक होता है और जिसके दाहिने स्तन में लाल तिल का निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री चार कन्याओं को पैदा कर पीछेसे तीन पुत्रों को उपजाती है ॥२५ । २६ । ½॥

तिलकं लाञ्छनं शोणं यस्या वामे कुचे भवेत् ॥ २७ ॥
एकं पुत्रं प्रसूयादौ ततः सा विधवा भवेत् ।
गुह्यस्य दक्षिणे भागे तिलकं यदि योषितः ॥ २८ ॥
तदा क्षितिपतेः पत्नी सूते वा क्षितिपं सुतम् ।

जिसके बायें कुच (दूध) पर लाल तिलका निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री पहले एक पुत्र को पैदाकर विधवा होजाती है और जिसकी गुदाकी दाहिनी तरफ़ तिलका निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री राजाकी रानी होती है अथवा पृथ्वीपालक पुत्र को उपजाती है ॥ २७ । २८ । ½ ॥

नासाग्रे मशकः शोणो महिष्या एव जायते ॥ २९ ॥
कृष्णः स एव भर्तृघ्न्याः पुंश्चल्याश्च प्रकीर्तितः ।
नाभेरधस्तात्तिलकं मशको लाञ्छनं शुभम् ॥ ३० ॥
मशकस्तिलकं चिह्नं गुल्फदेशे दरिद्रकृत् ।

जिसकी नासिका के अग्रभाग में लाल मशा का निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री पटरानी होती है व जिसकी नासिका के अग्रभाग में काले तिलका निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री पतिको मारती हुई व्यभिचारिणी होजाती है व जिसकी नाभी के नीचे तिल या मशा का निशान प्रतीत हो तो उस स्त्री को शुभदायक होता है और जिसके टखनों या गेंठों में मशा व तिल का निशान प्रतीत हो तो उस स्त्री के लिये दरिद्रकारी होता है ॥ २९ । ३० । ½ ॥

करे कर्णे कपोले वा कण्ठे वामे भवेद्यदि ॥ ३१ ॥
एषां त्रयाणामेकन्तु प्राग्गर्भे पुत्रदं भवेत् ।
भालगेन त्रिशूलेन निर्मितेन स्वयंभुवा ॥ ३२ ॥
नितम्बिनीसहस्राणां स्वामित्वं योषिदाप्नुयात् ।

जिसके हाथ, कान, कपोल व कण्ठ के बायें तरफ़ मशा या तिल का निशान प्रतीत हो अथवा हाथ, कान व गाल इन तीनों में से किसी एक में मशा या तिल देख पड़ता

हो तो उस स्त्री को पहले गर्भमेंही पुत्रको देता है और जिसके भाल में ब्रह्मा के हुए त्रिशूल का निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री हज़ारों स्त्रियों की स्वामिनी होती है य हज़ारों स्त्रियों पै आज्ञा को चलाती है ॥ ३१ । ३२ । ३ ॥

सुप्ता परस्परं या तु दन्तान् किटकिटायते ॥ ३३ ॥
सुलक्ष्मापि न सा शस्ता या किंचित्प्रलपेत्तथा ।
पाणौ प्रदक्षिणावर्तो धर्म्यो वामो न शोभनः ॥ ३४ ॥

सोती हुई जो स्त्री परस्पर दांतों को किटकिटाती है तो वह अच्छे लक्षणोंवाली होकर भली नहीं होती है वैसेही सोती हुई जो बका करती है वह भी शुभदायक न होती है और जिसके हाथ में रोमों का दहिनावर्त प्रतीत हो तो धर्म को कराता है अ जिसके हाथ में रोमों का वामावर्त प्रतीत हो तो शुभदायक नहीं होता है ॥ ३३ । ३४

नाभौ श्रुतावुरसि दक्षिणावर्त ईडितः ।
सुखाय दक्षिणावर्तपृष्ठवंशस्य दक्षिणे ॥ ३५ ॥
अन्तः पृष्ठं नाभिसमो बह्वायुः पुत्रवर्धनः ।
राजपत्न्याः प्रदृश्येत भगमौलौ प्रदक्षिणः ॥ ३६ ॥

जिसकी नाभि, कान और छाती में रोमों या रेखाओं का दहिनावर्त प्रतीत हो उस स्त्री को शुभदायक होता है और जिसके पृष्ठवंश की दाहिनी तरफ़ दहिनावर्त प्रती हो तो सुखदायक होता है और जिसकी पीठ के बीच में नाभी के समान गोलाकार नि शान प्रतीत हो तो उस स्त्री को बड़ी आयु देता हुआ पुत्रों को बढ़ाता है और जिस योनि के ऊपरले भाग में या योनि की जड़ में दहिनावर्त प्रतीत हो तो वह स्त्री राजा रानी होती है ॥ ३५ । ३६ ॥

स चेच्छकटभङ्गः स्याद्बह्वपत्यसुखप्रदः ।
कटिगो गुह्यवेधेन पत्यपत्यनिपातनः ॥ ३७ ॥
स्यातामुदरवेधेन पृष्ठावर्तौ न शोभनौ ।
एकेन हन्ति भर्तारं भवेदन्येन पुंश्चली ॥ ३८ ॥

जिसकी योनिके ऊपरले या निचले भाग में रोमों या रेखों का निशान गाड़ेका भङ्ग होकर प्रतीत हो तो वह बहुतसे सन्तानों को देकर सुखदायक होता है और गुदा को वेधकर यानी उदरपर्यन्त आकर कमर में प्राप्त हो तो उस स्त्री के स्वा

थ सन्तानों को मारकर गिरा देता है और जिसकी पीठ में उदर को वेधन कर दो आवर्त प्राप्त हों तो शुभदायक नहीं होते हैं और यदि एकही आवर्त प्रतीत हो तो वह स्त्री स्वामी को विनाशती है और जो दूसरा आवर्त प्रतीत हो तो वह स्त्री व्यभिचारिणी होजाती है ॥ ३७ । ३८ ॥

कण्ठगो दक्षिणावर्तो दुःखवैधव्यहेतुकः ।
सीमन्तेथ ललाटे वा त्याज्या दूरात्प्रयत्नतः ॥ ३९ ॥
सा पतिं हन्ति वर्षेण यस्या मध्ये कृकाटिकम् ।
प्रदक्षिणो वा वामो वा रोम्णामावर्तकः स्त्रियाः ॥ ४० ॥

जिसके कण्ठ में दाहिनावर्त निशान प्रतीत हो तो वह उस स्त्री के लिये दुःख व वैधव्य का हेतु होता है और जिसके शिर में या ललाट में रोमों व रेखाओं का दाहिनावर्त प्रतीत हो तो उसको दूरसे ही बड़े यत्न के साथ त्यागना चाहिये और जिसके कृकाटिका (घांटी) के बीच में रोमों का दहिनावर्त या वामावर्त का निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री एकही साल में पति को विनाशती है ॥ ३९ । ४० ॥

एको वा मूर्द्धनि द्वौ वा वामे वामगती यदि ।
आदशाहं पतिघ्नौ तौ त्याज्यौ दूरात्सुबुद्धिना ॥ ४१ ॥
कट्यावर्ता च कुलटा नाभ्यावर्ता पतिव्रता ।
पृष्ठावर्ता च भर्तृघ्नी कुलटा वाथ जायते ॥ ४२ ॥

जिसके मस्तक में बायें तरफ़ एक या दो वाम गतिवाले वामावर्त प्रतीत हों तो वे उस स्त्री के पति को दश दिन में ही मार डालते हैं व जिसकी कमर में वामावर्त प्रतीत हो तो वह स्त्री कुलटा (छिनारि) होती है व जिसकी नाभी (तोंदी) में वामावर्त प्रतीत हो तो वह स्त्री पतिव्रता होती है और जिसकी पीठ में वामावर्त प्रतीत हो तो वह स्त्री पति को विनाशती है अथवा व्यभिचारिणी होजाती है ॥ ४१ । ४२ ॥

स्कन्द उवाच—

सुलक्षणापि दुश्शीला कुलक्षणशिरोमणिः ।
अलक्षणापि सा साध्वी सर्वलक्षणभूस्तु सा ॥ ४३ ॥
सुलक्षणा सुचरित्रा स्वाधीना पतिदेवता ।
विश्वेशानुग्रहादेव गृहे योषिदवाप्यते ॥ ४४ ॥

स्वामिकार्त्तिकजी अगस्त्यजी से कहते हैं कि, अच्छे लक्षणोंवाली स्त्री भी बुरे स्वभाव

वाली होकर कुलक्षणों की शिरोमणि होजाती है और जो लक्षणों से हीन स्त्री पतिव्रता होजाती है और वह सर्वलक्षणों की भूमि (आश्रय) कहाती है अब प्रसंग ग्रन्थान्तर से लक्षणों व कुलक्षणों को कहते हैं कि "पद्मिनी १ पद्मगन्धाच मीनगन्धा चित्रिणी २। शङ्खिनी ३ क्षारगन्धा च मदगन्धा च हस्तिनी ४। हंसपुन्नागवर्णाभा या रक्तलोचना। अष्टौ जनयते पुत्रान्प्राप्नोति परमं सुखम्। काकस्वरा काकजङ्घा तथैवोर्ध्व तथा। लम्बोष्ठी लम्बवदना तां कन्यां परिवर्जयेत्। हंसतुल्यगतिर्नारी राजपत्नी च भवेत्। यस्या गमनमात्रेण भूमिकम्पः प्रजायते। सा स्त्री दैन्यकरी ज्ञेया सामुद्रवचनं यथा आवर्तः प्रजने यस्या मध्ये चैव प्रदक्षिणः। एकं सा जनयेत्पुत्रं राजानं पृथिवीपतिम्। (पद्मिनी पद्म की सुगन्धवाली होती है व चित्रिणी मछली कीसी गन्धवाली शङ्खिनी क्षारगन्धवाली होती है तथा हस्तिनी मद की गन्धवाली कहाती है और जो हंस व नागकेसर के समान वर्णवाली होकर लाल लोचनोंवाली प्रतीत हो तो वह पुत्रों को उपजाती हुई परम सुख को पाती है और जो स्त्री काकस्वरवाली व काक वाली व ऊंचे स्वरवाली तथा लम्बे होठोंवाली होकर लम्बे वदनवाली प्रतीत तो उस कन्या को त्याग देवे और जो स्त्री हंस के समान गमनवाली हो तो वह होती है और जिसके गमन से पृथ्वी कांपती हो तो वह स्त्री दुःखकारिणी जानना हिये यह समुद्र का वचन है व जिसके गर्भ में या कमर में रोमों या रेखाओं का दहि वर्त प्रतीत हो तो वह स्त्री राजरूप पृथ्वीपालक पुत्र को उपजाती है) इत्यादि लक्ष व कुलक्षणों को जानना चाहिये और अच्छे लक्षणोंवाली, शोभन चरित्रोंवाली अधीन रहनेहारी पतिदेवतावाली स्त्री विश्वेश्वर की दया से ही घरमें आनकर प्राप्त जाती है विना परमेश्वर की दया पूर्वोक्त लक्षणोंवाली स्त्री नहीं मिलसक्की है॥ ४३। ४

अलंकृताः सुवासिन्यो याभिः प्राक्तनजन्मभिः।
नानाविधैरलङ्कारैस्ताः सुरूपा भवन्ति हि॥ ४५॥
सुतीर्थेषु वपुर्याभिः क्षयितं वा विहायितम्।
ता लावण्यतरङ्गिण्यो भवन्तीह सुलक्षणाः॥ ४६॥

जिन्होंने पूर्वजन्म में सुवासिनी स्त्रियों को अनेकानेक अलंकारों से भूषित किय वे स्त्रियां सुन्दर रूपवाली होती हैं और जिन्होंने शुभदायक प्रयागादि तीर्थों में अ देहों को व्रतादिकों से क्षीण किया या छोड़ा है वेही स्त्रियां इस लोक में लावण "सुन्दरता" की तरङ्गिणियां होकर सुलक्षणा (अच्छे लक्षणोंवाली) होती हैं॥४५।४

---

१ ऊढाअनूढा वा पितृगेहे सयौवनस्त्रियः सुवासिन्यः स्वेषु ज्ञातिषु वस्तुंशीलं यासा व्युत्पत्तेः स्ववासिनी चिरंटी स्याद् द्वितीयवयसि स्त्रियामिति रुद्रः, चिरंटीतु सुव नीति चामरः॥

अर्चिता जगतां माता याभिर्मृडवधूरिव ।
ता भवन्ति सुचारित्राः योषाः स्वाधीनभर्तृकाः ॥ ४७ ॥
स्वाधीनपतिकानां च सुशीलानां मृगीदृशाम् ।
स्वर्गापवर्गावत्रैव सुलक्षणफलं हि तत् ॥ ४८ ॥

जिन्होंने जगन्माता मृडानी (शिवप्रिया) का ही पूजन किया है वेही स्त्रियां शोभन चरित्रोंवाली होकर स्वाधीनपतिका होती हैं कि जिन्होंने पति को अधीन कर लिया व भले स्वभाव को रक्खा है उन मृगनयनी रमणियों को यहां ही स्वर्ग और अपवर्ग (मोक्ष) ये दोनों मिलते हैं क्योंकि वह फल सुलक्षणों का ही है ॥ ४७ । ४८ ॥

सुलक्षणैः सुचरितैरपि मन्दायुषं पतिम् ।
दीर्घायुषं प्रकुर्वन्ति प्रमदाः प्रमदास्पदम् ॥ ४९ ॥
अतः सुलक्षणा योषा परिणेया विचक्षणैः ।
लक्षणानि परीक्ष्यादौ हित्वा दुर्लक्षणान्यपि ॥ ५० ॥
लक्षणानि मयोक्तानि सुखाय गृहमेधिनाम् ।
येषां विज्ञानमात्रेण विज्ञो भवति मानवः ॥ ५१ ॥

बड़े हर्षवाली स्त्रियां शोभन लक्षणों व शोभन चरितों के द्वारा अल्पायु पति को दीर्घायु करती हुई हर्ष का घर बनाती हैं यही महाभारत वनपर्व में भी प्रसिद्ध है कि सावित्री ने अल्पायु सत्यवान् को दीर्घायु बनाया है इसलिये विद्वानों को आदि में लक्षणों की परीक्षा कर व बुरे लक्षणों को त्यागकर सुलक्षणा स्त्री को व्याहना चाहिये मैंने गृहमेधियों (गृहस्थों) के सुख के लिये लक्षणों को कहा है जिनके विज्ञानमात्र से मनुष्य विशेषज्ञाता होजाता है ॥ १४९ । १५१ ॥

इति स्कन्दपुराणकाशीखण्डे स्त्रीणां लक्षणं समाप्तिमगादिति शम् ।

अथातः संप्रवक्ष्यामि कररेखाविचारणम् ।
श्रूयतां देवदेवेशि सज्जनानन्दकारणम् ॥ १ ॥
वामभागे तु नारीणां दक्षिणे पुरुषस्य च ।
निर्दिष्टं लक्षणं तेषां समुद्रेण यथोदितम् ॥ २ ॥

अब इसके उपरान्त हस्तरेखा का विचार जोकि विद्वज्जनों के आनन्द का कारण है उस

को हे देवदेवेशि ! सुनिये नारियों के वाम हाथ में और पुरुषों के दाहिने हाथ में रेखा का लक्षण बतलाया है जैसाकि समुद्र ने उन नरनारीगणोंके विषय में कहा है ॥ १ ॥

पूर्वमायुः परीक्षेत पश्चाल्लक्षणमेव च ।
आयुर्हीनं नराणां चेल्लक्षणैः किं प्रयोजनम् ॥ ३ ॥

पहले आयु की परीक्षा करै पीछे से लक्षणों का विचार करै यदि मनुष्यों की हीन है तो लक्षणों से कौनसा प्रयोजन सिद्ध होसक्ता है ॥ ३ ॥

अनामिका पूर्वमूले कनिष्ठादिक्रमेण चेत् ।
आयुषं दशवर्षाणि सामुद्रवचनं यथा ॥ ४ ॥

जिसके करतल में कनिष्ठा अँगुली की मूल से चलकर अनामिका की मूल के भाग में आयुरेखा प्रतीत हो तो उस प्राणी की दशवर्ष की आयुर्दाय होती है जैसा सामुद्रिकशास्त्र का वचन है ॥ ४ ॥

अङ्गुष्ठस्याप्यूर्ध्वरेखा वर्तते नृपतिः शुभा ।
सेनापतिर्धनेशश्च मध्यमायुर्नरो भवेत् ॥ ५ ॥

जिसके करतल में अँगूठा के ऊपर शुभलक्षणाङ्कित ऊर्ध्वरेखा (फेटलाइन) प्रतीत तो वह प्राणी राजा तथा सेनापति (फ़ौजका सरदार) व धनशाली होकर मध्यम ६० । ५० वर्ष की उमरवाला होता है ॥ ५ ॥

येषां पाण्यूर्ध्वरेखा स्यात्कनिष्ठा मूलसंस्थिता ।
ते नराः परदेशेषु शतमायुर्लभन्ति वै ॥ ६ ॥

कनिष्ठागत ऊर्ध्व रेखा

जिनके करतल में ऊर्ध्वरेखा कनिष्ठा अँगुली की मूल में प्रतीत हो तो वे प्राणी देश में बसते हुए सौ १०० वर्ष की आयु पाते हैं ॥ ६ ॥

आयुष्मती भवेद्रेखा तर्जनीमूलसंस्थिता ।
शतवर्षं भवेदायुः सुखमृत्युर्न संशयः ॥ ७ ॥

तर्जनीगत ऊर्ध्व रेखा.

जिसके करतल में आयुरेखा चलकर तर्जनी अँगुली की मूल में प्रतीत हो तो प्राणी सौवर्ष जीता हुआ सुख से मरता है संशय नहीं करना चाहिये ॥ ७ ॥

मध्यमामूलपर्यन्तमायुरेखा च दृश्यते ।
चतुर्दशचतुर्विंशत्यायुर्बलविनाशनम् ॥ ८ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा मध्यमा अँगुली की मूलपर्यन्त प्रतीत हो तो वह प्राणी अड़तीस वर्ष जीता है बाद आयुर्बल का विनाश होजाता है ॥ ८ ॥

आयुर्बलं भवेद्रेखा नामिकामूलसंस्थिता ।
त्रिदशं वा त्रिषष्टिं वा आयुर्बलविनाशनम् ॥ ९ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा अनामिका अँगुली की मूल में प्रतीत हो तो वह प्राणी तीस वर्ष या तिरसठि वर्ष जीता है बाद उसके आयुर्बल का विनाश होता है ॥ ९ ॥

आयुर्हीनं यथास्वल्पं बहुदीर्घं च दृश्यते ।
ते नराः सुखदुःखेन चाल्पमृत्युर्न संशयः ॥ १० ॥

जिसके करतल में आयुरेखा बहुत थोड़ी सी प्रतीत हो तो वह प्राणी आयुहीन होता है और जिनके करतल में आयुरेखा बड़ी दीर्घ प्रतीत हो तो वे प्राणी सुख व दुःख से जीते हैं अथवा निस्संदेह उनकी अल्पायु नहीं होती है ॥ १० ॥

कनिष्ठामूलरेखा तु कुर्याच्चैव शतायुषम् ।
अनामिकामध्यमाभ्यामन्तरे संयुता सती ॥ ११ ॥

जिसके करतल में कनिष्ठा अँगुली की मूल की रेखा यानी आयुरेखा अनामिका व मध्यमा के बीच में संयुक्त होती हुई प्रतीत हो तो उस प्राणी को सौवर्ष की आयुवाला करती है यानी वह प्राणी सौवर्ष की उमरवाला होता है ॥ ११ ॥

ऊना ऊनायुषं कुर्याद्रेखाश्चाङ्गुष्ठमूलगाः ।
बृहत्यः पुत्रदाः क्षीणाः प्रमदाः परिकीर्तिताः ॥ १२ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा अनामिका व मध्यमा के बीच कमती प्रतीत हो तो उस प्राणी को कम उमरवाला करती है और यदि अँगूठे की मूल में जो बड़ी रेखायें प्रतीत हों तो वे पुत्रदायक होती हैं और जो क्षीण रेखा प्रतीत हों तो कन्यायें कहाती हैं यानी अँगूठे की मूल में जितनी बड़ी रेखा प्रतीत हों उतनेही पुत्र पैदा होते हैं और जितनी रेखा छोटी प्रतीत हों उतनीही कन्यायें जन्मती हैं और उन रेखाओं में छोटी या बड़ी रेखा जितनी कटीसी प्रतीत हों उतनेही कन्या व पुत्र मरजाते हैं ॥ १२ ॥

कनिष्ठां हि समाश्रित्य मध्यमायामुपागता ।
षष्टिवर्षायुषं कुर्यादायुरेखा न संशयः ॥ १३ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा कनिष्ठा अँगुली का आश्रय लेकर मध्यमा अँगुली के समीप

पहुँचगई हो तो उस प्राणी को साठिवर्ष की उमरवाला करती है यानी वह प्राणी नि देह साठिवर्ष जीता है ॥ १३ ॥

कनिष्ठाङ्गुलिदेशात्तु रेखा गच्छति तर्जनीम् ।
अविच्छिन्ना भवेद्यस्य शतमायुर्विनिर्दिशेत् ॥ १४ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा अविच्छिन्न होकर कनिष्ठा अँगुली से चल तर्जनी गुली पर्यन्त पहुँच गई हो तो उस प्राणी की सौ वर्षकी आयु कहै यानी वह प्राणी वर्ष तक जीता है ॥ १४ ॥

कनिष्ठाङ्गुलिमध्यस्था रेखा चेदवतिष्ठति ।
ऊर्ध्वच्छिन्ना भवेद्यस्य विंशत्यायुर्विनिर्दिशेत् ॥ १५ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा यदि कनिष्ठा अँगुली के बीच में विद्यमान हो और रेखा का ऊपरला भाग कटासा प्रतीत हो तो उस प्राणी की आयु बीस वर्षकी कहै य वह प्राणी बीस वर्ष पर्यन्त जीता है ॥ १५ ॥

कनिष्ठाङ्गुलिमूलं वा रेखा गच्छति मध्यमाम् ।
अविच्छिन्ना भवेद्यस्याशीतिस्तस्य विनिर्दिशेत् ॥ १६ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा कनिष्ठा अँगुली की मूल से चलकर मध्यमा पर्यन्त प कर छिन्न भिन्न नहीं प्रतीत हो तो उस प्राणी की आयु अस्सी वर्ष होती है यानी प्राणी अस्सी वर्ष पर्यन्त जीता है ॥ १६ ॥

कनिष्ठाङ्गुलिदेशे तु रेखा गच्छति नान्यतः ।
अच्छिन्ना विरला चैव विंशत्यायुर्विनिर्दिशेत् ॥ १७ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा कनिष्ठा अँगुली के मूलदेश में होकर अन्यदेश में न हो अथवा छिन्न भिन्न नहीं होकर विरल प्रतीत हो तो वह प्राणी बीस वर्ष प जीता है ॥ १७ ॥

कनिष्ठाङ्गुलिमूले तु रेखा गच्छत्यनामिकाम् ।
अविच्छिन्ना भवेद्यस्य चत्वारिंशत्स जीवति ॥ १८ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा कनिष्ठा अँगुलीकी मूल से अनामिका पर्यन्त गई हो यदि वह रेखा छिन्न भिन्न नहीं प्रतीत हो तो वह प्राणी चालीस वर्ष पर्यन्त जीता है॥

यस्यास्तीर्णकनिष्ठा च तर्जनी मध्यमा समा ।
कनिष्ठायां शतायुः स्यात्तर्जन्यां नृपतिर्भवेत् ॥ १९ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा कनिष्ठा अँगुली की मूल में विस्तृत होकर तर्जनी व मध्यमा की मूल में समानाकार प्रतीत हो अथवा आयुरेखा कनिष्ठा की मूल से चलकर मध्यमा की मूल पर्यन्त विस्तीर्ण हो तो वह प्राणी सौ वर्षकी उमरवाला होता है और यदि आयुरेखा कनिष्ठा की मूल से चलकर तर्जनी के मूल पर्यन्त विस्तार से पहुँची हो तो वह प्राणी राजा होता है ॥ १९ ॥

तर्जन्या मध्यमाङ्गुल्या आयुरेखा तु मध्यतः ।
संप्राप्ता या भवेच्चैव स जीवेच्छरदः शतम् ॥ २० ॥

जिसके करतल में आयुरेखा जोकि तर्जनी व मध्यमा अँगुली के बीच में भलीभांति पहुँची हो तो वह प्राणी सौवर्ष पर्यन्त जीता है ॥ २० ॥

प्रदेशिनीगता रेखा कनिष्ठामूलगामिनी ।
शतायुषं च कुरुते छिन्नया तरुतो भयम् ॥ २१ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा कनिष्ठा की मूल से गमन करती हुई तर्जनी की मूल पर्यन्त विस्तृत होकर प्राप्त हो तो उस प्राणी को सौवर्ष की उमरवाला करती है और यदि आयुरेखा छिन्न भिन्न होकर प्रतीत हो तो उस प्राणी को वृक्ष से गिरने की भय होती है ॥ २१ ॥

कनिष्ठिका मूलभवा रेखा कुर्याच्छतायुषम् ।
प्रदेशिनीमध्यमाभ्यामन्तरेण गता सती ॥ २२ ॥

जिसके करतल में कनिष्ठा की मूल में उपजी हुई रेखा तर्जनी व मध्यमा के बीच में प्राप्त हो तो उस प्राणी को सौवर्ष की उमरवाला करती है ॥ २२ ॥

कनिष्ठा तर्जनी यावद्रेखा भवति चाक्षता ।
विंशत्यब्दाधिकशतं नरो जीवत्यनामयः ॥ २३ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा अच्छिन्न होकर कनिष्ठा अँगुली की मूल से आरम्भ कर तर्जनी की मूल पर्यन्त अतिक्रमण करती हो तो वह प्राणी नीरोग होकर एकसौ बीसवर्ष पर्यन्त जीता है ॥ २३ ॥

कनिष्ठां मध्यमां यावद्रेखा भवति चाक्षता।
शताब्दं वाथ चाशीतिं नरो जीवेन्न संशयः ॥ २४ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा छिन्न भिन्न न होकर कनिष्ठा अँगुली की मूल से म अँगुली की मूल पर्यन्त प्राप्त हो तो वह प्राणी सौवर्ष या अस्सीवर्ष पर्यन्त निस्स जीता है ॥ २४ ॥

कनिष्ठानामिकायां चेद्रेखा भवति चाक्षता।
षष्टिं पञ्चाशदब्दं वा नरो जीवत्यसंशयः ॥ २५ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा छिन्न भिन्न न होकर कनिष्ठा अँगुली की मूल से कर अनामिका अँगुली की मूल में जा मिली हो तो वह प्राणी निस्सन्देह साठि या प वर्ष पर्यन्त जीता है ॥ २५ ॥

रेखया भिद्यते रेखा स्वल्पायुश्च भवेन्नरः।
यत्संख्या भिद्यते रेखा अपमृत्युश्च तद्भवेत् ॥ २६ ॥

जिसके करतल में आयुरेखा किसी क्षुद्ररेखा से कटी हो तो वह प्राणी थोड़ी वाला होता है और जितनी छोटी रेखाओं से आयुरेखा कटी हो उतनीही उस प्र की अल्पायु होती है ॥ २६ ॥

यस्य मीनसमा रेखा कर्मसिद्धिश्च जायते।
धनाढ्यश्च स विज्ञेयो बहुपुत्रो न संशयः ॥ २७ ॥

जिसके करतल में मछली के समान रेखा प्रतीत हो तो उस प्राणी के कर्मों की होती है और वह प्राणी निस्संदेह धनाढ्य व धन पुत्रोंवाला जानना चाहिये ॥ २७

तुला ग्रामं तथा वज्रं करमध्ये च दृश्यते।
तस्य वाणिज्यसिद्धिः स्यात्पुरुषस्य न संशयः ॥ २८ ॥

जिसके करतल में तुला (तराजू) ग्राम (चतुष्कोणचिह्न) तथा वज्र का चि तीत हो तो उस प्राणी के वाणिज्य की सिद्धि निस्संदेह होती है यानी वह प्राणी का व्यापार (रोज़गार) करता है ॥ २८ ॥

पद्मचापादिखड्गश्च अष्टकोणादि दृश्यते।
स्त्रियाश्च पुरुषस्यापि धनवान्स सुखी नरः ॥ २९ ॥

जिसके करतल में पद्म, धनुष आदि, खड्ग और अष्टकोणादि चिह्न प्रतीत हों तो वह प्राणी धनवान् होकर सुखी होता है और यदि स्त्रियों के करतल में पूर्वोक्त पद्म आदि निशान प्रतीत हों तो वह स्त्री धनवती होकर सुखशालिनी होती है परन्तु विशेषता से जिस स्त्री पुरुषके करतल में पद्म काही निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री रानी व पुरुष राजा होता है और जिसके करतल में धनुष का निशान प्रतीत हो तो वह पुरुष महावीर होता है व तलवार का निशान प्रतीत हो तो वह पुरुष महायोद्धा होता है और यदि अष्टकोण का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी भूपति या ग्रामपति होता है ॥ २९ ॥

शङ्खचक्रध्वजाकारो नासाकारश्च[1] दृश्यते ।
सर्वविद्याप्रदानेन बुद्धिमान्स भवेन्नरः ॥ ३० ॥

जिसके करतल में शंख, चक्र, ध्वजाकार या नासाकार निशान प्रतीत हों तो वह प्राणी समस्त विद्या के प्रदान से बुद्धिमान् होता है यानी वह प्राणी सकल शास्त्रपारदर्शी होकर ज्ञानी कहाता है ॥ ३० ॥

त्रिशूलं करमध्ये तु तेन राजा प्रवर्तते ।
यज्ञे धर्मे च दाने च देवद्विजप्रपूजने ॥ ३१ ॥

जिसके करतल के बीच त्रिशूल का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी राजा होकर यज्ञ, धर्म, दान व देवता तथा ब्राह्मणों के पूजन में परायण रहता है यानी अहर्निश पूर्वोक्त कर्मों मेंही लगा रहता है ॥ ३१ ॥

शक्तितोमरबाणैश्चेत्करमध्ये प्रदृश्यते ।
रथचक्रध्वजाकारः स च राज्यं लभेन्नरः ॥ ३२ ॥

जिसके करतल में शक्ति (बरछी, सांग, भाला या यष्टिनामक अस्त्रविशेष) तोमर (गुर्ज या अस्त्रविशेष) बाण, रथ, चक्र और ध्वजा (पताका, झण्डी) के आकार निशान प्रतीत हों तो वह प्राणी राज्य को पाता है ॥ ३२ ॥

अङ्कुशं कुण्डलं छत्रं यस्य पाणितले भवेत् ।
तस्य राज्यं महाश्रेष्ठं सामुद्रवचनं यथा ॥ ३३ ॥

जिसके करतल में अङ्कुश, कुण्डल और छाता इन तीनों का निशान प्रतीत हो तो उस प्राणी को बड़ा श्रेष्ठ राज्य होता है यानी वह प्राणी चक्रवर्ती (शाहंशाह) महाराजा होता है जैसाकि सामुद्रवचन है यानी क्षीरसमुद्रवासी भगवान् नारायण ने कहा है ॥ ३३ ॥

---

१ मायाकारश्च दृश्यते इति क्वचित्पाठः ॥

गिरिकङ्कणयोनीनां नरमुण्डघटस्य च ।
करे वै यस्य चिह्नानि राजमन्त्री भवेन्नरः ॥ ३४ ॥

जिसके करतल में पर्वत, कङ्कण, योनि, नरमुण्ड और घट (घड़ा) इन्हों के नि[illegible] प्रतीत हों तो वह प्राणी राजमन्त्री होता है ॥ ३४ ॥

सूर्यचन्द्रलतानेत्रमष्टकोणत्रिकोणकम् ।
मन्दिराश्वगजेन्द्राणां चिह्ने स्यात्स सुखी नरः ॥ ३५ ॥

जिसके करतल में सूर्य, चन्द्र, लता, नेत्र, अष्टकोण, त्रिकोण, मन्दिर, घोड़ा और ग[illegible] राज इन्हों का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी सुखी रहता है ॥ ३५ ॥

तर्जनीमूलपर्यन्तमूर्ध्वरेखा च दृश्यते ।
राजदूतो भवेत्तस्य धर्मनाशो हि जायते ॥ ३६ ॥

भाग्यरेखा

जिसके करतल में ऊर्ध्वरेखा (फेटलाइन) तर्जनी की मूल में देखी जावे तो [illegible] प्राणी राजों का दूत होता है और उसके धर्म का विनाश भी होजाता है ॥ ३६ ॥

मध्यमामूलपर्यन्तमूर्ध्वरेखा च दृश्यते ।
पुत्रपौत्रादिसम्पन्नो धनवान्स सुखी नरः ॥ ३७ ॥

भाग्यरेखा

जिसके करतल में ऊर्ध्वरेखा (भाग्यरेखा) मध्यमा अँगुली की मूलपर्यन्त देखी [illegible] तो वह प्राणी पुत्र पौत्रादिकों से संपन्न होकर धनवान् होता हुआ सुखी रहता है ॥ ३[illegible]

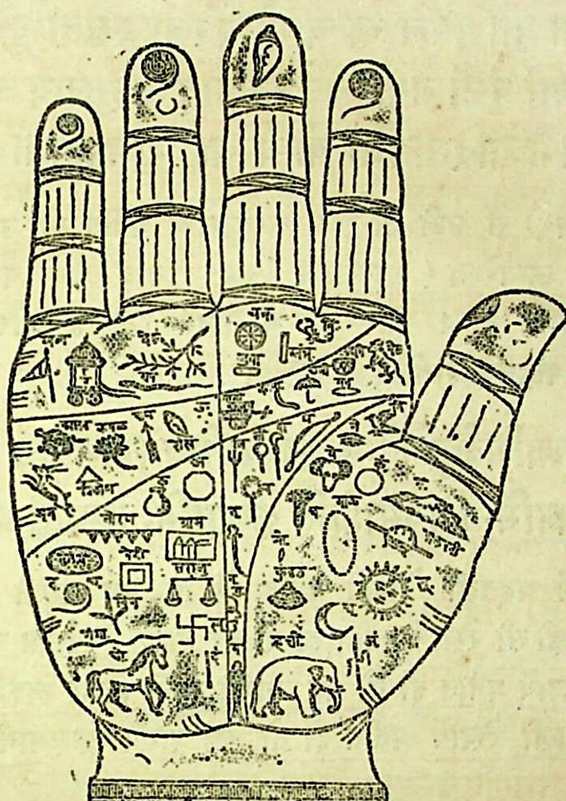
भाग्यरेखा

अनामिकोर्ध्वरेखायां व्यवसायधनागमः ।
सुखदुःखेन जीवेत पुत्रपौत्रगृहादिमान् ॥ ३८ ॥

जिसके करतल में ऊर्ध्वरेखा (भाग्यरेखा) अनामिका की मूल में प्रतीत हो तो [illegible] प्राणी रोजगार से धन को पाता है और पुत्रों व पौत्रों से सम्पन्न होता हुआ गृहादिवा[illegible] होकर सुख व दुःख से जीता है ॥ ३८ ॥

करमध्ये स्थिता रेखा पितुर्वंशसमुद्भवः ।
पूर्णरेखा पितुर्वंशोऽर्धरेखा परवंशकः ॥ ३९ ॥

जिसके करतल में पितृरेखा पूर्णरूप से अङ्कित हो तो वह प्राणी पिता के वंश से [illegible] हुआ जानना चाहिये और जिसके करतल में पितृरेखा आधेरूप से प्रतीत हो तो वह प्रा[illegible] पराये वंश से उपजा हुआ होता है ॥ ३९ ॥



मातृरेखा करे चैव एकैकं युग्ममेव च ।
एकैकमंशमादाय युग्मरेखा च दृश्यते ॥ ४० ॥

करतल के मध्य में मातृरेखा व पितृरेखा ये दो रेखायें एक में या अलग होकर विद्यमान रहती हैं मातृरेखा तर्जनी से उतरती हुई आयुरेखा के निचले भाग में प्रतीत होती है और पितृरेखा तर्जनी की मूल से उतरती हुई अँगूठा की मूल के मध्यभाग में रहती है एक एक का अंश लेकर दो रेखायें देखी जाती हैं यानी माता का रज व पिता का बीज इन दोनों से सारा संसार उपजा है इसलिये माता व पिता की दोनों रेखायें एकही पास रहती हैं ॥ ४० ॥

बहुरेखा भवेत्क्लेशः स्वल्पाभिर्धनहीनता ।
रेखायां वा मनःसौख्यं सामुद्रवचनं यथा ॥ ४१ ॥

यदि करतल के मध्य में यानी मातृरेखा व पितृरेखा के बीच में बहुतसी रेखायें प्रतीत हों तो क्लेश होता है और यदि थोड़ीसी रेखा प्रतीत हों तो धन की हीनता होती है और यदि साधारण रेखा यानी न बहुत बड़ी न बहुत छोटी अथवा न बहुत ज़्यादः न बहुत कमती रेखायें प्रतीत हों तो मनको सुख होता है यह सामुद्रिकशास्त्र का वचन है ॥ ४१ ॥

गता पाणितले या च सोर्ध्वरेखा स्मृता बुधैः ।
स्त्रीणां पुंसां तथा चैव राज्याय च सुखाय च ॥
पुत्रपौत्रादिसम्पन्ना चोर्ध्वरेखा शुभप्रदा ॥ ४२ ॥

मणिबन्ध (कब्ज़े) से उठी जो रेखा करतल में प्रतीत हो उसको सामुद्रिकशा वेत्ता पण्डितगणों ने ऊर्ध्वरेखा (फेटलाइन) कहा है यदि स्त्रियों व पुरुषों के करत ऊर्ध्वरेखा देखी जावे तो राज्य और सुख के लिये होती है और पुत्र पौत्रादिकों सम्पन्न करती हुई शुभदायक होती है ॥ ४२ ॥

रेखाभिर्बहुभिर्दुःखं स्वल्पाभिर्धनहीनताम् ।
रक्ताभिः श्रियमाप्नोति कृष्णाभिः प्रेष्यतां व्रजेत् ॥ ४३ ॥

जिसके करतल में बहुतसी रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी दुःखको पाता है जिसके करतल में थोड़ी सी रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी निर्धनता को पाता है व जिस करतल में रक्तवर्ण रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी सुखी होकर लक्ष्मी को पाता है अ जिसके करतल में काली रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी क्लेशभागी होकर दासत्व पाता है ॥ ४३ ॥

अङ्कुशं कुलिशं छत्रं यस्य पाणितले भवेत् ।
तस्यैश्वर्यं विनिर्दिष्टमशीत्यायुर्भवेद्ध्रुवम् ॥
पुत्रं प्रसूयते नारी नरेन्द्रं लभते पतिम् ॥ ४४ ॥

जिसके करतल में अङ्कुश, वज्र और छाते का निशान प्रतीत हो तो उस प्राणी ऐश्वर्य मिलता है और निश्चय कर वह प्राणी अस्सीवर्ष की उमरवाला होता है यदि स्त्रीके करतल में पूर्वोक्त निशान प्रतीत हों तो वह नरेन्द्रपति को पाती हुई राजकु को उपजाती है ॥ ४४ ॥

धनुर्यस्य भवेत्पाणौ पङ्कजं वाथ तोरणम् ।
तस्यैश्वर्यं च राज्यं च अशीत्यायुर्भवेद्ध्रुवम् ॥ ४५ ॥

जिसके करतल में धनुष, कमल और तोरण का निशान प्रतीत हो तो उस प्राण ऐश्वर्य व राज्य प्राप्त होता है और वह प्राणी निश्चय कर अस्सीवर्ष की उमरवा होता है ॥ ४५ ॥

कनिष्ठायां स्थिता रेखा संख्या यावतिकाः स्मृताः।
तावत्यः पुरुषाणां च नार्यः सन्ति विनिश्चितम् ॥ ४६ ॥

जिनके करतल में कनिष्ठा अँगुली के नीचे जितनी संख्यावाली रेखायें प्रतीत हों उतनी ही उन पुरुषों की स्त्रियां निश्चय होती हैं और यदि स्त्रियों की कनिष्ठा में जितनी रेखायें प्रतीत हों तो उतनेही पुरुष होते हैं ॥ ४६ ॥

करमध्यगता रेखा ध्रुवा ऊर्ध्वम्भवेद्यदि।
नृपो वा नृपतुल्यो वा चिरंख्यातोर्थवान्भवेत् ॥ ४७ ॥ भाग्यरेख

जिसके करतल में मणिबन्ध (कब्जे) से उठी रेखा ध्रुव (पूर्ण) होकर ऊपरले भाग में चली जावे तो वह प्राणी राजा व राजा के समान तथा बहुत कालपर्यन्त विख्यात होकर धनवान् होता है ॥ ४७ ॥

मत्स्यपुच्छप्रकीर्णेन विद्यावित्तसमन्वितः।
पितुः पितामहादीनां धनं स लभते नरः॥
पितामहस्य वा किञ्चिद्धनं च लभते ध्रुवम् ॥ ४८ ॥

जिसके करतल में मछली की पूंछ का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी विद्या व धन से संयुक्त होकर पिता वा पितामहादिकों का धन पाता है अथवा निश्चय कर पितामह के ही कुछेक धन को पाता है ॥ ४८ ॥

अयवस्य कुतो विद्या मत्स्यहीने कुतो धनम्।
अपुच्छस्य कुतो विद्या अयवस्य कुतो धनम् ॥
ऊर्ध्वरेखाविहीनस्य कुतो राज्यं कुतो यशः ॥ ४९ ॥

जिसके करतल में यव का निशान नहीं प्रतीत हो तो उस प्राणी को विद्या कहां से मिलसक्ती है व जिसके करतल में मत्स्यरेखा न हो तो उसको कहां से धन मिलसक्ता है व जिसके करतल में मछली की पूंछ का निशान नहीं प्रतीत हो तो उसको कहां से विद्या मिलसक्ती है व जिसके करतल में यव (जौ) का निशान नहीं हो तो उसको कहां से धन मिलसक्ता है और जिसके करतल में ऊर्ध्वरेखा नहीं प्रतीत हो तो उसको कहां से राज्य व कहां से यश मिल सक्ता है ॥ ४९ ॥

एकमुद्रो भवेद्राजा द्विमुद्रो धनवान्नरः।
त्रिमुद्रो रोगसंपन्नो बहुमुद्रो बहुप्रजः ॥ ५० ॥

जिसके करतल में एक मुद्रा का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी राजा होता है जिसके करतल में दो मुद्राओं का चिह्न प्रतीत हो तो वह प्राणी धनवान् होता है जिसके करतल में तीन मुद्रायें प्रतीत हों तो वह प्राणी रोगों से सम्पन्न होता है जिसके करतलमें बहुतसी मुद्रायें प्रतीत हों तो वह प्राणी घनी सन्तानोंवाला होताहै॥ ५०॥

तर्जनीमूलगामिन्यां रेखायां छिद्रता यदि ।
श्वाविन्मूषिकमार्जारसर्पदष्टो भविष्यति ॥ ५१ ॥

जिसके करतल में तर्जनी की मूल में गमन करती रेखा में यदि छेदसा प्रतीत हो वह प्राणी शाही, मूसा, बिलार व सांप से डसा जाता है ॥ ५१ ॥

यस्य पाणितले रेखा पीवरा दृश्यते यदि ।
अविच्छिन्ना पादसौख्यं संपूर्णा च सुशोभनम् ॥ ५२ ॥

जिसके करतल में रेखा मोटी होकर यदि छिन्न भिन्न नहीं प्रतीत हो तो वह पादसौख्य (पदोन्नति) को पाता है और यदि सम्पूर्ण रेखा प्रतीत हो तो वह प्राणी सुख व सम्पत्ति को पाता है ॥ ५२ ॥

कनिष्ठाङ्गुलिमूले तु रेखा यावतिकाः स्थिताः ।
तावद्विवाहं जानीयाद् यथोक्तं दानिभाषितम् ॥ ५३ ॥

जिसके करतल में कनिष्ठा अँगुली के मूल में जितनी रेखायें स्थित हों उतनेही प्राणी के ब्याह होते हैं यह दानिभाषित सामुद्रिकशास्त्रवेत्ता पण्डितने कहा है ॥ ५३ ॥

कनिष्ठाङ्गुलिमूले तु रेखा चोद्वाहनिश्चिता ।
कनिष्ठाधोरेखासंख्या यावती युवती तथा ॥
तावती तेन तस्यैव नारीणां स्त्र्यज्यते ध्रुवम् ॥ ५४ ॥

कनिष्ठा अँगुली के मूलदेश में विवाहरेखा निश्चित है इसलिये जिसकी कनिष्ठा अँगुली के मूलदेश से अधोभाग में जितनी रेखायें स्थित हों उतनीही उस प्राणी की स्त्रियां होती हैं ऐसेही स्त्रियों के करतल में कनिष्ठा के नीचे जितनी रेखायें प्रतीत हों उतनेही उन स्त्रियों के पति होते हैं ॥ ५४ ॥

कनिष्ठामूलरेखायाः परतश्च तथाहि वै ।
भवन्ति रेखास्तावत्यः पुत्राः कन्याश्च निश्चिताः ॥
कन्या छिमुखरेखायां एकास्यायां तथात्मजः ॥ ५५ ॥

कनिष्ठा की मूल के अधोभाग में (यानी ब्याह रेखा के अधोदेश में) जितनी रेखायें प्रतीत हों उतनेही पुत्र व कन्यायें निश्चित होती हैं द्विमुखी रेखाओं में कन्या उपजती हैं व एकमुखी रेखा में पुत्र पैदा होते हैं ॥ ५५ ॥

मत्स्यपुच्छे शतं ज्ञेयं कुलिशे तु सहस्रकम् ।
पद्मे लक्षेश्वरश्चेति शङ्खे कोटीश्वरो भवेत् ॥
मत्स्ये शतं विजानीयान्मकरे तु सहस्रकम् ॥ ५६ ॥

जिसके करतल में मछली की पूंछ का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी शतपति होता है व यदि वज्र का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी सहस्रपति (हज़ारिया) होता है यदि पद्मका निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी लक्षपति (लखपती) होता है यदि शंख का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी कोटिपति (करोड़पती) होता है यदि मछली का निशान प्रतीत हो तो उस प्राणी को शतपति जानना चाहिये और यदि मगर का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी हज़ारिया होता है ॥ ५६ ॥

रेखाभिर्बहुभिः क्लेशो रेखाहीनैर्दरिद्रता ।
रक्ताभिः सुखमाप्नोति कृष्णाभिः क्लेशतां व्रजेत् ॥ ५७ ॥

जिसके करतल में बहुतसी रेखायें प्रतीत हों तो उस प्राणी को क्लेश होता है यदि रेखायें हीन हों यानी बहुतही कम रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी दरिद्री होता है यदि लाल रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी सुख को पाता है और यदि काली रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी पीड़ा को पाता है ॥ ५७ ॥

अङ्कुशं कुण्डलं चक्रं यस्य पाणितले भवेत् ।
चामरं पुण्डरीकं च तस्य राज्यं विनिर्दिशेत् ॥ ५८ ॥

जिसके करतल में अङ्कुश, कुण्डल, चक्र, चमर और कमल इन्होंके निशान प्रतीत हों तो उस प्राणी को राज्य कहना चाहिये यानी वह प्राणी राज्य को पाता है ॥ ५८ ॥

ज्ञानरेखा च प्रथमा अङ्गुष्ठादनुवर्तते ।
मध्यमायां करे रेखा आयूरेखा प्रकीर्तिता ॥ ५९ ॥

अँगूठा के मूलदेश में टिकी हुई पहली ज्ञान रेखा होती है इसके बाद कनिष्ठा की मूल से चली मध्यमामूलपर्यन्त जो रेखा विस्तीर्ण प्रतीत होती है उसको पण्डितों ने आयुरेखा कहा है ॥ ५९ ॥

घनाङ्गुलिश्च सधनस्तिस्रो रेखाश्च यस्य वै ।
नृपतेः करतलगा मणिबन्धे समुत्थिताः ॥ ६० ॥

जिसकी अँगुलियां घनी प्रतीत हों तो वह प्राणी धनी होता है और जिसके करतल मणिबन्ध (कब्जे) से उठी तीन रेखायें प्रतीत हों यानी तीन ऊर्ध्वरेखायें देखपड़ती तो वह प्राणी नरपाल (राजा) होता है ॥ ६० ॥

युगमीनाङ्कितो यो वै भवेन्मन्त्रप्रदो नरः ।
वज्राकाराश्च धनिनां मत्स्यपुच्छनिभा बुधैः ॥ ६१ ॥
शङ्खातपत्रशिबिकागजपद्मोपमा नृपे ।
कुम्भाङ्कुशपताकाभा मृणालाभा निधीश्वरे ॥ ६२ ॥

जिसके करतल में दो मछलियों की रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी मन्त्रों का प्रद अथवा याज्ञिक होता है व जिनके करतल में वज्राकार निशान प्रतीत हों तो वे प्राणी होते हैं व जिनके करतल में मछली की पूंछ का निशान प्रतीत हो तो वे प्राणी पि होते हैं व जिसके करतल में शङ्ख, छाता, पालकी, हाथी और पद्मका निशान प्रती तो वह प्राणी राजा होता है व जिसके करतल में घट (घड़ा), अङ्कुश, पताका (झण और कमलनाल का निशान प्रतीत हों तो वह खज़ांची होता है ॥ ६१ । ६२ ॥

दामाभाश्च गवाढ्यानां स्वस्तिकाभा नृपेश्वरे ।
चक्रासितोमरधनुर्दन्ताभा नृपतेः करे ॥ ६३ ॥
उदूखलाभा यज्ञाढ्या वेदीभाश्चाग्निहोत्रिणि ।
वापिकादेवकुल्याभास्त्रिकोणाभाश्च धार्मिके ॥ ६४ ॥

जिनके करतल में माला के आकार निशान प्रतीत हो तो वे प्राणी गोधन से होते हैं व जिसके करतल में त्रिकोणाकार निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी राजेश्वर है व जिसके करतल में चक्र, तलवार, गुर्ज, धनुष और दन्त के आकार रेखा प्रती तो वह प्राणी राजा होता है व जिनके करतल में उखली के समान रेखायें प्रतीत हों प्राणी याज्ञिक होते हैं व जिसके करतल में वेदी के समान रेखा प्रतीत हो तो वह अग्निहोत्री होता है और जिसके करतल में बावली, देवनदी तथा त्रिकोणाकार नि प्रतीत हो तो वह प्राणी धार्मिक होता है ॥ ६३ । ६४ ॥

अङ्गुष्ठमूलगा रेखाः पुत्रदाः सुखदायिकाः।
निस्स्वाश्च बहुरेखाः स्युर्निर्द्रव्याश्चिबुकैः कृशैः॥ ६५॥
यस्य पाणितले रेखा दीर्घाकारद्वयं भवेत्।
युग्मे सुखे सुजातश्च अयुग्मे जारजो ध्रुवम्॥ ६६॥

जिसके करतल में अँगूठा की मूल में रेखायें प्रतीत हों तो उस प्राणी के लिये पुत्रदायक होकर सुखदायक होती हैं व जिसके करतल में बहुतसी रेखायें प्रतीत हों तो वे प्राणी धनहीन होते हैं व जिनकी दाढ़ी पतली प्रतीत हो तो वे प्राणी निर्धनी होते हैं व जिसके करतल में मातृरेखा व पितृरेखा ये दोनों दीर्घाकार होकर आपस में जुड़ीसी प्रतीत हों तो वह प्राणी निजवंश से उपजा हुआ होता है और जो दोनों रेखायें भिन्न प्रतीत हों तो वह प्राणी निश्चय कर जारजात कहाता है॥ ६५। ६६॥

रेखास्वधःस्थिता रेखा संख्या यावतिकाः स्मृताः।
तावांस्तु पुरुषाणान्तु पुत्रो भवति निश्चितम्॥ ६७॥
रेखास्वधःस्थिता रेखा संख्या यावतिकाः स्मृताः।
तावती पुरुषाणान्तु कन्या भवति निश्चितम्॥ ६८॥

जिनके करतल में कनिष्ठा अँगुली की मूल के अधोभाग में जितनी रेखायें बड़ी व मोटी होकर प्रतीत हों उतनेही निश्चयकर उन प्राणियों के पुत्र होते हैं और जिनके करतल में कनिष्ठा अँगुली की मूल के निचलेभाग में जितनी छोटी छोटी रेखायें प्रतीत हों उतनीही उन पुरुषों की कन्यायें निश्चयकर होती हैं॥ ६७। ६८॥

करमध्यस्थितारेखा त्रयादूर्ध्वं भवेद्यदि।
नृपो वा नृपतुल्यो वा चिरं ख्यातोर्थवान्भवेत्॥ ६९॥

जिसके करतल में आयुरेखा, मातृरेखा और पितृरेखा की अपेक्षा एक दीर्घाकार ऊर्ध्वरेखा प्रतीत हो तो वह प्राणी राजा व राजा के समान तथा बहुत कालपर्यन्त विख्यात होकर धनवान् होता है॥ ६९॥

अथ पुनरपि स्त्रीकरलक्षणमाह—

मृदुमध्योन्नतं रक्तं तलं पाण्योररन्ध्रकम्।
प्रशस्तं शस्तरेखाढ्यमल्परेखं शुभप्रदम्॥ ७०॥

---

१ "अङ्गुष्ठमूलगा रेखा भ्रातृदाः सुखदायिका" (इति समचीनःपाठः) कनिष्ठांगुलिमूलाधोभागे बृहत्यः पुत्ररेखाः प्रतीयन्ते क्षुद्राः कन्यारेखाश्च दृश्यन्ते तस्मान्मदुक्तपाठपवादर्तव्य इति॥

विधवा बहुरेखेण विरेखेण दरिद्रिणी ।
भिक्षुकी सुशिराढ्येन नारीकरतलेन वै ॥ ७१ ॥

जिसका करतल कोमल, बीचमें ऊंचा, लालवर्ण व छेदरहित होकर प्रशस्त रेख से संयुक्त हो तो उस नारी का करतल प्रशस्त होता है और जो अल्परेखाओं से भू पित हो तो शुभदायक होता है व जिसके करतल में बहुतसी रेखायें प्रतीत हों तो स्त्री विधवा होती है व जिसके करतल में रेखायें न प्रतीत हों तो वह स्त्री दरिद्रिणी है और जिसका करतल बहुतसी नसों से घिरा हो तो वह स्त्री भिक्षुकी (भीख म वाली) होती है ॥ ७० । ७१ ॥

मत्स्येन सुभगा नारी स्वस्तिकेन च सुप्रजाः ।
पद्मेन भूपतेः पत्नी जनयेद्भूपतिं सुतम् ॥ ७२ ॥
चक्रवर्तिस्त्रियाः पाणौ नन्दावर्तप्रदक्षिणः ।
शङ्खातपत्रकमठा राजमातृत्वसूचकाः ॥ ७३ ॥

जिसके करतल में मछलीका चिह्न प्रतीत हो तो वह स्त्री बड़े भागवाली होती जिसके करतल में त्रिकोणाकार निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री अच्छे सन्तानोंव होती है व जिसके करतल में पद्मका निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री रानी होकर पृ पालक पुत्रको उपजाती है व जिसके करतल में दक्षिणावर्त मण्डल प्रतीत हो तो स्त्री चक्रवर्ती (शाहंशाह) की रानी होती है व जिसके करतल में शङ्ख, छाता धनुष का निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री राजकुमारों की माता कहाती है ॥ ७२ । ७

कृषीबलस्य पत्नी स्याच्छकटेन युगेन वा ।
चामराङ्कुशकोदण्डै राजपत्नी भवेद् ध्रुवम् ॥ ७४ ॥
अङ्गुष्ठमूलान्निर्गत्य रेखा याति कनिष्ठिकाम् ।
यदि स्यात्पतिहन्त्री सा दूरतस्तां त्यजेत्सुधीः ॥ ७५ ॥

जिसके करतल में गाड़े व जुवें की रेखा प्रतीत हो तो वह स्त्री किसान की पत्नी है और यदि करतल में चमर, अंकुश और धनुष का निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री श्चयकर रानी होती है और जिसके करतल में अँगूठा की मूल से निकलकर ए कनिष्ठाके समीप चली जावे तो वह स्त्री पतिके मारनेवाली होती है इसलिये पण्डि उसको दूरसेही त्याग करें ॥ ७४ । ७५ ॥

त्रिशूलासिगदाशक्तिदुन्दुभ्याकृतिरेखया ।
नितम्बिनी कीर्तिमती करेण पृथिवीतले ॥ ७६ ॥

जिसके करतल में त्रिशूल, तलवार, गदा, शेल और नगाड़े की आकार रेखा प्रतीत हो तो वह स्त्री पृथ्वीतलमें कीर्तिवाली यानी बड़ी यशस्विनी होती है ॥ ७६ ॥

वाजिकुञ्जरश्रीवृक्षयूपेषुयवतोमरैः ।
ध्वजचामरमालाभिः शैलकुण्डलवेदिभिः ॥ ७७ ॥
शङ्खातपत्रपद्मैश्च मत्स्यस्वस्तिकसद्रथैः ।
लक्षणैरङ्कुशाद्यैश्च स्त्रियः स्यू राजवल्लभाः ॥ ७८ ॥

जिसके करतल में घोड़ा, हाथी, बिल्ववृक्ष, यज्ञस्तम्भ, यव, गुर्ज, ध्वजा, चमर, माला, क्षुद्रपर्वत, कर्णभूषण, वेदी, शङ्ख, छाता, कमल, मछली, त्रिकोणाकाररेखा, उत्तमरथ और अंकुशादि ये लक्षण प्रतीतहों तो वे स्त्रियां राजाओं की रानियां होती हैं ॥ ७७।७८॥

अल्पायुषे लघुच्छिन्ना दीर्घच्छिन्ना महायुषे ।
शुभं तु लक्षणं स्त्रीणां प्रोक्तं तु शुभमन्यथा ॥ ७९ ॥
अङ्कुशं कुण्डलं चक्रं यस्याः पाणितले भवेत् ।
पुत्रं प्रसूयते नारी नरेन्द्रं लभते पतिम् ॥ ८० ॥

अँगूठा के निचलेभाग में छोटी २ रेखा छिन्न भिन्न प्रतीत हों तो अल्पायु करती हैं और यदि दीर्घ रेखायें छिन्न भिन्न प्रतीत हों तो दीर्घायु करती हैं स्त्रियों का शुभदायक लक्षण कहा गया अन्यथा लक्षण अशुभ होता है व जिसके करतल में अंकुश, कुण्डल और चक्र का निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री राजपति को पाकर राजकुमार को उपजाती है ॥ ७९ । ८० ॥

यस्याः पाणितले रेखाप्राकारतोरणं भवेत् ।
अपि दासकुले जाता राज्ञीत्वमधिगच्छति ॥ ८१ ॥
रक्ता व्यक्ता गभीरा च स्निग्धा पूर्णा च वर्तुला ।
कररेखाङ्गनायाः स्याच्छुभा भाग्यानुसारतः ॥ ८२ ॥

जिसके करतल में प्राकार (घेर) व तोरण के आकार रेखा प्रतीत हों तो वह स्त्री यदि दासकुल में उपजी हो तो भी रानी होती है व जिस स्त्री के करतल में रेखा लाल,

प्रकट, गंभीर, चिकनी व पूर्ण होकर गोलाकार प्रतीत हो तो भाग्यानुसार शुभदायक होती है ॥ ८१ । ८२ ॥

तुलामानाकृतीरेखा वणिक्पत्नीत्वहेतुका ।
गजवाजिवृषाकारा करे वामे मृगीदृशाम् ॥ ८३ ॥
पाणिपादतले रेखा ताम्रवर्णा नखानि च ।
जीववत्सा चिरंजीविपुत्रपौत्रसमन्विता ॥ ८४ ॥

यदि मृगनयनियों के करतल में तुला (तराज़ू) तथा दण्डाकृति रेखा प्रतीत हों और बायें करतल में हाथी, घोड़ा तथा बैलके आकार रेखा प्रतीत हों तो वे स्त्रियां विना कारण बनियों की रमणियां होती हैं और जिसके करतल व पादतल में तांबे समान रेखा व नख प्रतीत हों तो वह स्त्री जीवद्वत्सा होकर चिरजीवी पुत्र पौत्रों से संयुत होती है ॥८३।८४॥

रेखा प्रासादवज्राभा सूते तीर्थकरं सुतम् ।
कृषीवलस्य पत्नी स्याच्छकटेन मृगेन वा ॥ ८५ ॥
यस्याः करतले पद्मं पूर्णकुम्भं तथैव च ।
राजपत्नीत्वमाप्नोति पुत्रपौत्रः प्रवर्तते ॥ ८६ ॥

जिसके करतल में देवमन्दिर, राजमहल व वज्राकार निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री तीर्थकारी पुत्र को उपजाती है और जिसके करतल में गाड़ा व हिरन का निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री किसान की पत्नी होती है व जिसके करतल में पद्म व पूर्णकुम्भ का निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री राजपत्नी होकर पुत्र पौत्रों को पाती है ॥ ८५ । ८६ ॥

वृद्धामूले च या रेखा भ्रातृभग्नीप्रदायिकाः ।
कृष्णाः सूक्ष्माः क्रमेणैव हीनाश्छिद्रप्रदायिकाः ॥ ८७ ॥
अङ्कुशं कुण्डलं यानं यस्याः पाणितले भवेत् ।
दीर्घायुषं पतिं प्राप्य पुत्रवृद्धिर्भवेद्ध्रुवम् ॥ ८८ ॥

अँगूठा की मूल में जो रेखायें प्रतीत हों वे भाई व बहिनियों को देती हैं और जो काली व क्रम से पतली होकर हीन रेखा प्रतीत हों तो भाई व भगिनियों को विनाशती हैं और जिसके करतल में अङ्कुश, कुण्डल और यानका निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री दीर्घायु पति को पाकर निश्चय कर पुत्रवृद्धि को पाती है ॥ ८७ । ८८ ॥

अङ्गुष्ठमूलाद्यदिवैतु रेखा स्थूला तथा चक्रकृता च नारी ।

अवारिता षण्डप्रचण्डता च परान्विता शून्यहृदा च खण्डिता ॥ ८९ ॥

जिसके करतल में अँगूठा की मूल से मध्यभाग पर्यन्त रेखा मोटी होकर चक्राकार प्रतीत हो तो वह स्त्री कुलटा, नष्ट स्वभाववाली व परपुरुषों में आसक्त व सांड़ के नाईं प्रचण्डा होकर अपने आधीन रहती है ॥ ८९ ॥

यस्याः करतले पादे चोर्ध्वरेखा च दृश्यते ।
यदि नीचकुले जाता राजपत्नी भवेद् ध्रुवम् ॥ ९० ॥

जिसके करतल या पादतल में ऊर्ध्वरेखा (फेटलाइन) प्रतीत हो तो वह स्त्री यदि नीच कुल में उपजी हो तो भी निश्चयकर राजपत्नी होती है ॥ ९० ॥

अनामिका भवेच्छिन्ना सा भवेत्कलहप्रिया ।
मध्यमा च भवेच्छिन्ना सा नारी कुलटा स्मृता ॥ ९१ ॥
तर्जनी च भवेच्छिन्ना विधवा सा प्रकीर्तिता ।
कनिष्ठा च भवेच्छिन्ना सा नारी दुःखभागिनी ॥ ९२ ॥

जिसके करतल में अनामिकास्थित रेखा छिन्न प्रतीत हो तो वह स्त्री बड़ी लड़ाका होती है व मध्यमास्थित रेखा कटीसी प्रतीत हो तो वह स्त्री व्यभिचारिणी होती है व यदि तर्जनी स्थित रेखा टूटीसी प्रतीत हो तो वह स्त्री विधवा कहाती है और यदि कनिष्ठास्थित रेखा भिन्नसी प्रतीत हो तो वह स्त्री दुःखभागिनी होती है ॥ ९१ । ९२ ॥

अथ पुनरपि पुरुषकरलक्षणमाह—

अङ्गुष्ठोदरमध्ये तु यवो यस्य विराजते ।
उत्पन्नावधिभोगी स्यात्स नरः सुखमेधते ॥ ९३ ॥
मध्यमातर्जनीमूले यवो यस्य प्रदृश्यते ।
धनवान्सुखभोगी स्यात्पुत्रदारगृहादिमान् ॥ ९४ ॥

जिसके करतल में अँगूठा के मध्यभाग में जव का निशान विराजता हो तो वह प्राणी जन्मपर्यन्त भोगी होकर सुख को पाता है तथा मध्यमा व तर्जनी अँगुली की मूल में जव का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी धनी व सुखभोगी होकर पुत्र, स्त्री व घरवाला होता है ॥ ९३ । ९४ ॥

अङ्गुष्ठोदरमध्ये तु रेखा यस्य यवाकृतिः ।
पद्मरेखा भवेद्यस्य स नरः सुखमेधते ॥ ९५ ॥

अङ्गुष्ठोदरमध्ये तु कुण्डलं यस्य दृश्यते ।
भोज्यमुत्पाद्यते तस्य प्रचुरं च सुखं भवेत् ॥ ९६ ॥

जिसके करतल में अँगूठा के बीच यवाकार रेखा प्रतीत हो या कमल का निशान देखा जावे तो वह प्राणी सुख को पाता है और अँगूठा के बीच में कुण्डलका निशान प्रतीत हो तो उस प्राणी को भोग मिलता व बड़ा सुख होता है ॥ ९५ । ९६ ॥

दीक्षादानं यथाधर्म पदवीसुखमेव च ।
विद्यामानोपमानं च अङ्गुल्यामूलसंस्थिताः ॥ ९७ ॥
कनिष्ठामूलसंयुक्ता त्रिरेखा यस्य दृश्यते ।
एकं युग्मं तृतीयं च चतुर्थं बाणसम्मितम् ।
युग्मं वापि पृथग्वापि विपुलं भोगदायकम् ॥ ९८ ॥

जिसके करतल में कनिष्ठा के मूलदेशमें जितनी रेखायें प्रतीत हों उनका फल यह है कि जो एक रेखा प्रतीत हो तो वह प्राणी दीक्षा देता है व जो दो रेखा हों तो दानी व तीन रेखों से धर्मी चार रेखों से चौधरी, पांच रेखों से सुखी, छः रेखों से विद्वान्, सात रेखों से मानी और आठ रेखों से साधारण जन होता है और जिसके करतल में कनिष्ठा की मूल से संयुक्त आयुरेखा के वाम भाग में तीन रेखा हों या एक, दो, तीन, चार व पांच तथा दो ही रेखा प्रतीत हों यानी जितनी रेखायें देखी जावें उतनी ही रमणियों के साथ वह प्राणी विहार करता है ऐसेही यदि स्त्रियों के करतल में जितनी रेखायें प्रतीत हों उतने ही पुरुषों के साथ वे स्त्रियां भोग कराती हैं॥ ९७ । ९८ ॥

अङ्गुष्ठानां पृथग्रेखा त्रितयं गण्यते पृथक् ।
रेखाद्वादशकं सौख्यं धनधान्यप्रदायकम् ॥ ९९ ॥
अङ्गुलीनां पृथग्रेखा गणने चेत्त्रयोदश ।
महादुःखं मनोक्लेशं सामुद्रवचनं यथा ॥ १०० ॥

अँगूठे की रेखाओं को अलग कर अँगुलियों की पर्वोंकी तीन २ रेखायें गिनी जावें यदि गिनने में बारह रेखा प्रतीत हों तो उस प्राणी को सौख्य, धन व धान्य को देती हैं और अँगुलियों की पर्वों की रेखा गिनने में तेरह प्रतीत हों तो वह प्राणी महादुःख को पाता है और यदि चौदह रेखा प्रतीत हों तो वह प्राणी क्लेश को भोगता है यह सामुद्रिक शास्त्रका वचन है ॥ ९९ । १०० ॥

रेखापञ्चदशे चौरः षोडशे द्यूतवञ्चकः ।
पापी सप्तदशे ज्ञेयो धर्मात्माष्टादशे भवेत् ॥ १ ॥
ऊनविंशे भवेन्मान्यो गुणज्ञो लोकपूजितः ।
तपस्वी विंशतौ ज्ञेयो महात्मा चैकविंशतौ ॥ २ ॥

यदि पन्द्रह रेखा प्रतीत हों तो वह प्राणी चोर होता है यदि सोलह रेखा प्रतीत हों तो वह जुवारी होकर छलकारी होता है यदि सत्रह रेखा प्रतीत हों तो वह प्राणी पापी जानना चाहिये यदि अट्ठारह रेखा प्रतीत हों तो वह प्राणी धर्मात्मा होता है यदि उन्नीस रेखा प्रतीत हों तो वह प्राणी मान्य व गुणज्ञ होकर लोक में पूजित होता है यदि बीस रेखा प्रतीत हों तो वह प्राणी तपस्वी जानना चाहिये और यदि अँगुलियों की पोरों की रेखायें इक्कीस प्रतीत हों तो वह प्राणी महात्मा होता है ॥ १ । २ ॥

ताम्रैर्भूपो धनाढ्यश्च अङ्गुष्ठैः सयवैस्तथा ।
अङ्गुष्ठमूलजैः पुत्री स्याद्दीर्घाङ्गुलिपर्वकः ॥ ३ ॥
दीर्घायुः सुभगश्चैव सधनो विरलाङ्गुलिः ।
घनाङ्गुलिश्च अधनस्तिस्रो रेखाश्च यस्य वै ।
अङ्गुष्ठमूलगा रेखाः पुत्राश्च सुखदायकाः ॥ ४ ॥

जिसके करतल में जवों समेत अँगूठा ताम्रवर्ण प्रतीत हो तो वह प्राणी धनशाली होकर राजा होता है व जिसके करतल में अँगुलियों की पोरें दीर्घाकार प्रतीत हों तो वह प्राणी घने पुत्रोंवाला होता है व जिसके करतल में अँगुलियां बिरली प्रतीत हों तो वह प्राणी धनशाली व बड़भागी होकर दीर्घायु होता है व जिसके करतल में अँगुलियां घनी प्रतीत हों व उनमें तीन २ रेखायें देखी जावें तो वह प्राणी निर्धनी होता है और यदि अँगूठा की मूल में जितनी बड़ी २ रेखायें प्रतीत हों तो पुत्रदायक व सुखदायक होती हैं ॥ ३ । ४ ॥

अङ्गुष्ठोदरमध्ये तु यवो यस्य विराजितः ।
उन्नतं शोभनं तस्य शतं जीवति मानवः ॥ ५ ॥
मध्यमायां यदि जवा दृश्यन्तेत्यन्तशोभनाः ।
तदान्यसंचितं वित्तं प्राप्नोत्यङ्गुष्ठगे यवे ॥ ६ ॥

जिसके करतल में अँगूठा के बीच जव का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी ज्ञान,

ध्यान व मान आदिकों में ऊंचा व शोभन होकर सौ बरस जीता है और जिसके करतल में मध्यमा व अँगूठे में जव के निशान अत्यन्त सोहते हों तो वह प्राणी आन के जोरे हुए धन को पाता है ॥ ५ । ६ ॥

यस्याथ चक्रमङ्गुष्ठे यवः पद्मं च दृश्यते ।
तदा पितामहादीनामर्जितं धनमाप्नुयात् ॥ ७ ॥

जिसके अँगूठा में चक्र, जव और पद्म का निशान देखा जावे तो वह प्राणी पितामहादिकों के जोरे हुए धन को पाता है ॥ ७ ॥

तर्जन्यामथ चक्रं च पितृद्वारा धनं लभेत् ।
तेनैव विपरीतन्तु व्ययो भवति निश्चितम् ॥ ८ ॥

जिसके करतल में तर्जनी की पहली पर्व में चक्र का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी मित्रद्वारा वा पितृद्वारा धनको पाता है और यदि तर्जनी में चक्र का निशान नहीं प्रतीत हो तो उस प्राणी के धन का ख़र्चा पितृद्वारा या मित्रद्वारा निश्चयकर होता है ॥ ८ ॥

मध्यमायां स्थिते चक्रे देवद्वारा धनं लभेत् ।
तेनैव विपरीतं तु व्ययो भवति निश्चितम् ॥ ९ ॥
अनामिकायां चक्रे तु सर्वद्वारा धनं लभेत् ।
तेनैव विपरीतं तु व्ययो भवति निश्चितम् ॥ १० ॥

जिसके करतल में मध्यमा की पहली पोर में चक्र का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी देवद्वारा धन को पाता है और यदि चक्र का निशान नहीं प्रतीत हो तो उस प्राणी के धन का ख़र्चा देवद्वारा निश्चयकर होता है और यदि अनामिका में चक्र का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी सर्वजन द्वारा धनको पाता है और यदि चक्र का निशान नहीं प्रतीत हो तो उस प्राणी के धन का ख़र्चा सर्वजन द्वारा निश्चय कर होता है ॥ ९ । १० ॥

कनिष्ठायां भवेच्चक्रं वाणिज्येन धनं लभेत् ।
तेनैव विपरीतन्तु व्ययो भवति निश्चितम् ॥ ११ ॥
अङ्गुष्ठे कुलिशं चिह्नं यस्य पाणितले भवेत् ।
तोरणं पुण्डरीकं च राज्यं तस्य भविष्यति ॥ १२ ॥

जिसके करतल में कनिष्ठा की पहली पर्व में चक्र का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी

वाणिज्य (बनियों के व्यापार) से धनको पाता है और यदि चक्र का निशान नहीं प्रतीत हो तो उस प्राणी के धन का खर्चा वाणिज्य से निश्चय कर होता है और जिसके करतल में अँगूठा के बीच वज्र, तोरण व कमल का निशान प्रतीत हो तो उस प्राणी को राज्य मिलता है यानी वह प्राणी राजा होता है ॥ ११ । १२ ॥

मत्स्येनैकेन चैश्वर्यं सहस्रं लाभसंपदम् ।
पद्मं शङ्खं विजानीयाद् व्यजनं चक्रमेव च ॥ १३ ॥
पद्मे कोटिर्भवेच्छत्रे शङ्खे कोटिशतानि च ।
लक्षाधिपश्च व्यजने चक्रे राजा न संशयः ॥ १४ ॥

जिसके करतल में एकमात्र मछली का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी ऐश्वर्य को पाता है ऐसेही पद्म, शङ्ख, व्यजन (पंखा) और चक्रका निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी हज़ारों की संपदा पाता है यदि छाता व पद्म का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी 'कोटीश्वर' होता है यदि शङ्खका निशान प्रतीत हो तो वह 'शतकोटीश्वर' होता है यदि व्यजन का निशान प्रतीत हो तो वह 'लक्षेश्वर' होता है और यदि चक्र का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी निस्सन्देह राजा होता है ॥ १३ । १४ ॥

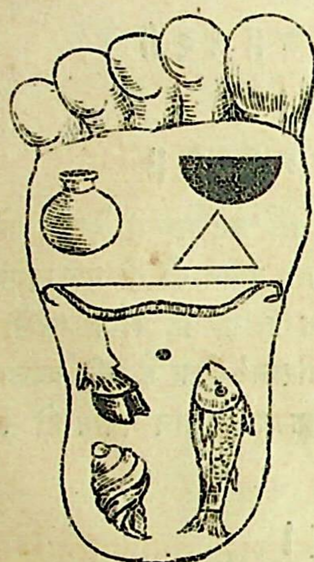
समस्ताङ्गुलिकानान्तु कोष्ठरेखा भवेद्यदि ।
तदा स्वर्णाङ्गुरीं दिव्यां चिरं स लभते ध्रुवम् ॥ १५ ॥
पञ्चभिः सव्यकरगा नृपाक्षैः पूरिताङ्गुलीः ।
नृपाधिकारमाप्नोति बहुलाभकरः पुमान् ॥ १६ ॥

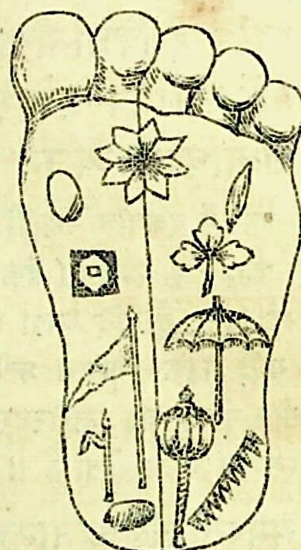
जिसके करतल में सारी अँगुलियों के बीच यदि प्रकोष्ठ रेखा प्रतीत हो तो वह प्राणी बहुत समय तक दिव्य, स्वर्णमयी मुँदरी को निश्चय कर पाता है जिसके बायें हाथ की अँगुलियों में पांच नृपाक्ष चिह्न प्रतीत हों तो वह प्राणी राजाधिकारको पाता हुआ बहुत सा लाभ करता है ॥ १५ । १६ ॥

अथ नरनारीणां पदाद्यङ्गादिलक्षणं व्याख्यायते—

चन्द्रार्धं कलशं त्रिकोणधनुषी खं गोष्पदं प्रोष्ठिकं
शङ्खं सव्यपदेऽथ दक्षिणपदे कोणाष्टकं स्वस्तिकम् ।
चक्रं छत्रयवाङ्कुशं ध्वजपवीजम्बूर्ध्वरेखाम्बुजं
बिभ्राणो हरिरूनविंशति महालक्ष्म्यार्चिताङ्घ्रिर्भवेत् ॥ १७ ॥

जिसके वामपाद में अर्धचन्द्र, कलश, त्रिकोण, धनु, शून्य, गोष्पद, मत्स्य और शङ्ख ये आठ चिह्न प्रतीत हों और दक्षिणपाद में अष्टकोण, स्वस्तिक, चक्र, छाता, जव, अङ्कुश, ध्वज, वज्र, जामुन, ऊर्ध्वरेखा और कमल ये ग्यारह चिह्न प्रतीत हों तो वह प्राणी महालक्ष्मी सेवित चरणोंवाला होता है जैसेकि इन्हीं उन्नीस लक्षणों को धारे हुए श्रीहरि (नारायणजी) महालक्ष्मीजी से पूजित चरणोंवाले हुए हैं ॥ १७ ॥





यस्य पादतले पद्मं चक्रं वाप्यथ तोरणम् ।
अङ्कुशं कुलिशं वापि स राजा भवति ध्रुवम् ॥ १८ ॥

जिसके पादतल में पद्म, चक्र, तोरण, अंकुश और वज्र का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी निश्चयकर राजा होता है ॥ १८ ॥

यस्य वृद्धाङ्गुलेर्मूलात्पादे रेखा च दृश्यते ।
स राज्यं लभते नूनं भुङ्क्ते निष्कण्टकां महीम् ॥ १९ ॥
असमं मूलदेशे तु वज्रं यस्य तु दृश्यते ।
अविच्छिन्नं पदं चैव कुलश्रेष्ठो भवेन्नरः ।
अपरं पर्वरेखायां राज्यं च परिकीर्तितम् ॥ २० ॥

जिसके पैर में अँगूठा की मूल से चलकर ऊर्ध्वरेखा पादतल में विस्तीर्ण होकर देखी जावे तो वह प्राणी निश्चयकर राज्य को पाता हुआ निष्कण्टक मही को भोगता है जिसके पादमूल में वज्र का चिह्न जोकि असमानाकार होकर अविच्छिन्न प्रतीत हो तो

वह प्राणी अपने वंश में प्रधान होता है और यदि पैर की पोरों की रेखाओं के बीच अपर रेखा प्रतीत हो तो उसको राज्य मिलता है ऐसा आचार्यों ने कहा है ॥ १९।२०॥

अथ पुनरपि स्त्रीपदतललक्षणमाह—

चक्रस्वस्तिकशङ्खाब्जध्वजमीनातपत्रवत् ।
यस्याः पादतले रेखा सा भवेत्क्षितिपाङ्गना ॥ २१ ॥
यस्याः पादतले रेखा सा भवेत्क्षितिपाङ्गना ।
भवेदखण्डभोगा च या मध्याङ्गुलिसंगता ॥ २२ ॥

जिसके पादतल में चक्र, स्वस्तिक, शङ्ख, पद्म, ध्वजा, मछली और छाता का निशान प्रतीत हों तो वह रानी होती है व जिसके पादतल में मध्यमा अँगुली पर्यन्त ऊर्ध्वरेखा विस्तीर्ण होकर प्रतीत हो तो वह स्त्री राजरानी होकर अखण्डित भोगों को भोगती है॥ २१।२२॥

निगूढगुल्फौ चरणौ पद्मकान्तितलौ शुभौ ।
अस्वेदिनौ मृदुतलौ मत्स्याङ्कमकराङ्कितौ ॥ २३ ॥
वज्राब्जहलचिह्नं च दास्याः पादे सदा स्थितम् ।
राजपत्नी तु सा ज्ञेया राजभोगप्रदायकम् ॥ २४ ॥

जिसके चरण छिपे हुए गण्ठोंवाले व पद्मकान्ति के समान तलवाले तथा पसीने से रहित होकर कोमल तलवेवाले प्रतीत होते हुए मछली व मगर के चिह्न से अङ्कित हों तो उस स्त्री के लिये शुभदायक होते हैं और यदि दासी के पादतल में वज्र, कमल और हलका निशान प्रतीत हो तो भी वह राजपत्नी जानना चाहिये और पूर्वोक्त वज्रादि चिह्न उस स्त्री के लिये राजभोगदायक होते हैं ॥ २३ । २४ ॥

स्निग्धोन्नतौ ताम्रनखौ नार्याश्च चरणौ शुभौ ।
मत्स्याङ्कुशाब्जचिह्नौ च चक्रलाङ्गललक्षितौ ॥ २५ ॥

जिसके चरण चिकने व ऊंचे होकर ताम्रसरीखे नखोंवाले प्रतीत हों व जिनमें मछली, अङ्कुश, कमल, चक्र और हल के निशान प्रतीत हों तो उस स्त्री को शुभदायक होते हैं ॥ २५ ॥

भवेदखण्डभोगायोर्ध्वा मध्याङ्गुलिसंगताः ।
रेखाखुसर्पकाकाभा दुःखदारिद्र्यसूचकाः ॥ २६ ॥
स्निग्धाःसमुन्नतास्ताम्रा वृत्ताः पादनखाः शुभाः ।

वाणिज्यसूचकं स्त्रीणां पादपृष्ठसमुन्नतिः ॥ २७ ॥
प्रदेशिनी भवेद्यस्या अङ्गुष्ठादतिरेकिणी ।
कन्यैव कुलटा सा स्यादेष एव विनिश्चयः ॥ २८ ॥

जिसके पादतल में ऊर्ध्वरेखा मध्यमाअँगुली में मिली हुई प्रतीत हो तो उस स्त्री अखण्डभोग के लिये होती है और यदि मूपक, सर्प और कौवा के समान रेखा प्रती हों तो दुःख व दारिद्र्य की जतलानेवाली होती हैं और जिसके पैरों के नख चिक ऊंचे व ताम्रवर्ण होकर गोलाकार प्रतीत हों तो शुभदायक होते हैं और जिन स्त्रियों पादपीठ ऊंचे प्रतीत हों तो वाणिज्य को वतलाते हैं और जिसके पैर की तर्जनी अँगु अँगूठा से बड़ी प्रतीत हो तो वह स्त्री कन्याकी दशा में ही व्यभिचारिणी होजाती है य सामुद्रिकशास्त्र ने निर्णय किया है ॥ २६ । २८ ॥

राज्ञ्याः स्निग्धौ समौ पादौ तलौ ताम्रनखौ तथा ।
शिलष्टाङ्गुली चोन्नताग्रौ तां प्राप्य नृपतिर्भवेत् ॥ २६ ॥
समपार्ष्णी शुभा नारी पृथुपार्ष्णी सुदुर्भगा ।
कुलटोन्नतपार्ष्णी स्याद्दीर्घपार्ष्णी च दुःखभाक् ॥ ३० ॥

जिसके पैर चिकने होकर समानाकार प्रतीत हों व पैर के तलवे तथा नख ता सरीखे लालवर्ण प्रतीत हों व अँगुलियां सटीहुई प्रतीत हों व जिनके अग्रभाग ऊंचे दीखते हों तो वह स्त्री रानी होती है उसको पाकर प्राणी राजा होता है व जिसकी एं समानाकार प्रतीत हों तो वह स्त्री शुभदायक होती है व जिसकी एंड़ी चकलीसी प्रत हों तो वह स्त्री बुरे भागवाली होती है व जिसकी एंड़ी ऊंचीसी प्रतीत हों तो वह व्यभिचारिणी होती है और जिसकी एंड़ी दीर्घाकार प्रतीत हों तो वह स्त्री जन्मपर्य दुःखको ही भोगती है ॥ २६ । ३० ॥

यस्याः संचार्यमाणाया भूमिशब्दः प्रजायते ।
सा नारी विधवा ज्ञेया सामुद्रवचनं यथा ॥ ३१ ॥
यस्याः संस्पृशते भूमिमङ्गुली न कनिष्ठिका ।
भर्तारं प्रथमं हन्ति द्वितीयं चैव विन्दति ॥ ३२ ॥

जिसके चलते हुए पृथ्वी में धम धम शब्द प्रतीत हो तो उस नारी को विधवा जान चाहिये यह सामुद्रिकशास्त्र का वचन है और जिसके पैरकी कनिष्ठा अँगुली भूमिको

छूती हो तो वह स्त्री पहले पतिको मारडालती है और दूसरे पतिको पाती है॥ ३१।३२॥

यस्यास्त्वनामिकाङ्गुल्यौ पृथिव्यां नोपसर्पतः।
पतिं नाशयते क्षिप्रं सा रक्ता चिरजीविनी॥ ३३॥
यस्या गमनमात्रेण भूमौ कम्पः प्रजायते।
बह्वाशिनीं प्रलोभां च तां नारीं परिवर्जयेत्॥ ३४॥

जिसके पैर की दोनों अनामिका अँगुलियां भूमिको न छूती हों तो वह स्त्री शीघ्र ही पति को मारती है और यदि अनामिकायें लालवर्ण प्रतीत हों तो वह स्त्री चिरजीविनी होती है और जिसके चलनेमात्र से पृथ्वी हिलने लगे तो वह स्त्री बहुत भोजन करती हुई महालोभिनी होती है उसको त्याग देना चाहिये॥ ३३। ३४॥

चरणानामिका यस्याः क्षितिं न स्पृशते यदि।
द्वितीया च तृतीया वा सा कन्या सुखवर्जिता॥ ३५॥
कनिष्ठिकानामिका वा यस्या न स्पृशते महीम्।
अङ्गुष्ठं वागतातीता तर्जनी कुलटा हि सा॥ ३६॥

जिसके पैरकी अनामिका अँगुली यदि भूमिको नहीं स्पर्श करती हो अथवा तर्जनी व मध्यमा अँगुली यदि भूमिको न छूती हो तो वह कन्या सुखसे रहित होती है अथवा जिसके पैर की कनिष्ठिका व अनामिका अँगुली यदि भूमिको न छूती हो अथवा जिसके पैरकी तर्जनी अँगुली अँगूठे पै चढ़ी हो अथवा आगे बढ़ी हो तो वह स्त्री कुलटा (व्यभिचारिणी) होती है॥ ३५। ३६॥

यस्या अनामिकाङ्गुष्ठौ पृथिव्यां नैव तिष्ठतः।
पतिं मारयते सापि स्वतन्त्रेणैव वर्तते॥ ३७॥
स्त्रीणां पादतलं स्निग्धं मांसलं मृदुलं समम्।
अस्वेदमुष्णमरुणं बहुभोगोचितं स्मृतम्॥ ३८॥

जिसके पैर की अनामिका व अँगूठा पृथिवी में नहीं टिकते हों तो वह स्त्री पतिको मारती हुई अपनी इच्छा के अनुसार बर्तती है यदि स्त्रियों के पैर के तलवे चिकने, मांसल, कोमल, समानाकार, पसीनारहित व गरम होकर लालवर्ण प्रतीत हों तो घने भोगों के लिये कहाते हैं॥ ३७। ३८॥

रूक्षं विवर्णं परुषं खण्डितं प्रतिबिम्बकम् ।
सूर्पाकारं विशुष्कं च दुःखदौर्भाग्यसूचकम् ॥ ३९ ॥
उन्नतो मांसलोऽङ्गुष्ठो वर्तुलोऽतुलभोगदः ।
वक्रो ह्रस्वश्च चिपिटः सुखसौभाग्यभञ्जकः ॥ ४० ॥

अथवा जिसके पैर का तलवा रूखा, विवर्ण, कठोर व खण्डित प्रतिबिम्बवाला व सूप के आकार होकर विशेषता से सूखासा प्रतीत हो तो वह दुःख व दौर्भाग्य को जनलाता है और जिसका अँगूठा ऊंचा व मांसल होकर गोलाकार प्रतीत हो तो वह अतुल भोग को देता है और जो अँगूठा टेढ़ा व छोटासा होकर चपठा प्रतीत हो तो वह सुख व सौभाग्य को विनाशता है ॥ ३९ । ४० ॥

विधवा विपुलेन स्याद्दीर्घाङ्गुष्ठेन दुर्भगा ।
मृदवोऽङ्गुलयः शस्ता घना वृत्ताः समुन्नताः ॥ ४१ ॥
दीर्घाङ्गुलीभिः कुलटा कृशाभिरतिनिर्धना ।
ह्रस्वायुष्या च ह्रस्वाभिर्भुग्नाभिर्भुग्नवर्तिनी ॥ ४२ ॥

जिसका अँगूठा चौड़ा हो तो वह स्त्री विधवा (रांड़) होती है व जिसका अँगूठा लम्बा हो तो वह स्त्री बुरे भागवाली होती है यदि अँगुलियां घनी व गोलाकार तथा ऊंची होकर कोमलसी प्रतीत हों तो उस स्त्री को शुभदायक होती हैं व जिसकी अँगुलियां लम्बी सी प्रतीत हों तो वह स्त्री व्यभिचारिणी होती है व जिसकी अँगुलियां पतली हों तो वह स्त्री निर्धन होती है व जिसकी अँगुलियां छोटीसी प्रतीत हों तो वह स्त्री थोड़ी उमरवाली होती है और जिसकी अँगुलियां टेढ़ी प्रतीत हों तो वह स्त्री कुटिलवर्तिनी यानी टेढ़े वर्ताव की वर्तनेवाली होती है ॥ ४१ । ४२ ॥

चिपिटाभिर्भवेद्दासी विरलाभिर्दरिद्रिणी ।
परस्परं समारूढाः पादाङ्गुल्यो भवन्ति हि ।
हत्वा बहूनपि पतीन्परप्रेष्या तदा भवेत् ॥ ४३ ॥
दरिद्रा मध्यनखेण शिरालेन सदाध्वगा ।
रोमाढ्येन भवेद्दासी निर्मांसेन च दुर्भगा ॥ ४४ ॥

जिसके पैर की अँगुलियां चपठी हों तो वह स्त्री दासी होती है व यदि अँगुलियां विरल प्रतीत हों तो वह स्त्री दरिद्रिणी होती है और यदि पैरों की अँगुलियां परस्पर चढ़ी हों तो वह स्त्री बहुतसे पतियों को मारकर पराई दासी होती है व जिसका पैर बीच में लचासा प्रतीत हो तो वह स्त्री दरिद्रा होती है व जिसका पैर नसों से घिरा हो तो वह स्त्री सदैव मार्गगामिनी होती है व जिसका पैर रोमों से युत हो तो वह स्त्री दासी होती है और जिसका पैर निर्मांस प्रतीत हो तो वह स्त्री बुरे भागवाली होती है ॥ ४३ । ४४ ॥

गूढौ गुल्फौ शिवायोक्तावशिरालौ सुवर्तुलौ ।
सुपुटौ शिथिलौ दृश्यौ स्यातां दौर्भाग्यसूचकौ ॥ ४५ ॥
यस्या न स्पृशते भूमिमङ्गुलिश्च कनिष्ठिका ।
भर्तारं प्रथमं हन्ति मृतो भवति पुत्रकः ॥ ४६ ॥

जिसके पैर के गण्ठे (टखने) नसों से रहित, गोलाकार व अच्छे पुटोंवाले होकर छिपेसे प्रतीत हों तो उस स्त्री को कल्याणदायक होते हैं और जिसके गण्ठे ढीलेसे देख पड़ें तो बुरे भाग को बतलाते हैं और जिसके पैर की कनिष्ठा अँगुली भूमि को नहीं छूती हो तो वह पहले पति को मार डालती है पीछेसे उसका पुत्रभी मरजाता है ॥४५।४६॥

नखारुणाश्च या नार्यो भोगिन्यः सुखसंयुताः ।
श्यामनख्यः स्त्रियो या वै कुशीलाः पापसंगताः ॥ ४७ ॥
श्वेतनख्यः स्त्रियो या वै महादुःखसमन्विताः ।
पीतनख्यः प्रवासिन्यः पापिन्यश्च धनोज्झिताः ॥ ४८ ॥
हरिन्नख्यो हृतधना दुराचारपरायणाः ।
सुखसंतानरहिताः सामुद्रेण यथोदितम् ॥ ४९ ॥

जिनके नख रक्तवर्ण प्रतीत हों तो वे स्त्रियां भोगिनी होकर पुत्रपौत्रादि सुखों से संयुत होती हैं व जिनके नख काले प्रतीत हों तो वे स्त्रियां बुरे स्वभाववाली होकर पापकर्म में परायण रहती हैं व जिनके नख सफ़ेद प्रतीत हों तो वे स्त्रियां बड़े दुःखों से संयुत होती हैं व जिनके नख पीले प्रतीत हों तो वे स्त्रियां परदेशिनी व पापिनी होकर निर्धन रहती हैं और जिनके नख हरे प्रतीत हों तो वे स्त्रियां दुराचारों में परायण होकर सुखों व सन्तानों से रहित होती हैं यह सामुद्रिकशास्त्र का वचन है ॥ ४७ । ४९ ॥

अथ ललाटरेखालक्षणं व्याख्यायते—

ललाटे यस्य दृश्यन्ते तिस्रो रेखाः समाहिताः ।
सुखी पुत्रसमायुक्तः स षष्टिं जीवते नरः ॥ ५० ॥

जिसके ललाट में तीन रेखा अच्छिन्न होकर प्रतीत हों तो वह प्राणी सुखी व पुत्रों से संयुत होकर साठिवर्ष पर्यन्त जीता है ॥ ५० ॥

चत्वारिंशच्च वर्षाणि द्विरेखादर्शनान्नरः ।
विंशत्यब्दमेकरेखा आकर्णा च शतायुषः ॥ ५१ ॥
सप्तत्यायुर्द्विरेखे तु षष्ट्यायुस्तिसृभिर्भवेत् ।
व्यक्ताव्यक्ताभिरेखाभिर्विंशत्यायुर्भवेन्नरः ॥ ५२ ॥

जिसके ललाट में दो रेखायें देखीजावें तो वह प्राणी चालीस वर्ष पर्यन्त जीता है व जिसके ललाट में एकमात्र रेखा प्रतीत हो तो वह प्राणी बीस वर्ष पर्यन्त जीता है व जिसके ललाट में एक रेखा कानों पर्यन्त चलीगई हो तो वह प्राणी सौ वर्ष पर्यन्त जीता है व जिसके ललाट में दो रेखा प्रतीत हों तो वह प्राणी सत्तर वर्ष पर्यन्त जीता है व जिसके ललाट में तीन रेखा प्रतीत हों तो वह प्राणी साठि वर्ष पर्यन्त जीता है और जिसके ललाट में व्यक्त व अव्यक्त होकर बहुतसी रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी बीस वर्ष पर्यन्त जीता है ॥ ५१ । ५२ ॥

चत्वारिंशच्च वर्षाणि हीनरेखस्तु जीवति ।
भिन्नाभिश्चैव रेखाभिरपमृत्युर्नरस्य हि ॥ ५३ ॥
त्रिशूलं बडिशं वापि ललाटे यस्य दृश्यते ।
धनपुत्रसमायुक्तस्स जीवेच्छरदःशतम् ॥ ५४ ॥

जिसके ललाट में रेखायें नहीं प्रतीत हों तो वह प्राणी चालीस वर्ष पर्यन्त जीता है व जिसके ललाट में रेखायें छिन्न भिन्न होकर प्रतीत हों तो उस प्राणी की अपमृत्यु होती है यानी वह प्राणी अपमौत से मरता है और जिसके ललाट में त्रिशूल व मछली पकड़नेवाली वंसीका निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी धनों व पुत्रों से संयुक्त होकर सौ वर्ष पर्यन्त जीता है ॥ ५३ । ५४ ॥

उन्नतैर्विपुलैः शङ्खैर्ललाटैर्विषमैस्तथा ।
निर्धना धनवन्तश्च अर्धेन्दुसदृशैर्नराः ॥ ५५ ॥

आचार्याःशुक्तिविशालैः शिरालैः पापकारिणः ।
उन्नताभिः शिराभिश्च स्वस्तिकाभिर्धनेश्वराः ॥ ५६ ॥

जिनके ललाट ऊंचे, विशाल, शङ्खाकार व विषम होकर अर्धचन्द्राकार प्रतीत हों तो वे प्राणी निर्धनी होकर धनवान् होते हैं और जिनके ललाट सीपियों के निशानों से विशाल प्रतीत हों तो वे प्राणी आचार्य (अध्यापक) होते हैं व जिनके ललाट नसों से व्याप्त हों तो वे प्राणी पापकारी होते हैं और जिनके ललाट में ऊंची नसें प्रतीत हों या स्वस्तिक (त्रिकोणाकार) निशान देखे जावें तो वे प्राणी धनेश्वर (महाधनवान्) होते हैं ॥ ५५ । ५६ ॥

निम्नैर्ललाटैर्वधार्हाः क्रूरकर्मरतास्तथा ।
संवृतैश्च ललाटैश्च कृपणा उन्नतैर्नृपाः ॥ ५७ ॥
ललाटोपसृतास्तिस्रो रेखाः स्युः शतवर्षिणाम् ।
नृपत्वं स्याच्चतसृभिरायुः पञ्चनवत्यथ ॥ ५८ ॥

जिनके ललाट निचले प्रतीत हों तो वे प्राणी वधके योग्य होकर क्रूरकर्मों में परायण रहते हैं व जिनके ललाट गोलाकार प्रतीत हों तो वे प्राणी कृपण होते हैं व जिनके ललाट ऊंचेसे प्रतीत हों तो वे प्राणी राजा होते हैं व जिनके ललाट में तीन रेखायें प्रतीत हों तो वे प्राणी सौ वर्ष पर्यन्त जीते हैं और जिनके ललाट में चार रेखायें प्रतीत हों तो वे प्राणी राजा होकर पंचानवे वर्ष पर्यन्त जीते हैं ॥ ५७ । ५८ ॥

केशान्तोपगताभिश्च अशीत्यायुर्नरो भवेत् ।
नवतिः स्यादरेखाभिर्विच्छिन्नाभिश्च पुंश्चलः ॥ ५९ ॥
पञ्चभिः सप्ततिः षड्भिः पञ्चाशद्बहुभिस्तथा ।
चत्वारिंशच्च रक्ताभिस्त्रिंशद्भ्रूतलगामिभिः ।
विंशतिर्वामवक्राभिरायुः क्षुद्राभिरल्पकम् ॥ ६० ॥

जिसके ललाट में रेखायें विस्तीर्ण होकर केशोंपर्यन्त चली गई हों तो वह प्राणी अस्सी ८० वर्ष की उमरवाला होता है व जिसके ललाट में रेखा नहीं प्रतीत हों तो वह प्राणी नब्बे ९० वर्ष की उमरवाला होता है व जिसके ललाट में रेखायें छिन्न भिन्न होकर प्रतीत हों तो वह प्राणी व्यभिचारी होता है व जिसके ललाट में पांच रेखा प्रतीत हों तो वह प्राणी सत्तर वर्षपर्यन्त जीता है व जिसके ललाट में छः, सात, आठ या बहुतसी रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी पचास ५० वर्ष पर्यन्त जीता है व जिसके

ललाट में रेखायें रक्तवर्ण प्रतीत हों तो वह प्राणी चालीस वर्ष पर्यन्त जीता है व जिस ललाट में रेखाओं ने भौंहों तक आगमन किया हो तो वह प्राणी तीस वर्ष पर्यन्त जीता है व जिसके ललाट में बाईं तरफ़ रेखायें टेढ़ीसी प्रतीत हों तो वह प्राणी बीस वर्ष पर्यन्त आयु को पाता है और जिसके ललाट में टूटी फूटी छोटीसी रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी अल्पायु होजाता है ॥ ५९ । ६० ॥

ललाटे दृश्यते यस्य चक्ररेखाचतुष्टयम् ।
अशीत्यायुः समाप्नोति पञ्चरेखाः शतं समाः ॥ ६१ ॥
यस्योन्नतं ललाटं च ताम्रवर्णं च दृश्यते ।
रेखाहीनं च रूक्षं च स चोन्मत्तो महीं भ्रमेत् ॥ ६२ ॥

जिसके ललाट में चार रेखा टेढ़ी होकर प्रतीत हों तो वह प्राणी अस्सी वर्ष की आयु को पाता है और जिसके ललाट में पांच रेखा प्रतीत हों तो वह प्राणी सौ वर्ष की आयु को पाता है व जिसका ललाट ऊंचा होकर ताम्रसरीखे वाला देखा जावे अथवा रेखाओं से हीन होकर रूखासा प्रतीत हो तो वह प्राणी पागल होकर पृथ्वी में घूमता हुआ फिरता है ॥ ६१ । ६२ ॥

शुभमर्धेन्दुसंस्थानमतुङ्गं स्यादलोमशम् ।
नृपतीनां भवेच्चिह्नं ललाटे शुभदर्शनम् ॥ ६३ ॥
उन्नतेन ललाटेन धनाढ्यो जायते नरः ।
विषमेन ललाटेन दुःखितो दुर्जनो नरः ।
ललाटे चार्धचन्द्राद्यैर्जायते पृथिवीपतिः ॥ ६४ ॥

जिसके ललाट में उच्चतारहित, लोमों से विहीन, शुभदायक दर्शनोंवाला होकर अर्धचन्द्राकार चिह्न चमकता हो तो वे प्राणी राजा होते हैं व जिसका ललाट ऊंचासा प्रतीत हो तो वह प्राणी धनवान् होता है व जिसका ललाट विषम (कहीं ऊंचा व कहीं खालीसा) प्रतीत हो तो वह प्राणी दुर्जन होकर दुःखित रहता है और जिसके ललाट में अर्धचन्द्राकार आदि निशान प्रतीत हों तो वह प्राणी पृथ्वीपालक होता है ॥ ६३।६४ ॥

त्रिशूलं कुलिशं चापं ललाटे यस्य दृश्यते ।
ईश्वरं तं विजानीयात्प्रमदाजनवल्लभः ॥ ६५ ॥
रेखाः पञ्चललाटस्थाः समाः कर्णान्तलोचनः ।
भवेत्तं यस्य गंभीरं तं विद्यात्सफलायुषम् ॥ ६६ ॥

जिसके ललाट में त्रिशूल, वज्र व धनुष का निशान प्रतीत हो तो उस प्राणी को सबों का स्वामी जानना चाहिये और वह प्रमदाजनों (लुगाइयों) का प्यारा होता है व जिसके ललाट में समानाकार होकर पांच रेखायें प्रतीत हों व जिसके दोनों लोचन कानपर्यन्त चलते हुए गहरेसे प्रतीत हों तो उस प्राणी को सफल आयुवाला जानना चाहिये ॥ ६५ । ६६ ॥

पञ्चभिः शतमादिष्टो ह्यशीतिः षड्भिरेव च ।
भवेत्सप्ततिस्तिसृभिर्द्वाभ्यां वै विंशतिद्वयम् ॥ ६७ ॥
रेखैकेन ललाटेन विंशत्यायुः प्रकीर्तितम् ।
अरेखेण ललाटेन विज्ञेयं पञ्चविंशतिः ॥ ६८ ॥

जिसके ललाट में पांच रेखायें प्रतीत हों तो उस प्राणी की आयु सौ वर्ष की आचार्यों ने कही है व जिसके ललाट में छः रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी अस्सी वर्ष की उमर वाला होता है व जिसके ललाट में तीन रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी सत्तर वर्ष की आयु को पाता है व जिसके ललाट में दो रेखायें प्रतीत हों तो वह चालीस वर्ष की आयु को पाता है व जिसके ललाट में एकमात्र रेखा प्रतीत हो तो उस प्राणी की बीस वर्ष की आयु कही है और जिसके ललाट में रेखा नहीं प्रतीत हों तो उस प्राणी को पचीस वर्ष की उमरवाला जानना चाहिये ॥ ६७ । ६८ ॥

रेखाचतुष्टयं यस्य ललाटे च प्रदृश्यते ।
चिरायुश्चापि विद्वांश्च सुखभोगादिभिर्युतः ॥ ६९ ॥
पञ्चरेखा भवेद्यस्य सुतसौख्यस्य कारणम् ।
हीनायुश्च त्रिरेखायां रेखैकेन नृपो भवेत् ॥ ७० ॥

जिसके ललाट में चार रेखायें देखी जावें तो वह प्राणी चिरजीवी, विद्वान्, सुखी व भोगी होकर सम्पत्तिशाली होता है व जिसके ललाट में पांच रेखा प्रतीत हों तो वह प्राणी सुत व सौख्य का कारण होता है यानी वह प्राणी पुत्र पौत्रादिकों से संपन्न होकर सुखी रहता है व जिसके ललाट में तीन रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी आयुर्दाय से हीन होता है और जिसके ललाट में एक रेखा प्रतीत हो तो प्राणी राजा होताहै ॥ ६९ । ७० ॥

विपुलेन ललाटेन धनाढ्यो जायते नरः ।
अल्पेन च ललाटेन चाल्पायुर्जायते नरः ।

खरक्रयकरो नित्यं प्राप्नोति वधबन्धनम् ॥ ७१ ॥

जिसका ललाट विशाल प्रतीत हो तो वह प्राणी धनवान् होता है व जिसका लला छोटासा प्रतीत हो तो वह प्राणी अल्पायु होजाता है और गर्दभादिक्रय विक्रय द्वा अपने जीवन का निर्वाह करता हुआ वध बन्धन को पाता है ॥ ७१ ॥

ललाटे दृश्यते यस्य समरेखाचतुष्टयम् ।
ग्रीवारेखाः पञ्च यस्य शुभं तस्य विनिर्दिशेत् ॥ ७२ ॥
दृश्यन्ते भालगा रेखाश्चतस्रः पाण्डुरूपिकाः ।
अविच्छिन्नाविवर्णास्स्युरशीत्यायुःप्रकीर्तितः ॥ ७३ ॥

जिसके ललाटमें चार रेखायें समानाकार प्रतीत हों और जिसकी ग्रीवामें पांच रेखायें प्रत हों तो उस प्राणी को शुभफल कहना चाहिये व जिसके ललाटमें चार रेखायें पीली व अ च्छिन्न होकर मैलीसी प्रतीत हों तो वह प्राणी अस्सी वर्षकी उमरवाला कहाताहै ॥७२।७

अथ स्त्रीणां ललाटलक्षणं व्याख्यायते—

भालगेन त्रिशूलेन निर्मितेन स्वयंभुवा ।
नितम्बिनीसहस्राणां स्वामित्वं योषिदाप्नुयात् ॥ ७४ ॥

जिसके ललाट में ब्रह्माजी के रचेहुए त्रिशूलका निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री हजा स्त्रियों के स्वामित्व को पाती है यानी उस स्त्री को हज़ारों स्त्रियां हाथ जोड़े हुए से करती हुई आज्ञा को मानती हैं ॥ ७४ ॥

एकरेखा भवेद्यस्या ललाटे शोभना भवेत् ।
श्रीवत्सं स्वस्तिकं चैव ललाटे दृश्यते सदा ॥ ७५ ॥
प्रलम्बिनि ललाटे तु देवरं हन्ति चाङ्गना ।
स्मिते कूपे गण्डयोश्च सा ध्रुवं व्यभिचारिणी ॥ ७६ ॥

जिसके ललाट में एकमात्र रेखा प्रतीत हो अथवा श्रीवत्स या स्वस्तिक (त्रिकोण कार) निशान प्रतीत हो तो सदैव शुभदायक होता है और जिसका लम्बा प्रतीत हो वह स्त्री देवर को निश्चय कर विनाशती है और जिस स्त्री के हसने पर गालों में गड्ढे देखेजावें तो वह स्त्री निश्चयकर व्यभिचारिणी (छिनारि) होती है ॥ ७५ । ७६ ॥

ललाटे दृश्यते यस्यास्त्रिशूलं कृष्णपिङ्गलम् ।
सा पञ्च जनयेत्पुत्रान्धनधान्यं विवर्धयेत् ॥ ७७ ॥
न पृथू बालेन्दुनिभे भ्रुवौ चाथ ललाटकम् ।

शुभमर्धेन्दुसंस्थानमतुङ्गं स्यादलोमकम् ॥ ७८ ॥

जिसके ललाट में काला व पीला त्रिशूलाकार निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री पांच पुत्रों को उपजाती हुई धन, धान्य को बढ़ाती है और जिसकी भौंहें चौड़ी न होकर बालचन्द्रमा के समान प्रतीत हों व जिसका ललाट उन्नतारहित व लोमों से विहीन होकर अर्धचन्द्राकार प्रतीत हो तो उस स्त्री को शुभदायक होता है ॥ ७७ । ७८ ॥

भालः शिराविरहितो निर्लोमार्धेन्दुसन्निभः ।
अनिम्नस्त्र्यङ्गुलो नार्याः सौभाग्यारोग्यकारणम् ॥ ७९ ॥
व्यक्तस्वस्तिकरेखं च ललाटं राज्यसम्पदे ।
रोमशेन शिरालेन प्रांशुना रोगिणी स्मृता ॥ ८० ॥

जिसका ललाट नसों से रहित व लोमों से विहीन व अर्धचन्द्राकार व गहिरा न होकर तीन अङ्गुल प्रतीत हो तो वह स्त्री सुहागिल होकर आरोग्य रहती है व जिसके ललाट में स्वस्तिक (त्रिकोणाकार) रेखा विशेष प्रकट होती हो तो राज्यसंपदा के लिये कहाती है यानी वह स्त्री रानी होकर संपदा को भोगती है और जिसका ललाट रोमों से संयुत होकर नसों से घिरा हुआ ऊंचासा प्रतीत हो तो वह स्त्री रोगिणी (रोगवाली) कहीजाती है यानी उस स्त्री को हमेशा रोगही घेरे रहता है ॥ ७९ । ८० ॥

अथ ललाटे सप्तस्वराणां विचारमाह—

श्रुतिभाः स्युः स्वराः षड्जर्षभगान्धारमध्यमाः ।
पञ्चमो धैवतश्चाथ निषाद इति सप्त ते ॥ ८१ ॥

कानों में प्रकाशित होते हुए वे सात स्वर होते हैं जिनमें पहला षड्ज, दूसरा ऋषभ, तीसरा गान्धार, चौथा मध्यम, पांचवां पञ्चम, छठा धैवत और सातवां निषाद कहाता है वहां पहले ' षड्ज ' का व्याख्यान करते हैं कि, " नासा कण्ठमुरस्तालु जिह्वा दन्तांश्च संस्पृशन् । षड्भ्यः संजायते यस्मात्तस्मात्षड्ज इति स्मृतः " नाक, कण्ठ, वक्षःस्थल, तालु, जिह्वा और दांत इनको स्पर्श करता हुआ जो छहों से पैदा होता है इसलिये उसको षड्ज कहते हैं और (ऋषति बलीवर्दस्वरसादृश्यं गच्छतीति ऋषभः) जो बैलके स्वर के समान चलता है उसे ' ऋषभ ' कहते हैं और (गन्धारदेशे भवः गान्धारः) जो गन्धार देश में हुआ है उसे ' गान्धार ' कहते हैं और (तद्वदेवोत्थितो वायुरुरः कण्ठसमाहतः । नाभिं प्राप्तो महानादो मध्यस्थस्तेन मध्यमः) उसी प्रकार उठा वायु वक्षःस्थल व कण्ठ से ताडित होता हुआ नाभि में पहुँचकर महानादवाला होकर बीच में रहता है इसलिये मध्यम कहा जाता है और (वायुः समुद्गतो नाभेरुरोहृत्कण्ठमूर्धसु । विचरन्पञ्चमस्थान-

प्राप्त्या पञ्चम उच्यते) नाभि से उठा हुआ पवन वक्षःस्थल, हृदय, कण्ठ और मस्तक में विचरता हुआ रहता है इसलिये पांच स्थानों की प्राप्ति से 'पञ्चम' कहाताहै और (धीमतामयं धैवतः) धीमानों का जो यह शब्द है उसे धैवत कहते हैं और (निषीदति मनो यस्मिन्निति निषादः) जिसमें मन लगता है उसे ' निषाद ' कहते हैं ये सातो स्वर ललाट की रेखाओं से जाने जाते हैं यह सांगीत शास्त्रवालों ने कहा है अब पूर्वोक्त स्वरों को कौन कौनसे प्राणी बोलते हैं उसको कहते हैं ॥ ८१ ॥

षड्जं रौति मयूरस्तु गावो नर्दन्ति चर्षभम् ।
अजाविकौ च गान्धारं क्रौञ्चो नदति मध्यमम् ॥ ८२ ॥
पुष्पसाधारणे काले कोकिलो रौति पञ्चमम् ।
अश्वस्तु धैवतं रौति निषादं रौति कुञ्जरः ॥ ८३ ॥

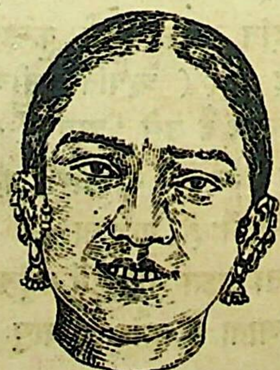
मोर षड्ज स्वरको बोलता है व गौवें ऋषभ स्वरको बोलती हैं व बकरी तथा भेंड़ गान्धार स्वरको बोलती हैं और क्रौंच (कराकुलनामक) पक्षी मध्यमं स्वरको बोलता है व पुष्पों के साधारण काल में कोकिला पञ्चम स्वरको बोलती है व घोड़ा धैवतस्वरको बोलता है और हाथी निषाद स्वरको बोलता है ॥ ८२ । ८३ ॥

अथ षड्जाधिपान्ग्रहानाह—

षड्जाधिपः सूर्यसूनुर्ऋषभेशो गुरुः स्मृतः ।
गान्धाराधिपतिर्भौमो रविर्मध्यमनायकः ॥ ८४ ॥
पञ्चमेशोभृगुःप्रोक्तो धैवतेशो बुधः स्मृतः ।
निषादाधिपतिश्चोक्तो निशानायकसंज्ञकः ॥ ८५ ॥

षड्जका स्वामी शनैश्चर, ऋषभका स्वामी बृहस्पति, गान्धारका स्वामी मङ्गल, मध्यम का स्वामी सूर्य, पञ्चम का स्वामी शुक्र, धैवतका स्वामी बुध और निषादका स्वामी चन्द्रमा कहाता है ॥ ८४ । ८५ ॥





अथ पुनरपि बिन्दुजन्तुतिलमशकावर्तादिचिह्नान्याह—

नखेषु बिन्दवः श्वेताः प्रायः स्युः स्वैरिणीस्त्रियः।
पुरुषा अपि जायन्ते दुःखिनः पुष्पितैर्नखैः॥ ८६॥

जिनके नखों में सफ़ेद बिन्दु (कौड़ीसी) प्रतीत हों तो वे स्त्रियां प्रायः स्वैरिणी (व्यभिचारिणी) होती हैं और यदि पुरुषों के नखों में सफ़ेद बिन्दु प्रतीत हों तो वे भी दुःखी रहते हैं॥ ८६॥

विषमैर्जत्रुभिर्निःस्वा अस्थिनद्धैश्च मानवाः।
उन्नतैर्भोगिनो निम्नैर्निःस्वाः पीनैर्धनान्विताः॥ ८७॥

जिनकी हँसुलियां विषम होकर हाड़ों से बँधी हों तो वे प्राणी दरिद्रतासंपन्न होते हैं व जिनकी हँसुलियां ऊंचीसी प्रतीत हों तो वे प्राणी भोगी होते हैं व जिनकी हँसुलियां निचलीसी प्रतीत हों तो वे प्राणी निर्धनी होते हैं और जिनकी हँसुलियां मोटीसी प्रतीत हों तो वे प्राणी धनवान् होते हैं॥ ८७॥

मुखे तिलं यस्य च तस्य लिङ्गे ह्यक्ष्णोरधस्तस्य च कुक्षिगं स्यात्।
भुजे भवेत्तस्य च मूलजन्म पूर्वाद्वितीये जटुलं स्वदेहे॥ ८८॥

जिसके मुख में तिलका निशान प्रतीत हो तो उस प्राणी के लिङ्ग देश में अवश्यही तिलका निशान होता है और यदि स्त्रियों के मुख में तिलका निशान प्रतीत हो तो उन स्त्रियों की योनि (भग) में अवश्यही तिल होता है व जिसकी आंखों के नीचे तिलका निशान प्रतीत हो तो उस नर व नारीकी कोखि में अवश्यही तिल होता है व जिसकी भुजों में तिलका निशान प्रतीत हो तो उसका जन्म मूलनक्षत्र में कहाजाता है और जिसको अपनी देह में लसुन का निशान प्रतीत हो तो उसका जन्म पूर्वाषाढ़ में जानना चाहिये॥ ८८॥

भ्रुवोरन्ते ललाटे वा मशको राज्यसूचकः।
पुत्रदो ज्ञानदो भूत्वा दुःखदौर्भाग्यभञ्जकः॥ ८९॥

जिसके भौंहों के बीच या ललाट में मशेका निशान प्रतीत हो तो राज्यसूचक होता है तथा पुत्रदायक व ज्ञानदायक होकर दुःख व दौर्भाग्य को विनाशता है॥ ८९॥

वामे कपोले मशकः शोणो मिष्टान्नदः स्त्रियाः।

१ पतिं त्यक्त्वा तु या नारी गृहादन्यत्र गच्छति। अन्येषु रमते नित्यं स्वैरिणी सा निगद्यते॥ १॥

तिलकं लाञ्छनं वापि हृदि सौभाग्यकारणम् ॥ ६० ॥

जिसके बायें कपोल (गाल) पै रक्तवर्णवाले मशे का निशान प्रतीत हो तो उ नारी के लिये शुभकारी होकर मिष्टान्नदायक होता है और जिसके हृदय में तिलक निशान प्रतीत हो तो सौभाग्य का कारण होता है ॥ ६० ॥

यस्या दक्षिणवक्षोजे भवेत्तिलकलाञ्छनम् ।
कन्याचतुष्टयं सूते सूते सा च सुतत्रयम् ॥ ६१ ॥
तिलकं लाञ्छनं शोणं यस्या वामकुचे भवेत् ।
एकं पुत्रं प्रसूयादौ अन्ते च विधवा भवेत् ॥ ६२ ॥

जिसके दाहिने स्तनमें तिलका निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री चार कन्याओं को पैद कर तीन लड़के या दो लड़कों को उपजाती है और जिसके बायें स्तन (दूध) में तिः का निशान लालवर्ण होकर प्रतीत हो तो वह स्त्री पहले पुत्र को उपजा कर आखिरी विधवा (रांड़) होजाती है ॥ ६१ । ६२ ॥

गुह्यस्य दक्षिणे भागे तिलको यदि शोभते ।
तदा क्षितिपतेः पत्नी सूते च क्षितिपं सुतम् ॥ ६३ ॥
नासाग्रे मशकः शोणो महिष्या एव जायते ।
कृष्णः स एव भर्तृघ्न्याः पुंश्चल्या वा प्रकीर्तितः ॥ ६४ ॥

जिसके गुह्यदेश के दक्षिण भाग में यदि तिलका निशान सोहता हो तो वह स्त्री रा होकर राजकुमार को उपजाती है और जिसकी नासिका के आगे लाल मशा का निशा प्रतीत हो तो वह स्त्री पटरानी होती है और जिसकी नासिका के आगे काले तिलका निशा प्रतीत हो तो वह स्त्री स्वामी को मारती है या व्यभिचारिणी होजाती है ॥ ६३ । ६४ ।

नाभेरधस्तात्तिलको मशको लाञ्छनं शुभम् ।
मशकस्तिलकश्चिह्नं गुल्फदेशे दरिद्रकृत् ॥ ६५ ॥
करे कर्णे कपाले वा कण्ठे वामे भवेद्यदि ।
एषां त्रयाणामेकं तु प्राग्गर्भो पुत्रदो भवेत् ॥ ६६ ॥

जिसकी नाभि (तोंदी) के नीचे तिल या मशे का निशान प्रतीत हो तो उस स्त्री के शुभदायक होता है व जिसके गुल्फदेश (गण्ठों) में मशा व तिलका निशान प्रतीत हो तो दरिद्र को करता है व जिसके हाथ, कान, गाल व कण्ठ के वामभाग में यदि

लहसुन, मशा या तिलका निशान प्रतीत हो और यदि इन तीनों निशानों में से एकभी निशान प्रतीत हो तो उस स्त्री का पहला गर्भ पुत्रदायक होता है ॥ ६५ । ६६ ॥

नासाग्रे दृश्यते यस्यास्तिलको मशकोपि च ।
कृष्णदन्ता कृष्णजिह्वा दशाहेन पतिं हरेत् ॥ ६७ ॥
तिलको वामतो यस्याः कुक्षिदेशे च जायते ।
माषकस्य समो वापि राजपत्नी भवेद् ध्रुवम् ॥ ६८ ॥

जिसकी नासिका के अग्रभाग में तिल या मशे का निशान प्रतीत हो व जिसके काले दांत व काली जीभ प्रतीत हो तो वह स्त्री ब्याह से दश दिनकी अवधि में ही पति को मारडालती है और जिसके कुक्षिदेश (कोखि) के वामभाग में तिल या मशा के समान निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री निश्चय कर राजपत्नी (रानी) होती है ॥ ६७ । ६८ ॥

पार्श्वे स्याद्दीर्घतिलको यस्याः स्निग्धश्च जायते ।
वामहस्ते पतिं प्राप्य पुत्रपौत्रं प्रवर्धयेत् ॥ ६९ ॥

जिसके पार्श्वदेश में या बायें हाथ में चिकना होकर दीर्घाकार तिलका निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री पति को पाकर पुत्र पौत्रों को बढ़ाती है ॥ ६९ ॥

यस्या गण्डेधरे वामे हस्ते कर्णे गले तथा ।
माषकं तिलकं विद्यात्सा कन्या सुखमेधते ॥ २०० ॥

जिसके गाल, ओठ, हाथ, कान तथा गला इन्होंके वामभाग में मशा या तिलका निशान प्रतीत हो तो वह कन्या सुखको पाती है ॥ २०० ॥

आरक्तं वामके यस्याः कुक्षिदेशे च दृश्यते ।
माषकं तिलकं वापि सा कन्या सुखभागिनी ॥ १ ॥

जिसके कुक्षिदेश में बायेंतरफ़ लालवर्णवाला मशा व तिलका निशान प्रतीत हो तो वह कन्या सुखों की सेवनेवाली होती है ॥ १ ॥

पाणौ प्रदक्षिणावर्तो धर्म्यो वामो न शोभनः ।
नाभौ श्रुतावुरसि वा दक्षिणावर्त ईडितः ॥ २ ॥

जिसके हाथ में रोमों या रेखाओं का 'दहिनावर्त' प्रतीत हो तो उस स्त्री के लिये धर्मवर्धक होता है व जिसके हाथ में 'वामावर्त' प्रतीत हो तो उस स्त्री को शुभदायक नहीं होता है व जिसकी नाभि, कान व छाती में 'दहिनावर्त' प्रतीत हो तो उस स्त्री को शुभदायक कहाता है ॥ २ ॥

सुखाय दक्षिणावर्तः पृष्ठवंशस्य दक्षिणे ।
अन्तःपृष्ठे नाभिसमो बह्वायुः पुत्रवर्धनः ॥ ३ ॥
राजपत्न्याः प्रदृश्येत भगमौलौ प्रदक्षिणः ।
सचेच्छकटभङ्गः स्याद् बह्वपत्यः सुखप्रदः ॥ ४ ॥

जिसके पृष्ठवंश (पीठके बांस) की दाहिनी ओर दहिनावर्त प्रतीत हो तो सुखके लिये होता है व जिसकी पीठ के बीच में तोंदी के समान दहिनावर्त प्रतीत हो तो बहुत सी आयु को करता हुआ पुत्रों को बढ़ाताहै और जिसकी भग (योनि) के ऊपरी भाग में दहिनावर्त निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री राजपत्नी (रानी) होती है व जिसकी भग के ऊपरी भाग में शकटाकार निशान भङ्ग होकर प्रतीत हो तो बहुत संतानों को करता हुआ सुखदायक होता है ॥ ३ । ४ ॥

कटिगो गुह्यवेधेन पत्यपत्यनिपातनः ।
स्यातामुदरवेधेन पृष्ठावर्तौ न शोभनौ ॥ ५ ॥
एकेन हन्ति भर्तारं भवेदन्येन पुंश्चली ।
कण्ठगो दक्षिणावर्तो दुःखवैधव्यसूचकः ॥ ६ ॥

जिसकी कमर में गुदा को वेधन कर दहिनावर्त निशान प्रतीत हो तो उस स्त्री के पति व पुत्रों का मारनेवाला होता है व जिसकी पीठ में पेट को वेधन कर दो दहिनावर्त प्रतीत हों तो उस स्त्री को शुभदायक नहीं होते हैं बरन वह स्त्री एक निशान से पतिको मारती है और दूसरे निशान से व्यभिचारिणी होजाती है और जिसके कण्ठ में दहिनावर्त निशान प्रतीत हो तो उस स्त्री के लिये दुःख व वैधव्य को जताता है ॥ ५ । ६ ॥

सीमन्तेऽथ ललाटे वा त्याज्या दूरात्प्रयत्नतः ।
सा पतिं हन्ति वर्षेण यस्या मध्ये कृकाटिके ॥ ७ ॥
प्रदक्षिणो वा वामो वा रोम्णामावर्तकः स्त्रियाः ।
एको वा मूर्धनि द्वौ वा वामे वामगतौ यदि ।
आदशाहं पतिघ्नी सा त्याज्या दूरात्सुबुद्धिना ॥ ८ ॥

जिसके शीश या ललाट में दहिनावर्त निशान प्रतीत हो तो उस स्त्री को बड़े यत्न के साथ त्याग देना चाहिये व जिसकी घांटी के बीच दहिनावर्त निशान प्रतीत हो तो वह स्त्री ब्याह से एकही वर्ष में पति को मारडालती है व जिसके मस्तक में एकमात्र रोमों का दहिनावर्त या वामावर्त प्रतीत हो अथवा दो वामावर्त प्रतीत हों तो वह स्त्री ब्याहसे दश दिवस मेंही पति को मारती है इसलिये बुद्धिमानों को वह स्त्री दूरसेही त्यागना चाहिये ॥ ७ । ८ ॥

कट्यावर्ता च कुलटा नाभ्यावर्ता पतिव्रता ।
पृष्ठावर्ता च भर्तृघ्नी कुलटाप्यथ जायते ॥ ९ ॥

जिसकी कमर में आवर्तरेखा प्रतीत हो तो वह स्त्री व्यभिचारिणी होती है व जिसकी नाभि (तोंदी) में आवर्तरेखा प्रतीत हो तो वह स्त्री पतिव्रता होती है व जिसकी पीठ में आवर्तरेखा प्रतीत हो तो वह स्त्री पति को विनाशती है अथवा वेश्या होजाती है ॥ ९ ॥

एकमुद्रो भवेद्राजा दशमुद्रो महाधनी ।
मुद्राहीनस्तु दुःखी स्याद् द्वित्रिकाभ्यां तथैव च ॥ १० ॥
एकमुद्रो भवेद्राजा द्विमुद्रो धनवान्नरः ।
त्रिमुद्रो रोगसम्पन्नो बहुमुद्रो बहुप्रजः ॥ ११ ॥

जिसके करतल में एक मुद्रा प्रतीत हो तो वह प्राणी राजा होता है व जिसके करतल में दश मुद्रायें प्रतीत हों तो वह प्राणी महाधनी होता है व जिसका करतल मुद्रारहित प्रतीत हो तो वह प्राणी दुःखी रहता है और जिसके करतल में दो व तीन मुद्रायें देखी जावें तो भी वह प्राणी दुःखी रहता है अथवा जिसके करतल में एक मुद्रा का निशान प्रतीत हो तो वह राजा होता है व जिसके करतल में दो मुद्रायें प्रतीत हों तो वह प्राणी धनवान् होता है व जिसके करतल में तीन मुद्रायें प्रतीत हों तो वह प्राणी रोगी रहता है और जिसके करतल में बहुतसी मुद्रायें प्रतीत हों तो वह प्राणी घने सन्तानोंवाला होता है ॥ १० । ११ ॥

अथ सामुद्रकीयराजयोगा व्याख्यायन्ते—

जनने प्रबलो यस्य राजयोगो भवेद्यदि ।
करे वा चरणेऽवश्यं राजचिह्नं प्रजायते ॥ १२ ॥

जिसके जन्मकाल में यदि राजयोग प्रबल हो तो उस प्राणी के करतल या पादतल में अवश्यही राजचिह्न होता है ॥ १२ ॥

अनामामूलगा रेखा सैव पुण्याभिधा मता ।
मध्यमाङ्गुलिमारभ्य मणिबन्धान्तमागता ॥ १३ ॥
सोर्ध्वरेखा विशेषेण राज्यलाभकरी भवेत् ।
खण्डिता दुष्टफलदा क्षीणा क्षीणफला मता ॥ १४ ॥

करतल में जो रेखा अनामिका की मूल में प्राप्त होती है उसको ही पुण्यनामक रेखा सामुद्रिकशास्त्रवेत्तागणों ने माना है और जो मध्यमाङ्गुली से चलकर मणिबन्ध (कब्जा) के पास तक आती है वह ऊर्ध्वरेखा (फेटलाइन) विशेषता से राज्यलाभकारिणी होती है व यदि ऊर्ध्वरेखा खण्डित प्रतीत हो तो दुष्टफलदायक होती है और यदि छिन्न भिन्न प्रतीत हो तो क्षीणफलों को प्रदान करती है ॥ १३ । १४ ॥

अङ्गुष्ठमध्ये पुरुषस्य यस्य विराजते चारु यवो यशस्वी ।
स्ववंशभूषासहितो विभूषा योषाजनैरर्थगणैश्च मर्त्यः ॥ १५ ॥
वैसारिणो वातपवारणो वा चेद्वारणो दक्षिणपाणिमध्ये ।
सरोवरं चाङ्कुश एव यस्य वीणा च राजा भुवि जायते सः ॥ १६ ॥

जिसके करतल में अँगूठा के बीच मनोहर यवाकार का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी विभूषणों, स्त्रीजनों व अर्थगणों समेत होता हुआ यशस्वी होकर अपने वंश में भूषण होता है और जिसके दहिने करतल में मछली, छाता, हाथी, सरोवर, अंकुश व वीणा का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी पृथ्वी में राजा होता है ॥ १५ । १६ ॥

मुकुरशैलकृपाणहलाङ्कितं करतलं किल यस्य स वित्तपः ।
कुसुममालिकया फलमीदृशं नृपतिरेव नृपालभवो यदा ॥ १७ ॥
करतलेपि च पादतले नृणां तुरगपङ्कजचापरथाङ्गवत् ।
ध्वजरथासनदोलिकया समं भवति लक्ष्म रमापरमालये ॥ १८ ॥

जिसका करतल दर्पण, पर्वत, तलवार व हल इन चिह्नों से चिह्नित हो तो वह प्राणी धनों का स्वामी होता है व जिसका करतल फूलों की माला से अङ्कित हो तो भी वह प्राणी धनशाली होता है और यदि राजवंश में पैदा हो तो वह प्राणी राजाही होता है और जिनके करतल व पादतल में घोड़ा, कमल, धनुष, चक्र, ध्वजा, रथ, आसन और हिंडोले या डोली के समान निशान प्रतीत हो तो उन प्राणियों के घर में महालक्ष्मीजी निवास करती हैं ॥ १७ । १८ ॥

कुम्भस्तम्भो वा तुरङ्गो मृदङ्गः पाणावङ्को वा द्रुमो यस्य पुंसः ।
चञ्चद्दण्डोऽखण्डलक्ष्म्या परीतः किंवा सोयं पण्डितः शौण्डिको वा ॥ १९ ॥
विशालभालोम्बुजपत्रनेत्रः सुवृत्तमौलिः क्षितिमण्डले यः ।
आजानुबाहुः पुरुषं तमाहुः क्षोणीभृतां सौख्यतरं महान्तम् ॥ २० ॥

जिसके करतल में घड़ा, खंभा, घोड़ा, मृदङ्ग या वृक्ष अथवा दण्डे का निशान प्रतीत

हो तो वह प्राणी अखण्डलक्ष्मी से परिपूर्ण होता हुआ पण्डित होता है अथवा शौण्डिक (कलवार) होता है और जिसका भाल विशाल प्रतीत हो व लोचन कमलदल के समान हों व मस्तक गोलाकार प्रतीत हो व जिसकी भुजायें जानुओं पर्यन्त देखी जावें तो उस प्राणी को भूतल में पण्डितों ने राजाओं के बीच बड़ा राजा कहा है जोकि अधिक सौख्यवाला होता है ॥ १९ । २० ॥

नाभिर्गभीरा सरला च नासा वक्षस्स्थलं रक्तशिलातलाभम् ।
आरक्तवर्णौ खलु यस्य पादौ मृदू भवेतां स नृपोत्तमः स्यात् ॥ २१ ॥

जिसकी नाभि (तोंदी) गहरी हो वा नासिका सीधी प्रतीत हो व जिसका वक्षःस्थल(छाती) लालशिलातल के समान प्रतीत हो और जिसके पैर लाल वर्णवाले होकर कोमल से प्रतीत हों तो वह प्राणी राजाओं में से उत्तम राजा (शाहंशाह) होता है ॥ २१ ॥

राजते करगो यस्य तिलोऽतुलधनप्रदः ।
तथा पादतले पुंसां वाहनार्थसुखप्रदः ॥ २२ ॥
राजवंशप्रजातानां समस्तफलमीदृशम् ।
अन्येषामल्पतां याति तथा व्यक्तं सुलक्षणम् ॥ २३ ॥

इति ॥

जिसके करतल में तिलका निशान प्रतीत हो तो उस प्राणी के लिये अतुल धनदायक होता है ऐसेही जिनके पादतल में तिलका निशान प्रतीत हो तो उन प्राणियों के लिये सवारी, धन व सुखों का दायक होता है यह सारा फल राजवंश में उपजे हुए महाराजों के लिये कहा है और अन्य साधारण जनों को थोड़ा सा फल प्राप्त होता है उसी प्रकार जिनके करतल या पादतल में पूर्वोक्त निशान साफ़ जाहिर न होते हों तोभी वे प्राणी थोड़ा सा फल पाते हैं ॥ २२ । २३ ॥

इति भावकुतूहले राजयोगादिः ॥

अथ ग्रन्थान्तरेभ्यस्समुद्धृत्य राजयोगा व्याख्यायन्ते ।

यस्य प्रसूतिसमये प्रबला नृपालयोगा भवन्ति यदि वा पुरुषस्य नूनम् ।
सद्राज्यलाञ्छनवराणि पदे तदीये यद्वा भवन्त्यपि च पाणितलेमलानि ॥ २४ ॥

जिसके जन्मसमय यदि प्रबलराजयोग प्रतीत हों तो उस प्राणी के पैर में निश्चयकर श्रेष्ठ राजचिह्न होते हैं अथवा उस प्राणी के करतल में भी अमल (साफ़) राजचिह्न होते हैं ॥ २४ ॥

अनामिकामूलगता रेखा पुण्याह्वया च सा ।
प्राप्ता मध्याङ्गुष्ठगोर्ध्वा मणिबन्धन्तु राज्यदा ॥ २५ ॥
यवचिह्नं यदा यस्याङ्गुष्ठमध्ये विराजते ।
विनीतः स्याद्यशस्वी च स्ववंशाभरणं च सः ॥ २६ ॥

जिसके अनामिका की मूलमें जो रेखा प्राप्त हो उसको पुण्यरेखा कहते हैं और जो मध्यमाकी मूल में प्राप्त होकर अँगूठा की मूल में पहुँचती हुई कब्ज़े के पास आती है उसको ऊर्ध्वरेखा (फेटलाइन) कहते हैं वह उस प्राणी के लिये राज्यदायक होती है और जिसके करतल में अँगूठा के बीच यदि यवका निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी विनयवाला होता हुआ यशस्वी होकर अपने वंशमें भूषण होता है ॥ २५ । २६ ।

वैसारिणो वारणो वातपवारणकं सृणिः ।
वीणा पुष्करिणी पाणौ चरणे स्युर्नराधिपाः ॥ २७ ॥
करवालादर्शमालाहलपर्वतवाजि यत् ।
पाणौ चेन्नरनाथो वा मण्डलीको यथाकुलम् ॥ २८ ॥

जिनके करतल या पादतल में मछली, हाथी, छाता, अंकुश, वीणा और पुष्करिणी का निशान प्रतीत हो तो वे प्राणी राजा होते हैं और जिसके करतल में तलवार, शीशा, माला, हल, पर्वत और घोड़े का निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी अपने वंश के अनुसार राजा या मण्डलीक राजा होता है ॥ २७ । २८ ॥

चेत्पाणौ चरणे हि यस्य च रथो दोला सरोजध्वजा-
श्चक्रं वा व्यजनासनानि च भवन्त्येतानि चिह्नानि च ।
नूनं तस्य गृहे भवन्ति कमलालीलाविलासो भृशं
शालाः कुञ्जरजास्तुरङ्गमभवाः ख्याता महीमण्डले ॥ २९ ॥

जिसके करतल या पादतल में रथ, हिंडोला, कमल, ध्वजा, चक्र, व्यजन (पंखा) और आसन ये निशान प्रतीत हों तो उस प्राणी के घरमें निश्चयकर लक्ष्मीलीला के विलास अधिकता से होते हैं तथा गजशाला व अश्वशाला पृथ्वीमण्डल में विख्यात होती हैं ॥ २९ ॥

स्तम्भः कुम्भः पादपो वा मृदङ्गो पाणौ दण्डो घोटको वा यदा चेत् ।
मर्त्योऽत्यर्थं राजते राजलक्ष्म्या ख्यातो नूनं पण्डितानां वरेण्यः ॥ ३० ॥

जिसके करतल में खंभा, घड़ा, वृक्ष, मृदङ्ग, दण्डा या घोड़े का निशान यदि प्रतीत हो तो वह प्राणी निश्चय कर विख्यात होता हुआ पण्डितों में प्रधान पण्डित होकर राजलक्ष्मी से अत्यन्त सोहता है ॥ ३० ॥

विशालभालश्चाकर्णनीलोत्पलदलेक्षणः।
सुवृत्तमौलिश्चाजानुबाहुःस्यात्पुरुषश्च यः॥ ३१ ॥
तमाहुर्वै बुधा भूमौ मण्डलाखण्डलं नृपम्।
नासा तु सरला यस्य शिलातलनिभं च हृत्॥ ३२ ॥

जिसका भाल विशाल हो व जिसके लोचन नीलकमल के समान होकर कानोंपर्यन्त विस्तृत हों व जिसका शीश गोलाकार प्रतीत हो व जिसकी बाहु जानुओं पर्यन्त चली गई हों उस प्राणी को पण्डितों ने पृथ्वीमण्डल में अखण्डमण्डलाधीश कहा है और जिसकी नासिका (नाक) सीधी प्रतीत हो व जिसका हृदय शिलातलके समान हो तो वह प्राणी राजों में राजा होता है ॥ ३१ । ३२ ॥

नाभिगम्भीरातिमृदू चरणौ रक्तवर्णकौ।
राजराजः स तु भवेन्नात्र कार्या विचारणा॥ ३३ ॥
वंशाभिमानः समुदारचेताः प्रसन्नमूर्तिर्गुरुसाधुनम्रः।
अनीतिभीरुः शुभवाग्विलासः साम्राज्यलक्ष्मीं लभते मनुष्यः॥ ३४ ॥

जिसकी नाभि (तोंदी) गहिरी हो व जिसके चरण लाल वर्णवाले होकर कोमल से प्रतीत हों तो वह प्राणी राजों में राजा होता है इसमें विचार नहीं करना चाहिये और वह प्राणी अपने वंश में अभिमान रखनेवाला, उदारचित्त, प्रसन्नमूर्ति, गुरु व साधुओं में नम्रभाव रखनेहारा तथा अनीति से डरता हुआ शुभवाग्विलासी होकर साम्राज्यलक्ष्मी को पाता है ॥ ३३ । ३४ ॥

तिलः करतले यस्य विरलः स्याद्धनागमः।
तिलः पादे नरेशः स्याद्वाहनाङ्कसमन्वितः॥ ३५ ॥

जिसके करतल में तिलका निशान विरल प्रतीत हो तो उस प्राणी के लिये धन का आगम होता है और जिसके पादतल में तिलका निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी वाहन समूहों से संयुत होकर राजा होता है ॥ ३५ ॥

एतच्चिह्नं राजवंशोद्भवानां स्यान्मर्त्यानां तद्विदः संवदन्ति।
स्वल्पं कल्प्यं वान्यवंशोद्भवानां मर्त्यानां वा स्वीयवंशानुमानात्॥ ३६ ॥

सामुद्रिकशास्त्रोक्ता पण्डितगणोंने राजवंश में उपजे हुए प्राणियों का यह चिह्न क है और अन्यवंश में उपजे हुए प्राणियों के लिये थोड़ासा फल कहना चाहिये औ जो साधारणवंश में उपजे हैं उन प्राणियों का फल अपने वंश के अनुसार कहन चाहिये ॥ ३६ ॥

चिह्नानि यानि मुनिभिः प्रतिपादितानि व्यक्तानि तानि परिपूर्णफलप्रदानि
दक्षेकरे च चरणे खलु मानवानां धन्यानि चेदितरयोश्चसुलोचनानाम्॥३७

जिनके दाहिने करतल व पादतल में जिन चिह्नों (निशानों) को मुनियों ने कहा वे यदि साफ़ साफ़ प्रतीत हों तो उन प्राणियों के लिये निश्चय कर परिपूर्ण फलदायन होते हैं और यदि स्त्रियों के बायें करतल व पादतल में पूर्वोक्त निशान प्रतीत हों तो धन दायक होते हैं या प्रशंसनीय कहाते हैं ॥ ३७ ॥

इति शम्भुहोराप्रकाशे राजयोगादिः ॥

अथ वाल्मीकीयरामायणबालकाण्डटीकायाः समुद्धृत्य श्रीमन्महाराजाधिराजरामचन्द्रस्य सामुद्रिकीयराजलक्षणानि व्याख्यायन्त इत्याह—

कक्षः कुक्षिश्च वक्षश्च घ्राणस्कन्धौ ललाटिका ।
सर्वभूतेषु निर्दिष्टा उन्नतास्ते सुखप्रदाः ॥ ३८ ॥

[इति वररुचिः]

कांख (बगल) कोषि, वक्षस्स्थल, नासिका, स्कन्ध और ललाट ये सर्व प्राणिय में निर्दिष्ट हुए ऊंचे से प्रतीत हों तो सुखदायक होते हैं यह महर्षि वररुचि ने कहाहै ॥३८॥

शंखे ललाटश्रवणे ग्रीवा वक्षश्च हृत्तथा ।
उदरं* पाणिपादं च पृष्ठं दश महत्सुखम् ॥ ३९ ॥
दीर्घभ्रू बाहुमुष्कश्च चिरंजीवी महीपतिः ।
लोके विख्यातकीर्तिः सन्महाराजो भवेन्नरः ॥ ४० ॥

[इति ब्राह्मे]

जिसके ललाट की हड्डियां, भाल, कान, ग्रीवा, वक्षस्स्थल, हृदय, पेट, हाथ, पै और पीठ ये दश ऊंचे से प्रतीत हों तो उस प्राणी के लिये महासुखदायक होते हैं और

* भोगी धनी स्यादुदरे विशाले विशालकट्याश्च कटौ विशाले। बहुपुत्रदारोपि विशाल पादो धनान्वितः स्याद्य विशालचक्षुः ॥ १ ॥

जिसकी भौंहें, बाहें और अण्डकोष दीर्घाकार प्रतीत हों तो वह प्राणी पृथ्वी का स्वामी व चिरंजीवी होकर लोक में विख्यात कीर्तिवाला होता हुआ महाराजा होता है यह ब्रह्मपुराण में कहा है ॥ ३९ । ४० ॥

समवृत्तशिराश्चैवच्छत्राकारशिरास्तथा ।
एकच्छत्रां महीं भुङ्क्ते दीर्घमायुश्च विन्दति ॥ ४१ ॥

[इति नारदः]

जिसका शीश समान होकर गोलाकार प्रतीत हो तथा जिसका शीश छाता के आकार प्रतीत हो तो वह प्राणी एकछत्रवाली पृथ्वी को भोगता हुआ दीर्घायु को पाता है यह नारदजी ने कहा है ॥ ४१ ॥

ललाटे यस्य दृश्यन्ते चतुस्त्रिद्व्येकरेखिकाः ।
शतद्वयं शतं षष्टिस्तस्यायुर्विंशतिस्तथा ॥ ४२ ॥

[इति कात्यायनः]

जिसके ललाट में यदि चार रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी दो सौ वर्ष पर्यन्त जीता है व जिसके ललाट में तीन रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी सौवर्ष की आयु पाता है व जिसके ललाट में दो रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी साठि वर्ष पर्यन्त जीता है और जिसके ललाट में यदि एकरेखा प्रतीत हो तो वह प्राणी बीस वर्ष की आयु पाता है यह कात्यायन ने कहा है ॥ ४२ ॥

स्वरोगतिश्च नाभिश्च गम्भीरः स प्रशस्यते ।
षण्णवत्यङ्गुलोत्सेधो योनांशः स दिवौकसाम् ॥ ४३ ॥

[इति ब्राह्मे]

जिसका स्वर, गमन और नाभि (तोंदी) ये तीनों गंभीरभाव से प्रतीत हों तो वह प्राणी लोक में प्रशस्त होता है और जो छानवे अंगुल ऊंचासा प्रतीत हो तो वह प्राणी देवताओं का अंश कहाता है यानी वह देवता का अवतार मानाजाता है यह ब्रह्मपुराण में कहा है ॥ ४३ ॥

---

१ छत्राकारं नरेन्द्राणां शिरो दीर्घं च दुःखिनाम् । अधमानां च पापानां येषां स्थूलपुटं पुनः ॥ स्थूलशीर्षो नरो यस्तु धनवान्परिकीर्तितः । शूलाकारेण शीर्षेण मानवो मानवाधिपः ॥ विषमेण तु शीर्षेण नरेन्द्रः पुण्यहेतुकः । दीर्घशीर्णशिरो यस्तु दुःखिनो नात्र संशयः ॥ गजकुम्भशिरो यस्तु राजा स्यान्नात्र संशयः । शिरालमुन्नतं यस्य प्रशस्तं च शिरो यदि ॥ स राजा पृथिवीं भुङ्क्ते गजवाजिसमन्वितामिति ॥

भ्रुवौ नासापुटे नेत्रे कर्णावोष्ठौ च चूचुकौ ।
कूर्परौ मणिबन्धौ च जानुनी वृषणौ कटी ॥ ४४ ॥
करौ पादौ स्फिजौ यस्य समौ ज्ञेयः स भूपतिः ।
दानविख्यातकीर्तिः स्यादात्मज्ञानपरायणः ॥ ४५ ॥

जिसकी भौहें, नासापुट (नाकके पोर) नेत्र, कान, ओठ, कुचाग्र (चूचियों की पुनी) कोहनी , कब्ज़ा, घुटुना, अण्डकोष, कमर, हाथ, पैर और कूले ये समाना प्रतीत हों तो वह प्राणी पृथ्वीपाल होता है और दान से विख्यातकीर्तिवाला हु हुआ आत्मज्ञान में परायण रहता है ॥ ४४ । ४५ ॥

अथ पुनरपि वाल्मीकीयरामायणयुद्धकाण्डेऽष्टचत्वारिंशत्सर्गे श्रीमतीमहाराज्ञीसीता नैजानि यानि सामुद्रकीयराजलक्षणानि त्रिजटां प्रत्युक्तवती तान्याह—

इमानि खलु पद्मानि पादयोर्वै कुलस्त्रियः ।
आधिराज्येऽभिषिच्यन्ते नरेन्द्रैः पतिभिस्सह ॥ ४६ ॥

अहो मातः, त्रिजटे ! पैरों में ये जो पद्मों के निशान प्रतीत होते हैं उनसे कुलीन स्त्रि राज्यासन में नरेन्द्रपतियों के साथ निश्चयकर अभिषिक्त होती हैं यानी उन स्त्रियों पतियों के साथ राज्यासन में अभिषेक किया जाता है ॥ ४६ ॥

वैधव्यं यान्ति यैर्नार्य्योऽलक्षणैर्भाग्यदुर्लभाः ।
नात्मनस्तानि पश्यामि पश्यन्ती हतलक्षणा ॥ ४७ ॥

जिन अलक्षणों (कुलक्षणों) से दुर्लभ भाग्यवाली (अभागिनियां) स्त्रियां वि पनेको पाती हैं यानी रांड़ै होजाती हैं उनको मैं अपने शरीर में नहीं देखती हूं ऐसा क मूर्च्छित रामजी को तथा लक्षणोंको भी देखती हुई सीताजी हतलक्षणोंवाली होगई ॥ ४

सत्यनामानि पद्मानि स्त्रीणामुक्तानि लक्षणैः ।
तान्यद्य निहते रामे वितथानि भवन्ति मे ॥ ४८ ॥

लक्षणज्ञाता पण्डितों ने या लक्षणप्रतिपादकशास्त्रों ने स्त्रियों के करतल या पा में जो पद्मों के निशान सच्चेनामवाले यानी सफल कहे थे वे आज मेरे, रामजीके होजाने पर विफल होते हैं ॥ ४८ ॥

केशाः सूक्ष्माः समा नीला भ्रुवौ चासंहते मम ।

---

१ नाभिः स्थूला सूक्ष्मकेशी नातिदीर्घा सुमध्यमा । पीनस्तनी मृगाक्षी च सा नारी सु मेधत इति ॥ १ ॥

वृत्ते चारोमके जङ्घे दन्ताश्चाविरला मम ॥ ४९ ॥

मेरे केश (बाल) पतले व समानाकार होकर काले से प्रतीत होते हैं व मेरी भौंहें मिली हुई नहीं प्रतीत होती हैं व मेरी जांघें गोलाकार होकर लोमों से रहित देखी जाती हैं और मेरे दांत अविरल होकर कुन्दकली से प्रतीत होते हैं ॥ ४९ ॥

शङ्खे नेत्रे करौ पादौ गुल्फावूरू समौ चितौ।
अनुवृत्तनखाः स्निग्धाः समाश्चाङ्गुलयो मम ॥ ५० ॥

ललाट की हड्डियां, नेत्र, हाथ, पैर, गंठे और ऊरू ये समानाकार होकर बड़े से प्रतीत होते हैं व मेरे नख (नह) क्रमसे गोलाकार होकर चिकने से प्रतीत होते हैं और मेरी अँगुलियां समानाकार देखी जाती हैं ॥ ५० ॥

स्तनौ चाविरलौ पीनौ मामकौ मग्नचूचुकौ।
मग्ना चोत्सेधनी नाभिः पार्श्वोरस्कं च मेचितम् ॥ ५१ ॥

मेरे स्तन मिलेहुए व मोटे होकर घुसी ढेपुनियोंवाले देखे जाते हैं व मेरी नाभि (तोंदी) मग्नहुई ऊंची सी प्रतीत होती है और मेरी पसुरियाँ व छाती ऊंचा सा प्रतीत होता है ॥ ५१ ॥

मम वर्णो मणिनिभो मृदून्यङ्गरुहाणि च।
प्रतिष्ठितां द्वादशाभिर्मामूचुः शुभलक्षणाम् ॥ ५२ ॥

मेरा वर्ण मणि के समान प्रतीत होता है व मेरे रोवां कोमल से प्रतीत होते हैं तथा बायें पैर की पांचों अँगुलियां व दाहिने पैर की पांचों अँगुलियां व दोनों पैरों के तलवे इन बारह निशानों से प्रतिष्ठित मुझको मुनियों ने शुभ लक्षणोंवाली कहा है ॥ ५२ ॥

समग्रयवमच्छिद्रं पाणिपादं च वर्णवत्।
मन्दस्मितेत्येव च मां कन्यालाक्षणिका विदुः ॥ ५३ ॥

मेरे हाथ व पैरकी सारी अँगुलियां यवों के निशानों से अङ्कित होकर छेद रहित प्रतीत होती हैं व मेरे हाथ व पैर वर्णवाले देखे जाते हैं व मेरा हँसना मन्द प्रतीत होता है इसलिये कन्यालक्षणों के ज्ञाता पण्डितलोग मुझे शुभलक्षणोंवाली जानते हैं ॥ ५३ ॥

आधिराज्येभिषेको मे ब्राह्मणैः पतिना सह।
कृतान्तनिपुणैरुक्तं तत्सर्वं वितथीकृतम् ॥ ५४ ॥

---

१ वर्णाद् बहुतरो देहो देहाद् बहुतरः स्वरः। स्वराद् बहुतरं सत्त्वं सर्वं सत्त्वे प्रतिष्ठितमिति ॥ १ ॥

राज्यासन में पति के साथ मेरा अभिषेक होगा यह जो ज्योतिःशास्त्रवेत्ता ब्राह्मण ने कहा था वह सबही आज श्रीरामजी के न होने पर झूठासा किया गया ऐसा वचन सुनकर त्रिजटानामक राक्षसी ने कहा कि अहो सीते ! ये राम लक्ष्मण दोनों भाई अ- मृतक नहीं हुए, क्योंकि इनके मुखमण्डलों की प्रभा विनष्ट नहीं हुई है इसलिये जीते इनको मूर्च्छित जानना चाहिये यह सुनकर सीताजी ने कहा कि अहो मातः ! आपका वचन ऐसाही हो ऐसा कह पुष्पकारूढ़ रामदयिता सीताजी अशोकवाटिका में आ श्रीरामचन्द्रजी को चिन्तन करने लगीं ॥ ५४ ॥

इति स्त्रीणां राजयोगादिः ।

अथ सामुद्रिकीयायुर्दाययोगा व्याख्यायन्ते—

गूढसन्धिशिरास्नायुः संहताङ्गः स्थिरेन्द्रियः ।
उत्तरोत्तरसुक्षेत्रो यः स दीर्घायुरुच्यते ॥ ५५ ॥
गर्भात्प्रभृत्यरोगो यः शनैः समुपचीयते ।
शरीरज्ञानविज्ञानैः स दीर्घायुः समासतः ॥ ५६ ॥

जिसके शरीर में सन्धि, शिरा और स्नायु ये छिपे हुए प्रतीत हों व जिसका सा अङ्ग दृढ़ (मज़बूत) व इन्द्रियां स्थिर हों व शरीर उत्तरोत्तर सुदृश्य हो तो वह प्रा दीर्घायु कहा जाता है और जो गर्भ से लगाकर आरोग्य रहता हुआ धीरे धीरे बढ़ता व जिसका शरीर ज्ञान व विज्ञान से पूर्ण बना रहता है वह प्राणी दीर्घायु कहाता है संक्षेप से कहागया ॥ ५५ । ५६ ॥

मध्यमस्यायुषो ज्ञानमत ऊर्ध्वं निबोध मे ।
अधस्तादक्षयो यस्य लेखाः स्युर्व्यक्तमायताः ॥ ५७ ॥
द्वे वा तिस्रोऽधिका वापि पादौ कर्णौ च मांसलौ ।
नासाग्रमूर्ध्वं च भवेदूर्ध्वलेखाश्च पृष्ठतः ।
यस्य स्युस्तस्य परममायुर्भवति सप्ततिः ॥ ५८ ॥

अहो प्रिये ! इसके अनन्तर मध्यम आयुका ज्ञान मुझ से सुनिये कि जिसकी आंखों के नीचे व्यक्त व विस्तृत होकर दो या तीन या अनेक रेखायें प्रतीत हों व पैर तथा का मांसल हों व नासिका का अग्रभाग ऊंचासा प्रतीत हो व जिसकी पीठ में ऊर्ध्वरेखा तीत हो तो उस प्राणी की परम आयु सत्तरि ७० वर्षकी होती है ॥ ५७ । ५८ ॥

जघन्यस्यायुषो ज्ञानमत ऊर्ध्वं निबोध मे ।
ह्रस्वानि यस्य पर्वाणि सुमहच्चापि मेहनम् ॥ ५९ ॥
तथोरस्यवलीढानि न च स्यात्पृष्ठमायतम् ।
ऊर्ध्वश्च श्रवणौ स्थानान्नासा चोच्चा शरीरिणः ॥ ६० ॥
हसतो जल्पतो वापि दन्तमांसं प्रदृश्यते ।
प्रेक्षते यच्च विभ्रान्तं स जीवेत्पञ्चविंशतिम् ॥ ६१ ॥

अहो प्रिये ! अब अल्पायु का ज्ञान मुझसे सुनिये कि जिसके करतल में अँगुलियों की पर्वें छोटीसी हों व लिङ्ग बड़ा भारी प्रतीत हो व वक्षस्स्थल लोम व मांस से विहीन हो व पीठ चौड़ी न हो व कान यथास्थान स्थित व कुछेक ऊपर को चढ़े से प्रतीत हों व जिसकी नासिका (नाक) ऊंचीसी प्रतीत हो व जिसके हँसते व बात करते हुए दांतों का मांस देखा जाता हो और जो उन्मत्त की नाईं दीखता है वह प्राणी पचीस २५ वर्ष पर्यन्त जीता है ॥ ५९ । ६१ ॥

पादौ पाणी च पार्श्वे च पृष्ठं चैव तु चूचुकम् ।
रदनावदनं चैव स्कन्धौ चैव ललाटिका ॥ ६२ ॥
यस्यैतानि च दृश्यन्ते महान्ति च शरीरिणः ।
अङ्गुलीनां च सर्वासां पर्वाण्युच्चानि यस्य वै ॥ ६३ ॥
विशालौ च भुजौ यस्य नेत्रे स्यातां सुदीर्घके ।
भ्रुकुट्योस्स्तनयोर्मध्यं वक्षश्चैव तु विस्तृतम् ॥ ६४ ॥
जङ्घे च मेहनं चैव ग्रीवादेशश्च ह्रस्वकः ।
नाभिः स्वरश्च बुद्धिश्च गम्भीरा यस्य दृश्यते ॥ ६५ ॥
स्तनौ चानुन्नतौ स्यातां कर्णौ चैव तु रोमशौ ।
आयतौ विस्तृतौ यस्य मस्तकं चन्दनार्चितम् ॥ ६६ ॥
विशुष्कं हृदयं यस्य शरीरं शुष्यमाणकम् ।

---

१ न श्रीस्त्यजति रक्ताक्षं नार्थः कनकपिङ्गलम् । दीर्घबाहुं न चैश्वर्यं न सौख्यं प्रह-सन्मुखमिति ॥ १ ॥

२ स्वरो बुद्धिश्च नाभिश्च त्रिगम्भीरमुदाहृतम् । त्रयं यस्य तु विस्तीर्णं तस्य श्रीः सर्वदा सुखी ॥ उरः शिरो ललाटं च त्रिविस्तीर्णं प्रदृश्यत इति ॥

दीर्घायुषं विजानीयात्तं नरं धर्मधारिणम् ॥ ६७ ॥
एतल्लक्षणहीनो यो ह्यल्पायुः स प्रकीर्तितः ।
मिश्रलक्षणयुक्तो यो मध्यमायुरुदाहृतः ॥ ६८ ॥

जिसके पैर, हाथ, वगल, स्तनाग्र, दांत, मुख, कन्धे और भाल ये अतीव विशा होकर प्रतीत हों व सारी अँगुलियां व उनकी पौरें वड़ीसी प्रतीत हों व जिसकी भु विशाल प्रतीत हों व लोचन लम्बे से प्रतीत हों व भौहें व स्तनों का मध्यभाग त वक्षस्स्थल चौड़ासा प्रतीत हो व जांघ, लिङ्ग और ग्रीवा ये छोटे से प्रतीत हों नाभि (तोंद स्वर और बुद्धि ये गंभीरभावसे प्रतीत हों व दोनों स्तन ऊंचे न हों व कान लोमोंव होकर लम्बे व चौड़े से प्रतीत हों व जिसका मस्तक चन्दन से चर्चित हो व जिसका ह सूखगया हो व सारा शरीर सूखा हुआ प्रतीत हो तो उस धर्मधारी प्राणी को दीर्घ जानना चाहिये और जो प्राणी इन पूर्वोक्त लक्षणों से हीन देखा जावे तो वह अल्प कहाता है और जो प्राणी मिले लक्षणोंवाला प्रतीत हो तो उसको आचार्यों ने मध्यम कहा है ॥ ६२ । ६८ ॥

पुनरायुर्विबोधार्थमङ्गप्रत्यङ्गमुच्यते ।
हस्तपादादिकानीह ह्यङ्गानि कथितानि वै ॥ ६९ ॥
तदन्यानि च सर्वाणि प्रत्यङ्गानि विदुर्बुधाः ।
तेषां प्रमाणं वक्ष्यामि शृणुष्वावहिता प्रिये ॥ ७० ॥

अब फिर आयुर्दाय के परिज्ञानार्थ अङ्ग व प्रत्यङ्ग कहेजाते हैं तहां हस्त, पाद व मस आदि अङ्ग कहे व उनसे अन्य समस्त अवयवों को पण्डितों ने प्रत्यङ्ग जतलाया है उन प्रमाण मैं कहूंगा अहो प्रिये ! सावधान होकर सुनिये ॥ ६९ । ७० ॥

पादाङ्गुष्ठप्रदेशिन्योरन्तरं द्व्यङ्गुलं मतम् ।
प्रदेशिन्याः कनिष्ठान्तं ज्ञेयं मानं मनीषिभिः ॥ ७१ ॥
यथोत्तरं प्रमाणं तु हीनं पञ्चमभागकैः ।
पादप्रपादतलयोरायतं चतुरङ्गुलम् ॥ ७२ ॥

पैरों का अँगूठा व तर्जनी इन दोनों के अन्तर (मध्यस्थल) का प्रमाण दो अं

---

१ अतिमेधातिकीर्तिश्च विक्रमश्च सुखानि च । प्रथमे वयसि दृश्यन्ते ह्यल्पायु भवेन्नरः ॥ १ ॥

माना है, मध्यमा का प्रमाण तर्जनी के पांच भाग का चार भाग कहा है व अनामिकाकी दीर्घता का मान मध्यमा के पांच भाग का चार भाग है व कनिष्ठा की दीर्घता का प्रमाण अनामिका के पांच भाग का चार भाग है व पैरों तथा पदाग्रों के तलों की दीर्घता का मान चार अंगुल कहा है ॥ ७१ । ७२ ॥

पञ्चाङ्गुलप्रमाणेन विस्तृतं प्रोच्यते बुधैः ।
पञ्चाङ्गुलप्रमाणेन पार्ष्ण्योरायतमुच्यते ॥ ७३ ॥
चतुर्भिरङ्गुलैः प्रोक्तं विस्तृतं बुद्धिमत्तरैः ।
पादयोराततं ज्ञेयं चाङ्गुलैर्मनुसंमितैः ॥ ७४ ॥

पांच अंगुल के प्रमाण से पण्डितलोग विस्तार कहते हैं व एड़ियों की दीर्घता पांच अंगुल के प्रमाण से कही जाती है व उनका विस्तार बुद्धिमानों ने चार अंगुल कहा है और पैरों की दीर्घता चौदह अंगुल जानना चाहिये ॥ ७३ । ७४ ॥

पादगुल्फं समारभ्य यावज्जानु प्रदृश्यते ।
तन्मध्यविस्तृतं ज्ञेयमङ्गुलैर्मनुसंमितैः ॥ ७५ ॥
अष्टादशाङ्गुलैर्जङ्घा चायता मुनिसंमता ।
जानूपरिष्टाद्द्वात्रिंशदङ्गुलैर्दीर्घमानकम् ॥ ७६ ॥

पैरों के गण्ठों से लेकर जहां तक जानु (घुटुन्) देखे जाते हैं उनके बीच का विस्तार चौदह अंगुल जानना चाहिये और मुनियों से मानी मोटी जङ्घायें चौड़ी अठारह अंगुल दीर्घ कहाती हैं व जानुओं के ऊपर दीर्घता का प्रमाण बत्तीस अंगुल कहा है ॥ ७५ । ७६ ॥

एवं प्रमाणं पञ्चाशदङ्गुलं प्रोच्यते बुधैः ।
ऊरुमानप्रमाणेन तुल्या जङ्घा च कीर्तिता ॥ ७७ ॥
वृषणौ चिबुके दन्ता तथैवं कर्णमूलकम् ।
नासापुटौ च नयने तेषां मध्यं च द्व्यङ्गुलम् ॥ ७८ ॥

इसप्रकार सामुद्रिकशास्त्रवेत्ता पण्डितलोग पचास अंगुल प्रमाण कहते हैं और जंघायें ऊरुवों के मान के प्रमाण से समान कही जाती हैं व अण्डकोष, चिबुक (ठुड्ढी), दांत, कर्णमूल, नासापुट और नेत्र इन्हों का मध्यस्थल दो अङ्गुल कहाता है ॥ ७७ । ७८ ॥

मेहनं वदनं चैव नासाकर्णौ ललाटिका ।
एषां चैव शिरोधेश्च उच्चता चतुरङ्गुला ॥ ७६ ॥
चक्षुषोरायतं ज्ञेयमङ्गुलैर्वेदसंमितैः ।
लिङ्गतो यावती नाभिर्नाभितो हृदयं तथा ॥ ८० ॥

लिङ्ग, मुख, नासिका, कान, ललाट और ग्रीवा इन्हीं की उच्चता चार अंगुल कही है और नेत्रों की दीर्घता चार अंगुल कही जाती है व लिङ्ग से जहां तक तोंदी व तों से जहांतक हृदय रहता है ॥ ७६ । ८० ॥

हृदयाद्यावती ग्रीवा तन्मानं द्वादशाङ्गुलम् ।
मध्यं स्तनद्वयस्यैव दीर्घता वदनस्य च ॥ ८१ ॥
द्वादशाङ्गुलमानेन कथिता च सदा बुधैः ।
प्रकोष्ठान्मणिबन्धान्तं स्थौल्यं स्याद्द्वादशाङ्गुलम् ॥ ८२ ॥

हृदय से जहां तक ग्रीवा (घींच) रहती है उन सबों का मान प्रत्येक बारह अंगुल का है व दोनों स्तनों का अन्तर (मध्यभाग) तथा मुख की दीर्घता पण्डितों ने बारह अंगु कही है और प्रकोष्ठ से मणिबन्ध (कब्ज़े) पर्यन्त स्थूलता (मोटापन) बारह अंगु कहाती है ॥ ८१ । ८२ ॥

नाभेर्निम्नतलस्यापि विस्तृतं षोडशाङ्गुलम् ।
कूर्परात्स्कन्धदेशान्तं चान्तरं षोडशाङ्गुलम् ॥ ८३ ॥
हस्तयोर्दीर्घता ज्ञेया चतुर्विंशाङ्गुला बुधैः ।
बाह्वोश्चैव प्रमाणं तु द्वात्रिंशदङ्गुलं स्मृतम् ॥ ८४ ॥

नाभि के निचले भाग (बस्तिदेश) का विस्तार सोलह अंगुल कहाता है व कोहनी से कन्धों तक बीच का भाग सोलह अंगुल होता है व हाथों की दीर्घता चौबीस अंगुल पण्डितों को जानना चाहिये और बाहुओं (भुजाओं) का प्रमाण बत्तीस अंगुल कहा है ॥ ८३ । ८४ ॥

ऊर्वोश्चैव तथा ज्ञेयं प्रमाणं पूर्वसंमतम् ।
मणिबन्धात्कूर्परान्तं प्रमाणं षोडशाङ्गुलम् ॥ ८५ ॥
दैर्घ्यं पाणितलस्यैव षडङ्गुलमितं स्मृतम् ।

एवन्तु विस्तृतं प्रोक्तमङ्गुलैर्वेदसंमितैः ॥ ८६ ॥

ऊरुवों का प्रमाण जो कि पहले संमत होचुका है यानी बत्तीस अंगुल जानना चाहिये व करतल की दीर्घता छः अंगुल कही है ऐसेही करतल का विस्तार चार अंगुल कहा है ॥ ८५ । ८६ ॥

अङ्गुष्ठमूलादारभ्य यावत्स्याच्च प्रदेशिनी ।
तदन्तरं बुधैर्ज्ञेयमङ्गुलद्वयमानकम् ॥ ८७ ॥
कर्णतो लोचनोपान्तं पञ्चाङ्गुलमितं स्मृतम् ।
तर्जन्यनामिकाङ्गुल्योरन्तरं सार्धद्व्यङ्गुलम् ॥ ८८ ॥

अँगूठा की मूल से लेकर जहां तक तर्जनी रहती है उनका मध्यस्थल पण्डितों को दो अंगुल जानना चाहिये व कानों से आंखों की कोरों तक का मान पांच अंगुल कहा है तर्जनी व अनामिका का अन्तर (मध्यभाग) ढाई अंगुल कहाता है ॥ ८७ । ८८ ॥

कनिष्ठाङ्गुष्ठपर्यन्तमन्तरं सार्धत्र्यङ्गुलम् ।
ग्रीवाया वदनस्यापि विस्तृतं द्वादशाङ्गुलम् ॥ ८९ ॥
नासाच्छिद्रप्रमाणन्तु त्रिभागाङ्गुलसंमितम् ।
चक्षुषोस्तारकामानं वेदभागात्रिभागकम् ॥ ९० ॥

कनिष्ठा से अँगूठा पर्यन्त के अन्तर (मध्यस्थल) का प्रमाण साढ़े तीन अङ्गुल कहाता है, ग्रीवा और वदन (मुहँ) का विस्तार बारह अंगुल कहाजाता है व नासिका के छेदों का प्रमाण एक अंगुल के चार भाग का तीन भाग कहाता है और नेत्रों के तारा का प्रमाण नेत्र प्रमाण के चार भाग का तीन भाग होता है ॥ ८९ । ९० ॥

तारयोर्नवमो भागः पुत्तल्योर्मानमुच्यते ।
मस्तकन्तु समारभ्य केशान्तं यावदेवहि ॥ ९१ ॥
एकादशाङ्गुलैरुक्तमन्तरं बुद्धिमत्तरैः ।
मस्तकात्पृष्ठतो भागे केशान्तं यावदेवहि ॥ ९२ ॥

ताराओं का नववां भाग पुतलियों का प्रमाण कहाजाता है मस्तक से सन्मुख केशान्तों का मध्यस्थल बुद्धिमानों ने ग्यारह अंगुल कहा है मस्तक से पीछे की तरफ़ जहांतक बाल रहते हैं ॥ ९१ । ९२ ॥

तन्मानन्तु बुधैरुक्तमङ्गुलैर्दशभिः प्रिये ।
कर्णतो घाटिकामध्यं सप्ताङ्गुलकविस्तृतम् ॥ ६३ ॥
कान्ताकटिप्रमाणेन पूरुषाणामुरः स्मृतम् ।
अष्टादशाङ्गुलैः प्रोक्तं रमणीनामुरो बुधैः ॥ ६४ ॥

उसका प्रमाण पण्डितगणों ने दश अंगुल कहा है अहो प्रिये ! कानों से घांटा पर्यन्त मध्यस्थल के विस्तार का प्रमाण सात अंगुल कहाजाता है और स्त्रियों के कमर का प्रमाण चौबीस अंगुल माना है उसी प्रमाण से पुरुषों का वक्षःस्थल कहाजाता है और पण्डितों ने स्त्रियों के वक्षःस्थल का प्रमाण अठारह अंगुल कहा है ॥ ६३ । ६४ ॥

नराणां कटिदेशस्य[१] मानं चाष्टादशाङ्गुलम् ।
एवं सर्वशरीरस्य मानं विंशाधिकं शतम् ॥ ६५ ॥
पञ्चविंशे ततो वर्षे पुमान्नारी तु षोडशे ।
समत्वागतवीर्यौ तौ जानीयात्कुशलः सुधीः ॥ ६६ ॥

पुरुषों की कमर का प्रमाण अठारह अंगुल कहा है इस प्रकार समस्त शरीर का प्रमाण एकसौ बीस अंगुल मुनियों ने बतलाया है इस प्रमाण का विचार तभी करना चाहिये जब कि पुरुष पचीस वर्ष का हो और स्त्री सोलह वर्ष की हो व समानता से वीर्य व बल आचुका हो उस समय सामुद्रिकशास्त्र में प्रवीण पण्डित पूर्वोक्त प्रमाण का विचार करै ॥ ६५ । ६६ ॥

देहः स्वैरङ्गुलैरेष यथावदनुकीर्तितः ।
युक्तप्रमाणेनानेन पुमान्वा यदि वाङ्गना ॥ ६७ ॥
दीर्घमायुरवाप्नोति वित्तं च महदृच्छति ।
मध्यमैर्मध्यमे वायुर्वित्तहीनैस्तथावरम् ॥ ६८ ॥

अपने अंगुलों से यह देह यथावत् कीर्तन किया गया है स्त्री या पुरुष जो पूर्वोक्त प्रमाणों से संयुक्त हो तो दीर्घायुको भोगता हुआ बड़े धनको पाता है और जो स्त्री अथवा पुरुष मध्यम प्रमाणों से प्रतीत हो तो वह मध्यमायु को भोगता हुआ मध्यम धनको पाता

---

१ कटिर्विशाला बहुपुत्रभोगी विशालहस्तो नरपुङ्गवः स्यात् । उरो विशालं धनधान्यभागी शिरोविशालं नरपूजितः स्यादिति ॥ १ ॥

है और जो पूर्वोक्त प्रमाणों से हीनलक्षणवाला प्रतीत हो तो वह अल्पायु को भोगता हुआ थोड़ेसे धनको पाता है ॥ ९७ । ९८ ॥

इत्यायुर्दाययोगाः ॥

अथ पाण्यादीनां परीक्षाविचारमाह—

आदौ पाणितले रेखा जानौ पादे तथैव च ।
जङ्घयोर्लक्षणं चैव उच्चस्य चिबुकस्य च ॥ ९९ ॥
गण्डयोः पार्श्वयोश्चैव ललाटस्य च लक्षणम् ।
सर्वाङ्गाननानासानां दन्तानां लक्षणं तथा ॥ १०० ॥

अब हाथ आदि के देखने का विचार कहते हैं कि अहो प्रिये ! सामुद्रिकशास्त्रवेत्ता पण्डित को उचित है कि पहले पाणितल की रेखा को देखे तदनन्तर घुटनू, पैर और जङ्घाओं के लक्षण का विचार करै फिर ठुड्ढी, गाल, बगल और भाल का लक्षण देखे वैसेही समस्त अङ्ग, मुख और दांतों के लक्षणों की परीक्षा करै ॥ ९९ । १०० ॥

मयेदमुक्तं सति ! पूरुषाणां तथाङ्गनानां च सुलोचनानाम् ।
पठन्तु सभ्याः सुधियो द्विजेन्द्रा भवन्तु पूज्या नृपसंमताश्च ॥ १ ॥

अहो प्रिये ! पुरुषों तथा सुनयनी नारियों का यह लक्षण मैंने कहा इसको जो ब्राह्मण लोग पढ़ेंगे वे अच्छी बुद्धिवाले व सभा में चतुर तथा सर्वजनों से पूजनीय होकर राजा लोगों से माने जावेंगे ॥ १ ॥

इदं सामुद्रिकं शास्त्रं विष्णुना भाषितं पुरा ।
तत्सर्वं वर्णितं देवि ! किं पुनः श्रोतुमिच्छसि ॥ २ ॥
तच्छ्रुत्वा तु महादेवी महद्धर्षमवाप सा ।
प्रहृष्टवदना देवी शंकरं प्रत्युवाच ह ॥ ३ ॥

अहो देवि ! पुरातन समय विष्णु भगवान्जी ने इस सामुद्रिकशास्त्र को कहा है उस समस्त को मैंने तुमसे कहा अब फिर क्या सुनना चाहती हो उस वचन को सुनकर वे महादेवीजी बड़े हर्ष को प्राप्त हुईं व हर्षित वदनवाली होकर भक्तसुखदायक निजनायक शंकरजी से बोलीं ॥ २ । ३ ॥

त्वन्मुखाब्जाच्छ्रुतं नाथ नृनारीलक्षणं समम् ।
य इदं पठन्तु विद्वांसश्चाभ्यसन्तु दिवानिशम् ॥ ४ ॥

धनं धान्यं सुखं सर्वं लभन्तां कीर्तिमुत्तमाम् ।
न तेषां जायते किञ्चिद्दुर्लभं त्वत्प्रसादतः ॥ ५ ॥

अहो नाथ ! आपके वदनारविन्द से समस्त नर नारी लक्षणों को मैंने सुना जो द्वान् लोग इसको पढ़ेंगे व दिन राति अभ्यास करेंगे वे लोग धन, धान्य व समग्र तथा उत्तम कीर्ति को पावेंगे और आपकी प्रसन्नता से उन लोगों को कुछ दुर्लभ न रहता है यानी वे लोग सभी पदार्थ को प्राप्त होते हैं ॥ ४ । ५ ॥

इति श्रीबृहत्सामुद्रिके पण्डितशक्तिधरसंकलितं भाषाभाष्यं समाप्तिमगादिति शिवम् ॥

इति सामुद्रिकशास्त्रस्य पूर्वार्धे प्रथमोऽङ्कः समाप्तिं प्रफाण ॥





सामुद्रिकशास्त्रम्

पूर्वार्धः

द्वितीयोऽङ्कः सटीकः ।

पण्डितवरशक्तिधरशुक्लसंगृहीतम्–श्रीमद्रायबहादुर
प्रयागनारायणभार्गवेण सर्वसुखाय
स्वकीयव्ययेन

प्रथमावृत्तौ

लक्ष्मणपुरे

बाबू मनोहरलाल भार्गव बी. ए., सुपरिंटेंडेंट इत्युपाधिधारिणः प्रबन्धेन
मुंशी नवलकिशोर सी. आई. ई., मुद्रणालये मुद्राप-
यित्वा प्राकाश्यं नीतम् ।

सन् १९१६ ई० ।

अथ सामुद्रिकशास्त्रस्य पूर्वार्द्धे द्वितीयाङ्कस्य सूचीपत्रम् ।

इति सामुद्रिकपूर्वार्द्धद्वितीयाङ्कस्यसूचीपत्रम्

पूर्व

चिह्न नं० १

कनिष्ठिका ५
अनामिका ४
मध्यमा ३
तर्जनी २
अङ्गुष्ठ १

दक्षिण
उत्तर
पश्चिम

चिह्न नं० २

मू० मू० मू० मू०
बुध
सूर्य
शनि
बृहस्पति
आयु रेखा
मातृ रेखा
पितृ रेखा
चंद्र
शुक्र

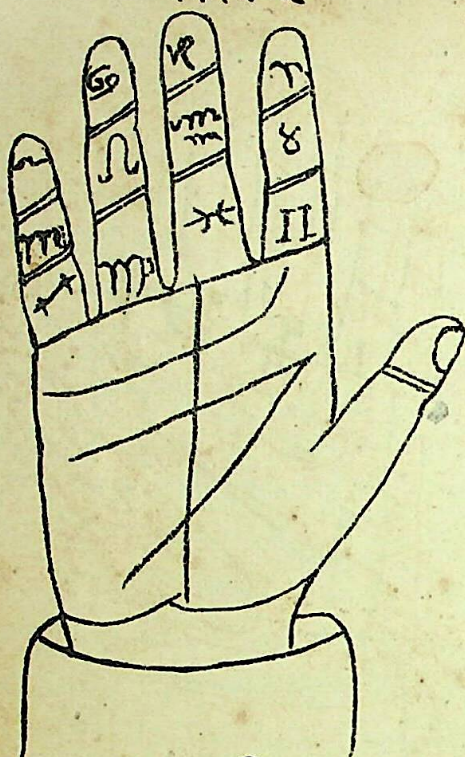
क० अ० म० त०
चिह्न नं० ३
अङ्गुष्ठ
बुध
शु०
चं०
शुक्र

चिह्न नं० ४

मेष
वृष
मिथुन
कर्क
सिंह
कन्या
मकर
कुंभ
मीन
तुला
वृश्चिक
धन

ऊर्ध्व रेखा या भाग्य रेखा.

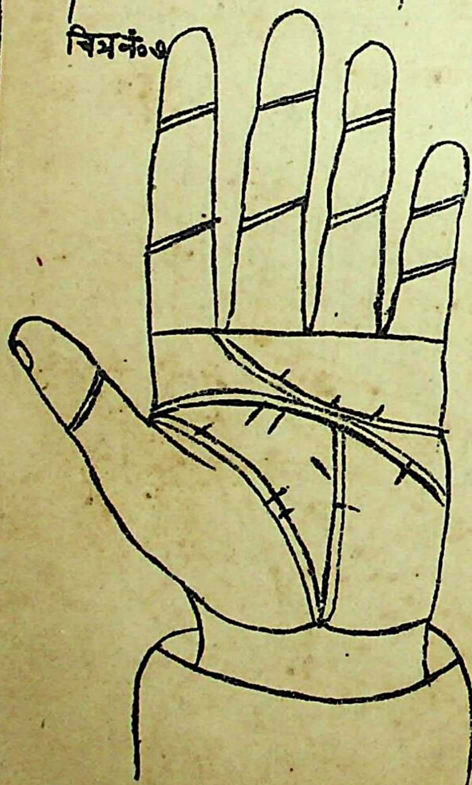
चित्र नं. ५



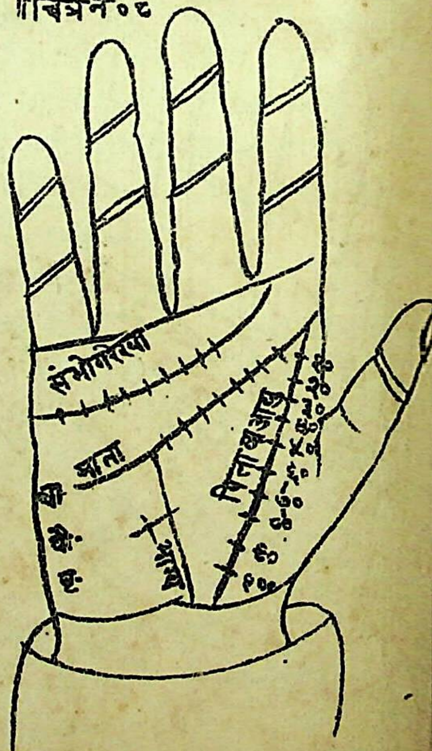
चित्र नं. ६



चित्र नं. ७



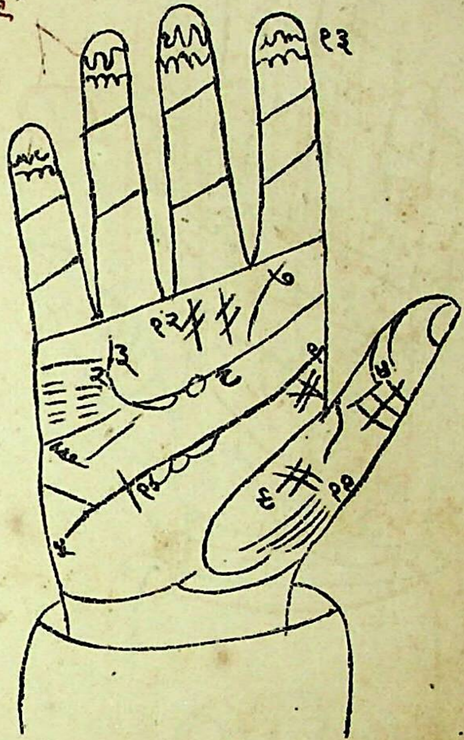
चित्र नं. ८



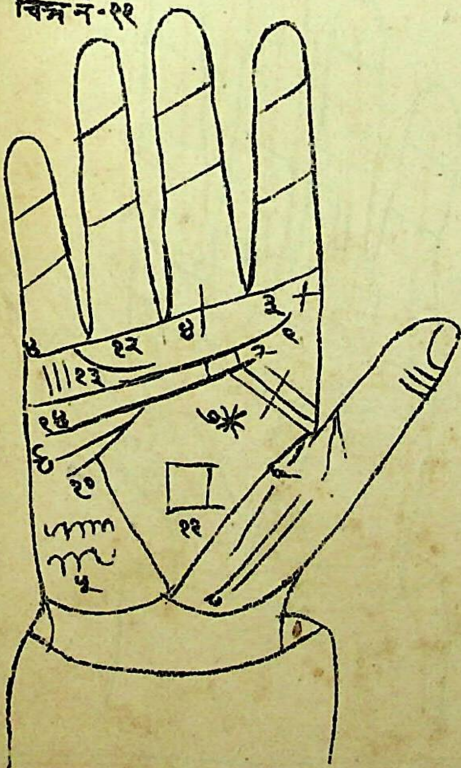
चित्र नं॰ ९



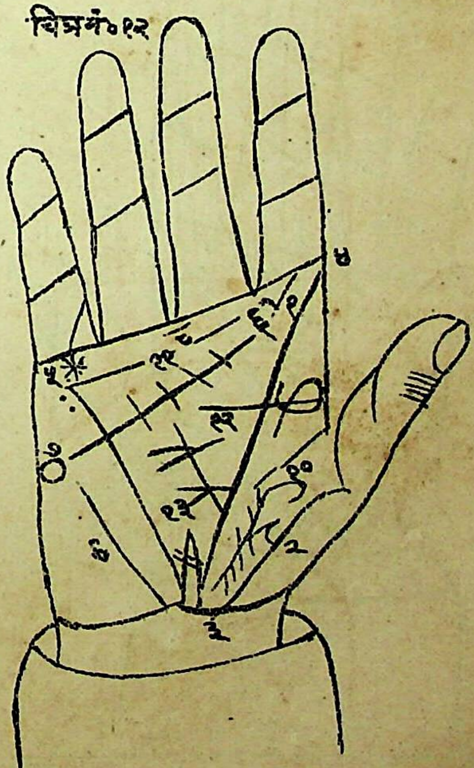
चित्र नं॰ १०



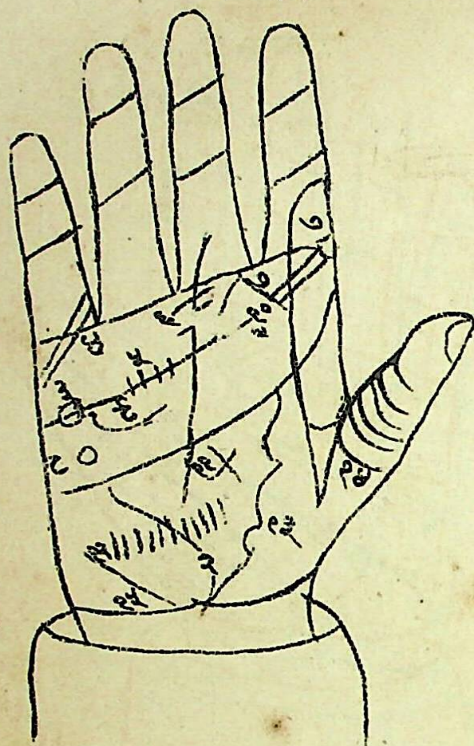
चित्र नं॰ ११



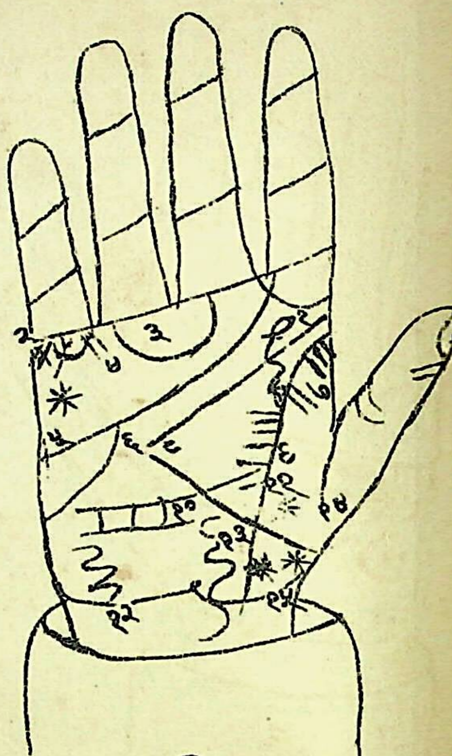
चित्र नं॰ १२



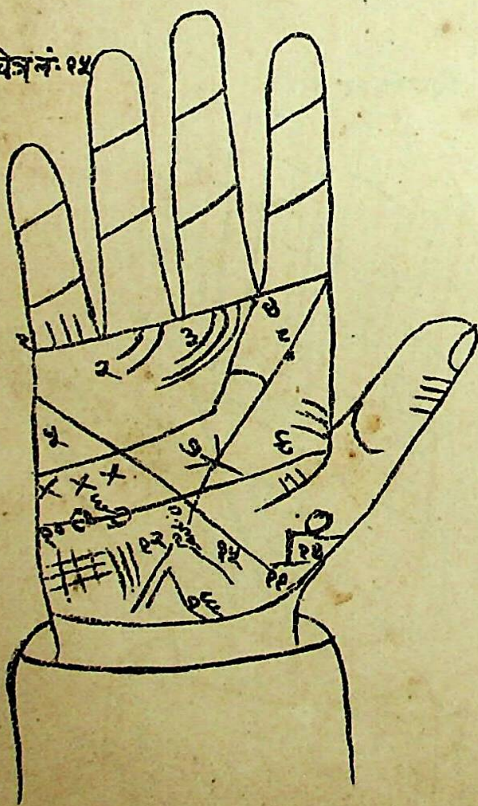
चित्र नं. १३



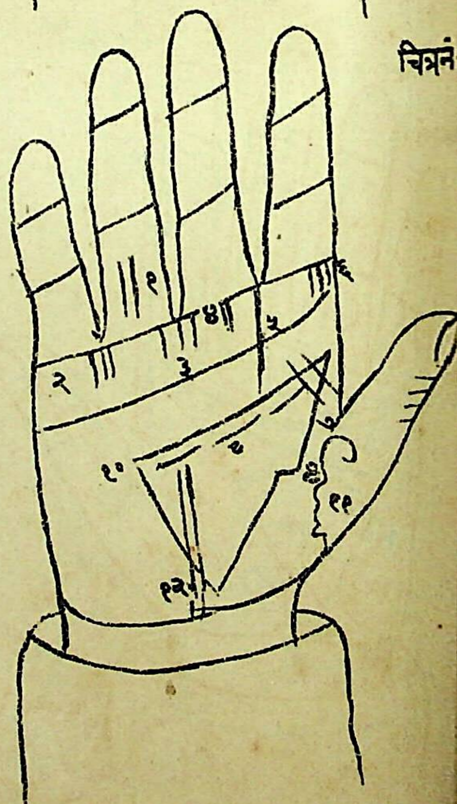
चित्र नं. १४



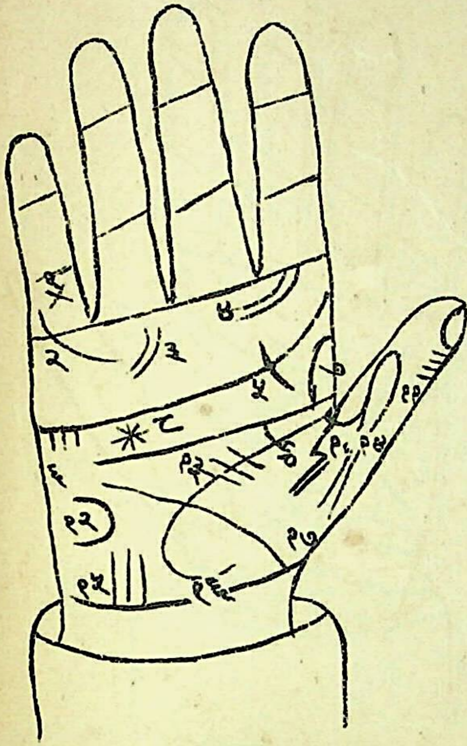
चित्र नं. १५



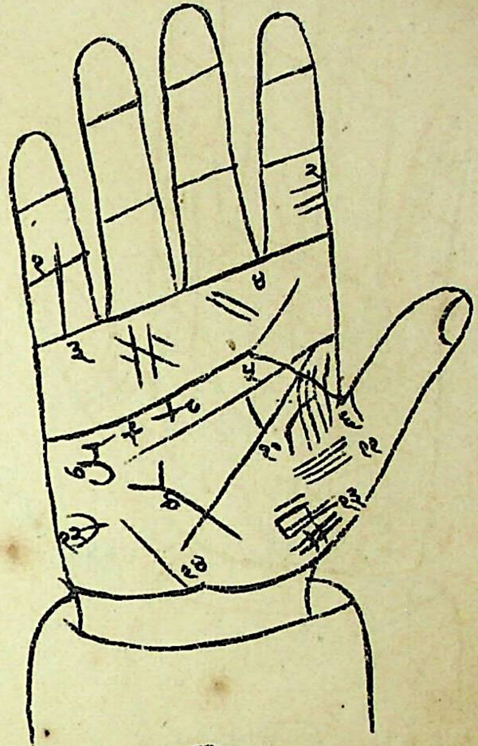
चित्रनं



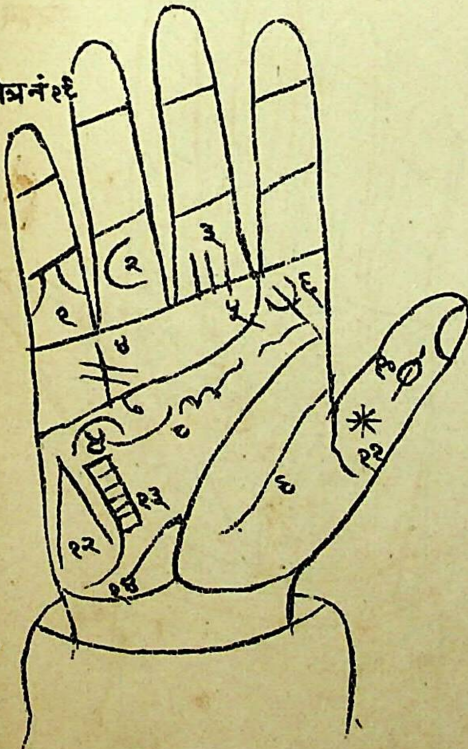
चित्र नं० १७



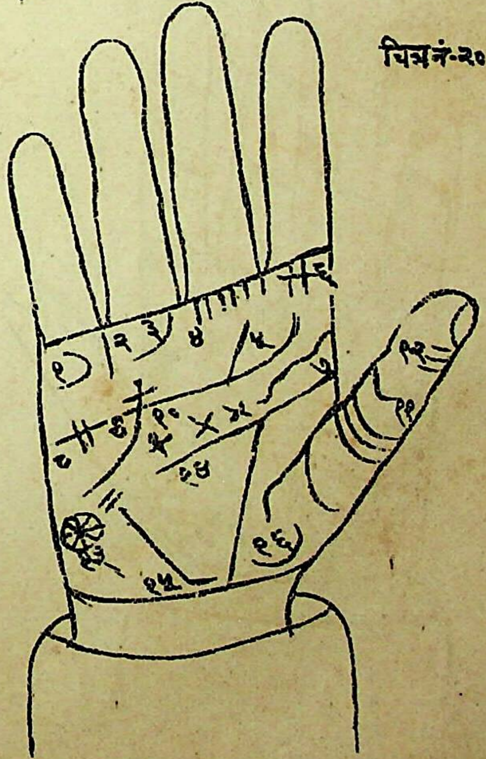
चित्र नं० १८

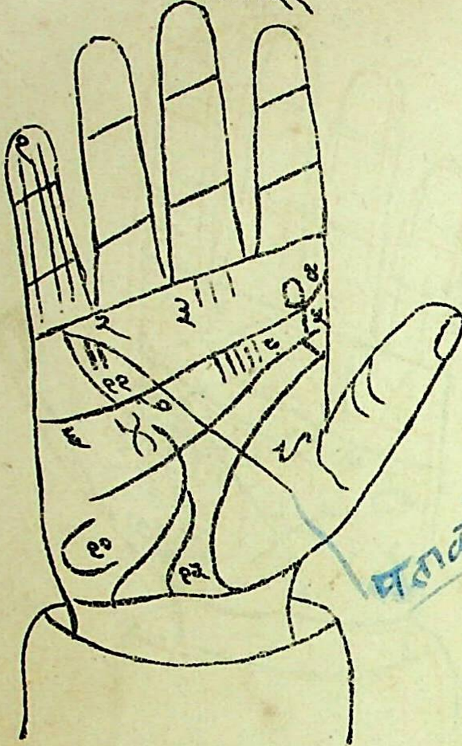


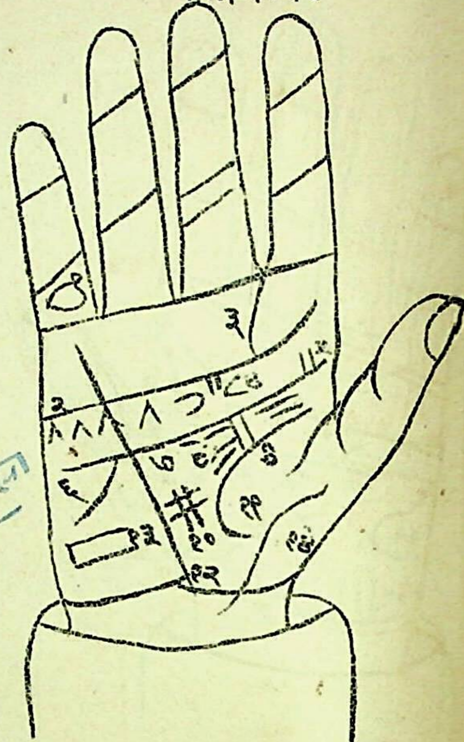
चित्र नं० १९

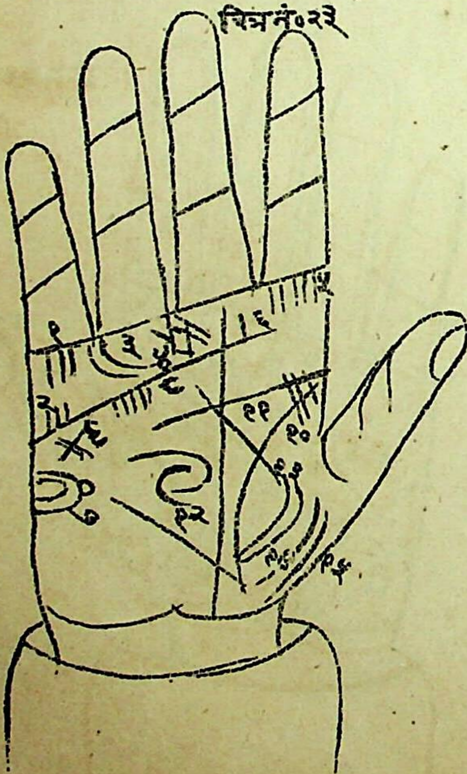


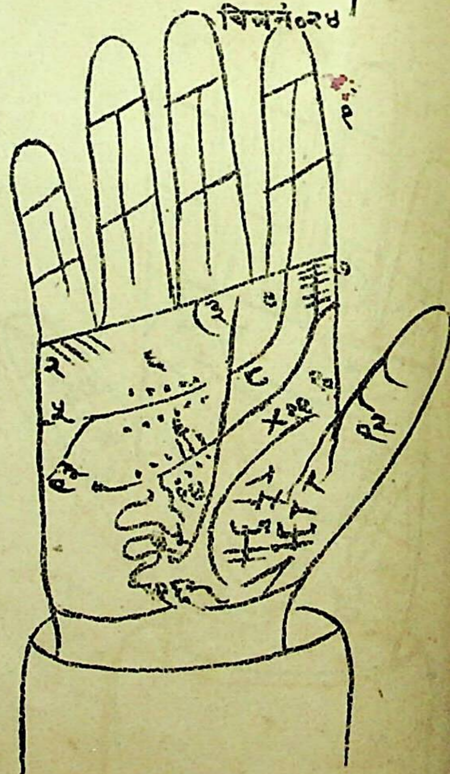
चित्र नं० २०



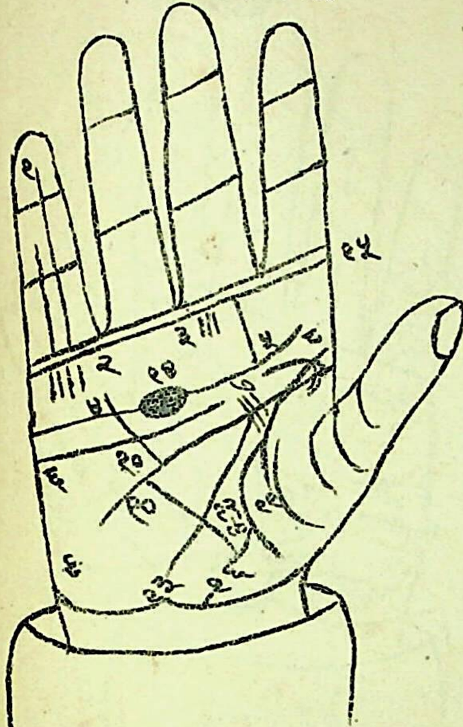

चित्र नं० २१


चित्र नं० २२

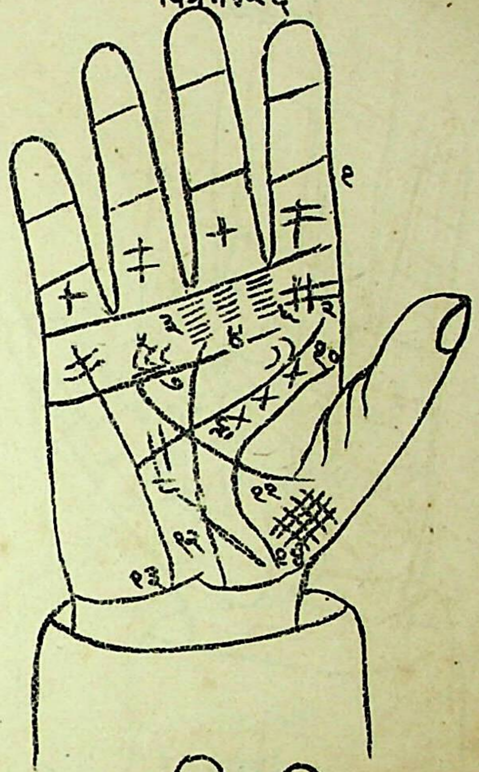

चित्र नं० २३


चित्र नं० २४

चित्र नं० २५



चित्र नं० २६

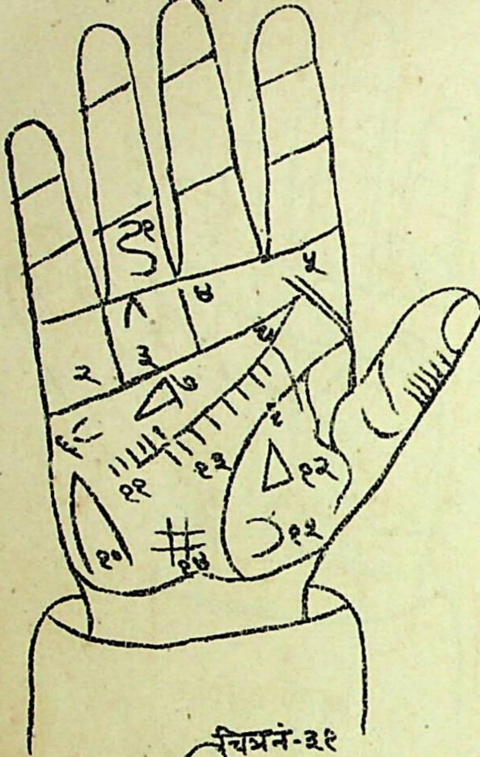


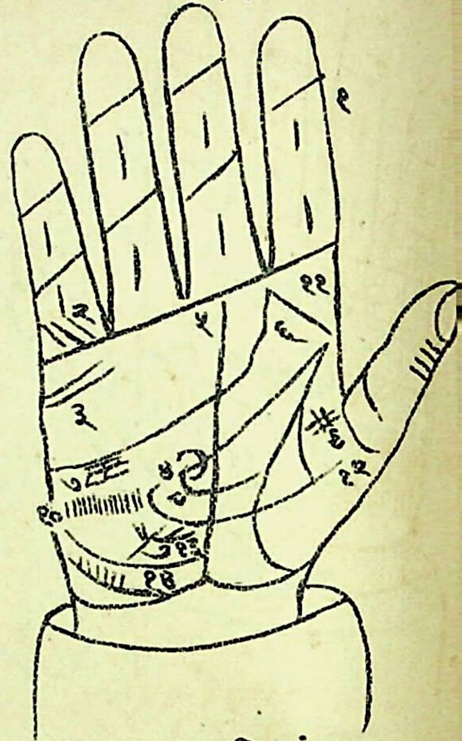
चित्र नं० २७

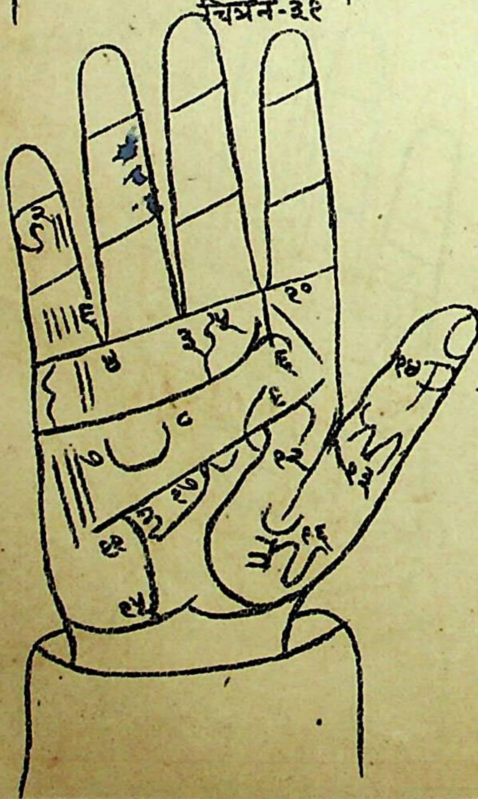


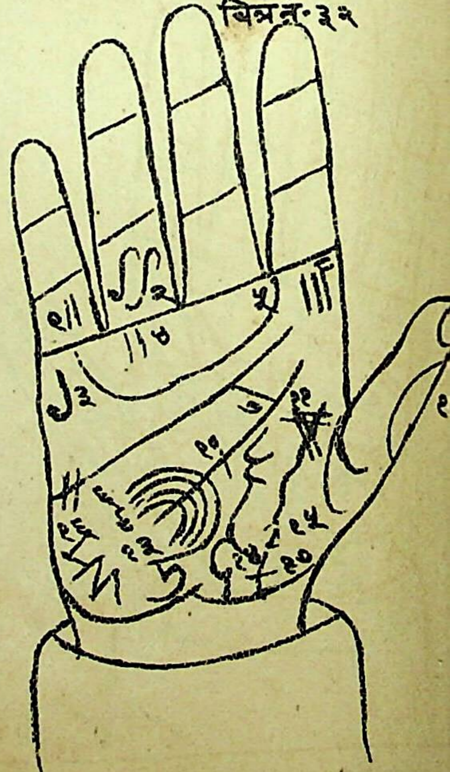
चित्र नं० २८



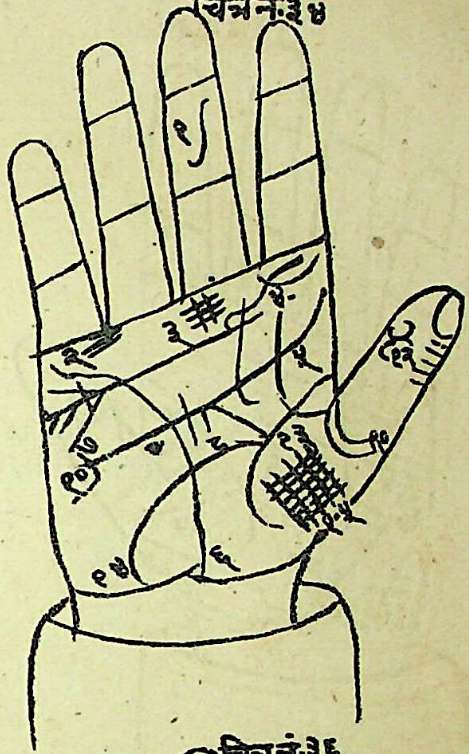

चित्र नं० २९


चित्र नं० ३०

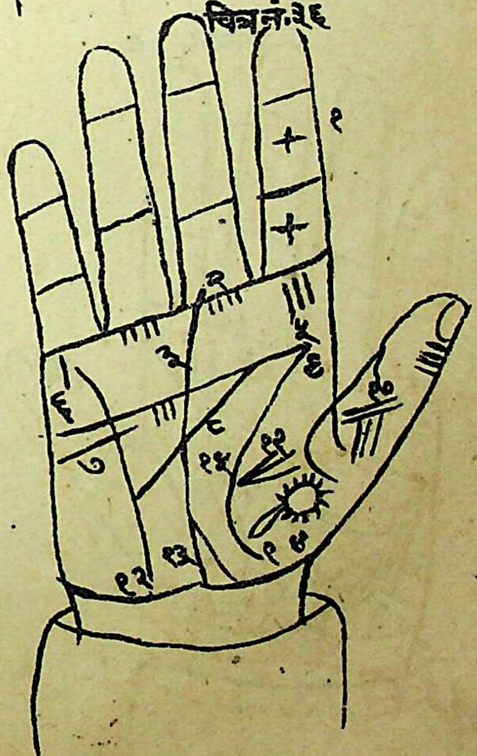

चित्र नं० ३१


चित्र नं० ३२

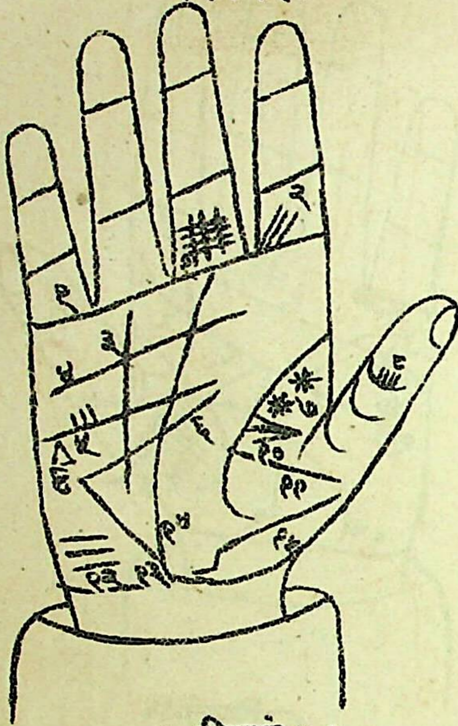

चित्र नं. ३३


चित्र नं. ३४

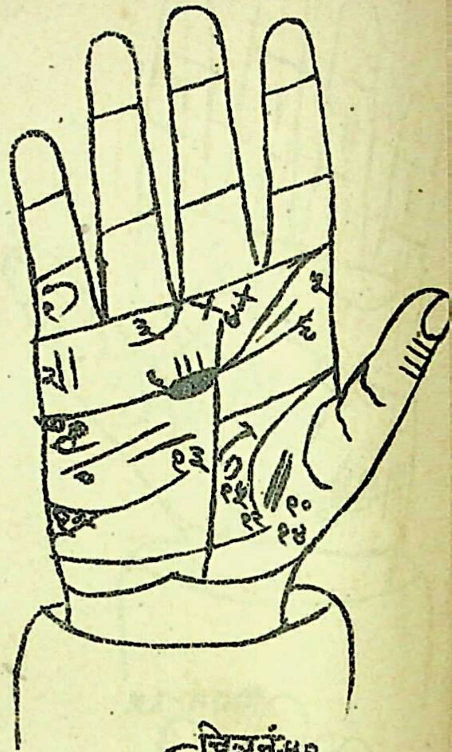

चित्र नं. ३५


चित्र नं. ३६

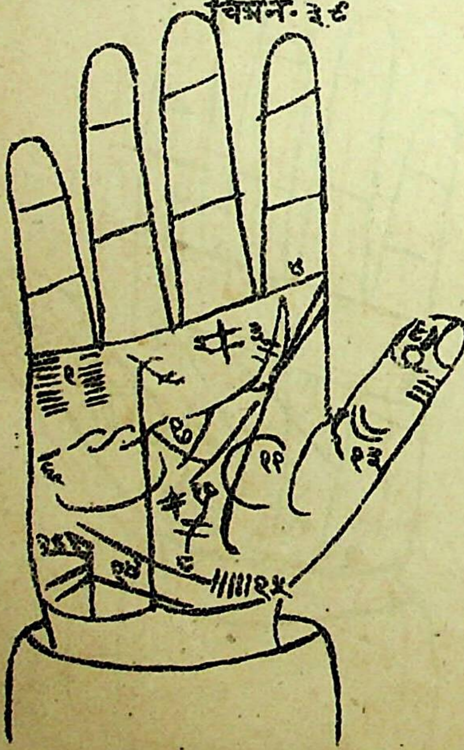
चित्र नं.३७



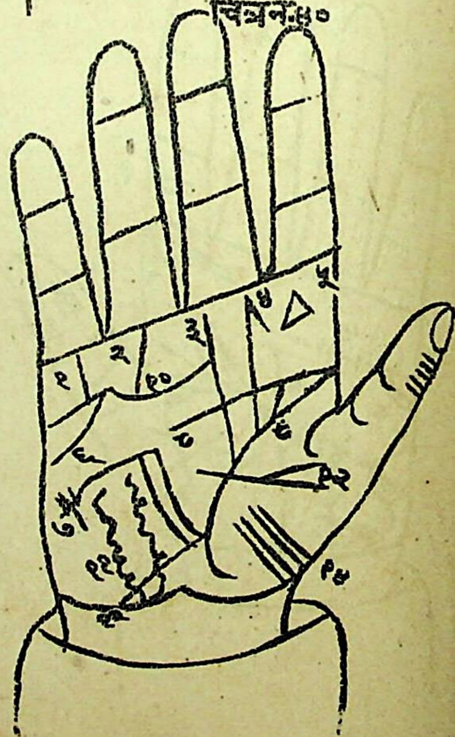
चित्र नं. ३८

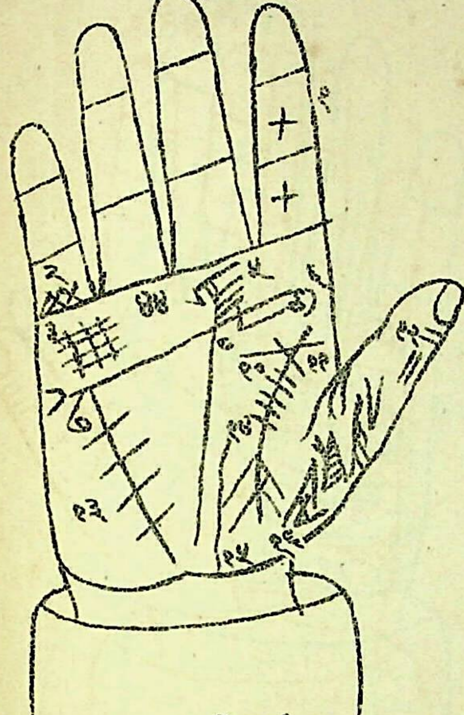


चित्र नं. ३९

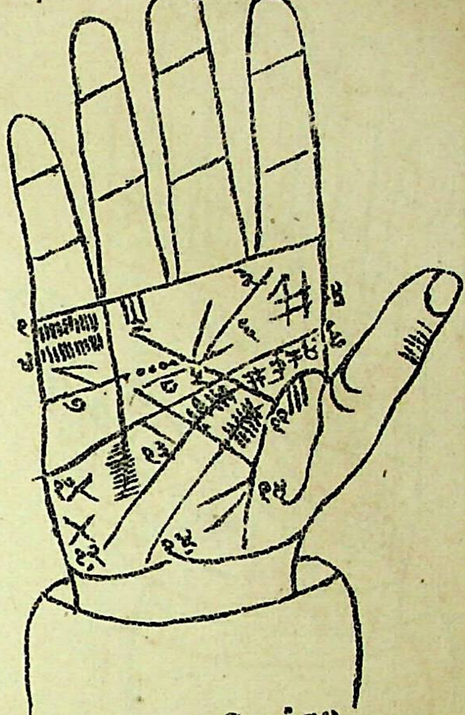


चित्र नं. ४०

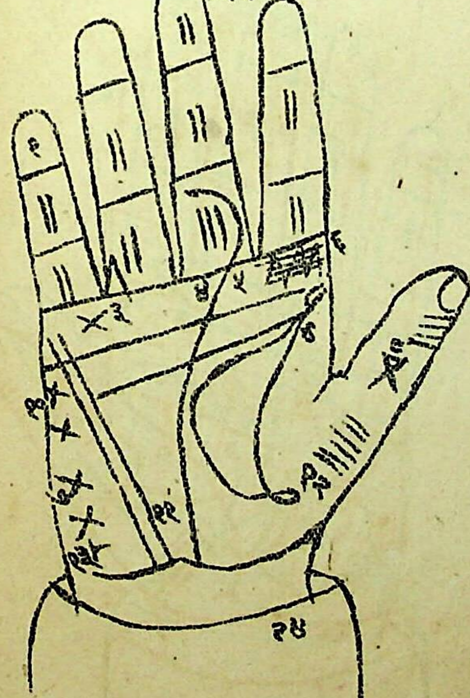




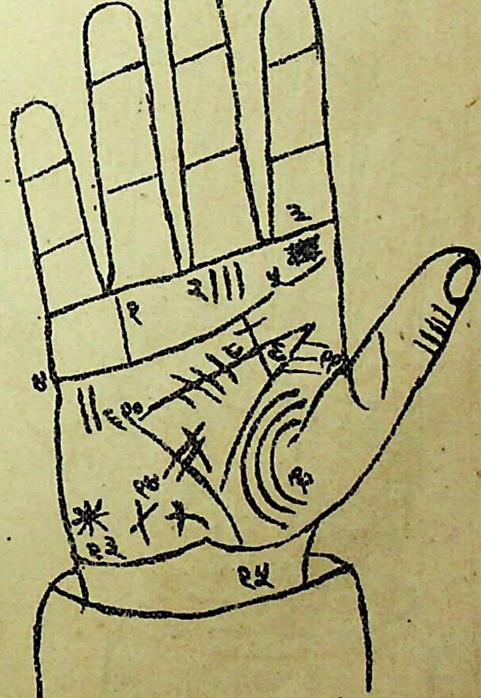
चित्र नं. ५१



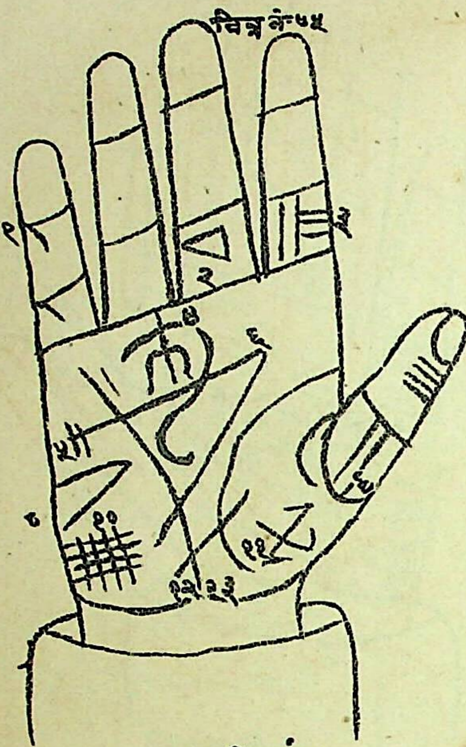
चित्र नं. ५२

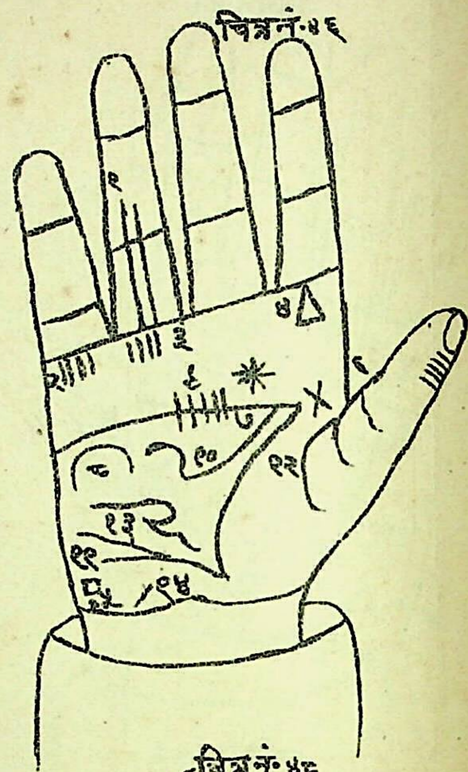


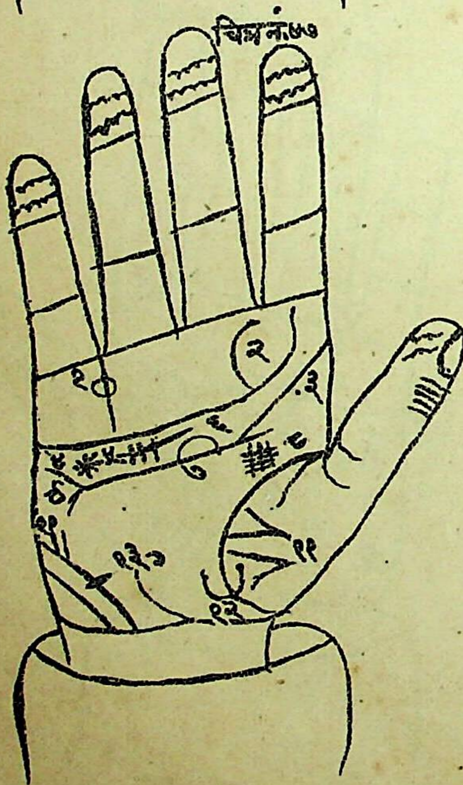
चित्र नं. ५३

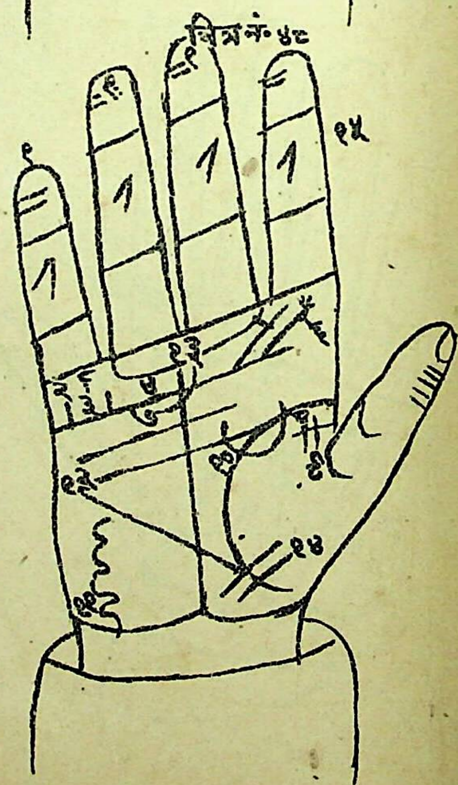


चित्र नं. ५४

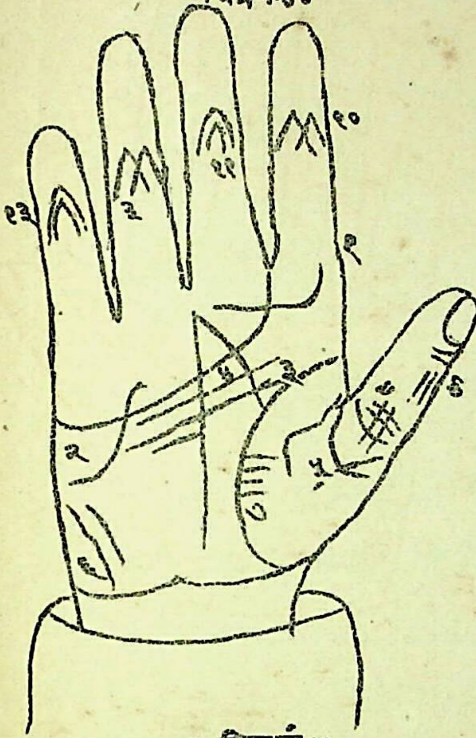

चित्र नं॰ ५५


चित्र नं॰ ५६

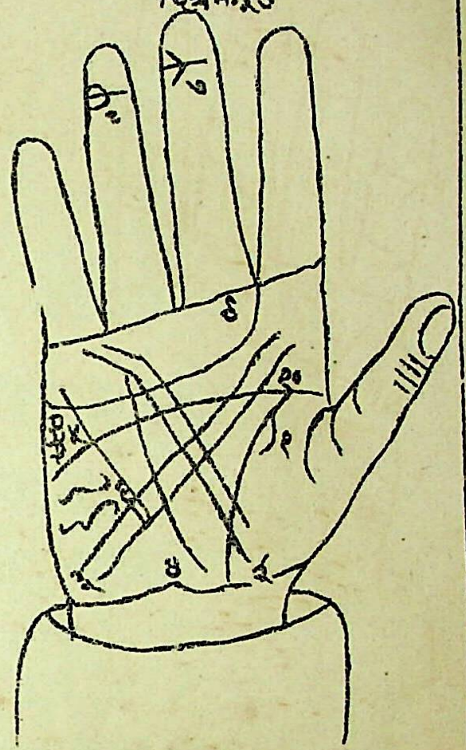

चित्र नं॰ ५७


चित्र नं॰ ५८

चित्र नं. ४९



चित्र नं. ५०



चित्र नं. ५१





अथ सामुद्रिकशास्त्रस्य पूर्वार्द्धे

हस्तरेखालक्षणम्

सोदाहरणं द्वितीयाङ्कमाह ॥

मङ्गलाचरणम् ॥

शान्तं शान्तिकरं सदा सुखकरं सर्वाधिपं शर्मदं
कान्तं कान्तिकरं कलाधरधरं धर्म्यं धरेशं परम् ।
नित्यानन्दकरं महाभयहरं सौन्दर्यरत्नाकरं
वन्देऽहं सकलेश्वरं सुरवरं सर्वार्थसिद्ध्यै शिवम् ॥ १ ॥

शान्तरूपी, शान्तिकारी, सदासुखकारी, सर्वों के नायक, कल्याणदायक, कमनीयरूपधारी, कान्तिकारी, कलाधरधारी, धर्मी, धरेश, परेश, नित्यानन्दकारी, महाभयहारी, सुन्दरता के रत्नाकर, कलाओं समेत जनों के ईश्वर, देवताओं में प्रधान भगवान् शिवजी की मैं सर्वार्थसिद्धि के लिये वन्दना करता हूं ॥ १ ॥

आदौ पाणितलव्याख्या भण्यते मुनिसंमता ।
श्रूयतां देवि, देवेशि! समाधाय मनोमलम् ॥ २ ॥

पहले पाणितल की व्याख्या जोकि मुनियों के संमत है सो कही जाती है इसलिये अहो देवि, देवेशि ! अपने अमल मनको सावधानकर सुनिये ॥ २ ॥

अथ तावत्करतले अङ्गुलिज्ञानमाह—

अङ्गुल्यः करशाखाः स्युः पुंस्यंगुष्ठः प्रदेशिनी ।

मध्यमानामिका चापि कनिष्ठा चेतिताः क्रमात् ॥ ३ ॥

अँगुलियां हाथों की शाखायें होती हैं उनमें अंगुष्ठ (अँगूठा) जोकि पुंलिङ्ग में रहताहै
पहली अँगुली जानना चाहिये दूसरी प्रदेशिनी यानी तर्जनी अँगुली कहाती है व मध्य
तीसरी अँगुली कहाती है व अनामिका चौथी अँगुली होती है और कनिष्ठा पाँचवीं अँगु
कहाती है इस क्रम से उन पाँचों अँगुलियों को जानना चाहिये ॥३॥ (देखो चित्र नं०

करतलग्रहस्थितिज्ञानमाह—

कनिष्ठामूलगः सौम्यो ह्यनामामूलगो रविः ।
मध्यमामूलगो मन्दस्तर्जनीमूलगो गुरुः ॥ ४ ॥

मातृपित्रोरुपर्य्यारः शुक्रो ह्यंगुष्ठमूलगः ।
मातृपित्रोरधश्चन्द्रो ज्ञेया खेटस्थितिः क्रमात् ॥ ५ ॥

कनिष्ठा की मूल (जड़) में बुध रहता है व अनामा की मूल में सूर्य रहते हैं व मध्य
की मूल में शनैश्चर रहता है व तर्जनी की मूल में बृहस्पति रहते हैं व माता पिता की रे
के ऊपर व मध्य में मङ्गल रहता है व अँगूठा की मूल में शुक्र रहते हैं और माता पि
की रेखा के नीचे चन्द्रमा रहता है इस क्रम से ग्रहों के उच्चों की स्थिति (स्थान) ज
नना चाहिये ॥ ४ । ५ ॥ (देखो चित्र नं० २)

अथ ग्रहाणां चिह्नान्याह—

वृत्ताकारं रवेश्चिह्नं चन्द्रस्याप्यर्द्धचन्द्रकम् ।
एतादृशं कुजस्यैव बुधस्यापीदृशंमतम् ॥ ६ ॥

गुरोश्चापीदृशं ज्ञेयं भृगोश्चापीदृशं स्मृतम् ।
शनैश्चापीदृशं प्रोक्तं विद्वद्भिर्वेदपारगैः ॥ ७ ॥

वृत्ताकार सूर्यका चिह्न होता है व चन्द्रमा का अर्ध चन्द्राकार ऐसा चिह्न
मङ्गलका होताहै व बुध का चिह्न ऐसा मानागयाहै और बृहस्पति का ऐसा चि
जानना चाहिये व शुक्र का भी ऐसा चिह्न मानागया है और शनैश्चर का ऐ
चिह्न वेदपारगामी विद्वानों को जानना चाहिये ॥ ६ । ७ ॥ (देखो चित्र नं० ३)

१-इङ्गलण्डीय सामुद्रिकवेतृणां मते बुधस्य मर्करी संज्ञा, सूर्यस्य सनसंज्ञा, शनैश्चरस्य स्
संज्ञा, गुरोर्जुपिटरसंज्ञा, मंगलस्य मार्ससंज्ञा, शुक्रस्य वीनससंज्ञा, चन्द्रस्य मूनसंज्ञा कथिते

करतलद्वादशराशिस्थितिज्ञानमाह —

अङ्गुलीषु च सर्वासु पर्वत्रयमुदाहृतम्।
तर्जनीपर्वके चाद्ये मेषस्तिष्ठति सर्वदा॥ ८॥
द्वितीये च वृषो ज्ञेयस्तृतीये मिथुनं स्मृतम्।
अनामापर्वके चाद्ये सदा तिष्ठति कर्कटः॥ ९॥
द्वितीये सिंहको ज्ञेयस्तृतीये कन्यका स्थिता।
कनिष्ठापर्वके चाद्ये तुला ज्ञेया मनीषिभिः॥ १०॥
द्वितीये वृश्चिको ज्ञेयस्तृतीये धनुरुच्यते।
मध्यमापर्वके मुख्ये मृगस्तिष्ठति सर्वदा॥ ११॥
द्वितीये कुम्भको ज्ञेयस्तृतीये मीनको मतः।
एवं द्वादशराशीनां स्थितिः प्रोक्ता मया प्रिये॥ १२॥

अहो प्रिये! समस्त अँगुलियोंके बीच तीन २ पर्वें कही हैं उनमें तर्जनी की पहली पर्व में मेष सदैव रहता है व दूसरी पर्व में वृष जानना चाहिये व तीसरी पर्व में मिथुन कहा जाता है व अनामिका की पहली पर्व में हमेशा कर्क रहता है व दूसरी पर्व में सिंह जानना चाहिये व तीसरी पर्व में कन्या स्थित रहती है व कनिष्ठा की पहली पर्व में विद्वानों को तुला जानना चाहियें व दूसरी पर्व में वृश्चिक को जानना चाहिये व तीसरी पर्व में धन कहा जाता है व मध्यमा की पहली पर्व में मकर सर्वदा टिका रहताहै व दूसरी पर्व में कुम्भ जानना चाहिये और तीसरी पर्व में मीन माना जाता है इस प्रकार बारह राशियों का स्थितिक्रम मैंने कहा॥ ८। १२॥ (देखो चित्र नं० ४)

मेषादिनामान्याह—

मेषाजविश्वक्रियतुम्बुराद्या वृषोक्षगोतावुरगोकुलानि।
द्वन्द्वं नृयुग्मं जुतुमं यमं च युगं तृतीयं मिथुनं वदन्ति॥ १३॥

मेष, अज, विश्व, क्रिय, तुम्बुर और आद्य ये मेषराशि के नाम हैं वृष, उक्षा, गो, तावुर और गोकुल ये वृषराशि के नाम हैं-द्वन्द्व, नृयुग्म, जुतुम, यम, युग, तृतीय और मिथुन ये मिथुनराशि के नाम आचार्यों ने कहे हैं॥ १३॥

कुलीरकर्काटककर्कटाख्याः कण्ठीरवः सिंहमृगेन्द्रलेयाः ।
पाथोनकन्यारमणीतरुण्यस्तौलीवणिक्जूकतुलाघटाश्च ॥ १४ ॥

कुलीर, कर्काटक और कर्कट ये कर्कराशि के नाम हैं, कण्ठीरव, सिंह मृगेन्द्र और ले ये सिंहराशि के नाम हैं, पाथोन, कन्या, रमणी और तरुणी ये कन्याराशि के नाम तौलि, वणिक्, जूक, तुला और घट ये तुलाराशि के नाम हैं ॥ १४ ॥

अल्पष्टमं वृश्चिककौर्पिकीटा धन्वी धनुश्चापशरासनानि ।
मृगो मृगास्यो मकरश्च नक्रः कुम्भो घटस्तोयधराभिधानः ॥१५

अल्पष्टम, वृश्चिक, कौर्पि और कीट ये वृश्चिकराशि के नाम हैं, धन्वी, धनु, चाप शरासन ये धनराशि के नाम हैं मृग, मृगास्य, मकर और नक्र ये मकरराशि के नाम हैं कु घट और तोयधर ये कुम्भराशि के नाम हैं ॥ १५ ॥

मीनालिमत्स्यपृथुरोमझषा वदन्ति
दस्रादिकर्क्षनवपादयुताः क्रियाद्याः ।
चक्रस्थितादिविचरादिननाथसंख्या
क्षेत्रर्क्षराशिभवनानि भसंस्थितानि ॥ १६ ॥

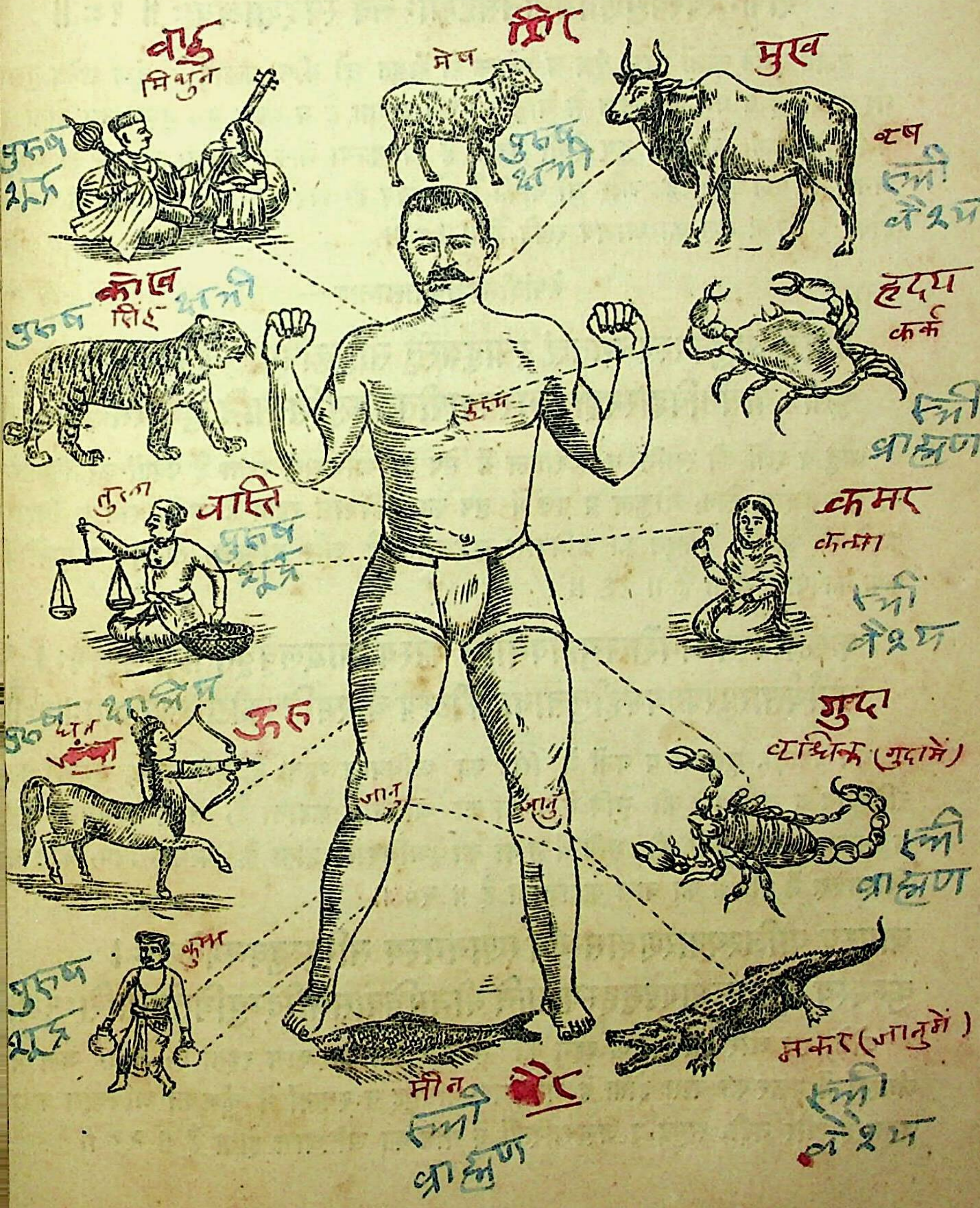
मीन, अलि, मत्स्य, पृथुरोम और झष ये मीनराशि के नाम आचार्यों ने कहे है अश्विन्यादि नक्षत्रों के नव चरणों से संयुत व आकाश में चलनेवाले व चक्र में हुए मेषादिक बारह राशियाँ होती हैं व राशियों में भलीभाँति टिके हुए क्षेत्र, ऋक्ष, र व भवन ये स्थानों के नाम होते हैं ॥ १६ ॥

✓ कालाङ्गे मेषादीनां वासमाह—

कालात्मकस्य च शिरो मुखदेशबाहु
हृत्कुक्षिभागकटिबस्तिरहस्यदेशः ।
ऊरू च जानुयुगलं परतस्तु जङ्घे
पादद्वयं क्रियमुखावयवाः क्रमेण ॥ १७ ॥

कालात्मा के शीश में मेष रहता है व मुखदेश में वृष रहता है व बाहुओं में मिथुन व हृदय में कर्क व कोखियों में सिंह व कमर में कन्या व वस्तिदेश में तुला व गुदा में वृश्चिक व ऊरुओं में धन व जानुओं में मकर व जंघाओं में कुम्भ व पैरों में मीन रहता है ये क्रम से मेषादिकों के अवयव कहाते हैं ॥ १७ ॥

उदाहरणमाह—



मीनादिस्वरूपाण्याह—

व्यत्यस्तोभयपुच्छमस्तकयुतौ मीनौ सकुंभो नर-
स्तौलीचापधरस्तुरंगजघनो नक्रो मृगास्यो भवेत् ।
वीणाढ्यं सगदं नृयुग्ममबला नौस्था ससस्यानला
शेषाः स्वस्वगुणाभिधानसदृशाः सर्वे स्वदेशाश्रयाः ॥ १८ ॥

उलटे पलटे दोनों तरफ पूंछ व मस्तक से संयुत दो मीन कहाते हैं कुंभ समेत तु
नर कहाते हैं व धन जघनदेश से घोड़े का रूप धारता है व मकर मृग मुखवाला होता
व मिथुन वीणा को धारे हुए रोगी रहता है व कन्या नौका में बैठी हुई धान्य स
अनल से पूर्ण रहती है और जो बाकी हैं वे सब ही अपने २ गुण व नाम के सम
होकर अपने २ देश का आश्रय रखते हैं ॥ १८ ॥

मेषादीनामधिवासानाह—

मेषस्य धातुकररत्नधरातलं स्याद्वृक्षस्तु सानुकृषिगोकुलकाननानि ।
द्यूतक्रियारतिविहारमही युगस्यवापीतटाकपुलिनानि कुलीरराशेः॥१६

धातु व रत्नों की खानि व धरातल में मेष का अधिवास रहता है पर्वतों का किन
या सम भूभाग, खेत, गोकुल व वन में वृष का अधिवास रहता है जुआँ, रति व वि
करने की भूमि में मिथुन का अधिवास कहाजाता है और बावली, तालाब व पुलों
कर्क का वास रहता है ॥ १६ ॥

कण्ठीरवस्य घनशैलगुहावनानि षष्ठस्य शाद्वलवधूरतिशिल्पभूमिः ।
सर्वार्थसारपुरपण्यमहीतुलायाःकीटस्य चाश्मविषकीटबिलप्रवेशाः॥२०

घने पहाड़ों, गुहाओं व वनों में सिंह का अधिवास रहता है, हरी घास, वहुओं
रतिस्थान व कारीगरी की भूमि में कन्या का अधिवास कहाता है, समग्र अर्थसार, पु
व बाजार या दूकानों की भूमि में तुला का अधिवास होता है, पत्थर, विष, कीट
बिलप्रवेश में वृश्चिक का वास कहाजाता है ॥ २० ॥

चापस्य वाजिरथवारणवासभूमिरेणाननस्य सरिदम्बुवनप्रदेशाः ।
कुम्भस्य तोयघटभाण्डगृहस्थलानि मीनाधिवाससरिदम्बुधितोयराशिः॥२१

घोड़े, रथ और हाथियों के रहने की भूमि में धन का वास रहता है, नदी, जल
जंगलों में मकर का वास होता है जल, घट, भांडगृह व स्थलों में कुंभ का अधिवास क
जाता है और नदी, समुद्र व जलराशियों में मीन का अधिवास होता है ॥ २१ ॥

मेषादीनां ह्रस्वादिसंज्ञान्याह—

ह्रस्वागोजघटास्समाम्मृगनृयुक्चापान्त्यकर्काटका
दीर्घावृश्चिककन्यकाहरितुलामेषादिपुंयोषितौ ।
प्रागादिक्रियगोनृयुक्टकभान्येतानि कोणान्विता
न्याहुः क्रूरशुभौ चरस्थिरतरद्वन्द्वानि तानि क्रमात् ॥ २२ ॥

वृष, मेष, कुम्भ ये ह्रस्व संज्ञक हैं, मकर, मिथुन, धन, मीन और कर्क ये समसंज्ञक हैं, वृश्चिक, कन्या, सिंह और तुला ये दीर्घसंज्ञक हैं और मेषादिक राशियां पुरुष व स्त्रीसंज्ञक कहाती हैं यानी मेष पुरुष, वृष स्त्री, मिथुन पुरुष, कर्क स्त्री, सिंह पुरुष, कन्या स्त्री, तुला पुरुष, वृश्चिक स्त्री, धन पुरुष, मकर स्त्री, कुम्भ पुरुष, मीन स्त्री संज्ञक कहाती है और मेष वृष, मिथुन व कर्क ये चार २ पूर्वादि दिशाओं में रहती हैं यानी मेष पूर्व में रहता है व वृष दक्षिण में व मिथुन पश्चिम में व कर्क उत्तर में रहता है और सिंह पूर्व में व कन्या दक्षिण में व तुला पश्चिममें व वृश्चिक उत्तर में बसता है एवं धन पूर्व में व मकर दक्षिणमें व कुम्भ पश्चिम में व मीन उत्तर में बसता है और मेषादिक बारह राशियां क्रूर व सौम्य संज्ञक होती हैं यानी मेष क्रूर, वृष शुभ कहाता है मिथुन क्रूर, कर्क सौम्य. सिंह क्रूर, कन्या सौम्य., तुला क्रूर व वृश्चिक सौम्य व धन क्रूर, मकर सौम्य. व कुम्भ क्रूर व मीन सौम्य कहाजाता है और मेषादिक बारह राशियाँ चर, स्थिर, द्विस्वभावसंज्ञक कहाती हैं यानी मेष. चर, वृष. स्थिर, मिथुन. द्विस्वभाव, कर्क. चर, सिंह-स्थिर व कन्या. द्विस्वभाव, तुला. चर, वृश्चिक. स्थिर, धन. द्विस्वभाव, मकर. चर, कुम्भ. स्थिर और मीन. द्विस्वभावसंज्ञक कहाजाता है ॥२२॥

पृष्ठोदयादिसंज्ञान्याह—

वीर्योपेतानिशिवृषनृयुक्कर्किचापाजनक्रा
हित्वा युग्मं भवनमपरे पृष्ठपूर्वोदयाश्च ।
शेषाः शीर्षोदयदिनबला श्रेष्ठता राशयस्ते
मीनाकारद्वयमुभयतः काललग्नं समेति ॥ २३ ॥

वृष, मिथुन, कर्क, धन, मेष और मकर ये राशियां रात्रिमें बलवान् कहाती हैं इनमें मिथुनराशि को छोड़कर अन्य राशियाँ पृष्ठोदयसंज्ञक होती हैं और सिंह, कन्या, तुला, वृश्चिक व कुम्भ ये राशियाँ दिनमें बली व श्रेष्ठ होकर शीर्षोदय कहाती हैं और मीनराशि दिन व राति में बलवान् व उभयोदयी होकर काललग्न को प्राप्त होता है ॥ २३ ॥

१—सौम्याधिलग्ने यदिवा स्ववर्गे शीर्षोदये सिद्धिमुपैति कार्यम् । अतो विपर्यस्तमसिद्धिहेतुं कृच्छ्रेण संसिद्धिकरं विमिश्रम् ॥ १ ॥

मीनालिकर्कटमृगाः सलिलाभिधानास्तोयाश्रयाघटवधूयुगगोपसंज्ञाः।
निस्तोयभूतलचराःक्रियचापतौलिकएठीरवाश्च बहवःप्रवदन्ति सन्तः२४

मीन, वृश्चिक, कर्क और मकर ये जलसंज्ञक कहाते हैं, कुंभ, कन्या, मिथुन और त
ये जलका आश्रय रखते हैं और मेष, धन, तुला और सिंह ये निर्जल भूतल में चरते
ऐसा बहुत से सन्तलोग कहते हैं ॥ २४ ॥

चतुष्पदादिसंज्ञान्याह–

चापापरार्धहरिगोमकरादिमेष मीनास्थिता बलयुताश्च चतुष्पदाख्याः।
कन्यानृयुग्मघटतौलिशरासनाद्यालग्नान्वितायदिनराद्विपदाबलाढ्याः२५

धनका परार्द्ध, सिंह, वृष, मकर का पूर्वार्ध, मेष और मीन ये बलवान् होते हुए च
ष्पद संज्ञावाले होकर टिकते हैं और कन्या, मिथुन, कुम्भ और धनका पूर्वार्ध ये नरा
धारी द्विपद कहाते हैं और यदि लग्न में टिके हों तो बलवान् कहे जाते हैं ॥ २५ ॥

मृगापरार्धान्त्यकुलीरसंज्ञा जलाभिधाना बलिनश्चतुर्थे।
जलाश्रयो वृश्चिकनामधेयः ससप्तमस्थानगतो बली स्यात् ॥ २६ ॥

मकर का परार्ध, मीन और कर्क ये जलचर कहाते हैं यदि चौथे घरमें टिके हों त
बलवान् कहे जाते हैं और वृश्चिक जलाश्रयी कहाता है यदि वह सतयें घरमें बैठा हो त
बलवान् होता है ॥ २६ ॥

दिवारात्रिबलमाह—

केन्द्रं गतोहि द्विपदो बलाढ्यश्चतुष्पदाः केन्द्रगता रजन्याम् ॥
कीटास्तु सर्वे यदि कएटकस्थाः सन्धिद्वये वीर्ययुता भवन्ति ॥ २७॥

दिन के समय केन्द्र में बैठाहुआ द्विपद बलवान् होता है व रात्रिके समय केन्द्र में टिं
हुए चतुष्पद बलवान् होते हैं और समस्त कीटसंज्ञक यदि केन्द्र में टिके हों तो दोनों स
न्धियों में बलवान् होते हैं ॥ २७ ॥

धातुमूलजीवचिन्ताज्ञानमाह—

धातुर्मूलं जीवमित्याहुरार्या मेषादीनामोजयुग्मे तथैव।
स्वर्णाद्धातुर्मृत्तिकान्तं तृणान्तं वृक्षान्मूलं जीवकूटः सजीवः॥२८

मेषादिकों के सम व विषम में धातु, मूल और जीव इन चिन्ताओं को आर्यों ने क
है वहां सोने से लेकर मृत्तिकापर्यन्त धातु कहाती है व वृक्ष से लेकर तिनुकापर्यन
मूल कहाता है और जो जीव समुदाय देखा जाता है वह जीव कहाजाता है ॥ २८॥

मेषादिभ्यश्चिन्ताज्ञानमाह—

मेषे च द्विपदां चिन्ता वृषे चिन्ता चतुष्पदाम्।
मिथुने गर्भचिन्ता च व्यवसायस्य कर्कटे॥ २९॥
सिंहे च जीवचिन्ता स्यात् कन्यायां च स्त्रियास्तथा।
तुले च धनचिन्ता च व्याधिचिन्ता च वृश्चिके॥ ३०॥
चापे च धनचिन्ता स्यान्मकरे शत्रुचिन्तनम्।
कुम्भे स्थानस्य चिन्ता स्यान्मीने चिन्ता च दैविकी॥ ३१॥

मेष में द्विपदों की चिन्ता होती है, वृष में चौपायों की चिन्ता, मिथुन में गर्भचिन्ता, कर्क में रोजगार की चिन्ता, सिंह में जीवों की चिन्ता, कन्या में लुगाइयों की चिन्ता, तुला में धनचिन्ता, वृश्चिक में व्याधिचिन्ता, धन में धनचिन्ता, मकर में शत्रुचिन्ता, कुम्भ में स्थानचिन्ता और मीन में दैवीचिन्ता जानना चाहिये॥ २९। ३१॥

वर्णज्ञानमाह—

मीनालिकर्कटा विप्राश्चापाजहरयो नृपाः।
कुम्भयुग्मतुलाः शूद्रा वैश्या वृषमृगाङ्गनाः॥ ३२॥

मीन, वृश्चिक और कर्क ये ब्राह्मण कहाते हैं; धन, मेष और सिंह ये क्षत्रिय कहाते हैं; कुम्भ, मिथुन और तुला ये शूद्रवर्ण होते हैं तथा वृष, मकर और कन्या ये वैश्यवर्ण कहे जाते हैं॥ ३२॥

अन्धबधिरादिज्ञानमाह—

महानिशान्धाः क्रियगोमृगेशा मध्यंदिने कर्कटयुग्मकन्याः।
पूर्वाह्णकाले बधिरौ तुलाली धन्वी मृगाख्यश्च तथापराह्णे॥ ३३॥

मेष, वृष, मकर ये महानिशा में अन्धे रहते हैं; कर्क, मिथुन और कन्या ये मध्याह्न में अन्धे कहाते हैं; तुला, वृश्चिक ये पूर्वाह्ण में बहिरे होते हैं तथा धन और मकर ये अपराह्ण में बहिरे होते हैं॥ ३३॥

मृगाननश्चापधरश्च पङ्गु सन्धिद्वये नाशकरौ भवेताम्।
स्याहृक्षसन्धिः कटकालिमीनभान्तं प्रगण्डान्तमिति प्रसिद्धम्॥ ३४॥

मकर व धन ये पंगुसंज्ञक कहाते हैं जोकि दोनों सन्धियों में नाशकारक होते हैं; कर्क,

वृश्चिक और मीन पर्यन्त ऋक्षसन्धि कहाती है जोकि भान्त व भगण्डान्त इस नाम
विख्यात है ॥ ३४ ॥

रक्तादिवर्णज्ञानमाह—

रक्तगौरशुककान्तिपाटलाः पाण्डुचित्ररुचिनीलकाञ्चनाः ।
पिङ्गलः शबलबभ्रुपाण्डुरास्तूबरादिभवनेषु कल्पिताः ॥ ३५ ॥

मेष रक्त, वृष गौर, मिथुन हरित, कर्क श्वेतरक्त, सिंह पाण्डु, कन्या विचित्र, तु
कृष्ण, वृश्चिक सुवर्णसदृश, धन पिंगल, मकर कर्बुर, कुम्भ बभ्रु और मीन स्वच्छ
कहाता है ये मेषादि बारह राशियों में कल्पित होते हैं ॥ ३५ ॥

द्रव्याण्याह—

वस्त्राद्यं शालिमुख्यं वनफलनिचयः कन्दलीमुख्यधान्यं
त्वक्सारं मुद्गपूर्वं तिलवसनमुखं त्विक्षुलोहादिकं च ।
शस्त्राश्वं काञ्चनाद्यं जलजनिकुसुमं तोयजातं समस्तं
द्रव्याण्याहुः क्रियादिष्वबलबलयुतेष्वल्पताधिक्यभांजि ॥ ३६

वस्त्रादि मेष की द्रव्य है, शालि मुख्य वृष की व वन्यफलों का समुदाय मिथुन
कन्दली मुख्यधान्य कर्क की व त्वक्सार सिंह की व मूंग आदि कन्या की, तिल व
तुला की, इक्षु लोहादि वृश्चिक की व शस्त्राश्व धन की व सुवर्ण आदि मकर की व ज
जातपुष्प कुम्भ की व जल से उपजी समस्त द्रव्य मीन की है और यदि मेषादिक ब
व अबली हों तो पूर्वोक्त द्रव्य कम या अधिक होती हैं ॥ ३६ ॥

करतले मेषादिचिह्नान्याह—

मेषस्यैतादृशं [चिह्न] चिह्नं वृषस्यापीदृशं [चिह्न] मतम् ।
द्वन्द्वस्यैतादृशं [चिह्न] ज्ञेयं कर्कस्यापीदृशं [चिह्न] स्मृतम् ॥ ३७
सिंहस्यैतादृशं [चिह्न] ख्यातं कन्यायाश्चेदृशं [चिह्न] मतम् ।
घटस्यापीदृशं [चिह्न] व्यक्तं वृश्चिकस्य [चिह्न] ततःपरम् ॥ ३८
चापस्यैतादृशं [चिह्न] गीतं मृगस्यापीदृशं [चिह्न] मतम् ।
कुम्भस्यैतादृशं [चिह्न] प्रोक्तं मीनस्यैतादृशं [चिह्न] बुधैः ॥ ३९

मेष राशि का [चिह्न] ऐसा चिह्न होता है व वृष का [चिह्न] ऐसा निशान माना
मिथुन का [चिह्न] ऐसा निशान जानना चाहिये और कर्क का ऐसा [चिह्न] निशान का
सिंहराशि का [चिह्न] ऐसा निशान विख्यात है व कन्या का [चिह्न] ऐसा निशान मा

व तुला का [symbol] ऐसा निशान कहाता है तदनन्तर वृश्चिक का [symbol] ऐसा निशान कहा जाता है व धन का [symbol] ऐसा निशान कहाता है व मकर का [symbol] ऐसा निशान माना है व कुम्भ का [symbol] ऐसा निशान कहा है और मीन का [symbol] ऐसा निशान सामुद्रिक वेत्तागण पण्डितों ने कहाहै ॥ ३७ । ३९ ॥ (देखो चित्र नं० ५)

मेषाधीशानाह—

धराजशुक्रज्ञशशीनसौम्यसितारजीवार्कजमन्दजीवाः ।
क्रमेण मेषादिषु राशिनाथास्तदंशपाश्चेति वदन्ति सन्तः ॥ ४० ॥

मेष राशि का स्वामी मङ्गल, वृष का शुक्र, मिथुन का बुध, कर्क का चन्द्रमा, सिंह का सूर्य, कन्या का बुध, तुला का शुक्र, वृश्चिक का मङ्गल, धन का गुरु, मकर व कुम्भ का शनैश्चर और मीन का अधिपति व अंशप बृहस्पति होते हैं ऐसा सन्तों ने कहा है॥ ४० ॥

ग्रहाणां शरीरविभागमाह—

ग्रहाणां मण्डलं चैव शृणु वक्ष्यामि पार्वति ।
नादचक्रे स्थितः सूर्यो बिन्दुचक्रे च चन्द्रमाः ॥ ४१ ॥
लोचने मङ्गलः प्रोक्तो हृदि सोमसुतस्तथा ।
उदरे च गुरुश्चैव शुक्रे शुक्रस्तथैव च ॥ ४२ ॥
नाभिस्थितोथ मन्दो वै मुखे राहुस्तथा स्थितः ।
पादे पाणौ च केतुश्च शरीरे ग्रहमण्डलम् ॥ ४३ ॥

अहो पार्वतीजी ! मैं ग्रहों का मण्डल कहूंगा उसको सुनिये कि सूर्य नादचक्रमें बैठा है व चन्द्रमा बिन्दुचक्र में विराजता है व मङ्गल लोचनों में रहता है व बुध हृदय में टिका है व बृहस्पति उदरमें रहते हैं व शुक्र शुक्र (बीज) में रहता है व शनैश्चर नाभि (तोंदी) में टिका रहता है व राहु मुख में राजता है और केतु हाथ व पैरों में वसता है यह शरीर में ग्रहमण्डल कहाता है ॥ ४१ । ४३ ॥

कालात्मादिज्ञानमाह—

कालस्यात्मा भास्करश्चित्तमिन्दुः सत्त्वं भौमः स्याद्वचश्चन्द्रसूनुः ।
देवाचार्यः सौख्यविज्ञानसारः कामः शुक्रो दुःखमेवार्कसूनुः ॥ ४४ ॥

सूर्य कालका आत्मा है, चन्द्रमा काल का चित्त (दिल) है, मङ्गल बल है, बुध वचन है, बृहस्पति सौख्य व विज्ञान का सार है, शुक्र कामदेव है और शनैश्चर दुःखरूप कहाता है ॥ ४४ ॥

राजादिज्ञानमाह—

दिनेशचन्द्रौ राजानौ सचिवौ जीवभार्गवौ ।
कुमारो वित्कुजो नेता प्रेष्यस्तपननन्दनः ॥ ४५ ॥

सूर्य व चन्द्रमा ये राजा कहाते हैं यानी सूर्य राजा व चन्द्रमा रानी कहाती है, बृहस्पति व शुक्र मन्त्री कहाते हैं, बुध कुमार व मङ्गल नेता (लेजानेवाला या सिखलानेवाला) कहाता है और शनैश्चर दास या धावन कहलाता है ॥ ४५ ॥

सूर्यादीनां नामान्याह—

हेतिः सूर्यस्तपनदिनकृद्भानुपूषारुणार्काः
सोमः शीतद्युतिरुडुपतिग्लौर्मृगाङ्केन्दुचन्द्राः ।
आरो वक्रक्षितिजरुधिराङ्गारकक्रूरनेत्राः
सौम्यस्तारातनयबुधविद्बोधनश्चेन्दुपुत्रः ॥ ४६ ॥

हेति, सूर्य, तपन, दिनकृत्, भानु, पूषा, अरुण और अर्क ये सूर्य के नाम हैं- सोम, शीतद्युति, उडुपति, ग्लौ, मृगाङ्क, इन्दु और चन्द्र ये चन्द्रमा के नाम कहाते हैं; आर, वक्र, क्षितिज, रुधिर, अङ्गारक और क्रूरनेत्र ये मङ्गल के नाम कहाते हैं और सौम्य, तारातनय, बुध, वित्, बोधन और इन्दुपुत्र ये बुध के नाम कहेजाते हैं ॥ ४६ ॥

मन्त्री वाचस्पतिगुरुसुराचार्यदेवेज्यजीवाः
शुक्रः काव्यः सितभृगुसुताच्छास्फुजिद्दानवेज्याः ।
छायासूनुस्तरणितनयः कोणशन्यार्किमन्दा
राहुस्सर्पासुरफणितमः सैंहिकेयागवश्च ॥ ४७ ॥

मन्त्री, वाचस्पति, गुरु, सुराचार्य, देवेज्य और जीव ये बृहस्पति के नाम हैं; शुक्र, काव्य, सित, भृगुसुत, अच्छ, आस्फुजित् और दानवेज्य ये शुक्र के नाम हैं; छायासूनु, तरणितनय, कोण, शनि, आर्कि और मन्द ये शनैश्चर के नाम हैं और राहु, सर्प, असुर, फणी, तम, सैंहिकेय और अगु ये राहु के नाम कहाते हैं ॥ ४७ ॥

ध्वजः शिखीकेतुरिति प्रसिद्धा वदन्ति तज्ज्ञा गुलिकश्च मान्दिः ।
उपग्रहा भानुमुखग्रहांशाः कालादयः कष्टफलप्रदाः स्युः ॥ ४८ ॥
क्रमशः कालपरिधिधूमार्द्धप्रहराह्वयाः ।
यमकण्टककोदण्डमान्दिपातोपकेतवः ॥ ४९ ॥

ध्वज, शिखी, केतु, गुलिक और मान्दि ये केतु के नाम हैं ऐसा प्रसिद्ध पण्डितों ने कहा है और रव्यादि ग्रहों के अंश कालादिक उपग्रह कहाते हैं जोकि कष्टकारी फल के देनेवाले होते हैं उनको क्रम से कहते हैं कि, काल, परिधि, धूम, अर्धप्रहर, यमकण्टक, कोदण्ड, मान्दि, पात और उपकेतु ये उपग्रहों के नाम कहेजाते हैं ॥ ४८ । ४९ ॥

वर्णज्ञानमाह—

भानुः श्यामललोहितद्युतितनुश्चन्द्रस्सिताङ्गो युवा
दूर्वाश्यामलकान्तिरिन्दुतनयः संरक्तगौरः कुजः ।
मन्त्री गौरकलेवरः सिततनुः शुक्रोसिताङ्गः शनि-
श्चानीलाकृतिदेहवानहिपतिः केतुर्विचित्रद्युतिः ॥ ५० ॥

सूर्य श्याम व लाल वर्णवाला होता है व चन्द्रमा सफ़ेद अङ्गवाला होकर जवान रहता है व बुध दूब के समान श्याम अङ्गवाला कहाता है व मङ्गल लाल व गोरा कहा जाता है, बृहस्पति गोरे रंगवाला होता है व शुक्र सफ़ेद अङ्गवाला, शनैश्चर काला व राहु नीला और केतु विचित्र वर्णवाला कहलाता है ॥ ५० ॥

प्रकाशकादिज्ञानमाह—

प्रकाशकौ शीतकरप्रभाकरौ तारा ग्रहाः पञ्च धरासुतादयः ।
तमःस्वरूपौ शिखिसिंहिकासुतौ शुभाः शशिज्ञामरवन्द्यभार्गवाः ॥५१॥

चन्द्रमा व सूर्य ये प्रकाशक कहाते हैं व मङ्गल आदि पांच ग्रह तारा कहाते हैं व राहु, केतु ये दोनों तमोरूपी कहेजाते हैं चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति और शुक्र ये शुभग्रह कहलाते हैं ५१॥

पापादिज्ञानमाह—

क्षीणेन्दुमन्दरविराहुशिखिक्षमाजाः पापास्तु पापयुतचन्द्रसुतश्च पापः ।
तेषामतीव शुभदौ गुरुदानवेज्यौ क्रूरौ दिवाकरसुतक्षितिजौ भवेताम् ॥५२॥

क्षीणचन्द्रमा, शनैश्चर, सूर्य, राहु, केतु और मङ्गल ये पापग्रह कहाते हैं व पापग्रहों समेत बुध पापी कहाता है उनके बीच में बृहस्पति और शुक्र अत्यन्त शुभदायक होते हैं और शनैश्चर, मङ्गल ये दोनों क्रूरग्रह कहलाते हैं ॥ ५२ ॥

चन्द्रस्य बलाबलमाह—

शुक्लादिकानि[1] दशकेहनिमध्यवीर्य-

---

१ मासस्य शुक्लप्रतिपत्प्रवृत्तेः पूर्वं शशी मध्यबलो दशाहे । श्रेष्ठो द्वितीयेऽल्पबलस्तृतीये सौम्यैस्तु दृष्टो बलवान्सदैव ॥ १ ॥

शाली द्वितीयदशकेतिशुभप्रदोऽसौ ।
चन्द्रस्तृतीयदशके बलवर्जितस्तु
सौम्येक्षणादिसहितो यदि शोभनः स्यात् ॥ ५३ ॥

शुक्लपक्ष की परेवा से लेकर दशमीतक चन्द्रमा मध्यम वीर्यवाला रहता है दशमी लेकर कृष्णपक्ष की पञ्चमी पर्यन्त यह चन्द्रमा शुभदायक होता है और पञ्चमी से ले अमावस पर्यन्त चन्द्रमा क्षीण बलवाला कहाता है यदि शुभग्रहों से दृष्ट व संयुत हो शुभदायक होजाता है ॥ ५३ ॥

पृष्ठोदयादिज्ञानमाह—

रव्यारराहुमन्दाश्च पृष्ठेनोद्यन्ति सर्वदा ।
शिरसा शुक्रचन्द्रज्ञा जीवस्तूभयतो व्रजेत् ॥ ५४ ॥

सूर्य, मङ्गल, राहु और शनैश्चर ये ग्रह सदैव पीठ से उदय करते हैं व शुक्र, चन्द्र और बुध ये शीश से उदय करते हैं और बृहस्पति दोनों से उदय करते हैं ॥ ५४ ॥

विहगादिस्वरूपाण्याह—

दिवाकरज्ञौ विहगस्वरूपौ सरीसृपाकारयुतः शशाङ्कः ।
पुरन्दराचार्यसितौ द्विपादौ चतुष्पदौ भानुसुतक्षमाजौ ॥ ५५ ॥

सूर्य व बुध ये दोनों पक्षीरूप कहाते हैं व चन्द्रमा सरीसृपरूपी होता है, बृहस्पति शुक्र ये दोनों द्विपद कहाते हैं और शनैश्चर व मङ्गल ये दोनों चतुष्पदसंज्ञक होते हैं ॥५५

बालाद्यवस्थानिर्णयमाह—

बालो धराजः शशिजः कुमारस्त्रिंशद्गुरुः षोडशवत्सरः सितः ।
पञ्चाशदर्को विधुरब्दसप्ततिः शताब्दसंख्याः शनिराहुकेतवः ॥ ५६

मङ्गल बालक, बुध कुमार, बृहस्पति तीस वर्षवाला, शुक्र सोलह वर्षवाला, पचास वर्षवाला, चन्द्रमा सत्तरि वर्षवाला कहाता है और शनैश्चर, राहु व केतु ये वर्षवाले होते हैं ॥ ५६ ॥

जलाशयाद्यधिवासानाह—

जलाशयौ चन्द्रसुराविन्द्यौ बुधालयग्रामचरौ गुरुज्ञौ ।
कुजाहिमन्दध्वजवासरेशा भवन्ति शैलाटविसंचरन्तः ॥ ५७ ॥

चन्द्रमा व शुक्र ये जलाशयों में वास करते हैं; बृहस्पति व बुध ये पण्डितों के घर

व गांवों में घूमते हैं; मङ्गल, राहु, शनैश्वर, केतु और सूर्य ये पहाड़ों व जङ्गलों में बिचरते हुए रहते हैं ॥ ५७ ॥

धातुमूलादिज्ञानमाह—

शाखाधिपा जीवसितारबोधना धातुस्वरूपौ खचरौ कुजारुणौ।
मूलप्रधानौ तुहिनाकरार्कजौ जीवौ सितार्यौ तु विमिश्रमिन्दुजः ॥५८॥

बृहस्पति, शुक्र, मङ्गल और बुध ये शाखाधिप कहाते हैं, आकाशचारी मङ्गल व सूर्य ये धातुरूपी कहेजाते हैं, चन्द्रमा व शनैश्वर मूलप्रधान व शुक्र व बृहस्पति ये जीवरूप कहाते हैं और बुध विमिश्ररूप कहाता है ॥ ५८ ॥

दीप्ताद्यवस्थाक्रममाह—

दीप्तः स्वस्थः प्रमुदितः शान्तः शक्तः प्रपीडितः।
दीनः खलस्तु विकलो भीतोवस्था दश क्रमात् ॥ ५९ ॥

दीप्त, स्वस्थ, प्रमुदित, शान्त, शक्त, प्रपीडित, दीन, खल, विकल और भीत ये क्रमसे रव्यादिग्रहों की दश अवस्थायें कहाती हैं ॥ ५९ ॥

स्वोच्चत्रिकोणोपगतः प्रदीप्तः स्वस्थः स्वगेहे मुदितः सुहृद्भे।
शान्तस्तु सौम्यग्रहवर्गयातः शक्तोऽतिशुद्धः स्फुटरश्मिजालैः ॥ ६० ॥

जो ग्रह अपने उच्च व त्रिकोण में प्राप्त हुआ है वह प्रदीप्त कहाता व जो अपने घर में बैठा है वह स्वस्थ कहाजाता है व जो अपने मित्रघर में बैठा है वह मुदित होता है व जो शुभग्रहों के वर्ग में पहुँचा है वह शान्त कहाता है और जो स्फुटकिरणजालों से अतिशुद्ध होता है वह शक्त कहाता है ॥ ६० ॥

ग्रहाभिभूतस्त्वतिपीडितः स्यादरातिराश्यंशगतोतिदीनः।
खलस्तु पापग्रहवर्गयोगान्नीचेति भीतो विकलोस्तयातः ॥ ६१ ॥

जो ग्रहों से तिरस्कृत हुआ है वह अति पीड़ित होता है व जो शत्रुके राश्यंश में प्राप्त है वह अतिदीन कहाता है व पापग्रहों के योग से खल होता है व नीचग्रह अतिभीत कहा जाता है और अस्तंगत ग्रह विकल होता है ॥ ६१ ॥

ताम्रादिवर्णज्ञानमाह—

वर्णास्ताम्रसितारक्तहरितापीतकर्बुराः।
कृष्णकान्तिरिनादीनां नष्टादौ च प्रकीर्तिताः ॥ ६२ ॥

सूर्य ताम्रवर्ण, चन्द्रमा सफेदवर्ण, मङ्गल रक्तवर्ण, बुध हरित, बृहस्पति पीतवर्ण, शु
कर्बुरवर्ण और शनैश्चर कालावर्ण कहाता है ये सूर्यादिकों के वर्ण नष्ट आदिकों
भी कहे हैं ॥ ६२ ॥

द्रव्यादीन्याह—

द्रव्याणि ताम्रमणिकाञ्चनशुक्तिरौप्य-
मुक्तान्ययश्च दिननाथमुखग्रहाणाम् ।
वह्न्यम्बुषण्मुखहरीन्द्रशचीविरिञ्च्य-
मुख्या दिवाकरमुखादधिदेवताः स्युः ॥ ६३ ॥

ताम्र, मणि, कांचन, सीपी, रूपा, मोती और लोहा ये सूर्यादि ग्रहों की द्र
कहाती हैं यानी सूर्य का ताम्र, चन्द्रमाकी मणि, मङ्गलका सुवर्ण, बुध की सीपी, बृहस्
का रूपा, शुक्रका मोती और शनैश्चरकी लोह द्रव्य कहाती है और अग्नि, ज
स्वामिकार्त्तिक, विष्णु, इन्द्र, शची और ब्रह्मा ये सूर्यादिकों के अधिदेवता हैं ॥ ६३ ॥

माणिक्यादिज्ञानमाह—

माणिक्यं दिननायकस्य विमलं मुक्ताफलं शीतगो-
र्माहेयस्य च विद्रुमं मरकतं सौम्यस्य गारुत्मतम् ।
देवेज्यस्य च पुष्परागमसुराचार्यस्य वज्रं शने-
र्नीलं निर्मलमन्ययोश्च गदिते गोमेदवैडूर्य्यके ॥ ६४ ॥

सूर्यका माणिक्य, चन्द्रमा का अमलमोती, मङ्गल का मूंगा वा मरकत, बुधका गा
त्मत, बृहस्पति का पुखराज, शुक्रका हीरा, शनैश्चर का नीलम, राहुका गोमेद और के
का वैडूर्य्य कहाता है ॥ ६४ ॥

वस्त्राण्याह —

स्थूलाम्बरं नूतनचारु चेलं कृशानुतोयाहतमध्यमानि ।
दृढांशुकं जीर्णमिनादिकानां वस्त्राणि सर्वे मुनयो वदन्ति ॥ ६५ ॥

सूर्य का मोटा कपड़ा, चन्द्रमा का नया कपड़ा, मङ्गल का सुन्दर कपड़ा, बुध
रेशमी कपड़ा, बृहस्पति का फटा कपड़ा, शुक्रका मजबूत कपड़ा और शनैश्चर का पुरा
कपड़ा समग्र मुनियों ने कहा है ॥ ६५ ॥

प्रागाद्यधीशानाह—

प्रागादिका भानुसितारराहुमन्देन्दुविद्देवपुरोहिताः स्युः ।
शुक्रारचन्द्रज्ञसुरेज्यमन्दा वसन्तमुख्यर्त्वधिपा दृगाणैः ॥ ६६ ॥

सूर्य पूर्वका स्वामी, शुक्र आग्नेय का, मङ्गल दक्षिण का, राहु नैर्ऋत्य का, शनैश्चर पश्चिम का, चन्द्रमा वायव्य का, बुध उत्तर का और बृहस्पति ईशान का स्वामी कहाताहै और शुक्र, मङ्गल, चन्द्रमा, बुध, बृहस्पति और शनैश्चर ये द्रगाणों से वसन्तादि ऋतुओं के अधिपति कहाते हैं यानी वसन्त का स्वामी शुक्र, ग्रीष्मका मङ्गल, वर्षाका चन्द्रमा, शरत् का बुध, हेमन्त का बृहस्पति, शिशिर का अधिपति शनैश्चर कहाता है ॥ ६६ ॥

विप्रादिजातिक्रममाह—

विप्रौ जीवसितौ दिनेशरुधिरौ भूपालकौ वैश्यरा-
डिन्दुःशूद्रकुलाधिपः शशिसुतो मन्दोत्तराणां पतिः।
आदित्यामरमन्त्रिशीतकिरणाः सत्त्वप्रधाना ग्रहाः
शुक्रज्ञौ सरजोगुणौ शनिधरापुत्रौ तमःस्वामिनौ ॥ ६७ ॥

बृहस्पति व शुक्र ये ब्राह्मण कहाते हैं, सूर्य व मङ्गल ये क्षत्रिय हैं व चन्द्रमा वैश्य-राज कहाता है, बुध शूद्रोंका स्वामी है और शनैश्चर अन्त्यजों का अधिपाति है और सूर्य, गुरु, चन्द्रमा ये ग्रह सत्त्वगुणवाले कहाते हैं शुक्र और बुध ये रजोगुणी व शनैश्चर, मङ्गल तमोगुणी होते हैं ॥ ६७ ॥

पुरुषादिज्ञानमाह—

नराकारा भानुक्षितिजगुरवः शुक्रशशिनौ
वधूरूपौ षण्ढौ प्रकृतिपुरुषौ मन्दशशिजौ।
वियत्क्षोणीतेजः पवनपयसामेव पतयः
सुराचार्यज्ञारद्युमणिसुतदेवारिसचिवाः ॥ ६८ ॥

सूर्य, मङ्गल और बृहस्पति ये पुरुषसंज्ञक कहाते हैं शुक्र व चन्द्रमा स्त्रीसंज्ञक होते हैं बुध और शनैश्चर ये प्रकृति पुरुष होकर नपुंसक कहे जाते हैं और आकाश, पृथ्वी, तेज, पवन और जलों के अधिपति बृहस्पति, बुध, मङ्गल, शनैश्चर व शुक्र कहातेहैं ॥ ६८ ॥

मज्जाद्यधिपानाह—

कक्ष्यायां क्रमशो दिनेशतनयाज्ज्योतिर्भचक्राश्रिताः
छायासूनुगुरुक्षमाजदिनकृच्छुक्रेन्दुपुत्रेन्दवः।
मज्जास्नायुवसास्थिशुक्ररुधिरत्वग्धातुनाथाः क्रमा-
दारार्कीज्यदिनेशशुक्रशशभृत्तारासुताः कीर्तिताः ॥ ६९ ॥

कक्षा में क्रमसे सूर्यपुत्र के सकाश से शनैश्चर, गुरु, मङ्गल, सूर्य, शुक्र, चन्द्रमा और

बुध ये ज्योतिर्भचक्र में टिके हुए प्रतीत होते हैं और मज्जा, स्नायु, वसा, अस्थि, शु रुधिर और त्वचा इन्होंके स्वामी क्रमसे मङ्गल, शनैश्चर, बृहस्पति, सूर्य, शुक्र, चन्द्र और बुध कहाते हैं ॥ ६९ ॥

लवणादिरसादीनाह—

लवणकटुकषायस्वादुतिक्ताम्लमिश्राः
शशिरविशनिजीवारासुरेज्यज्ञनाथाः ।
अयनदिवसपक्षर्त्वब्दमासक्षणेशा
रविकुजसितसौम्या मन्दजीवेन्दवश्च ॥ ७० ॥

लवण, कटु, कषाय, स्वादु, तिक्त, अम्ल और मिश्र इन रसोंके चन्द्रमा, सूर्य, शनि गुरु, मङ्गल, शुक्र और बुध ये अधिपति कहातेहैं और अयन, दिन, पक्ष, ऋतु, अब्द (वर्ष मास और क्षण इनके सूर्य, मङ्गल, शुक्र, बुध, शनि, गुरु और चन्द्रमा ये स्वामी कहेजाते हैं ७०

उच्चादिज्ञानमाह—

मेषो वृषो मकरषष्ठकुलीरमीनास्तौली च कुम्भभवनानि तदस्तनीचाः ।
१० ३ २८ १५ ५ २७ २०
नित्यांगना हरिमिया मनुसारनीरसंख्यादिवाकरमुखादतितुङ्गनाथाः ॥७१॥

मेष, वृष, मकर, कन्या, कर्क, मीन, तुला और कुम्भ ये भवन सूर्यादिकों के उ कहाते हैं और उनके सातवें २ भवन नीचसंज्ञक होते हैं यानी तुला, वृश्चिक, कर्क, मीन मकर, कन्या और मेष ये सूर्यादिकों के नीच होते हैं १०-३-२८-१५-५-२७-२० इन अंशों से मेषादिक परमोच्च होते हैं और इन्हीं पूर्वोक्त अंशों से तुलादिक परम नीच कहाते हैं ॥ ७१ ॥

मूलत्रिकोणान्याह—

मूलत्रिकोणा हरितावुरक्रिया वधूधनुस्तौलिघटादिवाकरात् ।
सितासितार्काङ्गिरसां नखांशकास्त्रिकोणमादौ परतः स्वमन्दिरम् ॥७२॥

सिंह, वृष, मेष, कन्या, धन, तुला और कुंभ ये सूर्य से मूलत्रिकोण होते हैं और शुक्र, शनैश्चर, सूर्य और बृहस्पति के वीस अंश आदि में मूलत्रिकोण होकर पीछे से अपने घर को जाते हैं ॥ ७२ ॥

वृषादिभागत्रयमुच्चमिन्दो मूलत्रिकोणं परतस्तु सर्वम् ।
मेषादिका द्वादशभागसंज्ञाः कुजस्य कोणं परतः शुभं स्यात् ॥ ७३ ॥

वृषादि के तीन अंश चन्द्रमा का उच्च कहाता है और पीछे का सारा मूलत्रिको

होता है और मेषादि के बारह अंश मङ्गल का मूलत्रिकोण होता है और पीछे का अपना घर होता है ॥ ७३ ॥

कन्यार्धमुच्चं शशिजस्य कोणं दशांशकाः स्वर्क्षफलं शरांशाः ।
कुम्भस्त्रिकोणं फणिनायकस्य तुङ्गं नृयुग्मं रमणीगृहं स्यात् ॥ ७४ ॥

कन्या का आधा बुध का उच्च होता है व दश अंश मूलत्रिकोण होता है व पांच अंश अपने राशिफल को देता है और कुम्भ राहु का मूलत्रिकोण व मिथुन उच्च व कन्या अपना घर कहाता है ॥ ७४ ॥

ग्रहाणां फलविचारे विशेषमाह—

स्वोच्चे पूर्णं स्वर्क्षकेऽर्द्धं सुहृद्भे पादं द्विड्भेऽल्पं शुभं खेचरेन्द्रः ।
नीचस्थायी नास्तगो वा न किंचिन्नूनं पादं स्वत्रिकोणे ददाति ॥७५॥

अपने उच्चमें बैठा हुआ ग्रह पूर्णफल को देता है व अपनी राशि में टिका हुआ आधा फल देता है व अपने मित्र के घर में चौथियाई फल को देता है व शत्रु के घर में टिका हुआ थोड़ा फल देता है नीच व अस्तंगत हुआ ग्रह कुछ फल नहीं देता है और अपने मूलत्रिकोण में बैठा हुआ ग्रह चौथियाई फल को निश्चय कर देता है ॥ ७५ ॥

ग्रहाणां स्थानविशेषेण विफलत्वमाह—

सभानुरिन्दुः शशिजश्चतुर्थे गुरुः सुते भूमिसुतः कुटुम्बे ।
भृगुः सपत्ने रविजः कलत्रे विलग्नतस्ते विफला भवन्ति ॥ ७६ ॥

सूर्यसमेत चन्द्रमा व बुध लग्न से चौथे में बैठा हो व बृहस्पति पांचवें घर में हो व मङ्गल दूसरे घर में टिका हो व शुक्र छठे में बैठा हो और शनैश्चर सातवें घरमें बैठा हो तो विफल होते हैं ॥ ७६ ॥

बालाद्यवस्थाज्ञानमाह—

बालाद्यवस्थाः क्रमशो ग्रहाणामोजेसमेतद्विपरीतमाहुः ।
बालः कुमारोऽथ युवा च वृद्धो मृतोलवानामृतुभिःक्रमेण ॥
बालाद्यवस्थानुगुणं व्रजन्ति तत्पाककाले दिननाथमुख्याः ॥ ७७ ॥

विषम राशि में ग्रहों की बालादि अवस्थायें क्रम से होती हैं और सम राशियों में वे अवस्थायें उलटे क्रमसे हो जाती हैं बाल, कुमार, युवा, वृद्ध और मृत ये अवस्थायें छः अंशों से विषम राशियों में क्रम से होती हैं और मृत, वृद्ध, युवा, कुमार और बाल इस क्रम से सम राशियों में कहाती हैं इसलिये सूर्यादिक ग्रह उक्त अवस्थाओं के पाककाल में बालादि अवस्थाओं के अनुरूप (समान) फल को प्रदान करते हैं ॥ ७७ ॥

रव्यादिग्रहाणां स्वरूपाण्याह—

प्रतापशाली चतुरस्रदेहः श्यामारुणाङ्गो मधुपिङ्गलाक्षः ।
पित्तात्मकः स्वल्पकचाभिरामो दिवाकरः सत्त्वगुणप्रधानः ॥ ७८ ॥

प्रतापशाली, चौकोण देहवाला, काला व लाल अंगवाला, मीठे व पीले नयन वाला, पित्त स्वभाव को रखता हुआ थोड़े बालों से अभिराम होकर सूर्य सतोगुण प्रधान होता है ॥ ७८ ॥

चन्द्रस्वरूपमाह—

संचारशीलो मृदुवाक् विवेकी शुभेक्षणश्चारुतरः स्थिराङ्गः ।
सदैव धीमांस्तनुवृत्तकायः कफानिलात्मा च सुधाकरः स्यात् ॥७९॥

संचारशाली, कोमल वाग्विलासी, विवेकी, शोभन दृष्टिवाला, बड़ा सुन्दर व मज़बूत अंगों को धारता हुआ सदैव बुद्धिमान् व सूक्ष्म गोलाकार आकारवाला, कफी व वादी प्रकृतिवाला चन्द्रमा कहाता है ॥ ७९ ॥

भौमस्वरूपमाह—

क्रूरेक्षणस्तरुणमूर्तिरुदारशीलः पित्तात्मकः सुचपलः कृशमध्यदेशः ।
संरक्तगौररुचिरावयवः प्रतापी कामी तमोगुणरतस्तु धराकुमारः ॥८०॥

क्रूरदृष्टिवाला, तरुणमूर्तिधारी, उदारशाली, पित्तप्रकृतिवाला, महाचपल, क्षीण कटिवाला, लाल व गोरे अंगोंवाला, कामी व प्रतापी होकर तमोगुण में लगा हुआ मङ्गल कहाता है ॥ ८० ॥

बुधस्वरूपमाह—

दूर्वादलद्युतितनुः स्फुटवाक् कृशाङ्गः
स्वामी रजोगुणवतामतिहासलोलः ।
हानिप्रियो विपुलवित्तकफानिलात्मा
सद्यः प्रतापविभवः शशिजश्च विद्वान् ॥ ८१ ॥

दूर्वादल के समान शरीरवाला साफ़ वाणी का बोलनेवाला व दुबले शरीर को रखनेहारा रजोगुण वालों का स्वामी व हसने में चपल व हानि में प्यार करनेहारा महा धनी, कफी, बादी व शीघ्र विभव प्रतापशाली होकर विद्वान् बुध कहाजाता है ॥ ८१ ॥

बृहस्पतिस्वरूपमाह—

बृहदुदरशरीरः पीतवर्णः कफात्मा

सकलगुणसमेतः सर्वशास्त्राधिकारी।
कपिलरुचिकचाक्षः सात्त्विकोतीवधीमान्
अलघुनृपतिचिह्नश्रीधरो देवमन्त्री॥ ८२ ॥

महोदर शरीरवाला, पीला, कफी, सर्वगुणों वाला, सकल शास्त्राधिकारी, पीली आंखों व बालोंवाला, सतोगुणी, अत्यन्त बुद्धिमान् अल्पराजचिह्न वाला होकर शोभा को धारता हुआ बृहस्पति कहाता है॥ ८२ ॥

भृगुस्वरूपमाह—

असितकुटिलकेशः श्यामसौन्दर्यशाली
समतररुचिराङ्गसौम्यदृक्कामशीलः।
अतिपवनकफात्मा राजसश्रीनिधानः
सुखबलसुगुणानामाकरश्चासुरेज्यः॥ ८३ ॥

श्याम व टेढ़े केशवाला, श्यामतनुधारी, सौन्दर्यशाली समान व सुन्दर अंगोंवाला, शोभन आंखोंवाला, कामी, अतिवादी व कफी व रजोगुण की शोभाका निधान व सुख, बल व गुणों की खानि होता हुआ शुक्र कहाता है॥ ८३ ॥

शनिस्वरूपमाह—

काठिन्यरोमावयवः कृशात्मा दूर्वासिताङ्गः कफमारुतात्मा।
पीनद्विजश्चारुपिशङ्गदृष्टिः सौरिस्तमो बुद्धिरतोलसः स्यात्॥ ८४॥

कर्कशरोमों व अंगोंवाला, दुबला, काला, कफी, वादी, बड़े दांतोंवाला व सुन्दर पीले नयनोंवाला व तमोगुण में बुद्धि को रखता हुआ शनैश्चर आलसी कहाता है॥८४॥

ग्रहवधमाह—

अर्केण मन्दः शनिना महीसुतः कुजेन जीवो गुरुणा निशाकरः।
सौम्येन शुक्रो सुरमन्त्रिणा बुधो बुधेन चन्द्रः खलु वध्यते सदा॥ ८५ ॥

सूर्य से शनैश्चर, शनैश्चर से मङ्गल, मङ्गल से बृहस्पति, बृहस्पति से चन्द्रमा व बुध से शुक्र व शुक्र से बुध व बुध से चन्द्रमा हमेशा वध किया जाता है॥ ८५ ॥

ग्रहाणांमित्रादीन्याह—

मित्राणि भानोः कुजचन्द्रजीवाः शत्रू सितार्की शशिजः समानः।
चन्द्रस्य मित्रे दिननायकज्ञौ समा गुरुक्ष्माजसितासिताः स्युः॥ ८६ ॥

मङ्गल, चन्द्रमा, बृहस्पति ये सूर्य के मित्र हैं, शुक्र व शनैश्चर ये शत्रु हैं और बु
कहाता है और सूर्य व बुध ये चन्द्रमा के मित्र हैं व गुरु, मङ्गल, शुक्र व शनैश्चर
कहाते हैं ॥ ८६ ॥

आरस्य मित्राणि रवीन्दुजीवाश्चान्द्रीरिपुः शुक्रशनी समानौ ।
सूर्यासुरेज्यौ सुहृदौ बुधस्य समाः शनीज्यावनिज्यास्त्वरीन्दुः ॥ ८

सूर्य, चन्द्र व बृहस्पति ये मङ्गल के मित्र हैं और बुध शत्रु है व शुक्र, शनैश्चर
हैं व सूर्य, शुक्र ये बुध के मित्र हैं व शनि, गुरु व मङ्गल ये समान हैं और चन्द्रमा
कहाता है ॥ ८७ ॥

सूर्यारचन्द्राः सुहृदस्तु सूरेः शत्रू सितज्ञौ रविजः समानः ।
मित्रे शनिज्ञौ भृगुनन्दनस्येन्द्विनावरी जीवकुजौ समानौ ॥८

सूर्य, मङ्गल, चन्द्रमा ये बृहस्पति के मित्र कहाते हैं व शुक्र और बुध ये शत्रु हैं
शनैश्चर समान (उदासीन) कहाता है व शनैश्चर, बुध ये शुक्र के मित्र हैं, चन्द्र
सूर्य शत्रु हैं और बृहस्पति व मङ्गल ये समान कहाते हैं ॥ ८८ ॥

मन्दस्य सूर्येन्दुकुजाश्च शत्रवः समः सुरेज्यः सुहृदौ सितेन्दुजौ ।
तत्कालनैसर्गिकतश्च पञ्चधा पुनः प्रकल्प्यास्त्वतिमित्रशत्रवः ॥ ८

सूर्य, चन्द्र और मङ्गल ये शनैश्चर के शत्रु कहाते हैं और बृहस्पति सम यानी
सीन होते हैं शुक्र और बुध ये मित्र कहाते हैं और तात्कालिक नैसर्गिक मित्रता से
मित्र व अतिशत्रु पांच प्रकार कल्पना करना चाहिये ॥ ८९ ॥

स्थिरादिसंज्ञान्याह—

रविः स्थिरः शीतकरश्चरः स्यादुग्रः कुजश्चन्द्रसुतस्तु मिश्रः ।
मृदुः सुरेज्यो भृगुजो लघुश्च शनिस्तु तीक्ष्णः कथितो मुनीन्द्रैः ॥९

सूर्य स्थिर, चन्द्रमा चर, मङ्गल उग्र, बुध मिश्र, बृहस्पति मृदु, शुक्र लघु और
श्चर तीक्ष्णसंज्ञक मुनियों ने कहा है ॥ ९० ॥

ग्रहाणामीक्षणमाह—

पादेक्षणं भवति सोदरमानराश्योरर्धं त्रिकोणयुगलेखिलखेचराणाम्
पादोनदृष्टिनिचयश्चतुरस्रयुग्मे सम्पूर्णदृग्बलमनङ्गगृहे वदन्ति ॥९

तीसरी व दशवीं राशि में समस्त ग्रहों की पाददृष्टि होती है पँचयें व नवयें अ
होती है चौथे व अठयें पादोनदृष्टि कहाती है और सतयें घर में संपूर्ण दृष्टि अ
लोग कहते हैं ॥ ९१ ॥

शनिरतिबलशाली पाददृग्वीर्ययोगे
सुरकुलपतिमन्त्री कोणदृष्टौ शुभः स्यात् ।
त्रितयचरणदृष्ट्या भूकुमारः समर्थः
सकलगगनवासाः सप्तमे दृग्बलाढ्याः ॥ ६२ ॥

पाददृष्टि बल के योग में शनैश्चर अतिबलशाली होता है व कोणदृष्टिमें बृहस्पति भदायक होता है व तीन चरण की दृष्टि से मङ्गल समर्थ होता है और संपूर्ण ग्रह सातयें रमें दृष्टिबलसे संपन्न रहते हैं ॥ ६२ ॥

अथोर्ध्वदृष्टी दिननाथभौमौ दृष्टिः कटाक्षेण कवीन्दुसून्वोः ।
शशाङ्कगुर्वोस्समभागदृष्टिरधोक्षिपातस्त्वहिनाथशन्योः ॥ ६३ ॥

सूर्य व मङ्गल ये दोनों ऊर्ध्वदृष्टिवाले कहाते हैं शुक्र व बुध ये कटाक्ष यानी नेत्रों की र से दृष्टि रखते हैं चन्द्रमा व बृहस्पति ये दोनों समभाग दृष्टिवाले होते हैं और राहु शनैश्चर की दृष्टि नीचे रहती है ॥ ६३ ॥

रव्यादिग्रहेभ्यः फलविचारमाह—

सूर्यादात्मपितृप्रभावनिरुजाशक्तिश्रियश्चिन्तये-
च्चेतोबुद्धिनृपप्रसादजननीसंपत्करश्चन्द्रमाः ।
सत्त्वं रोगगुणानुजावनिसुताञ्ज्ञातीन्धरासूनुना
विद्याबन्धुविवेकमातुलसुहृद्वाक्कर्मकृद्बोधनः ॥ ६४ ॥

आत्मा व पिता का प्रभाव, नैरोग्य, शक्ति और संपत्ति या शोभा को सूर्य से विचार मन, बुद्धि, राजा की प्रसन्नता, माता और संपदा को चन्द्रमा से विचारै बल, रोग, ा, भाई, भूमि, पुत्र और कुटुम्बी को मङ्गल से विचार करै और विद्या, बन्धु, विवेक, मा, मित्र और वाक्कर्म को बुध से विचारना चाहिये ॥ ६४ ॥

प्रज्ञावित्तशरीरपुष्टितनयज्ञानानि वागीश्वरा-
त्पत्नीवाहनभूषणानि मदनव्यापारसौख्यं भृगोः ।
आयुर्जीवनमृत्युकारणविपत्संपत्प्रदाता शनिः
सर्पेणैव पितामहन्तु शिखिना मातामहं चिन्तयेत् ॥ ६५ ॥

प्रज्ञा, धन, तनुपुष्टि, पुत्र और ज्ञान को बृहस्पति से विचारै, पत्नी (स्त्री) वाहन वारी) आभूषण, कामकेलि, रोजगार और सौख्य को शुक्र से विचार करै आयु-

दीय, जीवन, मरणकारण, विपदा और संपदा का दाता शनैश्वर कहाता है व बाबा राहु से और नाना का केतु से विचार करै ॥ ९५ ॥

कारकानाह—

द्युमणिरमरमन्त्री भूसुतःसोमसौम्यौ
गुरुरिनतनयारौ भार्गवो भानुपुत्रः।
दिनकरदिविजेड्यौजीवभानुज्ञमन्दाः
सुरगुरुरिनसूनुः कारकाः स्युर्विलग्नात् ॥ ९६ ॥

सूर्य तनुकारक, बृहस्पति धनकारक, मङ्गल सहजकारक, सोम व बुध सुखकारक, बृहस्पति पुत्रकारक, शनैश्वर व मङ्गल शत्रुकारक, शुक्र स्त्रीकारक, शनैश्वर मृत्युकारक, सूर्य गुरु धर्मकारक, गुरु, सूर्य, बुध व शनैश्वर राजकारक, बृहस्पति लाभकारक और शनैश्वर व्ययकारक यानी खर्च को कराता है ये लग्न से कारक होते हैं ॥ ९६ ॥

अरिष्टदायकानाह—

कामावनीनन्दनशशिजाताः सितेन्दुपुत्रामरवन्द्यमानाः।
अरिष्टदास्तेखिलजातकेषु सदाष्टमस्थः शनिरिष्टदः स्यात् ॥९७

सातवें घरमें मेष, वृश्चिक राशि में शुक्र, बुध और बृहस्पति बैठे हों तो समस्त जातक में अरिष्टदायक कहाते हैं और शनैश्वर अष्टममें बैठा हुआ हमेशह अभीष्टदायक होताहै॥९

ग्रहाणां शुभाशुभविचारे वर्षाण्याह—

आकृत्यो २२ जिन २४ संमिता गजकरा २८ नेत्राग्नयः ३२ षोडश
तत्त्वा २५ न्यङ्गगुणा ३६ द्विवेद ४२ प्रमिताः सूर्यादिकानां समाः।
यः खेटः स्वगृहे स्वतुङ्गभवने षड्वर्गशुद्धश्च यस्तस्याब्दे हि नृ
भवेदतिसुखं भाग्योदयं निश्चितम् ॥ ९८ ॥

सूर्य २२ वर्ष में फल देता है, चन्द्रमा २४ वर्ष में, मङ्गल २८ वर्ष में, बुध ३२ वर्ष बृहस्पति १६ वर्ष में, शुक्र २५ वर्षमें, शनैश्वर ३६ वर्ष में, राहु ४२ वर्ष में और केतु ४८ में फल देता है जो ग्रह अपने घर व अपने उच्चमें बैठा हो और जो ग्रह षड्वर्ग से शुद्ध हो उसीकी वर्ष में मनुष्यों को अतिसुख और भाग्योदय निश्चय कर होता है ॥ ९८ ॥

ग्रहाणामरिष्टहरत्वमाह—

राहुदोषं बुधो हन्यादुभयोस्तु शनैश्चरः।
त्रयाणां भूमिजो हन्ति चतुर्णां दानवार्चितः ॥ ९९ ॥

पञ्चानां देवमन्त्री च षण्णां दोषन्तु चन्द्रमाः ।
सप्तदोषं रविर्हन्याद्विशेषादुत्तरायणे ॥ १०० ॥

बुध राहुदोष को विनाशता है व शनैश्चर दोनों के दोषों को हरता है, मङ्गल चारों के दोषों को हरता है, बृहस्पति पांचों के दोषों को विनाशता है, चन्द्रमा छः ग्रहों के दोषों को हरता है और सूर्य सात ग्रहों के दोषों को विनाशता है परन्तु उत्तरायण में विशेषता से सातों ग्रहों के दोषों को हरता है ॥ ९९ । १०० ॥

रव्यादिकृतकष्टान्याह—

मन्दाग्निरोगज्वरवृद्धिदीपनक्षयातिसारादिकरोगसंकुलैः ।
नृपालदेवावनिदेवकिङ्करैः करोति चित्तव्यसनं दिवाकरः ॥ १ ॥

अग्निरोग, ज्वर की वृद्धि, ज्वर का दीपन, क्षय व अतीसार आदि रोगसमूहों से तथा राजा, देवता, ब्राह्मण और किंकरों द्वारा सूर्य सदा चित्त में दोष को करता है ॥ १ ॥

चन्द्रकृतरोगानाह—

पाण्डुदोषजलदोषकामिलापीनसादिरमणीकृतामयैः ।
कालिकासुरसुवासिनीगणैराकुलं च कुरुते तु चन्द्रमाः ॥ २ ॥

पाण्डुदोष, जलदोष, कामिला, पीनस आदि रोग व नारियों से किये रोग कालिका, देवता और सुवासिनीगणों से चन्द्रमा मनुष्य को व्याकुल करता है ॥ २ ॥

मङ्गलकृतदोषानाह—

पीनबीजकफशस्त्रपावकग्रन्थिरुक्व्रणदरिद्रजामयैः ।
वीरशैवगणभैरवादिभिर्भीतिमाशु कुरुते धरासुतः ॥ ३ ॥

स्थूलता, बीजदोष, कफ, हथियार, अग्नि व गिलटियों से उपजे रोग घाव व दरिद्रसे पैदा हुए रोग तथा वीरगण, शैवगण व भैरवादिगणों से मङ्गल शीघ्रता से भय को करता है ॥ ३ ॥

बुधकृतदोषानाह—

गुह्योदरादृश्यसमीरकुष्ठं मन्दाग्निशूलग्रहणीरुगाद्यैः ।
बुधादिविष्णुप्रियदासभूतैरतीवदुःखं शशिजः करोति ॥ ४ ॥

गुदरोग, उदररोग, दृष्टिरोग, वातव्याधि, कुष्ठरोग, मन्दाग्नि, शूल, संग्रहणी आदि रोग तथा बुधादि विष्णु के प्रियदास प्राणियों से बुध अत्यन्तदुःख को करता है ॥ ४ ॥

सूर्यकृतरोग

चन्द्रकृतरोग

मंगलकृतरोग

बुधकृतरोग

गुरुभृगुकृतदुःखान्याह—

आचार्यदेवगुरुभूसुरशापदोषैः शोकं च गुल्मरुजमिन्द्रगुरुः करोति।
कान्ताविकारजनिमेहरुगासुराद्यैः स्वेष्टाङ्गनाजनकृतैर्भयमासुरेज्यः॥ ५

आचार्य, देवता, गुरु और ब्राह्मणों से दिये शाप दोषों से बृहस्पति शोक और गु रोग को करता है तथा स्त्रियों के विकारों से उपजे प्रमेहरोग व असुरादिकों व अ चाही अङ्गनाओं से किये दोषों से शुक्र भय को उपजाता है॥ ५॥

शनिकेतुकृतदुःखान्याह—

दारिद्र्यदोषनिजकर्मपिशाचचौरैः क्लेशं करोति रविजः सहसन्धिरोगैः।
कण्डूमसूरिरिपुकृत्रिमकर्मरोगैः स्वाचारहीनलघुजातिगणैश्च केतुः॥ ६

दारिद्र्यदोष, अपने कर्म, पिशाच, चोर और सन्धिरोगों से शनैश्चर क्लेश को कर है तथा खाज, मसूरिका, शत्रु, कृत्रिम कर्मरोग और अपने आचार से हीन छोटी जा वाले जनों से केतु कष्ट को करता है॥ ६॥

राहुकृतदोषानाह—

करोत्यपस्मारमसूरिरज्जुक्षुद्दृक्कृमिप्रेतपिशाचभूतैः।
उद्बन्धनाचारुचिकुष्ठरोगैर्विधुन्तुदश्चातिभयं नराणाम्॥ ७॥

अपस्मार (मिरगी), मसूरिका, रज्जु, क्षुत् (छींक या क्षुधा), दृष्टिरोग, कीड़े, प्रेत, पि शाच, भूत, उद्बन्धन, अरुचि और कुष्ठरोगों से राहु मनुष्यों को बड़ाभय करता है॥७

पुत्रलाभार्थमुपायमाह—

हरिवंशो रविणा शशी त्रिपुरहा भौमे च रुद्री क्रिया
सौम्ये सम्पुटचण्डिका च विधिवज्जीवे च पैत्री तिथिः।
शुक्रे गोप्रतिपालनं च कथितं मन्दे च मृत्युञ्जयः
कन्यादानभुजङ्गकेतुकपिलासन्तानसौख्यप्रदा॥ ८॥

जो पुत्र के लिये सूर्य अरिष्टदायक हो तो हरिवंश का श्रवण करै व चन्द्रमा अरिष्टदा यक हो तो महादेव का आराधन करै व मङ्गल अरिष्टदायक हो तो रुद्राभिषेक की क्रि करै व बुध अरिष्टदायक हो तो विधान से संपुट चण्डी का आराधन करै व बृहस्प अरिष्टदायक हो तो पितरों की तिथि में आमान्नदान करै व शुक्र अरिष्टदायक हो त गौओं का प्रतिपालन करै व शनैश्चर अरिष्टदायक हो तो मृत्युञ्जय का आराधन करै

राहु अरिष्टदायक हो तो कन्यादान करै और जो केतु अरिष्टदायक हो तो संतानसौख्य-दायिका कपिला गौका दान करै ॥ ८ ॥

आद्यन्तमध्यफलदायकानाह —

इलातनूजश्च पतिर्नलिन्याः प्रवेशकाले फलदः किल स्यात् ।
राश्यर्धभोगे भृगुजामरेज्यौ प्रान्ते शनीन्दू च सदेन्दुसूनुः ॥ ९ ॥

मङ्गल और सूर्य प्रवेशकाल में फलदायक होते हैं शुक्र व बृहस्पति मध्य में फल-दायक होते हैं शनैश्चर व चन्द्रमा आखिरी में फलदायक होते हैं और बुध हमेशा फल को देता है ॥ ९ ॥

यद्धातुकोपजनिताखिलरोगशान्त्यै
तन्नाथमाशु जपतर्पणहोमदानैः ।
संपूज्य रोगभयशोकविमुक्तचिन्ताः
सर्वे नराः सुखयशोबलशालिनः स्युः ॥ १० ॥

जिन ग्रहों के धातुकोप से अखिल रोग उपजे हों उनकी शान्ति के लिये जप, तर्पण, होम और दानों से उन ग्रहों के स्वामी को भलीभांति पूजकर संपूर्ण मनुष्य रोग, भय और शोक से विमुक्तचिन्तावाले होतेहुए सुखी व यशस्वी होकर बलशाली होते हैं ॥१०॥

इति जातकपारिजाते ग्रहस्वरूपादिः ॥

करतलेदिग्ज्ञानमाह—

यत्र चाङ्गुलयः सन्ति तां दिशं विद्धि पूर्विकाम् ।
यत्रास्ति मणिबन्धोहि पश्चिमां विद्धि तां दिशम् ॥ ११ ॥
वृद्धाङ्गुलिस्तु यत्रास्ति चोत्तरां विद्धि तां दिशम् ।
क्षपाकरस्तु यत्रास्ति तां दिशं दक्षिणां विदुः ॥ १२ ॥

जहां अँगुलियां रहती हैं उसको पूर्वदिशा जानिये व जहां मणिबन्ध (कब्जा) विद्यमान रहता है उस दिशा को पश्चिम जानिये और जहां अँगूठा रहता है उसको उत्तर दिशा जानिये और जहां चन्द्रमा रहता है उसको पण्डितों ने दक्षिण दिशा कहा है ॥११। १२॥

फलानां तारतम्यमाह—

यत्र यत्र स्थितःखेटस्तत्रस्थोपि यदा भवेत् ।
तदा शुभं फलं वाच्यमित्युक्तं गणकोत्तमैः ॥ १३ ॥
ये ग्रहा दक्षिणस्थाः स्युस्ते यदा चोत्तरे स्थिताः ।

ये ग्रहाः पूर्वभागस्थास्ते यदा पश्चिमांगताः ॥ १४ ॥
तदा फलं ग्रहाः सर्वे विपरीतं दिशन्ति वै ।
तारतम्यं फलस्यैवं विज्ञेयं विदुषां प्रिये ॥ १५ ॥

अहो प्रिये ! करतल में जहां जहां ग्रह बैठे हैं वहीं यदि टिकेरहें तो शुभ फल कहना चा हिये ऐसा सामुद्रिकवेत्ता पण्डितों ने कहा है जो ग्रह दक्षिण तरफ़ टिके हों वे यदि उ में बैठे हों और जो ग्रह पूर्वभाग में बैठे हों वे यदि पश्चिम में चले जावें तो समस्त विपरीत फल को देते हैं इस भांति फलों का तारतम्य (कम या ज़्यादः) पण्डितों जानना चाहिये ॥ १३ । १५ ॥

करतले रेखाज्ञानमाह—

सौम्यादधस्तिष्ठति या सुरेखा संपूर्णरूपा यदि मध्यमान्ता ।
आयुष्यरेखां कवयः कुर्वन्ति संभोगरेखां प्रवदन्ति चान्ये ॥ १६ ॥

बुध ग्रह के नीचे तरफ़ जो रेखा टिकी है वह यदि पूर्णरूप होकर मध्यमा पर्य चली गई हो तो उसको कवियों ने आयुरेखा कहा है और मतान्तर में अन्य कवित उसको संभोगरेखा कहते हैं ॥ १६ ॥

आयुष्यरेखातलगास्ति रेखा तां मातृरेखां कथयन्ति धीराः ।
तस्यास्त्वधस्तिष्ठति पितृरेखा तां केपि सन्तो विवदन्ति चायुः ॥ १७

आयुरेखा के नीचे जो रेखा विद्यमान रहती है उसको पण्डितों ने मातृरेखा कहा उसके नीचे पितृरेखा टिकी रहती है उसको भी कितेक विद्वानोंने आयुरेखा बतलायाहै ॥१

मध्यांगता या मणिबन्धनोत्था रेखा यदा पाणितले विभाति ।
तामूर्ध्वरेखां सुधियो भणन्ति साम्राज्यदात्रीं धनधान्यदां च ॥ १८ ॥

यदि करतलमें मणिबन्धन (क़ब्ज़े) से उठी हुई जो रेखा मध्यमा पर्यन्त पहुँच सोहती हो तो उसको बुद्धिमान् सामुद्रिकवेत्तागणों ने ऊर्ध्वरेखा यानी भाग्यरेखा कहा जोकि साम्राज्य को प्रदान करती हुई धन धान्य को देती है ॥ १८ ॥

कुजान्तिकं या प्रतिभाति रेखा समागता सा मणिबन्धनान्तम् ।
ददाति वित्तं परपूरुषाणामतः परस्वाप्तिरियं प्रसिद्धा ॥ १९ ॥

जो रेखा मंगल के समीप सोहती है वह यदि क़ब्ज़े पर्यन्त चली आवे तो पर धन को देती है इसलिये परस्वाप्ति इस नाम से प्रसिद्ध रेखा कहाती है ॥ १९ ॥ (दे चित्र नं० ६)

करतलभग्नरेखामाह—

भग्ना यदा स्यात्परमायुरेखा ह्रासं प्रयायान्मनुजस्य चायुः।
मातुः सुरेखा परिकर्तिता चेन्मानो विनाशं समियान्नितान्तम् ॥ २० ॥

जिसके करतल में परमायुरेखा यदि भग्नरूप प्रतीत होतो उस प्राणी की आयु ह्रासता (अल्पता) को पाती है और यदि मातृरेखा भग्न होकर कटीसी प्रतीत हो तो उस प्राणी का मान जाता रहता यानी प्रायः अपमान हुआ करता है ॥ २० ॥

पितुः सुरेखा यदि कर्तिता स्यात्तदा पितानाशमुपैति नूनम्।
यदा भवेद्भिन्नतमस्वरूपा भयं भवेत्तातनौ सुगाढम् ॥ २१ ॥

यदि पिता की रेखा कटीसी प्रतीत हो तो पिता निश्चय कर नाश को प्राप्त होता है और यदि पूर्वोक्त रेखा भिन्नरूप होकर प्रतीत हो तो पिताके शरीरमें बड़ा भय होता है॥२१॥

संभिन्नरूपा यदि भाग्यरेखा भाग्यस्य ह्रासं मनुजः प्रयाति।
भग्ना यदा स्यात्परस्वाप्तिरेखा नो पारवित्तं लभते मनुष्यः ॥ २२ ॥

यदि भाग्यरेखा भिन्नरूप से प्रतीत हो तो प्राणी भाग्य की अल्पता को पाता है और यदि परस्वाप्ति रेखा भिन्नरूप होकर प्रतीत हो तो प्राणी पराये धन को नहीं पाताहै॥२२॥
(देखो चित्र नं० ७)

करतलेपरमायुरेखादिफलमाह—

पितुः सुरेखां परमायुरेखां शताब्दसंख्याकृतमानयुक्ताम्।
श्रुतिप्रमाणं हृदये निधाय वदन्ति विप्रा बहुशास्त्रविज्ञाः ॥ २३ ॥

अनेकानेक शास्त्रों के विज्ञाता बुद्धिमान् लोग वेदों के प्रमाण "शतंजीवामि शरदः" को हृदय में धारकर पितृरेखा को सौ वर्ष की संख्या से किये प्रमाण से संयुक्त परमायुरेखा कहते हैं ॥ २३ ॥

आयुष्यरेखा यवमात्रभागं काष्ठाब्दसंज्ञं प्रवदन्ति सन्तः।
तन्मानतः स्यात्तु वयोविभागे कष्टादिकं चेति समूहनीयम् ॥ २४ ॥

आयुरेखा के यवमात्रभाग को पण्डित लोग दश वर्ष की संज्ञावाला कहते हैं उसी प्रमाण से अवस्था के विभाग में कष्टादिक होते हैं इसीप्रकार समस्त रेखाओं में विचार करना चाहिये अर्थात् १ जौभर आयुरेखा दश वर्ष की होती है उसी प्रमाण से जहां जहां रेखा कटी हो वहां वहां पीड़ा आदिकों का विचार करै ॥ २४ ॥

मातुः सुरेखा मिलिता यदा स्यान्नोजारजातं मुनयो वदन्ति।
पित्रा वियुक्ता यदि मातृरेखा जारोद्भवं तं मनुजं करोति ॥ २५ ॥

जिसके करतल में मातृरेखा यदि पितृरेखा से मिली हुई प्रतीत हो तो उस प्राणी मुनिलोग जारजात नहीं कहते हैं और यदि मातृरेखा पिता की रेखा से जुदी हो प्रतीत हो तो उस प्राणी को जारजात करती है अथवा पिता माता में जुदाई रहती है फल कहना चाहिये ॥ २५ ॥

संभोगरेखा बहुकर्तिता चेत्पूर्वोक्तमानेन विचारणीया ।
तस्यास्त्वधस्तिष्ठति बालभावस्ततो ह्यधो यौवनमेव ज्ञेयम् ॥ २६ ॥

यदि संभोगरेखा अनेक स्थलों में कटीसी प्रतीत हो तो पूर्वोक्त मानसे यानी दश के हिसाब से फल को विचारना चाहिये उसके नीचे बालभाव (बालपन) रहता और उसके नीचे यौवन (युवापन) जानना चाहिये यानी जवानीपन बालपन के नी सदैव टिका रहता है ॥ २६ ॥

तस्मादधस्तिष्ठति वृद्धभावो नोभिन्नरूपो नहि कर्तितः स्यात् ।
तत्तत्सुकाले शुभदो जनानामेवं बुधैः सर्वफलं विचिन्त्यम् ॥ २७ ॥

उसके नीचे वृद्धपन (बूढ़ापन) रहता है जो कि भिन्नरूप व कटा हुआ नहीं हो अपने अपने समय में मनुष्यों को शुभदायक होता है इस प्रकार पण्डितों को सम फल विचारना चाहिये ॥ २७ ॥ (देखो चित्र नं० ८)

एकादशलक्षणयुतकरतलफलमाह—

१ संभोगरेखा यदि याति मध्यां शाखाविहीना नहि तत्र लग्ना ।
नैजेन दोषेण समाकुलात्मा यायाज्जनो मृत्युमुखं नितान्तम् ॥ २८ ॥

जिसके करतल में संभोग रेखा (आयुरेखा) यदि मध्यमा पर्यन्त चलीजावे जो शाखाओं से विहीन होकर उस मध्यमा में संलग्न न हो तो वह प्राणी अपने ही दोष व्याकुल आत्मावाला होता हुआ अतिशय मृत्यु के मुख में जाता है ॥ २८ ॥

२ मातुस्सुरेखा यदि खण्डिता सा चापानुरूपा समियात्सुभोगाम् ।
मानापमानेन युतो जनः स्यादात्मापघाती कथितः सुधीभिः ॥ २९ ॥

यदि माताकी रेखा खण्डित होजावे और वही यदि धनुपाकार होकर भोगरेखा के स मने पहुँच जावे तो वह प्राणी मान व अपमान से संयुक्त होता है और उसको पण्डितों आत्मघाती कहा है ॥ २९ ॥

३ छिद्रद्वयेनापि युता यदा स्यात्संभोगरेखा परिपूर्णदेहा ।
कट्यार्तियुक्तं मनुजं करोति दौर्बल्यगात्रं ह्युदरामयं तम् ॥ ३० ॥

यदि संभोगरेखा (आयुरेखा) परिपूर्णरूपवाली होती हुई दो छेदों से संयुक्त होवे तो उस प्राणी को कमर की व्याधि से युक्त, दुर्बलगात्रवाला व पेट का रोगी करती है ॥ ३० ॥

४ रेखाविहीना यदि मातृरेखा मिथ्याप्रलापी मनुजस्तदा स्यात्।
नैष्ठुर्यभावेन युतः सलोभो वासो भवेत्तस्य च दूरदेशे ॥ ३१ ॥

यदि मातृरेखा रेखाओं से विहीन हो यानी शाखाओं से रहित हो तो वह प्राणी मिथ्याभाषी व लोभी होकर निष्ठुरता से संयुत रहता है और उसका वास दूर देश में होता है यानी वह प्राणी कठोर चित्तवाला होता हुआ परदेश में बसता है ॥ ३१ ॥

५ भाग्यस्य रेखा यदि स्वल्पगा स्यात्पितुः सुरेखा खलु वेत्ररूपा।
तदन्तरं यत्प्रतिभाति सम्यक् तदा भवेन्मूढतमो व्ययी ना ॥ ३२ ॥

यदि भाग्यरेखा छोटीसी प्रतीत हो व पिता की रेखा निश्चय कर बेंत के समान देखी जावे और उन दोनों का अन्तर (मध्यभाग) भली भांति सोहता हो तो वह प्राणी खर्चीला होकर महामूर्ख होता है ॥ ३२ ॥

६ यदा भवेन्मध्यमिकासुमूले रेखाद्वयं क्षुद्रतरस्वरूपम्।
तदा जनं चातिश्रमं करोति शोकाकुलं तापयुतं च खर्वम् ॥ ३३ ॥

यदि मध्यमा के मूल में छोटे रूपवाली दो रेखायें प्रतीत हों तो उस प्राणी को परिश्रमी, शोक से व्याकुल, तापयुत व सर्वकार्य में अल्पता रखनेवाला करती हैं ॥ ३३ ॥

७ यदा भवेत्तर्जनिकासुमूले रेखाद्वयं क्षुद्रतमं विभिन्नम्।
तदा शिराघातयुतो जनः स्यात्पाषाणकार्ये बहुलाभकारी ॥ ३४ ॥

यदि तर्जनी अँगुली की मूल में छोटी व कटी होकर दो रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी पत्थे के आघात से संयुत होकर पत्थरों के कार्य में पड़कर महालाभकारी होता है ॥ ३४ ॥

८ मातुः सुरेखा यदि मध्यभिन्ना वियुक्तरूपा खलु पितृरेखा।
तदन्तरे भाति त्रिकोणचिह्नं संखण्डितं चेज्जनकस्य हन्ता ॥ ३५ ॥

यदि माता की रेखा बीच में कटीसी प्रतीत हो व पिता की रेखा जुदी होकर टिकी हो और उन दोनों के बीच में खण्डित होकर त्रिकोणाकार निशान सोहता हो तो वह प्राणी अपने पिता का मारनेवाला होता है यानी पितृहन्ता इस नाम से विख्यात होताहै ॥ ३५ ॥

९ अनामिकामूलगतं सुचिह्नं गकाररूपं नहि तत्र लग्नम्।
चौर्ये रतं तं मनुजं करोति चित्ते कृतघ्नं चपलस्वभावम् ॥ ३६ ॥

यदि गकाररूप होकर सुव्यक्त चिह्न अनामिका की मूल में प्राप्त हो परन्तु वहां लगा

हुआ न प्रतीत हो तो उस प्राणी को चौरकर्म में रत चित्त में कृतघ्नी व चपल स्वभाव वाला करता है ॥ ३६ ॥

१० निशाकरस्थानगतं सुचिह्नं कञ्जानुरूपं वसुपर्णगं स्यात् ।
बाल्ये च मध्ये च तथा च वृद्धे वित्तस्य वृन्दं लभते मनुष्यः ॥३७॥

यदि कमल के आकार, आठपत्तोंवाला, सुव्यक्त चिह्न चन्द्रमा के स्थान में प्राप्त तो वह प्राणी बालापन, युवापन और वृद्धापन में धनसमूहों को पाता है ॥ ३७ ॥

११ पितुः सुरेखोपरिगं विशुद्धं चिह्नं गुणाख्येन युतं यदा स्यात् ।
कार्योन्नतं तं पुरुषं करोति संनष्टवित्तं विगतासनं च ॥ ३८ ॥

यदि गुणनामक निशान से संयुत होकर विशुद्ध (साफ़) चिह्न पिता की रेखा ऊपर विराजता हो तो उस प्राणी को कार्यों में उन्नत, भलीभांति नष्ट धनवाला व गत पदाधिकारवाला करती है ॥ ३८ ॥ (देखो चित्र नं० ६)

अथ दशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ पित्रोः सुरेखे नहि संगते चेद्रेखाद्वयेनापि युते च खण्डिते ।
कर्तव्यकार्ये सरलं सुबोधं धत्तो जनं तं विगतारिवृन्दम् ॥ ३९ ॥

मातृरेखा, पितृरेखा ये दोनों आपस में मिली न हों व दो रेखाओं से संयुत होकर रेखाओं से खण्डित देखी जावें तो उस प्राणी को कर्तव्य कार्य में सीधा व भला जानने वाला व विना शत्रु समूहोंवाला करती हैं ॥ ३९ ॥

२ कनिष्ठिका मूलगता यदा स्यूरेखाः सुक्षुद्रा बहुला विपूर्णाः ।
विश्वासहीनं पुरुषं करोति चौर्ये रतं घोरतरं दरिद्रम् ॥ ४० ॥

जिसके करतल में कनिष्ठा की मूल में यदि छोटी व कटी होकर अनेक रेखायें प्राप्त हों तो उस प्राणी को विश्वाससे हीन, चौरकर्ममें परायण, भयंकर व दरिद्री करतीहैं॥४०॥

३ अनामिकामूलगता यदैका रेखा सुपूर्णाऽपविखण्डिता स्यात् ।
व्युत्पन्नबुद्धिं विमलस्वभावं कुर्यान्नरं तं महदाश्रयं च ॥ ४१ ॥

यदि एक रेखा पूर्णरूप व वज्र से नहीं खण्डित होकर अनामिका की मूल में प्राप्त होती हुई देखी जावे तो उस प्राणी को शास्त्रों में व्युत्पन्नबुद्धि, उत्तम स्वभाववाला, राजा महाराजों के आश्रित रखती है और यदि पूर्वोक्त रेखा वज्र से खण्डित हो उक्त फल का अभाव होता है ॥ ४१ ॥

४ अङ्गुष्ठमध्ये विशदा सुरेखा रेखात्रयेणापि विखण्डिता स्यात् ।

सद्वंशजातं मनुजं करोति सद्वंशहीनं यदि लम्बमाना ॥ ४२ ॥

यदि अँगूठा की मूल में स्पष्टरूपवाली एक रेखा तीन रेखाओं से कटीहुई प्रतीत हो तो उस प्राणी को अच्छे वंश में उपजा हुआ करती है और यदि पूर्वोक्त रेखा तीन रेखाओं से लम्बी हुई देखी जावे तो उस प्राणी को अच्छे वंशवाला नहीं करती है ॥ ४२ ॥

५ मातुः सुरेखा यदि नीचभागे संकर्तिता पुच्छयुता भवेत्तु।
धर्मेण हीनं मनुजं करोति पापे प्रवृत्तं पुरुषाधमन्तम् ॥ ४३ ॥

यदि माता की रेखा नीचे तरफ़ कटी व पूंछ से संयुत होकर प्रतीत हो तो उस प्राणी को धर्महीन, पापपरायण व पुरुषों में अधम करती है यानी वह प्राणी अधर्मी व पापी होकर पुरुषों में महानीच गिना जाता है ॥ ४३ ॥

६ संभोगरेखा यदि नीचदेशे संखण्डिता चेत्पृथगा विभाति।
पुत्रैर्वियुक्तं पुरुषं करोति रक्ताधिकं रोगयुतं विमूढम् ॥ ४४ ॥

यदि संभोगरेखा (आयुरेखा) नीचेकी ओर खण्डित व अन्तर (फ़ासिला) को प्राप्त होती हुई सोहती हो तो उस प्राणी को सन्तानहीन, अधिक रक्तवाला, रोगी व विशेषता से मूर्ख रखती है ॥ ४४ ॥

७ संभोगरेखोपरिगं यदा स्याद्रेखाद्वयं तर्जनिकासुमूले।
व्याजेन युक्तं ध्रुववाक्यहीनं कुर्याज्जनं चातिश्रमं सुदुःखम् ॥ ४५ ॥

यदि संभोगरेखा के ऊपर मिली हुई दो रेखायें तर्जनी की मूल के सामने प्रतीत हों तो उस प्राणी को कपटी, स्थिर वाक्यहीन, महापरिश्रमी व दुःखी रखती हैं ॥ ४५ ॥

८ संभोगरेखा यदि मध्यभागे वज्रास्ययुक्ता च गभीररूपा।
कुर्यान्नरं तं परुषस्वभावं नीचेन साकं कलहे प्रवृत्तम् ॥ ४६ ॥

यदि संभोगरेखा (आयुरेखा) मध्यभाग (बीच) में वज्र के मुख से संयुत होकर गहरीसी प्रतीत हो तो उस प्राणी को कठोर स्वभाववाला व नीचों के साथ लड़ाई लड़ने में लगाये रहती है यानी वह प्राणी कठिन हृदयवाला होकर अधम जातियों से बखेड़ा रखता है ॥ ४६ ॥

९ पितुः सुरेखोपरिगं यदा स्याद्रेखाद्वयं रेखयुगेन भिन्नम्।
भार्यासमूहेन युतं करोति भार्याविहीनं बहुखण्डितं चेत् ॥ ४७ ॥

पिता की रेखा के ऊपर दो रेखाओं से खण्डित होकर दो रेखायें प्रतीत हों तो उस प्राणी को भार्यासमूहों से संयुक्त रखती हैं और यदि पूर्वोक्त दोनों रेखायें अनेक रेखाओं से खण्डित होकर प्रतीत हों तो उस प्राणी को भार्याविहीन कर देती हैं ॥ ४७ ॥

१० मातुः सुरेखा यदि मध्यदेशे वज्रास्ययुक्ता च विभिन्नरूपा ।
वाग्वज्रयुक्तं मनुजं करोति पौरोहितेनापि विवादवन्तम् ॥ ४८ ॥

यदि मातृरेखा मध्य भाग (बीच) में वज्रमुख के निशान से युक्त होकर कटीसी प्रतीत हो तो उस प्राणी को कठोरवाणी वाला व पुरोहित से झगड़ा रखनेवाला रखती है यानी वह प्राणी अपने पुरोहित से लड़ाई रखता हुआ कठोर वाणी को बोलता है॥४८॥

११ अङ्गुष्ठमूले विशदं यदा स्याद्रेखाचतुष्कं च पृथक्स्वरूपम् ।
चित्ते कृतघ्नं मनुजं करोति व्यायामसक्तं विविधार्तियुक्तम् ॥ ४९ ॥

यदि अँगूठे की मूल में चार रेखायें स्पष्ट होकर अलग अलग देखी जावें तो उस प्राणी को चित्त में कृतघ्नी व कसरती व अनेकानेक पीड़ाओं से संयुक्त रखती हैं यानी वह प्राणी अकृतज्ञ होकर कसरत करता हुआ अनेक रोगों से घिरा रहता है ॥ ४९ ॥

१२ स्यातां गते मध्यमिकासुमूले रेखे सुरेखाद्वयखण्डिते चेत् ।
शूलाख्यरोगेण युतं दधाते कारुण्यहीनं विकलं जनं तम् ॥ ५० ॥

यदि मध्यमा की मूल में दो रेखायें दो २ रेखाओं से खण्डित होकर प्रतीत हों तो उस प्राणी को शूलपीड़ा से युक्त दयाहीन व विकल रखती हैं यानी वह प्राणी विकल होता हुआ करुणारससे विहीन होकर शूलपीड़ा से पीड़ित बना रहता है ॥ ५० ॥

१३ सर्वाङ्गुलीनां प्रथमे परुष्के कुम्भाख्यलग्नं यदि राजते तु ।
तदा जनो मज्जति वारिराशौ विमुक्तसंगो विरहातुरश्च ॥ ५१ ॥

यदि समस्त अँगुलियों की पहली पर्व में कुम्भराशि का स्वरूप सोहता हो तो वह प्राणी संग से रहित होकर विरह से व्याकुल होता हुआ तालाब व नदी आदिकों में डूब जाता है ॥ ५१ ॥ (देखो चित्र नं० १०)

अथ चतुर्दशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ पित्रा वियुक्ता यदि मातृरेखा रेखात्रयेणापि युता च भिन्ना ।
हत्यासहस्रेण युतो जनः स्याद्द्वीपान्तरं चैति कुटुम्बशत्रुः ॥ ५२ ॥

यदि माता की रेखा पिता की रेखा से जुदी होकर तीन रेखाओं से संयोग करती हुई कटीसी प्रतीत हो तो वह प्राणी हज़ारों हत्याओं से युक्त होता है और भाई बन्धुओं से विरोधी होकर निज देशको त्यागता हुआ दूसरे द्वीप को चला जाता है ॥ ५२ ॥

२ मातुस्सुरेखा यदि पूर्वभागे रेखाद्वयेनापि विकर्तिता स्यात् ।
तदा जनो गच्छति दूरदेशं चान्यायकार्ये समुपैति घातम् ॥ ५३ ॥

यदि माता की रेखा पूर्वभाग में दो रेखाओं से कटीसी प्रतीत हो तो वह प्राणी दूर देश को जाता है और अन्यायकार्य में आघात को पाता है यानी वह प्राणी दूर देश में जाकर अन्याय से मारा जाता है ॥ ५३ ॥

३ प्रदेशिनीमूलगतं विशुद्धं चिह्नं धनाख्येन युतं यदा स्यात्। +
पदोन्नतिं वै लभते मनुष्यः शिल्पे प्रवीणो व्यवसायमान्यः ॥ ५४ ॥

यदि धन नामक + निशान से युक्त होकर साफ़ चिह्न तर्जनी की मूल में देखा जावे तो वह प्राणी अपने अधिकार की उन्नति को पाता है और शिल्पकार्य में प्रवीण होकर रोज़गार से माननीय होता है ॥ ५४ ॥

४ मध्यापरुष्कं तृतयं विलङ्घ्य रेखा विमिश्रा यदि याति भोगाम्।
कारागृहे वासमुपैति प्राणी श्यामा सुरेखा यदि चैति मृत्युम् ॥ ५५ ॥

मध्यमा की तीसरी पर्व (पोर) को नांघकर क्षुद्ररेखा से मिली रेखा संभोगरेखा के सामने यदि प्रतीत हो तो वह प्राणी कारागार (जेलखाने) में वास करता है और यदि पूर्वोक्त रेखा कालीसी प्रतीत हो तो मृत्यु को पाता है ॥ ५५ ॥

५ निशाकरस्थानगतं सुचिह्नं कुम्भस्वरूपं यदि शोभते तु। कफस्वभाव
तदा जनो मज्जति तोयराशौ श्लेष्मस्वभावो बहुपीडितश्च ॥ ५६ ॥

यदि कुम्भलग्न का स्वरूप होकर शोभन चिह्न चन्द्रमा के स्थान में सोहता हो तो वह प्राणी जलमें डूबता है और कफीला होकर अनेकानेक रोगों से पीड़ित होता है यानी वह प्राणी घनी व्याधियों से घबड़ाता हुआ कफी होकर नदी आदिकोंमें डूब जाता है॥५६॥

६ पितुः सुरेखा मणिबन्धमेति पीना विशाखा परिपूर्णरूपा। पित रेखा
मातापितृभ्यां परिवञ्चितस्सन्नाप्नोति जन्तुर्विफलं समस्तम् ॥ ५७ ॥

यदि पिता की रेखा मोटी व विगतशाखावाली होती हुई पूर्णरूप होकर मणिबन्ध (कब्ज़े) पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी माता पिताओं से छला हुआ समस्त विफल को पाता है ॥ ५७ ॥

७ मातुस्सुरेखा निकटे यदा चेन्नाक्षत्रचिह्नं विशदं विभाति।
तदा जनो भूपतिवल्लभस्स्यात्स्वज्ञातिवृन्दे समुपैति मानम् ॥ ५८ ॥

जिस समय मातृरेखा के समीप साफ़ होकर नक्षत्रचिह्न यदि सोहता हो तो वह प्राणी राजा का प्यारा होता है और अपनी जातिसमूह में मान को पाता है यानी वह प्राणी अपने वंश में प्रतिष्ठित होता है ॥ ५८ ॥

८ अङ्गुष्ठमूले समकोणचिह्नं रेखाद्वयेनापि युतं यदा स्यात् ।
तदा जनो मज्जति वारिराशौ स्वल्पं धनं विन्दति सर्वकाले ॥ ५६ ॥

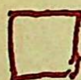
यदि दो रेखाओं से संयुक्त होकर समकोण का निशान अँगूठा की मूल में देखा ज
तो वह प्राणी जल में डूबता है और सब कालों में थोड़ा सा धन पाता है ॥ ५६ ॥

९ मातुस्सुरेखा यदि नीचदेशे समानभावेन नतोभयत्र ।
मानेन युक्तो मनुजस्तदा स्यात्पदाधिकारी जनवल्लभश्च ॥ ६० ॥

यदि माता की रेखा नीचभाग में समानभाव से दोनों तरफ़ लचीसी प्रतीत हो
वह प्राणी मान से संयुत व पदाधिकारी होकर जनों का प्यारा होता है यानी लोक
उस प्राणी की बड़ी प्रतिष्ठा होती है और वह किसी ऊंचे अधिकार में नियत होता है
उसको सर्वजन चाहते हैं ॥ ६० ॥

१० भाग्यस्य रेखा मिलिता जनन्यां संकोणचिह्नेन युता यदा स्यात् ।
बुद्ध्या विहीनं मनुजं करोति वादे प्रवृत्तं बहुलामयं च ॥ ६१ ॥

यदि भाग्यरेखा (ऊर्ध्वरेखा) माताकी रेखामें मिलकर कोणचिह्नसे संयुक्त देखी ज
तो उस प्राणीको बुद्धिहीन बड़ा झगड़ालू व अनेक रोगोंवाला बनाये रखती है ॥ ६१



११ भाग्यस्य रेखा निकटे विभाति चिह्नं चतुष्कोणयुतं त्रिपर्णम् ।
निर्बोधरूपो मनुजस्तदा स्यान्नार्यां यदा चेत्कुलटा भवेत्सा ॥ ६२ ॥

यदि भाग्यरेखा के समीप चार कोनों से संयुत होता हुआ तीन दलोंवाला निशा
सोहता हो तो वह प्राणी ज्ञानहीन होता है और यदि स्त्री के करतल में पूर्वोक्त निश
देखा जावे तो वह व्यभिचारिणी होती है ॥ ६२ ॥

१२ अनामिकामूलगता सुरेखा स्थूलस्वरूपा कुटिला यदा स्यात् ।
प्रसूतिकाले रमणीगणानां मृत्युं प्रदद्याद्भयदा जनानाम् ॥ ६३ ॥

यदि शोभनरेखा मोटी व टेढ़ी होकर अनामिका की मूल में प्रतीत होवे तो प्रसू
काल में नारीगणों को मृत्यु देती है और यदि पुरुषों के करतल में पूर्वोक्त रेखा दे
जावे तो उनको भयदायक होती है ॥ ६३ ॥

१२ कनिष्ठिका मूलगता यदा स्यू रेखा विशुद्धास्सरलाश्च तिस्रः ।
सर्वेषु कार्येषु महाप्रवीणो भूत्वा च वित्तं लभते मनुष्यः ॥ ६४ ॥

यदि कनिष्ठा की मूल में साफ़ व सीधी होकर तीन रेखायें प्रतीत हों तो वह प्रा

समस्त कार्यों में बड़ा चतुर होकर धन को पाता है यानी वह प्राणी सर्वकार्यों के करने में समर्थ होता हुआ धन का लाभ उठाता है ॥ ६४ ॥

१४ प्रदेशिनीं चापि विलङ्घ्य रेखा पूर्णा विशाखा यदि भाति भोगा।
यावज्जनो जीवति जीवलोके हत्याप्लुतो भीतियुतश्च तावत् ॥ ६५ ॥

यदि प्रदेशिनी (तर्जनी) को नांघकर भोगरेखा पूर्णरूप होकर विगतशाखावाली प्रतीत हो तो वह प्राणी जब तक जीवलोक में जीता है तब तक हत्याओं से घिरा हुआ भयभीत रहता है ॥ ६५ ॥ (देखो चित्र नं० ११)

अथ त्रयोदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

मातृरेखा

१ पित्रा वियुक्ता यदि मातृरेखा प्रदेशिनीमूलगता विभाति।
अर्थप्रणाशं लभते मनुष्यश्चानन्दहीनो भ्रमते नितान्तम् ॥ ६६ ॥

जिसके करतल में पिता की रेखा से वियुक्त होकर मातृरेखा यदि तर्जनी की मूल में सोहती हो तो वह प्राणी धन के नाश को प्राप्त होता है और आनन्द से हीन होकर भूतल में बहुत ही घूमता है ॥ ६६ ॥

२ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशाद्रेखा विभिन्ना समुपैति काव्यम्।
तदा महात्मा मनुजः सुचेताः सत्ये रतः स्याद्व्यवहारहीनः ॥ ६७ ॥

यदि मणिबन्ध (कब्ज़े) के स्थान से उठी हुई रेखा कटीसी होकर शुक्र के समीप चली जावे तो वह प्राणी महात्मा व शोभन मनवाला होता हुआ व्यवहारों से हीन होकर सत्य में परायण रहता है ॥ ६७ ॥

३ भिन्नत्रिकोणेन युता सुपूर्णा भाग्यस्य रेखा यदि याति भोगाम्।
तदा स्वदेशे मृतिमेति जन्तुः संखण्डिता चेत्पतितो महोच्चात् ॥ ६८ ॥

कटेहुए त्रिकोण से युक्त व पूर्ण होकर भाग्य की रेखा यदि भोगरेखा में मिल जावे तो वह प्राणी अपने देश में मौत को पाता है और यदि भाग्यरेखा भलीभांति खण्डित होकर प्रतीत हो तो वह प्राणी बड़े ऊंचे स्थान से गिरकर मरजाता है ॥ ६८ ॥

४ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशकात्पितुः सुरेखा यदि याति तर्जनीम्। पितृ
तदा जनो गच्छति दूरदेशकं नाप्नोति वित्तं भ्रमते भयार्तकः ॥ ६९ ॥

यदि मणिबन्ध (कब्ज़े) की जगह से उठी हुई पिता की रेखा तर्जनी पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी दूर देश को जाता है परन्तु धन को नहीं पाता है इसलिये भय से घबड़ाता हुआ घूमता है ॥ ६९ ॥

५ अनामिकामूलगतं सुचिह्नं नक्षत्ररूपं विशदं विभाति ।
संपत्तिसङ्घैः सहितो नरः स्यादाप्नोति वित्तं बहुबन्धुसौख्यम् ॥ ७० ॥

यदि नक्षत्ररूप (नखत के आकार) शोभन चिह्न साफ़ होकर अनामिका की मूल लगा हुआ सोहता हो तो वह प्राणी संपदासमूहों से घिराहुआ बहुतसे धन व बन्धु सुखों को पाता है ॥ ७० ॥

६ संभोगरेखा यदि याति तर्जनीं शाखाविहीना मिलिता च भाग्यके ।
दौर्भाग्यवन्तं मनुजं करोति सा तीक्ष्णास्त्रघातेन मृतिं ददाति वै ॥७१॥

संभोग

यदि संभोगरेखा भाग्यरेखा से मिलाप करती हुई शाखाओं से विहीन होकर तर्जनी पर्यन्त चली जावे तो उस प्राणी को बुरे भागवाला बनाती है और तीक्ष्ण अस्त्राघात से मौत को देती है ॥ ७१ ॥

७ मातुः सुरेखा यदि नीचदेशे समायुता चोर्मिकया विभाति ।
दारिद्र्यदोषेण युतो जनः स्याद्गुह्यामयो गौरवभावशून्यः ॥ ७२ ॥

यदि मातृरेखा नीचे तरफ़ मुँदरी के निशान से संयुक्त होकर सोहती हो तो वह प्राणी दारिद्र्य दोष से घिरा व गुह्यदेश में रोगवाला होता हुआ गौरव (गुरुता) से खाली रहता है ॥ ७२ ॥

८ अनामिकामध्यमिकासुमध्यं ह्यृणाख्यचिह्नेन युतं यदा स्यात् ।
तदा जनो निष्ठुरतासमेतो दीर्घेण क्रोधेन परिप्लुतः स्यात् ॥ ७३ ॥

अनामिका व मध्यमिका का बीच ऋण नामक चिह्न से संयुत होकर प्रतीत हो तो वह प्राणी दीर्घ (बड़े भारी) क्रोध से घिरा हुआ निष्ठुरता से संपन्न रहता है ॥ ७३ ॥

९ निशाकरस्थानगता गभीरा रेखा यदैका जननीमुपैति ।
तदा जनो निन्दनहासकारी धर्माधिपे वित्तधरो द्वयी चेत् ॥ ७४ ॥

चन्द्रमा के स्थान में प्राप्त हुई एक रेखा गहरी होकर यदि मातृरेखा के समीप चली जावे तो वह प्राणी निन्दा को करता हुआ हँसता रहता है और यदि दो रेखायें मातृरेखा के समीप चली जावें तो वह प्राणी धर्माधिप में धनको धारता है ॥ ७४ ॥

१० पितुस्सुरेखोपरिगं यदा स्याद्वृत्तार्धचिह्नं परिपूर्णरूपम् ।
तदा जनस्तिष्ठति स्वस्य गेहे भयप्रदः स्यात्परिवारवर्गे ॥ ७५ ॥

यदि पिता की रेखा के ऊपर प्राप्त हुआ अर्धवृत्त का निशान परिपूर्णरूपसे देखा जावे तो वह प्राणी अपने घर में ही टिका रहता है और अपने परिवारसमूह में भयदायी होता है ॥ ७५ ॥

११ भाग्येन युक्ता विशदा सरक्ता प्रदेशिनीं याति सुभोगरेखा ।
तदा जनो ब्रह्मविचारसारो जितेन्द्रियः स्यात्तु विरक्तचित्तः ॥ ७६ ॥

यदि सुभोगरेखा भाग्यरेखा से संयुत, साफ़ व लाल होकर तर्जनी पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी ब्रह्म का विचार करता हुआ जितेन्द्रिय होकर विरक्त चित्त रहता है ॥ ७६ ॥

१२ महीसुतस्थानगतं सुचिह्नं खड्गानुरूपं नहि याति मध्यम् ।
मिथ्याप्रलापी मनुजस्तदा स्याल्लोभी धनेप्सुर्धृतिधर्महीनः ॥ ७७ ॥

यदि मङ्गल के स्थान में प्राप्त हुआ तलवार के समान होकर शोभन चिह्न करतल के बीच को नहीं नांघै तो वह प्राणी मिथ्याभाषी, लोभी व धनाभिलाषी होकर धारणा व धर्म से हीन रहता है ॥ ७७ ॥

१३ पितुः सुरेखोत्थितचुल्लिरूपया संकर्तिता स्याज्जननी सुरेखया ।
तदा जनो दुर्बलदेहधारकः प्लीहादिरोगैर्नितरां प्रपीडितः ॥ ७८ ॥

यदि पिता की रेखा से उठी हुई चूल्हे के समान आकारवाली शोभन रेखा से कटी मातृरेखा प्रतीत हो तो वह प्राणी दुर्बल देहधारी होकर प्लीहा व यकृत् आदि रोगों से अतिपीड़ित रहता है ॥ ७८ ॥ (देखो चित्र नं० १२)

अथ पञ्चदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ संभोगरेखा यदि कर्तिता स्यात्तस्याः सुशाखा समुपैति मध्याम् ।
सन्तानप्रीतो मनुजस्तदा स्याद्धामी सुनामी व्यवसायपूर्णः ॥ ७९ ॥

यदि संभोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा) कटीसी प्रतीत हो और उसकी शाखा मध्यमा पर्यन्त चली जावे तो वह सन्तानों पै प्रसन्न रहता हुआ धामी व बड़ानामी होकर रोज़गार से पूर्ण होता है ॥ ७९ ॥

२ पितुः सुरेखोत्थितभाग्यरेखिका मध्ये गभीरा समुपैति मातरम् ।
अशीतिवर्षप्रमितं सुजीवनं लब्ध्वा जनश्चैति मृतस्य वित्तकम् ॥ ८० ॥

पिता की रेखा से उठी हुई भाग्यरेखा (ऊर्ध्वरेखा) बीच में गहरी होकर यदि माता की रेखा में मिल जावे तो वह प्राणी अस्सी वर्ष की आयु को पाकर मृतक पुरुष के धनसमूह को पाता है ॥ ८० ॥

३ सम्भोगरेखा यदि नीचदेशे वृत्ताख्यचिह्नेन युता विभाति ।
तदा जनो बालगणप्रियः स्यादाचारहीनो व्यभिचारशीलः ॥ ८१ ॥

यदि संभोगरेखा नीचे तरफ़ वृत्त नामक निशान से संयुत होकर सोहती हो तो वह

प्राणी बालगणों का प्यारा होता हुआ आचार से हीन होकर व्यभिचार में पराय रहता है ॥ ८१ ॥

४ कनिष्ठिकामूलगते यदा स्तो रेखे सुक्षुद्रे त्रयपर्वगे चेत् ।
तदा जनः स्याद्बहुभोगयुक्तो नार्यां यदा चेत्सुखकारिणी सा ॥ ८

यदि कनिष्ठा की मूल में प्राप्त हुई छोटीसी दो रेखायें कनिष्ठा की तीसरी पो पहुँच जावें तो वह प्राणी अनेकानेक भोगों से संयुक्त होता है और यदि पूर्वोक्त रेखायें लोगों के करतल में देखी जावें तो वह सुखकारिणी होकर संभोगकारिणी होती हैं ॥ ८

संभोग रेखा

५ संभोगरेखा यदि मध्यमान्ता रेखाचतुष्कैः परिकीर्तिता स्यात् ।
तदा जनो भूपगणैर्विभीतः संव्यस्तचित्तः परितः प्रयाति ॥ ८३ ॥

यदि संभोगरेखा मध्यमापर्यन्त पहुँचकर चार रेखाओं से कटीसी प्रतीत हो तो वह प्रा राजगणों से डरता व चित्त को डामाडोल करता हुआ चारों तरफ़ घूमता फिरता है ॥ ८

६ मध्यापरुष्कं तृतयं विलङ्घ्य रेखा विभिन्ना यदि याति भाग्याम् ।
वक्षशिराघातयुतो जनः स्याद्बाधासमूहैः परिपीडिताङ्गः ॥ ८४ ॥

मध्यमा की तीसरी पर्व को प्राप्त होकर एक रेखा भिन्न होकर यदि भाग्यरेखा समीप चली जावे तो वह प्राणी वक्षस्स्थलाघात व शिराघात से संयुत होकर बाधा मूहों से पीड़ित अंगोंवाला रहता है ॥ ८४ ॥

७ अङ्गुष्ठमध्याद्यदि याति तर्जनीं रेखा यदैका चतुरस्रमध्यमा ।
तदा जनः स्याद्गुरुतः पुरोहितात्संपर्कहीनो बहुवादकारकः ॥ ८५ ॥

जिस समय बीच में चौकोणवाली एक रेखा अँगूठा के मध्य से चलती हुई तर्ज पर्यन्त पहुँच जावे तो वह प्राणी अपने गुरु व पुरोहित से नहीं मिलाप करता हुआ ब से वादों का करनेवाला होता है ॥ ८५ ॥

८ मातुः सुरेखा यदि नीचभागे चिह्नेन गोलाकृतिना युता स्यात् ।
वामे च दक्षे च विनष्टचक्षुश्चिह्नद्वयं चेत्कथितः सदान्धः ॥ ८६ ॥

मातृरेखा

यदि माता की रेखा नीचे तरफ़ गोलाकार चिह्न से संयुत होकर प्रतीत होवे तो प्राणी बायें व दाहिने तरफ़ काना होता है यानी यह गोलाकार निशान रेखा की ओर देखा जावे तो वह प्राणी वाम आंख का काना होता है और जो दाहिने तरफ़ गो कार निशान प्रतीत हो तो वह प्राणी दाहिनी आंख का काना होताहै और जो रेख दोनों तरफ़ निशान प्रतीत हों तो वह प्राणी हमेशा अन्धा कहा जाता है ॥ ८६ ॥

६ संभोगरेखा निकटे यदास्ति वृत्तार्धचिह्नं विशदं विशालम् । संभोगरेखा
तदा जनो बान्धवमृत्युहेतुः कठोरवादी कठिनस्वभावः ॥ ८७ ॥

यदि संभोगरेखा के समीप वृत्तार्ध चिह्न साफ़ व विशाल होकर प्रतीत होवे तो वह ाणी अपने बान्धवों की मौत का कारण होकर कठोरवादी होता हुआ कठिन स्वभाव ाला कहाजाता है ॥ ८७ ॥

पितृरेखा

े० पितुः सुरेखा मिलिता जनन्यां मातुः सुरेखा नहि खण्डिता स्यात् ।
तदा जनो वेदविचारशीलो ज्ञानी गुणी स्यादभिमानहीनः ॥ ८८ ॥

यदि पिता की रेखा मातृरेखा में मिल जावे और मातृरेखा नहीं खण्डित होकर प्रतीत वे तो वह प्राणी वेद का विचार करता हुआ ज्ञानी व गुणी होकर अभिमान घमण्ड) से हीन रहता है ॥ ८८ ॥

१ मातुः सुरेखा निकटे यदास्ति गुणाख्यचिह्नं परिपूर्णरूपम् । X
तदा जनः स्याद्रमणीगणानां वाक्योत्तरे प्राप्तमहाधिकारः ॥ ८९ ॥

यदि माता की रेखा के समीप गुणनामक चिह्न (निशान) परिपूर्णरूपवाला कर प्रतीत होवे तो वह प्राणी स्त्रीगणों के वाक्यों के उत्तर देने में बड़ा अधिकारी ता है ॥ ८९ ॥

२ क्षपाकरस्योपरिगा यदा स्यू रेखास्सुक्षुद्रा बहुलाः सुपूर्णाः ।
तदा जनो घोरतरं सुरोगं प्राप्नोति काये कमलाविहीनः ॥ ९० ॥

यदि बहुत सी छोटी छोटी रेखायें पूर्णरूप होकर चन्द्रमा के ऊपर प्रतीत होवें तो वह णी लक्ष्मी से विहीन होकर अपने शरीर में बड़े भयंकर रोग को पाता है ॥ ९० ॥

३ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशात्पितुः सुरेखा बहुवक्ररूपा ।
तदा जनो वह्निविदग्धगात्रो वैकल्यचित्तो विविधामयश्च ॥ ९१ ॥

यदि मणिबन्ध (कब्ज़े) से उठी हुई पिता की रेखा अनेक स्थानों में टेढ़ी सी प्रतीत तो वह प्राणी आगी से जली देहवाला होकर विकल चित्त होता हुआ अनेकानेक गोंवाला कहाता है ॥ ९१ ॥

४ अङ्गुष्ठमूले विशदाः सुपञ्च रेखा यदा भान्ति समान्तरालाः ।
तदा जनस्सौख्ययुतो धनी स्याद्रेखात्रयं चेत्फलताविनाशः ॥ ९२ ॥

यदि पांच रेखायें साफ़ व समान अन्तरवाली होकर अँगूठा की मूल में सोहती हों तो प्राणी सुखी होकर धनी होता है और यदि तीन रेखायें प्रतीत हों तो फलसमूहों का नाश होजाता है ॥ ९२ ॥

१५ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशाद्रेखा गभीरा समुपैति चन्द्रम् ।
विश्वासयुक्तो मनुजस्तदा स्याद्विश्वासहीनो निजबन्धुवर्गे ॥ ६३

यदि मणिबन्ध (कब्ज़े) से उठी हुई एक रेखा गंभीर होकर चन्द्रमा के स चली जावे तो वह प्राणी विश्वास से युक्त होकर अपने बन्धुवर्गों में विश्वास से रहता है ॥ ६३ ॥ (देखो चित्र नं० १३)

अथ पुनरपि पञ्चदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ मातुः सुरेखोपरिगं सुचिह्नं सर्पानुरूपं यदि याति पैत्रीम् ।
तदा जनः स्यात्सरलस्वभावो निर्लज्जरूपः सहसा समेतः ॥ ६४ ॥

जिसके करतल में माता की रेखा के ऊपर प्राप्त सर्प के समान रूपवाला शोभ मान चिह्न यदि पिता की रेखा के पास चलाजावे तो वह प्राणी सीधे स्वभाववाल निर्लज्जरूप (बेशर्म) होकर साहसिक होता है ॥ ६४ ॥

२ कनिष्ठिकामूलगता विभाति रेखा सुरेखाद्वयखण्डिता चेत् ।
तदा नरः स्याद्व्यभिचारयुक्तो नार्या यदा चेद्गणिका भवेत्सा ॥ ६५

यदि कनिष्ठा की मूल में प्राप्त हुई रेखा दो रेखाओं से खण्डित होकर सोहती हो वह प्राणी व्यभिचार में परायण रहता है और यदि पूर्वोक्त रेखा जिस स्त्री के करतल देखी जावे तो वह वेश्यावृत्ति से निर्वाह करती है ॥ ६५ ॥

३ अनामिकामूलगतं विभाति वृत्तार्धचिह्नं विशदं विशालम् ।
तदा जनो बन्धुजनस्य घाती द्वेषी विषादी परनिन्दकः स्यात् ॥ ६६

यदि अनामिका की मूल में प्राप्त हुआ साफ़ व विशाल होकर वृत्तार्ध चिह्न विरा हो तो वह प्राणी बन्धुजनों का मारनेवाला, शत्रुता रखनेवाला व विषादी होकर की निन्दा करनेहारा होता है ॥ ६६ ॥

४ कनिष्ठिका मूलगतं सुचिह्नं लूतानुरूपं विशदं विभाति ।
तदा जनः स्यात्परिहासकारी जल्पाकरूपी विजयाभिलाषी ॥ ६७ ।

यदि कनिष्ठा की मूल में टिका हुआ साफ़ मकड़ी के आकारवाला शोभायमान चिह्न सो हो तो वह प्राणी बड़ा हँसनेवाला व बकनेवाला होकर विजय की अभिलाषा रखताहै॥६

५ आयुष्यरेखा यदि मध्यमान्ता अधःसुसूक्ष्मोपरितः सुपीना ।
तदा जनो वैरिगणाभिभूतो विपर्यये चेत्फलमन्यथा स्यात् ॥ ६८ ।

यदि आयुष्यरेखा (संभोगरेखा) मध्यमा पर्यन्त पहुँची हुई नीचे तरफ़ पतली ऊपरले भाग में मोटीसी प्रतीत हो तो वह प्राणी वैरिगणों से अनादृत (हाराहु

संभोग

होता है और यदि ऊपरले भाग में पतली व निचले भाग में मोटी सी देखी जावे तो वह प्राणी वैरियों को पराजित करता है ॥ ९८ ॥

संभोगरेखा

९ संभोगरेखा यदि नीचभागके संकर्तिता स्यात्तु सुसूक्ष्मरेखया।
तदा नरः स्यान्नरनाशकारकः संव्यस्तचित्तो निजपितृघातकः ॥९९॥

यदि संभोगरेखा (आयुरेखा) नीचे तरफ़ छोटी रेखा से कटी हुई प्रतीत हो तो वह प्राणी नरहत्याकारी होकर चित्त को चलायमान करता हुआ अपने बाप का मारनेवाला होता है ॥ ९९ ॥

पितृ रेखा

७ पितुः सुरेखा यदि चोर्ध्वभागे क्षुद्रा विभिन्ना विशदा सुपूर्णा।
तदा जनः सर्वजनप्रियः स्याद्व्युत्पन्नबुद्धिर्विमलस्वभावः ॥ १०० ॥

यदि पिता की रेखा ऊपरले भाग में छोटी छोटी रेखाओं से कटी हुई साफ़ होकर पूर्णरूप से प्रतीत हो यानी भारी रेखा देखी जावे तो वह प्राणी सर्वजनों का प्यारा होकर व्युत्पन्नबुद्धिवाला होता हुआ विमलस्वभाववाला रहता है ॥ १०० ॥

भाग्य रेखा

८ भाग्यस्य रेखा मिलिता जनन्यां संकोणचिह्नं विशदं विभाति।
तदा जनो मज्जति वारिशशौ व्यायामसक्तो व्यसनातुरश्च ॥ १ ॥

यदि भाग्य की रेखा माता में मिल जावे व साफ़ होकर भलीभांति कोणका निशान रहता हो तो वह प्राणी कसरती होकर जूआ आदि व्यसनों में लगा हुआ नदी नाले आदिकों में डूबजाता है ॥ १ ॥

पितृ रेखा

९ पितुः सुरेखा यदि मध्यभागे क्षुद्रा विभिन्ना मणिबन्धमुक्ता।
रोगाभिभूतो मनुजस्तदा स्यात्पूर्वोक्तमानेन विचारणीयः ॥ २ ॥

मणिबन्ध (क़ब्ज़े) से छूटी हुई पिता की रेखा यदि मध्यभाग (बीच) में छोटी छोटी रेखाओं से कटीसी प्रतीत हो तो वह प्राणी रोगों से पीड़ित होता है यह पूर्वोक्तमान से विचार करना चाहिये यानी एक जवभर का मान दशवर्ष का होता है उसी संकेत से विचारना चाहिये ॥ २ ॥

१० भाग्यादधः स्याच्छिबिकानुरूपं चिह्नं सुपूर्णं विशदस्वरूपम्।
तदा नरो नादविचारशीलो मित्राभिभूतो मरणं प्रयाति ॥ ३ ॥

यदि भाग्यरेखा के नीचे तरफ़ मियाना, पीनस आदिकों के समानरूपवाला चिह्न साफ़ पूर्णरूप से देखा जावे तो वह प्राणी नादविद्या (सांगीतशास्त्र) में परायण होता हुआ मित्रों से अनादृत होकर मौत को पाता है ॥ ३ ॥

११ भाग्येन भिन्ना यदि पितृरेखा संपूर्णरूपा मिलिता जनन्याम्।

आयुष्ययुक्तो मनुजस्तदा स्याद्युद्धाभिलाषी विजये रतश्च ॥ ४ ॥

यदि भाग्यरेखा से कटी हुई पिता की रेखा पूर्णरूप होकर माता की रेखा में मि जावे तो वह प्राणी शतायु होकर लड़ने की लालसा रखता हुआ विजयमें रत रहता है॥

१२ निशाकरस्थानगतं सुचिह्नं चुल्लीसरूपं विशदं विभाति ।
सम्पत्तिपूर्णः पुरुषः प्रकाशी पारुष्यहीनो धनतामुपैति ॥ ५ ॥

यदि चन्द्रमा के स्थान में प्राप्त हुआ चूल्हे के समान रूपवाला शोभायमान चिह्न स्प रूप से सोहता हो तो वह प्राणी संपदाओं से पूर्ण होताहुआ प्रकाशमान व कठोरता से हीन होकर ठेकाआदिकों से धनसमूहों को पाता है ॥ ५ ॥

१३ समुत्थितं चेन्मणिबन्धदेशात्सर्पानुरूपं समुपैति भाग्याम् ।
कारागृहं याति नरस्तदानीं नैजेन दोषेण समाकुलात्मा ॥ ६ ॥

यदि मणिबन्ध (कब्ज़े) से उठा हुआ चिह्न (निशान) सर्प के समान होकर भाग्य रेखा के पास चला जावे तो वह प्राणी अपने दोषसे बहुत व्याकुल मनवाला होता हुआ जेलख़ाने को जाता है यानी वह प्राणी अपने अपराध सेही जेल में डाला जाता है ॥ ६

१४ काव्यान्तिके तिष्ठति शुद्धरूपं नाक्षत्रचिह्नं यदि भासमानम् ।
वेश्यासु सक्तो मनुजस्तदा स्यान्निन्दान्वितो निन्दितलोकवासी ॥ ७

यदि नक्षत्र का चिह्न (निशान) प्रकाशमान होता हुआ शुद्धरूप होकर शुक्र के सम टिका होवे तो वह प्राणी वेश्याओं में आसक्त होता हुआ निन्दित होकर निन्दितलो का सहवासी होता है ॥ ७ ॥

१५ आयुष्यशेषे यदि भाति चिह्नं तारानुरूपं युगलस्वरूपम् ।
नारीसमूहैः सहितो नरः स्यान्निन्दान्वितः कामकलाकलापी ॥ ८ ॥

आयुष्यरेखा (पितृरेखा) के शेषभाग में तारा के समान जोड़ारूप निशान यदि सोह हो तो वह प्राणी नारीसमूहों से घिराहुआ निन्दा से संयुत होकर कामकलाओं का समुदा वाला कहाता है ॥ ८ ॥ (देखो चित्र नं० १४)

अथ षोडशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ कनिष्ठिकायास्तृतये परुष्के विभान्ति रेखाः सरलाश्च तिस्रः ।
पुत्रत्रयं वै लभते मनुष्यः संवक्ररूपा बहुकन्यकाश्चेत् ॥ ९ ॥

यदि कनिष्ठा की तीसरी पर्व में सीधी होकर तीन रेखायें सोहती हों तो वह प्राणी ती पुत्रों को निश्चय कर पाता है यह उपलक्षणमात्र है यानी जितनी सीधी रेखायें पर्व

हों उतने ही पुत्रों को प्राणी पाता है और यदि भलीभांति टेढ़ी रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी बहुतसी कन्याओं को पाता है ॥ ९ ॥

२ अनामिकामूलगते यदास्तो रेखे सुक्षुद्रे कुटिले विशुद्धे ।
कट्यार्तिभीतिं लभते मनुष्यः कामी कलावान्कमलासमेतः ॥ १० ॥

जिससमय छोटी, टेढ़ी व साफ़ होकर दो रेखायें अनामिका की मूल में विद्यमान देखी जावें तो वह प्राणी कामी, कलावान् व लक्ष्मी से संपन्न होकर कमर की पीड़ा को पाता है ॥ १० ॥

३ यदागतं मध्यमिकासुमूले रेखात्रयं चेत्कुटिलस्वरूपम् ।
वातार्तियुक्तो मनुजस्तदा स्याद्वादी विषादी विषयानुरक्तः ॥ ११ ॥

जिस समय टेढ़े रूपवाली तीन रेखायें मध्यमा की मूल में पाई जावें तो वह प्राणी वातरोग से पीड़ित होता हुआ वादी व विषादी होकर विषयोंमें अनुरक्त होता है ॥ ११ ॥

४ आयुष्यशाखा यदि याति तर्जनीं वृद्धाङ्गुलिं चैति तथा द्वितीयिका । संभोग
सौभाग्ययुक्तो मनुजो दयालुको दाता प्रियः स्याद्बहुजन्तुपालकः॥१२॥

यदि आयुरेखा (संभोगरेखा) की पहली शाखा तर्जनी पर्यन्त चली जावे और दूसरी शाखा अँगूठा की ओर धावे तो वह प्राणी सौभाग्यसंपन्न, दयावान, दाता व सबों का प्यारा होकर घने जीवों का पालक होता है ॥ १२ ॥

५ संभोगरेखा यदि नीचभागे गुणत्रयेणाप्यवकर्तिता स्यात् ।
वातामयः स्यान्मनुजस्तदानीं वाणीविलासो वनितारतश्च ॥ १३ ॥

यदि संभोगरेखा निचले भाग में तीन गुणों के × निशानों से कटी हुई प्रतीत होवे तो वह प्राणी वादीरोग से पीड़ित होकर वाणी का विलास करता हुआ रमणियों में रत रहता है ॥ १३ ॥

६ मातुः सुरेखा यदि नीचदेशे गोलाकृतिभ्यां च युता ह्यपूर्णा ।
तदा नरः स्यात्प्रथमे वयस्के हत्याकरो हानिपरो विशोकी ॥ १४ ॥

यदि माता की रेखा नीचे के तरफ़ दो गोलाकार निशानों से संयुत होकर पूर्णरूप से नहीं देखी जावे तो वह प्राणी पहली उमर में हत्याओं को करता व हानि में परायण होता हुआ विशेषता से शोचनेवाला होता है यानी ये गोलाकार निशान यदि निचले भाग में देखेजावें तो मध्य व वृद्धावस्था में वह प्राणी हत्याकारी होता है और यदि आ-

१ हमारे देश में इसी का आयुरेखा मानते हैं ॥

रूभदेश में गोलाकार निशान जितनी संख्यावाले प्रतीत हों तो पहली उमर में उतने आघात करता है ॥ १४ ॥

७ पितुः सुरेखा यदि मध्यभागे क्षुद्रा विभिन्ना परिपूर्णरूपा ।
रागी विरागी मनुजस्तदा स्यात्पशुस्वभावो बहुहिंसकश्च ॥ १५ ॥

यदि पिता की रेखा निचले भाग में छोटी छोटी रेखाओं से कटी हुई पूर्णरूप से प्रतीत होवे तो वह प्राणी रागी व विरागी होकर पशुओं का सा स्वभाव रखता हुआ अनेक जीवों का घातक होता है ॥ १५ ॥

८ आरम्भदेशे यदि पितृरेखा स्थूला सुपूर्णा विशदा सरक्ता ।
तदा जनस्यात्समराभिलाषी रक्ताभिपाती रिपुवंशघाती ॥ १६ ॥

यदि पिता की रेखा आरम्भदेश में यानी शुरूआ होने में मोटी, बड़ी व साफ़ होकर रक्तवर्णवाली देखी जावे तो वह प्राणी युद्धाभिलाषी होकर सामने खून को करता हुआ वैरियों के वंश को विनाशता है ॥ १६ ॥

९ अङ्गुष्ठकस्य प्रथमे परुष्के रेखा त्रिशाखा समुपैति पैत्रीम् ।
तदा जनोयं प्रथमे प्रसङ्गे भूपादिवर्षे रमणीमुपैति ॥ १७ ॥

यदि अँगूठे की पहली पोर में तीन शाखावाली रेखा पितृरेखा के समीप चली जावे तो यह प्राणी सोलह आदि वर्षों के आनेपर पहले प्रसंग में रमणी को पाता है यानी तीन शाखाओं में से पहली शाखा पितृरेखा के सामने जावे तो सोलह वर्ष में व दूसरी शाखा जावे तो २० वर्ष में और तीसरी शाखा जावे तो १९ वर्ष में पहले पहल रमणी के साथ रमण करता है ॥ १७ ॥

१० निशाकरस्थानगतं सुचिह्नं रेखात्रयं वेदमिताविभिन्नम् ।
तदा जनो मज्जति वारिराशौ विद्याविहीनो विषयातुरश्च ॥ १८ ॥

यदि चन्द्रमा के स्थान में प्राप्त हुआ तीन रेखाओंवाला शोभायमान चिह्न चार रेखाओं से कटासा प्रतीत होवे तो वह प्राणी विद्या से विहीन होता हुआ विषयों में आतुर होकर नदी नाले आदिकों में डूबजाता है ॥ १८ ॥

११ मातापितृभ्यां सहितां सुभोगां भित्त्वा सुभाग्या यदि याति चान्द्रिम्[१] ।
तदा जनो मस्तकघातमेति शेषे विभिन्ना मरणं प्रयाति ॥ १९ ॥

यदि पिता माता की रेखा को व आयुरेखा को काटकर भाग्यरेखा बुध के स्थान पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी मत्थे में आघात को पाता है और यदि शेषभाग में मा

भाग्यरेखा

१ चन्द्रस्यापत्यं चान्द्रिस्तं चान्द्रिमिति ॥

रेखा, पितृरेखा व आयुरेखा ये तीनों भाग्यरेखा से भिन्न देखी जावें तो वह प्राणी मौत को ही पाता है ॥ १६ ॥

१२ चन्द्रादधस्तिष्ठति शुद्धरूपं चिह्नं त्रिरेखं सरलस्वरूपम् ।
आद्ये नरो मन्दफलं प्रयाति मध्ये वयस्के शुभतामुपैति ॥ २० ॥

यदि सीधा व साफ़ होकर तीन रेखाओंवाला चिह्न चन्द्रमा के निचले भाग में टिका हो तो वह प्राणी पहली अवस्था में मन्दफल (थोड़ाफल) को पाता है और युवावस्था में शुभफल को यानी दौलत को पाता है ॥ २० ॥

१३ अधोविभिन्ना यदि पितृरेखा तदन्तिके स्यात्तु विसर्गचिह्नम् ।
तदा नरो नारिनिमित्तवादी रक्ताभिपातं कुरुते रणेप्सुः ॥ २१ ॥

यदि पिता की रेखा निचले भाग में कटीसी प्रतीत हो और यदि उसके समीप में विसर्ग का निशान देखा जावे तो वह प्राणी स्त्री के निमित्त झगड़ा को मचाता हुआ युद्धाभिलाषी होकर सामने खून को गिराता है ॥ २१ ॥

१४ अङ्गुष्ठमूले विशदस्वरूपं वेदाङ्कव्यस्तं यदि भाति चिह्नम् ।
दौर्जन्ययुक्तो मनुजस्तदा स्याद्रक्ताभिपाती निजबन्धुघाती ॥ २२ ॥

यदि उलटे चारके अंकका सा निशान साफ़ होकर अँगूठा की मूलमें सोहता हो तो वह प्राणी दुर्जनतासे संयुत होकर अपने बन्धुओंको मारता हुआ सामने खूनको गिराता है॥२२॥

१५ पितुः सुरेखा यदि नीचभिन्ना भाग्यस्य रेखा समुपैति चान्द्रिम् ।
संकोणचिह्ने मनुजस्तदा स्यान्नेत्रामयो रोगचयाभिभूतः ॥ २३ ॥

यदि पिता की रेखा निचले भाग में कटीसी देखी जावे और भाग्यरेखा (फेटलाइन) बुध पर्यन्त चली जावे उस समय यदि संकोण चिह्न देखा जावे तो वह प्राणी नेत्ररोगी होकर रोगसमूहों से घिर जाता है ॥ २३ ॥

१६ समुत्थितं चेन्मणिबन्धदेशात्रिकोणचिह्नं परिभाति भिन्नम् ।
तदा नरः स्यात्परदेशवासी त्रासी धनाशी मरणं प्रयाति ॥ २४ ॥

यदि मणिबन्ध (कब्जे) से उठा हुआ कटासा त्रिकोण चिह्न प्रतीत हो तो वह प्राणी परदेश में बसता व डरता हुआ धनाभिलाषी होकर मौत को पाता है ॥ २४ ॥ (देखो चित्र नं० १५)

अथ द्वादशलक्षणाङ्कितकरतलफलज्ञानमाह—

१ अनामिकायास्तृतये परुष्के रेखाद्वयं चिह्नतमं चकास्ति ।

कुशाग्रबुद्धिर्मनुजस्तदा स्याज्जङ्घार्तिभीतिं यदि चैति भिन्नम् ॥ २५

यदि अनामिका की तीसरी पोर में दो रेखाओंवाला चिह्न खूबही चमचमाता हो
वह प्राणी कुशाग्रबुद्धि (तीव्रबुद्धिवाला) होता है और यदि पूर्वोक्त चिह्न कटासा प्रती
होवे तो वह प्राणी जांघ की पीड़ाभय को पाता है ॥ २५ ॥

२ कनिष्ठिकामूलगता विभान्ति रेखाश्च तिस्रः सरलस्वरूपाः ।
तदा नरो दक्षिणबाहुघातं प्राप्नोति वामे यदि वामपाणौ ॥ २६ ॥

सीधी होकर तीन रेखायें यदि कनिष्ठिका (छोटी) अँगुली की मूल में सोहती हों
वह प्राणी दाहिनी भुजा में चोट चपेट को पाता है और यदि बायें हाथ में पूर्वो
निशान सोहता हो तो वह प्राणी बाई भुजा में चोट को लहता है ॥ २६ ॥

३ अनामिकामध्यमिकासुमूले रेखात्रयं चेत्सरलस्वरूपम् ।
पादाभिघातं पुरुषः प्रयाति पापी प्रतापी परुषस्वभावः ॥ २७ ॥

यदि अनामिका व मध्यमा की मूल में सीधा होकर तीन रेखाओंवाला निशान प्रका
मान देखा जावे तो वह प्राणी पापी व प्रतापी होकर कठोर स्वभाव को रखता हुआ पै
में चोट को पाता है ॥ २७ ॥

४ यदागतं मध्यमिकासुमूले रेखाद्वयं क्षुद्रतरं विभाति ।
परिश्रमासक्तमना मनुष्यः संखण्डितं चेच्छ्रमताविहीनः ॥ २८ ॥

जिस समय मध्यमा की मूल में छोटा होकर दो रेखाओंवाला निशान भासमान हो
हो तो वह प्राणी बड़ा मेहनती होता है और यदि पूर्वोक्त निशान खण्डित होकर प्रती
होवे तो वह प्राणी मेहनत से बचा रहता है यानी आलसी होकर खुदगर्ज़ होता है॥ २८

५ प्रदेशिनीमध्यमिकासुमध्ये रेखा यदैका यदि याति धात्रीम् ।
शीर्षाभिघातान्मृतिमेति जन्तुः संभोगभिन्ना यदि नैति मृत्युम् ॥ २६

यदि तर्जनी व मध्यमा के बीच में होकर एक रेखा मातृरेखा के समीप पहुँची हु
देखी जावे तो वह प्राणी शीश में चोट लगने से मौत को पाता है और यदि पूर्वोक्त रेखा
भोगरेखा से कटी हुई देखी जावे तो वह प्राणी केवल शीश में चोट को पाता है पर
मरता नहीं है ॥ २६ ॥

६ बृहस्पतिस्थानगतं विशुद्धं रेखात्रयं चिह्नतमं चकास्ति ।
भूपादिकानां च सहायतः स्यात्सौभाग्यशाली मनुजो महात्मा ॥ ३०

यदि बृहस्पति के स्थान में पहुँचा हुआ साफ़ होकर तीन रेखाओंवाला निशान
काशमान होता हो तो वह प्राणी महात्मा होकर राजा व महाराजों की सहायता से
भाग्यशाली होता है ॥ ३० ॥

७ मातुः सुरेखा पितरं प्रयाति भिन्नं तदूर्ध्वं यतिसंख्यकाभिः ।
तावन्मितांश्चौरसजातपुत्रान् प्राप्नोति प्राणी परवित्तपूर्णः ॥ ३१ ॥

यदि माता की रेखा पितृरेखा में मिलजावे और उसका ऊपरला भाग छोटी छोटी जितनी रेखाओं से कटा देखा जावे तो वह प्राणी पराये धनों से पूर्ण होकर उतनेही औरस-जातपुत्रों को पाता है ॥ ३१ ॥

मातृरेखा

८ क्षुद्रासमेता जननी सुरेखा स्वल्पा गभीरा समुपैति पैत्रीम् ।
मातुः सुमानं मनुजः करोति तन्मानतस्स्याद्रुधिरप्रपाती ॥ ३२ ॥

यदि छोटी छोटी रेखाओं से संयुक्त होकर माताकी रेखा अल्परूपवाली व गहरी होती हुई पिता के पास पहुँच जावे यानीं मिलाप कर लेवे तो वह प्राणी माता का बड़ा मान करता है यानी माता के ऊपर घना प्रेम रखता है उसी प्रेम से क्षयीरोगवाला होकर मुख से खून को गिराता है ॥ ३२ ॥

पितृरेखा

९ पितुः सुरेखा मणिबन्धदेशात् संवक्रमध्या यदि याति धात्रीम् ।
तदा जनश्चैकमना विलासी प्राप्नोति सौख्यं विपुलं विकासी ॥ ३३ ॥

यदि मणिबन्ध (क़ब्ज़े) से उठी हुई पिता की रेखा बीच में टेढ़ी होकर मातृरेखा में मिल जावे तो वह प्राणी एकाग्र मनवाला होता हुआ विलासी व प्रकाशी होकर बड़े भारी सौख्य को पाता है ॥ ३३ ॥

भाग्यरेखा

१० पितुः सुरेखोत्थितभाग्यरेखिका स्वल्पा सुवक्रा समुपैति मातरम् ।
आयुष्यमल्पं लभते स मानवः कुपथ्यभोजी द्विजदेवनिन्दकः ॥ ३४ ॥

जिसके करतल में पिता की रेखा से उठी हुई भाग्यरेखा (फेटलाइन) छोटी व टेढ़ी होकर मातृरेखा के समीप चली जावे तो वह प्राणी कुपथ्य का भोजन करनेवाला होकर देवता व ब्राह्मणों की निन्दा करता हुआ अल्पायु को पाता है ॥ ३४ ॥

११ समुत्थितं चेन्मणिबन्धदेशात् सर्पानुरूपं समुपैति काव्यम् ।
तदा जनश्चौर्यपरः प्रतारी पापी प्रतापी परपक्षहारी ॥ ३५ ॥

यदि मणिबन्ध (क़ब्ज़े) से उठा हुआ सांप के समान होकर निशान शुक्र के समीप सोहता हो तो वह प्राणी चौरकर्म में परायण होता हुआ छली, पापी व प्रतापी होकर पर-पक्ष का हरनेहारा होता है ॥ ३५ ॥

१२ समुत्थितं चेन्मणिबन्धदेशाद्रेखाद्वयं याति यदा सुपित्रोः ।
तदा जनोयं जलयानयायी धनाभिधायी धनतामुपैति ॥ ३६ ॥

यदि मणिबन्ध (कब्ज़े) से उठा हुआ दो रेखाओंवाला निशान मातृरेखा व पि रेखा के बीच में चला जावे तो यह प्राणी जहाज़ या नावों के द्वारा यात्रा करता व ध को इकट्ठा धारता हुआ धनसमूहों को पाता है यानी समुद्र की सफ़र करता हुआ बहुत पैसे को जोरता है ॥ ३६ ॥ (देखो चित्र नं० १६)

अथ सप्तदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

X १ कनिष्ठिकायास्तृतये परुष्के गुणाख्यचिह्नं विशदं विभाति ।
चौर्ये रतः स्यान्मनुजस्तदानीं निर्बोधरूपो विगतप्रभावः ॥ ३७ ॥

यदि कनिष्ठा की तीसरी पर्व में साफ़ होकर गुणा का × निशान सोहता हो तो व प्राणी अज्ञानी होकर विगत प्रभाववाला होता हुआ चोरी करने में लगा रहता है ॥ ३७

२ कनिष्ठिकायास्तृतयं परुष्कं संगम्य रेखा यदि याति सूर्यम् ।
तदा नरः स्यादपकारकारी चौर्यापहारी कृतसंशयश्च ॥ ३८ ॥

यदि कनिष्ठा की तीसरी पर्व (पोर) को भलीभांति पाकर एक रेखा गहरी होक सूर्य पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी सबों का बुरा करनेवाला होकर चोरी से धन क हरता हुआ किये संदेहवाला होता है ॥ ३८ ॥

३ अनामिकामूलगतं सुवक्रं रेखाद्वयं चिह्नतमं चकास्ति ।
ज्ञानेन पूर्णः पुरुषस्तदा स्यात् पदाधिकारी प्रमदाप्रसक्तः ॥ ३९ ॥

यदि अनामिका की मूल में प्राप्त हुआ टेढ़ा होकर दो रेखाओंवाला निशान सो हता हो तो वह प्राणी ज्ञान से पूर्ण होकर पदाधिकारी होता हुआ रमणियों में आसक्त रहता है ॥ ३९ ॥

४ प्रदेशिनीमूलगतं विभुग्नं चिह्नं द्विरेखं यदि याति मन्दम् ।
शीर्षाभिघातं लभते मनुष्यः संभ्रान्तचित्तो विभुतासमेतः ॥ ४० ॥

तर्जनी की मूल में प्राप्त हुआ टेढ़ा होकर दो रेखाओंवाला निशान यदि शनैश्चर के पास पहुँच जावे तो वह प्राणी भ्रान्तचित्त होता हुआ विभुता से संपन्न होकर शीश में चोट चपेट को पाता है ॥ ४० ॥

५ बृहस्पतिस्थानगता सुभोगा अधस्सुपीनोपरितस्सुभिन्ना ।
तदा नरो दीनदशामुपैति दौर्भाग्यशाली बलताविहीनः ॥ ४१ ॥

यदि बृहस्पति के स्थान में प्राप्त हुई सुभोगरेखा (आयुरेखा) नीचे के भाग में मोटी होकर ऊपरले भाग में रेखामात्र से कटी देखी जावे तो वह प्राणी दौर्भाग्यशाली व दुबला होकर दीनदशा को पाता है ॥ ४१ ॥

६ भोगाधरस्थं विशदस्वरूपं रेखात्रयं लक्ष्मतरं विभाति ।
वातार्तियुक्तो मनुजस्तदा स्याद्व्यायामशीलो विषयातुरश्च ॥ ४२ ॥

भोगरेखा के निचले भाग में टिका हुआ साफ़ रूपवाला होकर तीन रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी वादी रोगवाला होकर कसरती होता हुआ विषयों में आतुर होता है ॥ ४२ ॥

७ मातुस्सुरेखा मिलितोर्ध्वदेशके स्पृष्टा यदा स्यादतिक्षुद्ररेखया ।
दोषातुरो लोककृताभिचारकैर्विषादिना वा मृतिमेति मानवः ॥ ४३ ॥

जिस समय माता की रेखा ऊपरले भाग में मिली व छोटी रेखा से छूई हुई देखी जावे तो वह प्राणी दोषों से आतुर होकर सांसारिक जनों के किये मारणादिकों या विषादिकों से मौतको पाता है ॥ ४३ ॥

८ मातुस्समीपे प्रतिभाति चिह्नं नाक्षत्ररूपं विशदस्वरूपम् ।
लोहाभिघातं लभते मनुष्यो भिन्नं यदा चेद् बहुस्वल्पघातम् ॥ ४४ ॥

साफ़ रूपवाला होकर नक्षत्र का सा चिह्न (निशान) मातृरेखा के समीप यदि सोहता हो तो वह प्राणी लोह से चोट चपेटको पाता है और यदि पूर्वोक्त निशान कटा हुआ प्रतीत होवे तो वह प्राणी बहुत छोटे से घाव को पाता है ॥ ४४ ॥

९ स्पृष्ट्वा सुधात्रीं यदि याति काव्यं रेखा गभीरा विशदा विक्षुद्रा ।
धन्वादिभिर्घातमुपैति प्राणी पारुष्यपूर्णः पिशुनस्वभावः ॥ ४५ ॥

गहरी व साफ़ होकर छोटी सी रेखा मातृरेखा को छूकर यदि शुक्र के सामने चली जावे तो वह प्राणी कठोरता से पूर्ण होकर चुग़लखोरों का सा स्वभाव रखता हुआ धनुष, बाण और बन्दूक़ आदिकों से घायल होजाता है ॥ ४५ ॥

१० पितुः सुरेखोपरिगा विभाति भग्नीसुरेखा भणिता सुधीभिः ।
दारिद्र्ययुक्तो मनुजस्तदा स्यात्कान्ताभिलाषी कमलाविहीनः ॥४६॥

विद्वानों से कही हुई भग्नीरेखा यदि पितृरेखा के ऊपरले भाग में सोहती हो तो वह प्राणी दरिद्रता से संपन्न होकर लुगाई की लालसा रखता हुआ लक्ष्मी से हीन रहता है ॥ ४६ ॥

११ अङ्गुष्ठमध्यं यदि वेष्टयन्ती फणानुरूपा परिभाति रेखा ।
व्यापारयुक्तो मनुजस्तदा स्यादाचार[1]रहीनो व्यभिचारशीलः ॥ ४७ ॥

---

१ आचारः परमोधर्म इति ॥

अँगूठा के मध्यभाग को लपेटती हुई फनके समान रेखा सोहती होतो वह प्राणी आ-
चार से हीन होकर व्यभिचार में लगा रहता हुआ व्यापार से सम्पन्न होता है यानी व
मनुष्य व्यापारी कहाता है ॥ ४७ ॥

१२ निशाकरस्थानगतं सुचिह्नं वृत्तार्धरूपं विशदं विभाति ।
बुद्ध्या विबुद्धो मनुजस्तदा स्याद्वामाभिलाषी वनिताविलासी॥४८

यदि चन्द्रमा के स्थान में प्राप्त हुआ साफ़ शोभायमान होकर अर्धवृत्त का निश
सोहता है तो वह प्राणी बुद्धिद्वारा विशेष बोध को रखता हुआ वामाओं (सुन्दरियो
का अभिलाषी होकर रमणियों में विलास करता है ॥ ४८ ॥

१३ मात्रा समेता जनकस्य रेखा क्षुद्राविभिन्ना यदि मध्यभागे ।
आघातपूर्णः पुरुषस्तदा स्यादानन्दहीनो दयिताविहीनः ॥ ४९ ॥

माता की रेखा से मिली हुई पिता की रेखा यदि मध्यभाग में छोटी छोटी रेखाओं
कटीसी देखी जावे तो वह प्राणी चोटों से घायल होकर आनन्द से हीन रहता हु
दयिता (प्यारी) से विहीन होता है ॥ ४९ ॥

१४ अङ्गुष्ठमूले विशदा विक्षुद्रा भग्नीसुरेखा भणिता सुधीरैः ।
दीनो दरिद्रो मनुजस्तदा स्याद्विद्याविहीनो विषयातुरश्च ॥ ५० ॥

विद्वानों से कही हुई भग्नी रेखा साफ़ व छोटीसी होकर यदि अँगूठा की मूल में स
हती हो तो वह प्राणी दीन व दरिद्री होकर विद्या से विहीन रहता हुआ विषयों में आ
तुर होता है ॥ ५० ॥

१५ समुत्थितं चेन्मणिबन्धदेशाद्रेखात्रयं क्षुद्रतमं विभाति ।
तदा जनोयं जलयानयायी सांयात्रिको[1] वा मरणं प्रयाति ॥ ५१ ॥

यदि मणिबन्ध (कब्ज़े) से उठाहुआ छोटासा तीन रेखाओंवाला निशान सोहता
तो वह प्राणी जहाज़ की सवारी से सामुद्रकीय यात्रा को करता है अथवा जहाज़ी
कर मरजाता है ॥ ५१ ॥

१६ पितुः सुरेखा यदि नीचदेशे संवक्ररूपा मिलिता जनन्याम् ।
दीर्घायुषं तं पुरुषं करोति विद्यान्वितं वैद्यवरं विनीतम् ॥ ५२ ॥

मातृरेखा में मिली हुई पिता की रेखा यदि निचले देश में टेढ़े रूपवाली देखी
तो उस प्राणी को बड़ी उमरवाला, विद्याओं से संपन्न, वैद्यों में प्रधान व विनयवा
करती है ॥ ५२ ॥

१ सांयात्रिकः पोतवणिगित्यमरः ॥

१७ भाग्यस्य रेखा मणिबन्धदेशात् पैत्रीं विभित्त्वा यदि याति मात्रीम्।
भव्यान्वितं तं मनुजं करोति बन्धुप्रियं बोधरतं वरेण्यम् ॥ ५३ ॥

पिता की रेखा को काटकर भाग्य की रेखा यदि कब्ज़े से मातृरेखा के समीप चली जावे तो उस प्राणी को कल्याण से संपन्न, भाइयों का प्यारा, ज्ञान में रत व प्रधान बना देती है ॥ ५३ ॥ (देखो चित्र नं० १७)

अथ चतुर्दशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ कनिष्ठिकायास्तृतये परुष्के ऋज्वी सुरेखा यदि याति मध्यम्।
तदा नरो मानसिको महौजाश्चातुर्यचञ्चुश्चपलस्वभावः ॥ ५४ ॥

कनिष्ठा की तीसरी पोर में सीधी रेखा यदि बीच के पोरतक चली जावे तो वह प्राणी मानसिक गुणशाली व बलशाली होकर चातुर्य से संपन्न होता हुआ चपलस्वभाववाला कहाता है ॥ ५४ ॥

२ गुरूपरिस्थं यदि भाति चिह्नं रेखात्रयं भुग्नतरस्वरूपम्।
पित्ताधिकोसौ पुरुषस्तदा स्यात् पाखण्डकारी परुषस्वभावः ॥ ५५ ॥

बृहस्पति के ऊपर ले भाग में यानी तर्जनी की तीसरी पोर में टिका हुआ टेढ़ा व तीन रेखाओंवाला होकर चिह्न यदि सोहता हो तो वह प्राणी अधिक पित्तरोगवाला होता हुआ पाखण्डकारी हाकर कठोर स्वभाववाला होता है ॥ ५५ ॥

३ दिवाकरस्थानगतं सुचिह्नं तिर्यग्विभिन्नं सरलं द्विरेखम्।
संकोणभिन्नं यदि वामदक्षे तदा नरः शिल्परतः सुबुद्धिः ॥ ५६ ॥

सूर्य के स्थान में यानी अनामिकाकी मूल में प्राप्त हुआ शोभायमान चिह्न सीधा व दो रेखाओंवाला होता हुआ तिरछी लकीर से कटा सा होकर बायें व दहिने तरफ़ कोणों से खण्डित देखा जावे तो वह प्राणी शिल्पकार्य में प्रवृत्त होकर सुबुद्धि होता है ॥ ५६ ॥

४ यदा गतं मध्यमिकासुमूले रेखाद्वयं क्षुद्रतरं चकास्ति।
कष्टाधिकं वै लभते मनुष्यः पित्ताधिकः पापरतः कुवेषः ॥ ५७ ॥

जबकि मध्यमा की मूल में प्राप्त हुआ दो रेखाओंवाला होकर छोटा सा चिह्न चमकता हो तो वह प्राणी पित्तरोग से पीड़ित व पाप में परायण होता हुआ बुरे वेषवाला होकर घने कष्ट को पाता है ॥ ५७ ॥

५ सुभोगशाखा विशदा विक्षुद्रा पैत्रीं विभित्त्वा यदि याति भौमम्।

---

१ अमंगल वेशवाला कहाता है ॥

भाग्य रेखा

वृथापलापी मनुजस्तदा स्याद्विश्वासयुक्तो विभुतासमेतः ॥ ५८ ॥

सुभोगरेखा की शाखा साफ़ व छोटी होकर मातृरेखा व पितृरेखा को काटकर म...
के समीप यदि चली जावे तो वह प्राणी वृथावादी (बकवादी) होता हुआ विश्वास ...
सम्पन्न होकर विभुता से पूर्ण रहता है ॥ ५८ ॥

६ अङ्गुष्ठशाखावृतशुद्धरूपं रेखाचतुष्कं समुपैति पैत्रीम् ।
वृथाभिमानी मनुजस्तदा स्यान्मोहाभिभूतो मदनातुरश्च ॥ ५९ ॥

अँगूठा की शाखा से घिराहुआ सीधा होकर चार रेखाओंवाला निशान यदि पि...
रेखा के समीप चला जावे तो वह प्राणी वृथाभिमानी होकर मोह से घबड़ाता हुआ का...
से पीड़ित होता है ॥ ५९ ॥

७ भोगाधरस्थं विशदस्वरूपं नवाङ्कपञ्चाङ्कयुतं गुणाख्यम् ।
रक्ताभिपाते निरतो मनुष्यो मान्यो वदान्यो बलतासमेतः ॥ ६० ॥

भोगरेखा के नीचे टिका हुआ साफ़ होकर नव व पांच के अंक से संयुत होता हु...
गुणा का निशान सोहता हो तो वह प्राणी रक्तमोक्षण (फ़स्त खुलाने) के कार्य में निपु...
होता हुआ मान्य व वदान्य (बड़ा दानी) होकर बलवान् होता है ॥ ६० ॥

८ क्षपाकरस्योपरिगं विभाति तिर्यग्विभिन्नं यदि चैकरेखम् ।
आयुष्यमल्पं[1] लभते मनुष्यः कुपथ्यसेवी सरलस्वभावः ॥ ६१ ॥

चन्द्रमा के ऊपर यानी मातृरेखा के समीप प्राप्त हुआ एक रेखावाला निशान य...
तिरछी रेखा से कटा हुआ देखा जावे तो वह प्राणी कुपथ्यों को सेवन करता हुआ स...
स्वभाववाला होकर अल्पायु को पाता है ॥ ६१ ॥

९ स्वल्पा सशाखा यदि भाग्यरेखा पैत्रीं विभित्त्वा समुपैति मात्रीम् ।
बाणादिभिर्घातमुपैति प्राणी विद्यान्वितो बन्धुविवर्जितश्च ॥ ६२ ॥

छोटी व शाखा समेत होकर भाग्यरेखा (फेटलाइन) पितृरेखा को काटकर यदि मा...
रेखा के पास पहुँच जावे तो वह प्राणी विद्याओं से संपन्न होकर बन्धुओं से रहित हो...
हुआ बाणादिकों से घात (चोट) को पाता है ॥ ६२ ॥

१० स्वल्पा सुपैत्री मिलिता धरित्र्यां क्षुद्रा विभिन्नश्च तदूर्ध्वदेशः ।
तदा जनः सर्वजनप्रियस्स्याद्विश्वासयुक्तो विभुतामुपेतः ॥ ६३ ॥

छोटे रूपवाली पिता की रेखा मातृरेखा में मिल जावे और उसका ऊपरला भा...

---

१ छत्तीस ३६वर्ष पर्यन्त अल्पायु को आचार्यों ने माना है इसमें भी तीन भेद होते हैं ॥

छोटी रेखा से कटा हुआ देखा जावे तो वह प्राणी विश्वास से संयुत होता हुआ प्रभुता से संपन्न होकर सर्वजनों का प्यारा होता है ॥ ६३ ॥

११ काव्यालये तिष्ठति वक्ररूपं रेखाचतुष्कं विशदस्वरूपम् ।
कान्तासमूहं लभते मनुष्यः कामी कलावान्कमलासमेतः ॥ ६४ ॥

टेढ़ा व साफ़ होकर चार रेखाओंवाला निशान यदि शुक्र के स्थान में टिका हो तो वह प्राणी कामी व कलावान् होकर लक्ष्मी से संपन्न होता हुआ कान्ता (लुगाइयों) के समुदाय को पाता है ॥ ६४ ॥

१२ निशाकर¹स्थानगतं सुचिह्नं चुल्लीसरूपं यदि मध्यभिन्नम् ।
तदा जनोयं पतितो महोच्चात् संखण्डितं चेद्विपदाविमुक्तः ॥ ६५ ॥

चन्द्रमा के स्थान में प्राप्त हुआ चूल्हे के समान रूपवाला शोभायमान चिह्न यदि बीच में कटासा प्रतीत होवे तो यह प्राणी बड़े ऊंचे स्थान से लुढ़क पड़ता है और यदि पूर्वोक्त निशान क्षुद्र रेखाओंसे कटा हुआ देखा जावे तो वह प्राणी विपदाओं से छूट जाता है ॥६५॥

१३ शुक्राधरस्थं विशदस्वरूपं वैशृङ्खलं चिह्नतमं चकास्ति ।
मिथ्याप्रलापी पुरुषस्तदा स्यात् सुखाभिलाषी सुषमासमेतः ॥ ६६ ॥

साफ़ होकर विशृंखलनामक चिह्न शुक्र के नीचे चमकता हो तो वह प्राणी मिथ्यावादी होकर सुखों की अभिलाषा (चाहना) करता हुआ परम शोभा से संपन्न होताहै ॥६६॥

१४ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशाद्वक्रा कुरेखा समुपैति मात्रीम् ।
तदा जनोयं जनतासमेतो ह्यृणी गुणी स्यादभिमानहीनः ॥ ६७ ॥

यदि मणिबन्ध (कब्ज़े) से उठी व टेढ़ी होकर छोटीसी रेखा मातृरेखा के सामने चली जावे तो यह प्राणी जनसमूहों से सम्पन्न होता हुआ ऋणी (कर्ज़ी) व गुणी होकर अभिमान से हीन होता है ॥ ६७ ॥ (देखो चित्र नं० १८)

अथ चतुर्दशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ कनिष्ठिकायास्तृतये परुष्के कोणद्वयं चिह्नतमं चकास्ति ।
चौर्यानुरक्तो मनुजस्तदा स्याद्वृथाभिमानी विषयातुरश्च ॥ ६८ ॥

कनिष्ठा की तीसरी पोर में दो कोणोंवाला निशान यदि प्रकाशमान देखा जावे तो वह प्राणी वृथाभिमानी (घमण्डी) होकर विषयों में आतुर होता हुआ चोरी करने में परायण रहता है ॥ ६८ ॥

---

१ निशाकरश्चन्द्रमा इति ॥

२ अनामिकायास्तृतये परुष्के वृत्तार्धचिह्नं विशदं विभाति ।
दारिद्र्ययुक्तो मनुजो मनीषी दुःखेन कालं नयते क्षुधालुः ॥ ६९ ॥

अनामिका की तीसरी पर्व (पोर) में साफ़ होकर अर्धवृत्त का निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी बुद्धिमान् व दरिद्रता से संयुत होता हुआ भूंखा रहकर दुःख से अपने समय को काटता है ॥ ६९ ॥

३ छायासुतस्योपरिगं चकास्ति क्षुद्रं सुचिह्नं सरलं त्रिरेखम् ।
तदा नरः स्याद्विजयाभिलाषी योद्धा विबोद्धा कलहातुरश्च ॥ ७० ॥

छोटा, सीधा व तीन रेखाओंवाला होकर शोभायमान निशान शनैश्चर के ऊपर प्राप्त हुआ यदि सोहता हो तो वह प्राणी विजय की अभिलाषा (चाहना) करता हुआ योद्धा (बड़ा शूरमा) व विबोद्धा (विज्ञाता) होकर लड़ाई लड़ने में लगा रहता है ॥७०॥

४ दिवाकरस्थानगतं सुरेखं तिर्यग्विभिन्नं युगरेखिकाभ्याम् ।
तदा जनोयं सुखदुःखमेति भुग्नं यदा चेच्छुभतामुपैति ॥ ७१ ॥

सूर्य के स्थान में प्राप्त हुआ सीधी रेखावाला निशान यदि दो रेखाओं से तिरछा कटासा देखा जावे तो यह प्राणी समय समय पर सुख व दुःख को पाता है और यदि पूर्वोक्त निशान टेढ़ासा देखाजावे तो वह प्राणी शुभता को पाता है ॥ ७१ ॥

५ संभोगरेखा विशदा गभीरा पूर्णस्वरूपा यदि याति मन्दम् ।
सौभाग्यशाली पुरुषो विशाली संतोषकारी स्वजनापकारी ॥ ७२ ॥

पूर्णरूपवाली सुभोगरेखा (आयुरेखा) साफ़ व गहरी होकर यदि शनैश्वर पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी सौभाग्यशाली व विशाली होता हुआ संतोषकारी होकर अपने जनों का बुरा चेतनेवाला होता है ॥ ७२ ॥

६ बृहस्पतिस्थानगतं त्रिशूलं चिह्नं यदा चेद्विशदं विभाति ।
तदा जनोयं कृशतामुपैति मूर्च्छादिरोगैः परिपीडिताङ्गः ॥ ७३ ॥

जिस समय साफ़ होकर त्रिशूल का निशान यदि बृहस्पति के स्थान में प्राप्त हुआ सोहताहो तो यह प्राणी मिरगी आदि रोगोंसे परिपीडित अंगवाला होता हुआ दुर्बलता को पाता है ॥ ७३ ॥

७ मातुः सुरेखा यदि नीचदेशे वेदाङ्कवृत्तार्धयुता विभिन्ना ।
पदाभिलाषी पुरुषस्तदा स्याद्द्रव्येण युक्तो गुरुतामुपेतः ॥ ७४ ॥

१ युग्मन्तु युगलं युगमित्यमरः ॥

संभोगरेखा ५ मातृरेखा

यदि माता की रेखा निचले भाग में चार के अंक व वृत्तार्ध से संयुक्त होकर कटीसी देखी जावे तो वह प्राणी घमण्डी होकर गुरुता से संपन्न होता हुआ ऊंचे पद का अभिलाषी कहाजाता है ॥ ७४ ॥

८ मातुः सुरेखा यदि मध्यवक्रा धन्वाकृतिर्भग्नतरा विभाति। मातृरेखा
चतुष्पदाघातमुपैति जन्तुर्जयाभिलाषी जनतासमेतः ॥ ७५ ॥

यदि माता की रेखा बीच में टेढ़ी होकर धनुष के आकारवाली होती हुई अत्यन्त कटीसी सोहती हो तो वह प्राणी जय का अभिलाषी होकर जनसमूहों से संयुक्त होता हुआ चौपाये की चपेट से चोट को पाता है ॥ ७५ ॥

९ कान्यालयस्योपरिगा विभाति भग्नीसुरेखा यदि चायुषीया।
सुखाभिलाषी मनुजस्तदा स्याल्लज्जामुपेतो ललनासमेतः ॥ ७६ ॥

आयुरेखा की भग्नीरेखा यदि शुक्र के ऊपरले भाग में प्राप्त होकर सोहती हो तो वह प्राणी लाज को पाता हुआ ललनाओं से संयुत होकर सुखों का अभिलाषी (चाह रखनेवाला) होता है ॥ ७६ ॥

१० अङ्गुष्ठपृष्ठे विशदस्वरूपं रेखाविभिन्नं यदि वृत्तचिह्नम्।
तदा नरो मज्जति वारिराशौ व्यायामसक्तो व्यसनातुरश्च ॥ ७७ ॥

अँगूठे की पीठपै साफ़ होकर रेखा से कटा हुआ वृत्त का निशान (यानी मोहर का सा चिह्न) यदि सोहता हो तो वह प्राणी कसरती होकर जूआ आदि खेलों को खेलता हुआ नदी आदिकों में डूबजाता है ॥ ७७ ॥

११ अङ्गुष्ठमूले परितो विभाति नाक्षत्रचिह्नं विशदस्वरूपम्। ✷
वामासमेतो मनुजो मनस्वी नानासुभोगं नितरां भुनक्ति ॥ ७८ ॥

साफ़ रूप होकर नक्षत्र का चिह्न (स्टार) यदि अँगूठे की मूल में चारों ओर चमकता सा प्रतीत हो तो वह प्राणी मनस्वी होकर लुगाइयों (सुन्दरियों) से संयुत होता हुआ नानाभांति सुभोगों को अधिकता से भोगता है॥ ७८ ॥

१२ जैवातृकस्थानगतं विशालं विभाति चिह्नं यदि न्यूनकोणम्।
नायं नरः स्यात्परिणामदर्शी स्वकीयदोषान्मरणं प्रयाति ॥ ७९ ॥

विशालरूप होकर न्यूनकोण का निशान यदि चन्द्रमा के स्थान में विशेषता से सोहता हो तो यह प्राणी अग्रशोची नहीं होता है वरन अपने ही दोष से मौत को पाता है ॥ ७९ ॥

१ अब्जो जैवातृकः सोमो ग्लौर्मृगाङ्कः कलानिधिरित्यमरः ॥

१३ भाग्यस्य रेखोपरिगं विभाति विटङ्कतुल्यं यदि शुद्धचिह्नम् ।
शूलार्तियुक्तो मनुजस्तदा स्याद्वामाकरे चेद्रुजताविशेषः ॥ ८० ॥

कबूतरों के दरबा के समान होकर साफ़ निशान यदि भाग्यरेखा (फेटलाइन) ऊपर प्राप्त हुआ विशेषता से सोहता हो तो वह प्राणी शूलपीड़ा से पीड़ित होता है या उस प्राणी के पेट में प्रायः पीड़ा बनी रहती है और यदि पूर्वोक्त निशान वामाओं (सुन्दरियों) के करतल में भाग्यरेखा के ऊपर देखा जावे तो रोगों की विशेषता होती यानी शूलरोग की अधिकता होती है ॥ ८० ॥

१४ पितुः सुरेखा मणिबन्धमुक्ता कौटिल्यरेखाद्वयसंयुता चेत् ।
आद्ये वयस्के शुभमेति प्राणी रेखात्रये सप्तति वत्सरं नो ॥ ८१ ॥

जिसके करतल में पिता की रेखा मणिबन्ध (कब्जे) से छुटी हुई टेढ़ी दो रेखा से संयुक्त होकर प्रतीत होवे तो वह प्राणी पहली अवस्था में शुभदायक फल को पा है और यदि तीन रेखाओं से संयुत देखी जावे तो वह प्राणी सत्तरि वर्ष पर्यन्त शुभदायक फल को नहीं पाता है ॥ ८१ (देखो चित्र नं० १६)

अथ षोडशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह —

१ चन्द्रात्मजस्थानगतं विभाति वृत्तार्धचिह्नं विशदस्वरूपम् ।
बुद्ध्या विहीनो मनुजस्तदानीं प्रासभ्यदोषान्मरणं प्रयाति ॥ ८२ ॥

चन्द्रमा के स्थान में प्राप्त हुआ साफ़ होकर अर्धवृत्तका निशान यदि सोहता हो तो प्राणी बुद्धि से विहीन होता हुआ अपने हठदोष से मौत को पाता है ॥ ८२ ॥

२ सौम्यालयान्ते दिनपालये वा रेखा यदैका सरला विभाति ।
सत्कर्मकारी मनुजो महात्मा धर्माधिकारी श्रमतासमेतः ॥ ८३ ॥

बुधस्थान के समीप या सूर्यके स्थानमें यदि एक रेखा सीधी होकर सोहती हो तो प्राणी महात्मा होकर सत्कर्मकारी (भले कामों का करनेवाला) तथा धर्माधिकारी होता हुआ परिश्रमशाली होता है ॥ ८३ ॥

३ अनामिकामध्यमिकासुमध्ये रेखा सुवक्रा यदि याति भानुम् ।
महाभिमानी मनुजस्तदा स्यान्मौढ्येन युक्तो महसा विहीनः ॥ ८४ ॥

अनामा और मध्यमा के विचले भाग में एक छोटी व मोटीसी रेखा टेढ़ी होकर सूर्य के समीप चली जावे तो वह प्राणी बड़ा अभिमानी होकर मूर्खता से संयुक्त होता हुआ तेज से विहीन रहता है ॥ ८४ ॥

---

१ कपोतपालिकायां तु विटङ्कं पुन्नपुंसकमित्यमरः ॥

४ मार्तण्डपुत्रालयगा विभान्ति रेखाः सुक्षुद्रा रससंमिताश्चेत्।
उद्योगशाली पुरुषस्तदा स्यात् सौख्यादिहीनः श्रमताविहीनः ॥८५॥

शनैश्चर के स्थान में प्राप्त हुईं छोटीसी छः रेखायें यदि सोहती हों तो वह प्राणी उद्योगशाली (रोज़गारी) होकर परिश्रम से रहित होता हुआ सौख्यादिकों से विहीन कहाता है ॥ ८५ ॥

संभोगरेखा

५ संभोगरेखा गुरुमन्दिरस्था तस्याः सुशाखा यदि चैति मन्दम्।
वित्तार्जकः स्यात्पुरुषः पवित्रो नारीविहीनो नयतामुपेतः ॥ ८६ ॥

संभोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा) यदि तर्जनी पर्यन्त चली जावे और उसकी शाखा शनैश्चर की तरफ़ चली जावे तो वह प्राणी धनों को इकट्ठा करता हुआ यानी दौलत को बटोरता हुआ लुगाई से रहित होकर नीति से संयुत होता है ॥ ८६ ॥

६ सुरेन्द्रपूज्यालयगं विभाति तिर्यग्विभिन्नं सरलं द्विरेखम्।
धर्मी जनोयं शुभतामुपैति भिन्नं यदा चेच्छिरघातमेति ॥ ८७ ॥

बृहस्पति के स्थान में प्राप्त हुआ तिरीछा कटा व सीधा होकर दो रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो यह प्राणी धर्मी होकर शुभदायक फल को पाता है और यदि पूर्वोक्त निशान आन रेखाओं से कटा हुआ देखा जावे तो वह प्राणी शीश में चोट चपेट को पाता है ॥ ८७ ॥

७ बृहस्पतिस्थानगता सुवक्रा रेखा यदैका यदि याति मात्रीम्।
उग्रस्वभावो मनुजस्तदा स्यादुन्मत्तरूपी मदनातुरश्च ॥ ८८ ॥

बृहस्पति के स्थान में प्राप्त हुई टेढी होकर एक रेखा यदि मातृरेखा के सामने चली जावे तो वह प्राणी उग्रस्वभाववाला होकर मतवाला होता हुआ कामदेव से पीड़ित होता है ॥ ८८ ॥

संभोगरेखा

८ संभोगरेखा यदि नीचदेशे भिन्ना यदा स्याद्युगरेखिकाभ्याम्।
शूरार्दितोयं समरे मनुष्यः प्राप्नोति मृत्युं सहसा सहिष्णुः ॥ ८९ ॥

जिस समय भोगरेखा (आयुरेखा) निचले भाग में दो रेखाओं से कटी हुई यदि प्रतीत होवे तो वह प्राणी लड़ाई में शूरों (वीरों) से सताया हुआ सहनशील होकर एकाएकी मौत को पाता है ॥ ८९ ॥

संभोगरेखा

९ संभोगरेखा यदि मध्यभागे खड्गेन भिन्ना विशदा विभाति।
द्रव्यावने घातमुपैति प्राणी शेषे विभिन्ना स्वधने क्षयाप्तिम् ॥ ९० ॥

संभोगरेखा साफ़ होकर यदि बीच में खड्गाकार (तलवार के समान) निशान से क
हुई सोहती हो तो वह प्राणी दौलत की रखवारी करने में घात को पाता है यानी घा
होजाता है और यदि पूर्वोक्त निशान शेषभाग में कटा हुआ देखा जावे तो वह प्रा
अपने माल की रखवारी करने में मारा जाता है ॥ ६० ॥

१० मातुः सुरेखा यदि नीचभागे गुणत्रयेणाप्यवखण्डिता स्यात्।
स्वमानरक्षानिरतः सुदुःखी ह्रस्वा प्रशंसी द्विगुणावतंसी ॥ ६१ ॥

मातृरेखा

यदि माता की रेखा निचले भाग में तीन गुणों के निशानों से कटी हुई देखी जावे
वह प्राणी अपने मान की रक्षा करने में परायण होता हुआ बड़ा दुःखी होता है और य
पूर्वोक्त रेखा छोटीसी प्रतीत होवे तो वह प्राणी बड़ाई पाता है और यदि पूर्वोक्त निश
दूना प्रतीत हो तो वह प्राणी गौरव से संपन्न होता है ॥ ६१ ॥

११ अङ्गुष्ठशाखावृतमध्यभागं रेखात्रयं पर्वयुगे विभाति।
तदा नरो बन्धनभीतिमेति दीर्घं यदा चेत्फलमन्दता स्यात् ॥ ६२ ॥

अँगूठे की शाखाओं से घिरे मध्यभागवाले तीन रेखाओं का निशान यदि अँगूठे
दूसरी पोर में सोहता हो तो वह प्राणी क़ैद होने की भय को पाता है और यदि पूर्वो
निशान दीर्घाकार सोहता हो तो फल की अल्पता होजाती है ॥ ६२ ॥

१२ अङ्गुष्ठपृष्ठे प्रथमे परुष्के रेखात्रयं क्षुद्रतरं चकास्ति।
तदा मनुष्यो वधतामुपैति पाशेन विद्धो निजबन्धुहीनः ॥ ६३ ॥

अँगूठे की पीठपर पहली पोर में छोटासा तीन रेखाओं का निशान यदि सोहता हो
वह प्राणी अपने बन्धुओं से विहीन होकर फांसी से विंधा हुआ वध को पाता है ॥६

१३ क्षपाकरस्योपरिगं विभाति नाक्षत्ररूपं विशदस्वरूपम्।
विश्वासदानैः प्रथितो मनुष्यो दीनो दरिद्रो धनतामुपैति ॥ ६४ ॥

चन्द्रमा के ऊपरले स्थान में प्राप्त हुआ साफ़ होकर नक्षत्र कासा निशान यदि स
हता हो तो वह प्राणी विश्वास और दानों से विख्यात होता है और जो दीन हो
दरिद्री हो तो धनसमूहों को पाता है यानी पूर्वोक्त निशान दरिद्री के हाथ में देखा ज
तो वह दौलत को पाता है ॥ ६४ ॥

१४ पितुः सुरेखा मिलिता जनन्या मध्ये सुकोणं यदि भाति चिह्नम्।
अल्पायुषं तं मनुजं करोति नीचाश्रयं निन्दितकर्मकारम् ॥ ६५ ॥

पितृरेखा

यदि पिता की रेखा मातृरेखा के बीच में मिली हुई देखी जावे और वहां

शोभायमान कोणका निशान सोहता हो तो उस प्राणी को अल्पायु व नीचों का साथी तथा बुरे कामों का करनेवाला बनाता है ॥ ६५ ॥

भाग्यरेखा

१५ पित्रा वियुक्ता मणिबन्धदेशे वक्रा सुभाग्या यदि याति भोगाम्।
बुद्ध्या विहीनो मनुजो विवादी हासी विलासी कलहातुरश्च ॥ ६६ ॥

जिसके मणिबन्ध (कब्जे) में पितृरेखा से छुटी व टेढ़ी होकर भाग्य की रेखा यदि भोगरेखा के सामने चलीजावे तो वह प्राणी बुद्धि से विहीन होता हुआ विवादी, हासी व विलासी होकर लड़ाई लड़ने में लगा रहता है ॥ ६६ ॥

१६ पितुस्सुरेखोपरिगा विभाति रेखा गभीरा विशदा विक्षुद्रा।
भयंकरः स्यान्मनुजस्तदानीं दर्शी विमर्शी विषयारतश्च ॥ ६७ ॥

पिता की रेखा के ऊपर प्राप्त हुई रेखा गहरी, साफ़ व छोटी होकर यदि सोहती हो तो वह प्राणी भयंकर होता हुआ अशुभों का देखनेवाला व विचारनेवाला होकर विषयों में फसा रहता है ॥ ६७ ॥ (देखो चित्र नं० २०)

अथ द्वादशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ कनिष्ठिकायास्सकले परुष्के मध्ये त्रिरेखं सरलं विभाति।
तदा नरो दर्शनशास्त्रवेत्ता विचारशीलो बुधवृन्दवन्द्यः ॥ ६८ ॥

कनिष्ठा अँगुली की तीनों पोरों के बीच में सीधा होकर तीन रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी दर्शनशास्त्र का वेत्ता (जाननेवाला) होकर विचारशील होता हुआ पण्डितगणों से वन्दनीय होता है ॥ ६८ ॥

पताका रेखा

२ पैत्रीं सुमात्रीं च तथा सुभोगां भित्त्वा पताका यदि याति चान्द्रीम्।
बाल्ये सुमध्ये च शुभाभिलाषी वार्द्धे प्रवृद्धिं पुरुषः प्रयाति ॥ ६९ ॥

पितृरेखा, मातृरेखा तथा सुभोगरेखा को काटकर पताका नाम रेखा यदि बुध पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी बाल्यावस्था व युवावस्था में शुभाभिलाषी होकर वृद्धावस्था में बड़ी बढ़ती को पाता है ॥ ६९ ॥

३ शनैश्चरस्थानगतं विक्षुद्रं चिह्नं त्रिरेखं सरलं विभाति।
वक्षस्स्थलाघातमुपैति प्राणी सम्पत्तिशाली विपदाविहीनः ॥ १०० ॥

शनैश्चर के स्थान में प्राप्त हुआ छोटा व सीधा होकर तीन रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी संपत्तिशाली व विपदाओं से विहीन होकर वक्षस्स्थल में चोट को पाता है ॥ १०० ॥

४ संभोगरेखाधिषणालयस्था कोणेन युक्ता यदि चोर्ध्वभागे ।
स्वार्थी सुमानी मनुजस्तदानीं प्रासभ्यदोषान्निधनं प्रयाति ॥ १ ॥

बुध से चली बृहस्पति के स्थान में टिकी हुई संभोगरेखा यदि ऊपरले भाग में को[ण] के निशान से संयुक्त होकर प्रतीत होवे तो वह प्राणी स्वार्थी (मतलबी) होकर बड़ा मा[नी] होता हुआ हठदोष से मौत को पाता है ॥ १ ॥

५ सुभोगरेखा गुरुगा विभाति त्रिकोणयुक्तश्च तदूर्ध्वदेशः ।
तदा जनोयं जनतामुपैति विनष्टवित्तो विविधामयश्च ॥ २ ॥

सुभोगरेखा (आयुरेखा) यदि बृहस्पति के स्थान में सोहती हो और उसका ऊपर[ला] भाग त्रिकोणाकार निशान से संयुत हो तो वह प्राणी द्रव्यों से हीन होकर अनेक रो[गों] वाला होता हुआ जनसमूहों को पाता है ॥ २ ॥

६ भोगाधरस्थं विशदं विभाति चिह्नं यदा चार्द्धविसर्गतुल्यम् ।
संपूर्णकार्ये श्रमतामुपैति नार्या यदा चेत्प्रसवेऽतिकष्टम् ॥ ३ ॥

साफ़ व आधी विसर्ग के समान होकर निशान भोगरेखा के निचले भाग में य[दि] सोहता हो तो वह प्राणी समस्त कार्यों में परिश्रमी होता है और यदि पूर्वोक्त निशान स्त्रि[यों] के करतल में सोहता हो तो वे स्त्रियां प्रसवकाल में " यानी बच्चा जनने में " बड़ा क[ष्ट] पाती हैं ॥ ३ ॥

७ काव्यालयादुत्थितवक्ररेखा भोगां विभित्त्वा यदि याति चान्द्रिम् ।
तदा नरोयं शिरसा विभिन्नः पाशाग्रविद्धो मरणं प्रयाति ॥ ४ ॥

शुक्र के स्थान से चली हुई टेढ़ी रेखा भोगरेखा को काटकर बुध के पास च[ली] जावे तो यह प्राणी शिर से विभिन्न होकर फाँसी के अग्रभाग से विंधा हुआ मौत [को] पाता है ॥ ४ ॥

८ मातुस्सुरेखोपरिगं विभाति चिह्नं विक्षुद्रं यदि पञ्चरेखम् ।
सौशील्ययुक्तो मनुजो महात्मा कार्ये स्वकीये निरतो विवेकी ॥ ५ ॥

विशेष कर छोटा सा होकर पांच सीधी रेखाओंवाला निशान मातृरेखा के ऊपर प्[राप्त] हुआ यदि सोहता हो तो वह प्राणी बड़ा शीलवान् व महात्मा होकर अपने कार्य में ल[गा] हुआ विचारवान् होता है ॥ ५ ॥

९ पितुस्सुरेखोपरिगा सुवक्रा रेखा विक्षुद्रा यदि याति मात्रीम् ।
तदा नरः सन्नपमृत्युभीतो विषप्रयोगान्मरणं प्रयाति ॥ ६ ॥

---

१ बृहस्पतिः सुराचार्यो गीष्पतिर्धिषणो गुरुरित्यमरः ॥

पितृरेखा के ऊपर प्राप्त हुई टेढ़ी व छोटी सी रेखा मातृरेखा के पास चली जावे तो वह प्राणी अपमृत्यु (अकाल मौत) से डरता हुआ विष के प्रयोग से मौत को पाता है यानी उस प्राणी को विष खिला देने से मौत होजाती है ॥ ६ ॥

१० जैवातृकस्थानगतं विभाति वृत्तार्धचिह्नं विशदं विशालम् ।
तदा जनोयं जनयूथभिन्नो विभीतचित्तो निधनं प्रयाति ॥ ७ ॥

चन्द्रमा के स्थान में प्राप्त हुआ साफ़ व विशाल होकर अर्धवृत्त का निशान यदि सोहता हो तो यह प्राणी जनसमूहों से पीटा हुआ डरे चित्तवाला होकर मरण को पाता है ॥ ७ ॥

११ बुधालयस्था विशदा विक्षुद्रा रेखा सुवक्रा यदि याति भोगाम् ।
तदा नरो यौवनस्वस्थचित्तः क्रूरः[1] सुलोभी परकार्यकारी ॥ ८ ॥

बुध के स्थान में टिकी हुई साफ़, छोटी व टेढ़ी सी रेखा भोगरेखा पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी यौवनकाल (ज्वानी) में स्वस्थचित्त होता हुआ निर्दयी व बड़ा लोभी होकर पराये काम का करनेवाला होता है ॥ ८ ॥

१२ भाग्योत्थिता या मणिबन्धमेति रेखा गभीरा विशदा सुवक्रा ।
पापानुसारी मनुजो मनस्वी प्राप्नोति मृत्युं निजकर्मदोषात् ॥ ९ ॥

भाग्यरेखा (फेटलाइन) से उठी जो रेखा गहरी, साफ़ व टेढ़ी होकर मणिबन्ध (क़ब्ज़े) के पास चली जावे तो वह प्राणी मनमौजी (यथेच्छाचारी) होकर पापों का अनुसरण करता हुआ यानी पापकारी होता हुआ अपने कर्मों के दोष से मौत को पाता है ॥ ९ ॥ (देखो चित्र नं० २१)

अथ चतुर्दशलक्षणाङ्कितकरतलफलविचारमाह—

१ कनिष्ठिकायास्त्रितये परुष्के वृत्तार्धचिह्नं विशदं विभाति ।
स्वीयापराधान्मृतिमेति प्राणी पाशेन विद्धशिशरसा विभिन्नः ॥ १० ॥

कनिष्ठा अँगुली की तीसरी पोर में साफ़ होकर अर्धवृत्तका निशान सोहता हो तो वह प्राणी फाँसी से बिंधा हुआ फूटे हुए शीशवाला होकर अपने अपराध से ही मौत को पाता है ॥ १० ॥

२ भोगाधरस्था विशदा विक्षुद्राश्चुल्लीसरूपा यदि भान्ति रेखाः ।
शैथिल्यकायो मनुजो मलाक्तो मन्दस्वभावो ममतामुपैति ॥ ११ ॥

[1] क्रूरः कठिननिर्दयावित्यमरः ॥

भोगरेखा के नीचे टिकी हुई साफ़ व छोटी सी होकर चूल्हे समान रेखायें यदि हती हों तो वह प्राणी ढीले अंगवाला व मल से भरा हुआ होकर नीच स्वभाव होता हुआ ममता को पाता है ॥ ११ ॥

३ ऋज्वी सुभोगा धिषणालयान्ता तस्याः सुशाखा समुपैति शौरिम् ।
परिश्रमासक्तमना मनुष्यः कष्टेन कालं नयते करालम् ॥ १२ ॥

सुभोगरेखा (आयुरेखा) सीधी होकर बृहस्पति के स्थानपर्यन्त चलीजावे और की शाखा शनैश्चर के पास पहुँच जावे तो वह प्राणी मेहनत करने में मनको लगाता करा़ल काल को बिताता है ॥ १२ ॥

४ भोगाधरस्थं विशदं विभाति जिह्वामूलीयसमानरूपम् ।
वित्तं मनुष्यो लभते ह्यचिन्त्यं पूर्वोक्तमानेन विचारणीयम् ॥ १३ ॥

जिह्वामूलीय के समानरूपवाला निशान साफ़ होकर भोगरेखा के नीचे टिका सोहता हो तो वह प्राणी अचिन्तनीय धन को पाता है यह विचार पूर्वोक्त प्रमाण से क चाहिये ॥ १३ ॥

५ मातुः सुरेखा यदि चोर्ध्वभागे शाखाद्वयाभ्यामुपसंगता स्यात् ।
विश्वासयुक्तो मनुजस्तदानीं दानी सुमानी धनतासमेतः ॥ १४ ॥

माता की रेखा यदि ऊपरले भाग में दो शाखाओं से संयुत होकर प्रतीत होवे तो प्राणी विश्वासी, दानी और सुमानी होकर धनसमूहों से सम्पन्न होता है ॥ १४ ॥

६ मातुः सुरेखा यदि शेषभागे क्षुद्रा विमिश्रा विशदा विभाति ।
व्याजापदेशो मनुजो विकाशी हासी विलासी विषयारतश्च ॥ १५ ॥

माता की रेखा यदि निचले भाग में छोटी रेखा से मिली हुई साफ़ होकर सोहती तो वह प्राणी छल से बहाना करता हुआ प्रकाशी, हासी तथा विलासी होकर विषयं आसक्त रहता है ॥ १५ ॥

७ पित्रा वियुक्ता यदि मातृरेखा क्षुद्रा समेता नितरां चकास्ति ।
भविष्यवक्ता मनुजस्तदा स्यात् प्रज्ञासमेतो बहुशास्त्रविज्ञः ॥ १६ ॥

पिता की रेखा से अलग हुई माता की रेखा क्षुद्ररेखाओं से संयुक्त होकर यदि अ कता से सोहती हो तो वह प्राणी होनहार का कहनेवाला होता हुआ प्रतिभाशालि बुद्धि से संपन्न होकर अनेक शास्त्रों का विज्ञाता होता है ॥ १६ ॥

८ मात्रा वियुक्ता यदि पितृरेखा क्षुद्रा विमिश्रं च तयोस्सुमध्यम् ।
विरोधकारी कलही मनुष्यो विवादशाली जनयूथभिन्नः ॥ १७ ॥

माता की रेखा से छुटी हुई यदि पिता की रेखा हो और उन दोनों का मध्यभाग छोटी छोटी रेखाओं से मिला हुआ देखा जावे तो वह प्राणी विरोधकारी व लड़াका होता हुआ विवादशाली होकर जनसमूहों से पीड़ित किया जाता है ॥ १७ ॥

९ पितुः सुरेखोत्थितरेखिकाभ्यां मातुः सुरेखा यदि संयुता स्यात् ।
चाञ्चल्यबुद्धिर्मनुजो मनस्वी वृथाभिमानी भ्रमते नितान्तम् ॥ १८ ॥

माता की रेखा यदि पिता की रेखा से उठी हुई दो रेखाओं से संयुत होकर देखी जावे तो वह प्राणी चञ्चलबुद्धिवाला व मनमौजी होता हुआ वृथाभिमानी होकर हमेशा घूमा करता है ॥ १८ ॥

१० पित्रोस्सुमध्ये यदि याति चिह्नं रेखाद्वयं रेखयुगेन भिन्नम् ।
गर्भस्य पातं लभते मनुष्यो नार्या यदा चेत्प्रसवेतिसौख्यम् ॥ १९ ॥

मातृरेखा व पितृरेखा के बीच में दो रेखाओंवाला निशान यदि दो रेखाओं से खण्डित हुआ देखाजावे तो वह प्राणी अपनी भार्या में गर्भस्राव को पाता है और यदि पूर्वोक्त निशान स्त्री के करतल में प्रतीत होवे तो वह प्रसवकाल में बड़े सौख्य को पाता है यानी वह लुगाई सुखसे बच्चे को जनती है ॥ १९ ॥

११ पितुः सुरेखा यदि कुञ्चिताग्रा मध्ये सुपीना मणिबन्धहीना ।
असत्यवादी पुरुषः प्रमादी कुवेषधारी मलिनस्वभावः ॥ २० ॥

पिता की रेखा यदि अग्रभाग में टेढ़ी हो और बीच में मोटी होकर कब्ज़े से छुटी हुई देखी जावे तो वह प्राणी झूठा व जिद्दी होताहुआ बुरे वेश का धारनेवाला होकर मैले स्वभाव से रहता है ॥ २० ॥

भाग्यरेखा

१२ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशाद् भाग्या सुरेखा समुपैति सौम्यम् ।
क्षणे प्रवृद्धिं लभते मनुष्यः क्षणे क्षयाप्तिं परदेशवासी ॥ २१ ॥

यदि मणिबन्ध (कब्ज़े) से उठी हुई भाग्यरेखा बुधके पास चली जावे तो वह प्राणी परदेशनिवासी होताहुआ क्षणमें बड़ी बढ़ती व क्षणमें क्षयको पाता है ॥ २१ ॥

१३ चन्द्रालयस्थं कुटिलं द्विरेखं विभाति रेखान्वितवामभागम् ।
निजव्ययेनापि युतो मनुष्यो देशे सुदूरे निकटे भ्रमेच्च ॥ २२ ॥

चन्द्रमा के स्थान में टिकाहुआ टेढ़ा व दो रेखाओंवाला निशान यदि वामभाग में रेखासे जुड़ा हुआ देखा जावे तो वह प्राणी अपने ख़र्चे से ही दूरदेश व निकट (नगीची) देश में घूमता है ॥ २२ ॥

१४ भित्त्वा यदेयं मणिबन्धदेशं रेखा गभीरा यदि याति कान्यम् ।
चञ्चत्प्रभावो मनुजो विलासी चातुर्ययुक्तश्चपलस्वभावः ॥ २३ ॥

भाग्यरेखा

जिस समय मणिबन्ध (कब्जे) को भेदन कर यह रेखा गहरी होकर यदि शुक्र पास चलीजावे तो वह प्राणी बड़े प्रभाववाला व विलासी होकर चतुरता से सं होताहुआ चपलस्वभाववाला कहा जाता है ॥ २३ ॥ (देखो चित्र नं० २२)

अथ पञ्चदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ चन्द्रात्मजस्थानगतं सुचिह्नं क्षुद्रं त्रिरेखं सरलं चकास्ति ।
चौर्य्ये प्रवृत्तो मनुजस्तदा स्यान्मिथ्यापवादी मदनातुरश्च ॥ २४ ॥

बुध के स्थान (जगह) में पहुँचाहुआ शोभायमान निशान छोटासा तीन रेखाओंवा व सीधा होकर यदि सोहता है तो वह प्राणी चोरी करने में लगाहुआ झूठा हो कामातुर होता है ॥ २४ ॥

२ संभोगरेखोपरिगं विशुद्धं रेखात्रयं क्षुद्रतरं चकास्ति ।
बाह्वोः सुघातं लभते मनुष्यो मन्दस्वभावो ममतासुपेतः ॥ २५ ॥

सुभोगरेखा के ऊपरले भागमें प्राप्तहुआ तीन रेखाओंवाला निशान साफ़ व छोटा होकर यदि चमकता हो तो वह प्राणी नीच स्वभाववाला होकर ममता से संपन्न हो हुआ भुजाओं में आघात को पाता है ॥ २५ ॥

३ बुधालयान्ते दिनपालये वा रेखाद्वयं वै कुटिलं विभाति ।
गाम्भीर्यशाली पुरुषः सुबोधः स्थूलं यदा चेत्कटिघातमेति ॥ २६ ॥

बुधकी आखिरी जगह में या सूर्यके स्थान में दो रेखाओंवाला निशान यदि टेढ़ा होकर सोहता हो तो वह प्राणी महाज्ञानी होकर गाम्भीर्यशाली होता है और यदि पूर्वो निशान मोटासा प्रतीत होवे तो वह प्राणी कमर में आघातको पाता है ॥ २६ ॥

४ अनामिकामध्यमिकासुमूले रेखाद्वयं वै सरलं विभाति ।
मनस्सुशक्तिर्मनुजस्सुबुद्धिः संकर्तितं चेत्फलमन्यथा स्यात् ॥ २७ ॥

अनामा व मध्यमा अँगुली की मूलमें दो रेखाओंवाला निशान सीधा होकर यदि से हता हो तो वह प्राणी मानसी शक्तिका रखनेवाला होकर बड़ी बुद्धिवाला होता है अ यदि पूर्वोक्त निशान तिरछी रेखाओं से कटा हुआ देखाजावे तो कहे हुए फल अल्पता होती है ॥ २७ ॥

५ देवेन्द्रवन्द्यालयगा विभान्ति रेखा विक्षुद्राः सरलाश्च पञ्च ।
प्राप्नोति मृत्युं हठतो मनुष्यो मत्या विहीनो ममतासमेतः ॥ २८ ॥

बृहस्पति की जगह में पहुँची हुई छोटीसी होकर सीधी पांच रेखायें यदि सोहती हों तो वह प्राणी बुद्धि से विहीन होकर ममता से सम्पन्न होता हुआ अपने हठ से मौत को पाता है ॥ २८ ॥

भाग्यरेखा

६ मात्रीं सशाखां च सुभोगरेखां भाग्या विभिद्य यदि याति मन्दम् ।
वक्त्राभिघातं लभते मनुष्यो नार्या यदा चेत्प्रसवेऽतिकष्टम् ॥ २९ ॥

मातृरेखा और शाखासमेत भोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा)को काटकर भाग्यरेखा (फेटलाइन) यदि शनैश्चर पर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी मुख में आघात को पाता है और यदि पूर्वोक्त निशान स्त्री के करतल में प्रतीत होवे तो वह बच्चा जनने के समय बड़ा कष्ट पाती है ॥ २९ ॥

७ पितुस्समुत्था कुटिला सुरेखा सबिन्दुकोणद्वयसंयुता चेत् ।
तदा नरो दर्शनशास्त्रवेत्ता विपर्यये चेत्फलमन्यथा स्यात् ॥ ३० ॥

पिता की रेखा से उठीहुई टेढ़ी रेखा बिन्दु समेत दो त्रिकोण निशानों से संयुक्त देखी जावे तो वह प्राणी दर्शनशास्त्र का ज्ञाता होता है और यदि पूर्वोक्त निशान उलटा होकर प्रतीत होवे तो उक्त फल का ह्रास होता है ॥ ३० ॥

८ भोगाधरस्था विशदा विक्षुद्रा विभान्ति रेखाः सरलाश्च षट्काः ।
भोगक्षयं वै लभते मनुष्यः पूर्वोक्तमानेन विचारणीयम् ॥ ३१ ॥

भोगरेखा के निचले भाग में टिकी हुई साफ़ व सीधी होकर छोटी सी छह रेखायें यदि सोहती हों तो वह प्राणी भोगों के क्षयको पाता है यह विचार पूर्वोक्त मानसे करना चाहिये ॥ ३१ ॥

९ मातुस्सुरेखाधरगं विभाति गुणेन युक्तं यदि कोणयुग्मम् ।
तदा नरो दर्शनपारगामी नामी सुधामी धनतामुपेतः ॥ ३२ ॥

मातृरेखा के निचले भागमें प्राप्त हुआ गुणाके × निशान से संयुक्त होकर दो त्रिकोणों का चिह्न चमकता हो तो वह प्राणी नामी व सुधामी होकर धनसमूहों से संपन्न होता हुआ दर्शनशास्त्रका पारगामी होता है ॥ ३२ ॥

१० पितुः सुरेखा मिलिता जनन्यां रेखात्रयेणापि युतं तदूर्ध्वम् ।
परस्त्रियं वै भजते मनुष्यो विहाय नारीं सुभगां स्वकीयाम् ॥ ३३ ॥

पिता की रेखा माता की रेखा में मिलगई हो और उनका ऊपरला भाग टेढ़ी तीन रेखाओंसे जुड़ाहुआ देखाजावे तो वह प्राणी बड़भागिनी अपनी भार्या को छोड़कर परभार्या को भजता है ॥ ३३ ॥

विद्यारेखा

११ पितुस्सुरेखा यदि दीर्घरूपा मातुस्सुरेखा बहुस्वल्पगा स्यात् ।
तदा नरो जीवति दीर्घकालं विश्वासघाती म्रियते प्रवासे ॥ ३४ ॥

यदि पिताकी रेखा दीर्घाकार होकर प्रतीत हो और माताकी रेखा बहुतही छोटी प्रतीत होवे तो वह प्राणी बहुत काल पर्यन्त जीता बना रहता व विश्वासघाती हो परदेश में मरजाता है ॥ ३४ ॥

भाग्यरेखा

१२ भाग्याधरस्थं विशदं विभाति नन्दाङ्कचिह्नं यदि भासमानम् ।
सन्तुष्टचित्तो मनुजस्तदा स्याद्दाता दयालुर्निजवंशधाता ॥ ३५ ॥

भाग्यरेखा के निचले भागमें टिकाहुआ साफ़ होकर नवके अङ्कके समान नि यदि भासमान होता हुआ देखाजावे तो वह प्राणी सन्तुष्टचित्त होता हुआ दाता व दया होकर अपने वंश का धाता होता है ॥ ३५ ॥

शुक्ररेखा का फल

१३ काव्यालयोत्था यदि याति रेखा पैत्रीं सुमात्रीं च विभिद्य भोगाम्
शूरो मनुष्यो द्विषतो विजित्य सौभाग्यशाली लभते सुवित्तम् ॥ ३६

शुक्रके घरसे उठी हुई रेखा यदि पितृरेखा व मातृरेखा को काटकर भोगरेखा पर्य चली जावे तो वह प्राणी शत्रुवोंका विजयकर शूरमा व सौभाग्यशाली होताहुआ बड़े को पाता है ॥ ३६ ॥

१४ अङ्गुष्ठसीमाचलिते गभीरे रेखे विभुग्ने पितरं विभिन्तः ।
स्वेच्छानुसारी पुरुषो विहारी देशे सुदूरे भ्रमते नितान्तम् ॥ ३७ ॥

अँगूठे की सीमा (हद) से चलीहुई दो रेखायें गहरी व टेढ़ीहोकर पितृरेखाको का हों तो वह प्राणी अपनी चाहकी चाहना करनेवाला होकर विहार करता हुआ बड़े देश में जाकर हमेशा घूमा करता है ॥ ३७ ॥

१५ अङ्गुष्ठमूलाच्चलिते विशुद्धे रेखे गभीरे मणिबन्धमेतः ।
लावण्ययुक्तो मनुजो मनस्वी लोभाभिभूतो ललनासमेतः ॥ ३८ ॥

अँगूठे की मूल से चली हुई दो रेखायें साफ़ व गहरी होकर मणिबन्ध (कब्जे) सामने आजावें तो वह प्राणी सुन्दरता से संयुत व मनमौजी होकर ललनागणों से स होताहुआ लोभ करने से आदर नहीं पाता है ॥ ३८ ॥ (देखो चित्र नं० २३)

अथ षोडशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ सर्वाङ्गुलीनां युगरामपर्वके संभाति रेखा सरला गभीरिका ।
आत्मापघातान्मृतिमेति मानवो दुष्टस्वभावो निजदोषदर्पितः ॥ ३९

समस्त अँगुलियों की दूसरी व तीसरी पोर में सीधी व गहरी होकर रेखा भली भांति सोहती हो तो वह प्राणी बुरे स्वभाववाला होकर अपने दोषों से घमण्डी होता हुआ आत्मा के अपघात सेही मौत को पाता है ॥ ३९ ॥

२ कनिष्ठिकामूलगतं विभुग्नं रेखाचतुष्कं विशदं विभाति।
संभोगशाली मनुजस्तदानीं भोगाभिलाषां रमणीमुपैति ॥ ४० ॥

कनिष्ठा की मूलमें प्राप्तहुआ चार रेखाओंवाला निशान टेढ़ा व साफ़ होकर यदि सोहता हो तो वह प्राणी बड़ा भोगशाली होकर भोगकी चाहनावाली रमणी को पाताहै ॥ ४० ॥

३ मध्यासुमूले यदि भाति रेखा आचारहीनः शुचमेति प्राणी।
बह्वीषु रेखासु च बन्धमेति म्लानासु पीडामधिकां भुनक्ति ॥ ४१ ॥

यदि छोटी सी एकरेखा मध्यमा अँगुली की मूल में सोहती हो तो वह प्राणी आचार से हीन होकर शोक को पाता है और यदि बहुतसी रेखायें प्रतीत हों तो वह प्राणी कारागार (जेलखाने) में बन्धन को पाता है और यदि पूर्वोक्त रेखायें मैली सी प्रतीत हों तो वह प्राणी अधिक पीड़ा को भोगता है ॥ ४१ ॥

सम्भोगरेखा

४ संभोगशाखा विशदा गभीरा प्रदेशिनीमूलगता विभाति।
सत्यस्वभावो मनुजस्तदानीं लोकाभिमान्यो ललनामुपैति ॥ ४२ ॥

सुभोगरेखा की शाखा साफ़ व गहरी होकर तर्जनी अँगुली की मूलमें यदि सोहती हो तो वह प्राणी सच्चे स्वभाववाला होकर लोगों से माननीय होताहुआ ललना (दुलारी प्यारी) को पाता है ॥ ४२ ॥

संभोगरेखा

५ संभोगरेखा विशदा सुपीना संरक्तवर्णा सरला विभाति।
संक्रामरोगी पुरुषः सुभोगी शोथेन युक्तो भ्रमते भयार्तः ॥ ४३ ॥

सुभोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा) साफ़, मोटी, लाल तथा सीधी होकर यदि सोहती हो तो वह प्राणी संक्रामक रोगवाला व बड़ा भोगवाला व सूजनसे संयुक्त होकर भयसे घबड़ाता हुआ घूमता है ॥ ४३ ॥

संभोगरेखा

६ संभोगरेखोभयतो विभान्ति सूक्ष्मस्वरूपा बहुबिन्दवश्च।
क्लीबस्वभावो मनुजो मनीषी धातुक्षयं वै लभते नितान्तम् ॥ ४४ ॥

सुभोगरेखा की दोनों तरफ़ छोटेरूपवाले बहुतसे बिन्दु (नुक़्ते) यदि सोहते हों तो वह प्राणी नपुंसक कासा स्वभाववाला होकर बुद्धिमान् होताहुआ धातुकी क्षीणता को हमेशा पाता है ॥ ४४ ॥

७ बृहस्पतिस्थानगतं विभाति तिर्यग्विभिन्नं सरलं कुरेखम् ।
प्रज्ञाविहीनः पुरुषस्तदा स्यान्नार्या यदा चेत्कुलटा भवेत्सा ॥ ४५ ॥

बृहस्पति के स्थान में प्राप्तहुआ एक रेखावाला निशान सीधा होकर तिरीछा कटाहुआ यदि सोहता हो तो वह प्राणी बुद्धिसे हीन होता है और यदि पूर्वोक्त निशान जिस स्त्री के करतल में प्रतीत हो तो वह व्यभिचारिणी (वेश्या) होती है ॥ ४५ ॥

८ मातुस्सुरेखा यदि चोर्ध्वभागे नतस्वरूपा नितरां विभाति ।
अनिष्टकारी पुरुषो नराणां निर्बोधरूपो नयताविहीनः ॥ ४६ ॥

मातृरेखा

माता की रेखा यदि ऊपरले भाग में लचेरूपवाली होकर अधिकता से सोहती हो तो वह प्राणी पुरुषों के लिये अनिष्टकारी होकर अज्ञानी होताहुआ नयता (नीति) से विहीन रहता है ॥ ४६ ॥

९ मातुस्समुत्थं सरलं त्रिरेखं चिह्नं सुभोगाभिमुखं प्रयाति ।
विश्वासयुक्तः पुरुषः सुशीलः सत्ये रतः शान्तिपरो दयालुः ॥ ४७ ॥

माता की रेखा से उठाहुआ तीन रेखाओंवाला निशान सीधा होकर सुभोगरेखा के सामने चलाजावे तो वह प्राणी विश्वासी, सुशील व सत्य में रत होकर शान्ति में परायण होताहुआ दयालु बना रहता है ॥ ४७ ॥

१० पित्रा वियुक्ता यदि मातृरेखा स्थूलस्वरूपा गुरुगा विभाति ।
जारोद्भवो वै मनुजस्तदा स्याच्चातुर्यशाली चपलस्वभावः ॥ ४८ ॥

मातृरेखा

पिता की रेखा से छुटी हुई माता की रेखा मोटी होकर बृहस्पति के स्थान में यदि सोहती हो तो वह प्राणी जारजात (दोगला) होताहुआ चातुर्यशाली होकर चपल स्वभाववाला होता है ॥ ४८ ॥

११ पित्रोस्सुमध्ये विशदं विभाति गुणाख्यचिह्नं यदि रक्तवर्णम् ।
उत्पातवृन्दं लभते मनुष्यो मायाविहीनो ममतासमेतः ॥ ४९ ॥

मातृरेखा व पितृरेखा के बीच में गुणाका निशान × साफ़ लालवर्णवाला होकर यदि सोहता हो तो वह प्राणी मायाओं से विहीन होकर ममता से संपन्न होताहुआ उत्पात-समूहों को पाता है ॥ ४९ ॥

१२ अङ्गुष्ठशाखावृतरेखयुग्मं सकोणचिह्नं प्रयुतं चकास्ति ।
तदा मनुष्यः शिरसा विभिन्नः पाशाग्रविद्धो मरणं प्रयाति ॥ ५० ॥

अँगूठे की शाखाओं से घिराहुआ दो रेखाओंवाला निशान यदि कोण समेत चि

से संयुत होकर चमकता हो तो वह प्राणी शीशसे विभिन्न होकर फांसी के अग्रभाग से बिंधाहुआ मौत को पाता है ॥ ५० ॥

संभोगरेखा

१३ संभोगरेखा यदि नीचभागे क्षुद्राविमिश्रा विशदा विभाति।
उत्पातयुक्तो मनुजस्तदानीं क्लेशाभिभूतो भयतामुपैति ॥ ५१ ॥

सुभोगरेखा निचले भागमें छोटी रेखा से संयुत होकर साफ़ होती हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी उत्पातों से युक्त होकर कष्टों से दुःखी होताहुआ भय को पाता है ॥ ५१ ॥

१४ मातुस्सुरेखोभयतो विभाति बिन्दुत्रयं वै विरलं विक्षुद्रम्।
तदा जनो दुर्बलगात्रयष्टिर्व्ययाधिकं वै लभते नितान्तम् ॥ ५२ ॥

मातृरेखा के दोनों तरफ़ छोटे व विरल होकर तीन बिन्दु (नुक़्ते) यदि सोहते हों तो वह प्राणी दुर्बल शरीरवाला होकर खर्च की अधिकता को हमेशा पाता है ॥ ५२ ॥

१५ पितुस्सुभग्नी विशदा सुरेखा संवक्ररूपा समुपैति शौरिम्।
संक्षीणकायो मनुजो मलाक्तो मन्दस्वभावो ममतामुपैति ॥ ५३ ॥

पितृरेखा की भग्नीरेखा साफ़ व टेढ़ी होकर यदि शनैश्चर पर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी मलसे भरा व दुबले शरीरवाला होकर नीचस्वभाव को रखता हुआ ममता को पाता है ॥ ५३ ॥

१६ मातुस्समुत्था मणिबन्धमेति सर्पानुरूपा विशदा सुरेखा।
कारागृहं याति नरस्तदानीं स्वीयेन दोषेण समाकुलात्मा ॥ ५४ ॥

माता की रेखा से उठी हुई रेखा साफ़ व सर्पके समान आकारवाली होकर मणिबन्ध (क़ब्ज़े) के सामने चली जावे तो वह प्राणी अपने दोषसेही व्याकुल मनवाला होता हुआ जेलखाने को जाता है ॥ ५४ ॥ (देखो चित्र नं० २४)

अथ षोडशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ कनिष्ठिकामूलतलाच्चलन्ती सार्धा सुरेखा परुरेति चाद्यम्।
चातुर्ययुक्तो मनुजस्तदा स्यात् सर्वेषु शास्त्रेषु महाप्रवीणः ॥ ५५ ॥

कनिष्ठा अँगुली के मूलतल से चलती हुई डेढ़रेखा पहली पोरको पहुँचजावे तो वह प्राणी चातुरीकलासे संपन्न होता हुआ सकलशास्त्रों में बड़ा प्रवीण होता है ॥ ५५ ॥

२ चन्द्रात्मजस्थानगतं विक्षुद्रं रेखाचतुष्कं सरलं चकास्ति।
तदा जनो विन्दति जारजातान् पुत्रान्गुणाढ्यान्गुरुतागतांश्च ॥ ५६ ॥

बुध के स्थान में प्राप्तहुआ चार रेखाओंवाला निशान छोटा व सीधा होकर

यदि चमकता हो तो वह प्राणी गुणों से संपन्न गुरुता को प्राप्त जारजात (दोगले पुत्रोंको पाता है ॥ ५६ ॥

३ मार्तण्डपुत्रालयगं विभाति चिह्नं विशुद्धं सरलं त्रिरेखम् ।
वक्षस्स्थलाघातमुपैति प्राणी मान्यो वदान्यो विभुतासमेतः ॥ ५७ ॥

शनैश्चर के स्थान में प्राप्त हुआ तीनरेखाओंवाला निशान छोटा व सीधा होकर य सोहता हो तो वह प्राणी मान्य व वदान्य (दाता) होता हुआ विभुता से संयुक्त हो छाती में चोटको पाता है ॥ ५७ ॥

४ मातुस्समुत्था विशदा सुरेखा भोगां विभित्त्वा यदि याति चान्द्रिम् ।
धर्मेण युक्तो मनुजो धनाढ्यो धन्यो धरित्र्यां क्षमतामुपैति ॥ ५८ ॥

माताकी रेखासे उठीहुई साफ़ शोभायमान रेखा भोगरेखा को काटकर यदि बुध समीप चलीजावे तो वह प्राणी धनाढ्य व धर्मसे संयुक्त होकर धरामण्डल में धन्यव देने के योग्य होता हुआ क्षमता (सहनशीलता) को पाता है ॥ ५८ ॥

५ भोगासमुत्था विशदा विशुद्रा मध्यासुमूलं समुपैति रेखा ।
सम्पत्तिवृन्दं लभते मनुष्यः सौभाग्यशाली सुषमासमेतः ॥ ५९ ॥

भोगरेखा से उठीहुई रेखा साफ़ व छोटीसी होकर मध्यमा अँगुलीकी मूलके प पहुँच जावे तो वह प्राणी सौभाग्यशाली होताहुआ परमशोभा से संपन्न होकर संप समूह को पाता है ॥ ५९ ॥

६ भोगासुभग्नी विशदा विभिन्ना रेखा गभीरा यदि याति मन्दम् ।
मन्दस्वभावो मनुजो मलाक्तो दीर्घा यदा चेन्मलिनस्वभावः ॥ ६० ॥

भोगरेखा की भग्नीरेखा गहिरी होतीहुई साफ़ व भिन्न होकर यदि शनैश्चर प चली जावे तो वह प्राणी मलसे भराहुआ नीचे स्वभाववाला होता है और पूर्वोक्त रे दीर्घाकारवाली प्रतीत होवे तो वह प्राणी मैले कुचैले स्वाभाववाला होता है ॥ ६०

७ मातुस्सुरेखा यदि चोर्ध्वभागे रेखात्रयेणाप्यवकर्तिता स्यात् ।
मिथ्याप्रलापी मनुजस्तदानीं कार्ये प्रतारे निरतो नितान्तम् ॥ ६१

माता की रेखा ऊपरले भागमें तीन रेखाओं से कटी हुई यदि देखी जावे तो प्राणी मिथ्याभाषी होता हुआ छल के कार्य में हमेशा लगा रहता है ॥ ६१ ॥

८ शीर्षे सुपैत्री यदि मातृवृकणा क्षुद्राविभिन्ने च तयोः सुरेखे ।
विषप्रयोगे निरतो मनुष्यो मन्दे च कार्ये ममतामुपैति ॥ ६२ ॥

पिता की रेखा ऊपरले भाग में यदि मातृरेखा से कटी हो और उन दोनों (पिता मा-
ओं) की रेखायें छोटी रेखा से भिन्न होवें तो वह प्राणी विषप्रयोग में यानी विष
लादेने में निरत होताहुआ मन्दकार्य (नीचकार्य) में ममता को पाता है ॥ ६२ ॥

मध्ये विभिन्ना सरला गभीरा मातुः सुरेखा शशिगा नता चेत् ।
आयुष्यमल्पं लभते मनुष्यो वृद्धे वयस्के श्रमतामुपैति ॥ ६३ ॥

माताकी रेखा बीचमें कटीहुई सीधी,गहरी व लची होकर चन्द्रमा के स्थान में पहुँचजावे
वह प्राणी अल्पायु को पाता है और वृद्धावस्था में परिश्रम को करता है ॥ ६३ ॥

० पितुस्सुशेषाच्चलिता सुरेखा भाग्यां विभित्त्वा यदि याति मात्रीम् ।
दीर्घायुषं तं पुरुषं करोति सुतीव्रबुद्धिं सरलस्वभावम् ॥ ६४ ॥

पितृरेखा के शेषभाग से चली हुई रेखा भाग्यरेखा को भेदन कर यदि मातृरेखा
न्त चली जावे तो उस प्राणी को दीर्घायु, तीक्ष्णबुद्धि व सीधे स्वभाववाला
रती है ॥ ६४ ॥

१ पितुस्सुरेखा विशदा सुवक्रा भागद्वये चास्ति विभक्तरूपा ।
तदा नरोयं निधनं प्रयाति पूर्वोक्तमानेन विचारणीयम् ॥ ६५ ॥

पिता की रेखा साफ़ व टेढ़ी होकर दो भागों में बटी हुई देखी जावे तो वह प्राणी
त्युको पाता है इसका विचार पूर्वोक्त मानसे करना चाहिये ॥ ६५ ॥

२ वंभाधरस्थं विशदं विभाति वज्रानुरूपं यदि भासमानम् ।
वार्द्धे मनुष्यः शुभतामुपैति पूर्णं यदा चेच्छुभताधिकं च ॥ ६६ ॥

पिताकी रेखा के नीचे टिकाहुआ वज्राकार निशान साफ़ व शोभायमान होता हुआ प्र-
त हो तो वह प्राणी वृद्धावस्था में शुभता को पाता है और यदि पूर्वोक्त निशान पूर्णरूप
प्रतीत हो तो बड़े शुभ को पाता है ॥ ६६ ॥

३ भाग्या समुत्था मणिबन्धदेशात् कोणं सरन्ती समुपैति मात्रीम् ।
सुगुप्तविद्यो मनुजस्सुवैद्यो रसायनज्ञो रमणीरतश्च ॥ ६७ ॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठीहुई भाग्यरेखा (ऊर्ध्वरेखा) कोणको करती हुई मातृ-
खा के समीप पहुँच जावे तो वह प्राणी गुप्तविद्यावाला व अच्छा वैद्य होकर रसा-
न का ज्ञाता होता हुआ रमणियों में रत रहता है ॥ ६७ ॥

४ सुभोगरेखोपरिगं विशुद्धं गर्तानुरूपं यदि भाति चिह्नम् ।

१ "वप्रस्ताते पुमानस्त्री रेणौ क्षेत्रे चये तटे" (इति विश्वः) ॥

तदा नरोयं कटिघातमेति कलासु पूर्णः कमलालयश्च ॥ ६८ ॥

सुभोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा) के ऊपरले भाग में प्राप्त हुआ गड़हे के सम निशान साफ़ होकर यदि सोहता हो तो वह प्राणी चौसठि कलाओं में परिपूर्ण हो हुआ लक्ष्मीवान् होकर कमर में आघात को पाता है ॥ ६८ ॥

१५ सर्वाङ्गुलीनां त्रितये परुष्के यवानुरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
तदा जनो मज्जति वारिराशौ विद्याविहीनो विषयारतश्च ॥ ६९ ॥

समस्त अँगुलियों की तीसरी पोर में यदि यवाकार निशान सोहता हो तो वह प्रा विद्या से विहीन व विषयों में आसक्त होता हुआ जल में डूबता है ॥ ६९ ॥

१६ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशात् स्वल्पा सुरेखा समुपैति पैत्रीम् ।
कान्ताभिलाषी पुरुषस्तदानीं मातापितृभ्यां शुभतामुपैति ॥ ७० ॥

मणिबन्ध (कब्ज़े) से उठी छोटीसी रेखा पिताकी रेखा के पास पहुँचजावे तो प्राणी लुगाई की चाहना करता हुआ माता पिता के द्वारा शुभता को पाता है ॥ ७० (देखो चित्र नं० २५)

अथ चतुर्दशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ सर्वाङ्गुलीनां त्रितये परुष्के तिर्यग्विभिन्नं सरलं कुरेखम् ।
रोगेण युक्तो मनुजस्तदानीं नारोग्यभोगं लभते कदापि ॥ ७१ ॥

समस्त अँगुलियों की तीसरी पर्व (पोर) में तिरीछी रेखाओं से कटाहुआ सी होकर एकरेखावाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी रोगसे संयुत होकर आरो समेत भोग को कदापि नहीं पाता है ॥ ७१ ॥

२ संगर्तमध्यं गुरुगं विभाति तिर्यग्विभिन्नं सरलं द्विरेखम् ।
पुत्राञ्जनो विन्दति जारजातानूर्ध्वं यदा चेद् बहुकन्यकाश्च ॥ ७२ ॥

भलीभांति बीच में गड़हे का निशान रखनेवाला बृहस्पति के स्थान में प्राप्त व तिरी रेखाओं से कटाहुआ सीधा होकर दो रेखाओंवाला निशान यदि भासमान देखाजावे वह प्राणी जारजात (दोगले) पुत्रों को पाता है और यदि पूर्वोक्त निशान तर्जनी के ऊपरले भाग में देखाजावे तो बहुतसी जारजात कन्याओं को पाता है ॥ ७२ ॥

३ शूरात्मजस्थानगता विभान्ति क्षुद्रस्वरूपाः कुटिलास्सुरेखाः ।
आलस्ययुक्तो मनुजस्तदा स्यान्निष्कामकार्ये निरतो नितान्तम् ॥७

शनैश्चर के स्थान में प्राप्त हुई साफ़ छोटी छोटी टेढ़ी रेखायें यदि सोहती हों तो

प्राणी आलस्य से संयुक्त होता हुआ विना चाहनावाले कार्यमें हमेशा लगा रहता है ॥ ७३ ॥

४ संभोगरेखा यदि मध्यमान्ता भाग्येन भिन्ना प्रतिभाति कोणम्। संभोग रेखा
दौर्जन्ययुक्तो मनुजस्तदानीं संक्षीणकायो ममतामुपैति ॥ ७४ ॥

भाग्यरेखा (दौलत की रेखा) से कटी हुई सुभोगरेखा (हार्टलाइन) यदि मध्यमा पर्यन्त पहुँचकर कोणचिह्न को बनाती हुई देखीजावे तो वह प्राणी दुर्जनता से संयुत होकर क्षीणकायावाला होताहुआ ममता को पाता है ॥ ७४ ॥

५ संभोगरेखोपरिगं त्रिरेखं गर्तेन युक्तं यदि भाति चिह्नम्।
गुदामयं वै लभते मनुष्यो गर्भस्य घातं निजधर्मपत्न्याम् ॥ ७५ ॥

सुभोगरेखा के ऊपरले भाग में प्राप्तहुआ गड्हे से संयुक्त होकर तीन रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी गुदा में रोग और अपनी धर्मभार्या में गर्भघात को पाता है ॥ ७५ ॥

६ मातुस्सुरेखा यदि नीचभागे रेखाद्वयेनाप्यवखण्डिता स्यात्।
मातुस्सुमानं कुरुते मनुष्यो द्वेषी जनानां जनताविहीनः ॥ ७६ ॥

माताकी रेखा निचले भागमें दो रेखाओं से कटी हुई यदि देखी जावे तो वह प्राणी सर्वजनों का द्वेषी होकर जनसमूहों से विहीन होताहुआ अपनी माता का बड़ा मान सम्मान करता है ॥ ७६ ॥

७ भोगाधरस्थं चतुरस्रयुक्तं त्रिकोणरूपं यदि भाति चिह्नम्।
आत्मम्भरिस्स्यान्मनुजस्तदानीं लोभेन युक्तो ललनासमेतः ॥ ७७ ॥

भोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा) के निचले भागमें टिकाहुआ चतुष्कोण से संयुत होकर त्रिकोण का निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी लोभी व ललना (दुलारी प्यारी) से संयुक्त होताहुआ पेटू कहलाता है ॥ ७७ ॥

८ मातुस्सुरेखोपरिगं द्विरेखं चिह्नं गभीरं यदि याति भोगाम्।
तदा नरोयं द्विषतां विजेता जायासमेतो जनतामुपैति ॥ ७८ ॥

मातृरेखा के ऊपर प्राप्तहुआ गहिरा दो रेखाओंवाला निशान यदि भोगरेखा के समीप चलाजावे तो वह प्राणी शत्रुओं का विजेता होकर जाया से संयुत होंताहुआ जनता को पाता है ॥ ७८ ॥

९ पित्रोः सुमध्ये विशदं विभाति गुणत्रयेणापि युतं सुचिह्नम्।

---

१ गर्त्तावटौ भुवि श्वभ्र इत्यमरः ॥

उत्पातकारी मनुजो विकारी वेश्याविहारी परवित्तहारी ॥ ७६ ॥

मातृरेखा व पितृरेखा के बीच में तीन गुणों के निशानों से संयुत होकर शोभायमा निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी विकारी व वेश्याविहारी होकर परवित्तहारी हो हुआ उत्पातकारी होता है ॥ ७६ ॥

१० मात्रा वियुक्ता यदि पितृरेखा कौटिल्यरूपा मणिबन्धमेति ।
चतुष्पदाघातमुपैति प्राणी द्वन्द्वाख्ययुद्धे विपदां विवेति ॥ ८० ॥

मातृरेखा से छुटी (अलग) हुई पिताकी रेखा टेढ़ी होकर यदि मणिबन्ध (कब्जे के पास पहुँच जावे तो वह प्राणी चौपये के आघात को पाता हुआ द्वन्द्वयुद्ध में विप (विपत्ति) को विशेषता से पाता है ॥ ८० ॥

११ काव्यालयोत्था समुपैति रेखा पैत्रीं सुमात्रीं च विभिद्य भोगाम् ।
तदा नरः सप्ततिवत्सरान्ते सौभाग्यशाली सुखतां समेति ॥ ८१ ॥

शुक्र के स्थान से उठी हुई रेखा पितृरेखा व मातृरेखा को काटकर भोगरेखा के समी चली जावे तो वह प्राणी सत्तर वर्ष के बाद सौभाग्यशाली होता हुआ सुखसमूहों क पाता है ॥ ८१ ॥

१२ भिन्ना सुभाग्या यदि याति रेखा मात्रीं सुभोगां च विभिद्य मन्दम् ।
मृत्योर्विशङ्की मनुजो वितङ्की दौर्बल्यगात्रो गुणतामुपैति ॥ ८२ ॥

छोटी रेखा से कटी हुई भाग्यरेखा (फेटलाइन) मातृरेखा व भोगरेखा को भेदनक शनैश्चर के स्थान में यदि चलीजावे तो वह प्राणी मौत से डरता हुआ वितङ्की होकर दुबल होताहुआ गुणसमूहों को पाता है ॥ ८२ ॥

१३ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशात् सञ्छिन्नमस्ता समुपैति सौम्यम् ।
तदा नरोयं रमणीसमूहाद्धानिं भयं वै लभते नितान्तम् ॥ ८३ ॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठी हुई कटे मस्तकवाली रेखा बुधके समीप यदि चलीजावे तो वह प्राणी रमणियों (लुगाइयों) के सकाश से हानि व भय को हमेशा पाताहै ॥ ८३ ॥

१४ अङ्गुष्ठमूले विशदं विभाति रेखाचतुष्कं यदि तुर्यभिन्नम् ।
तदा भविष्ये समये मनुष्यो महाधिकारी विषये रतश्च ॥ ८४ ॥

अँगूठे की मूल में साफ़ होकर चाररेखाओं से कटा हुआ चाररेखाओं वाला निशा यदि सोहता हो तो वह प्राणी भविष्यकाल में महाधिकारी होकर विषयमें रत रहता है ॥ ८४ ॥
(देखो चित्र नं० २६)

१ भागुरिमते टाप् द्वितीयान्तं पदमिति बोध्यम् ॥

अथ चतुर्दशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ सर्वाङ्गुलीनां युगरामपर्वके भूपक्षरेखं यदि भाति लक्ष्मकम् ।
चातुर्ययुक्तश्चपलस्वभावको ह्येकाक्षरूपो मनुजो विभण्यते ॥ ८५ ॥

समस्त अँगुलियों की दूसरी व तीसरी पोर में यथासंख्य एक व दो रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी चातुरीकला से संपन्न होकर चपलस्वभाववाला होता हुआ काना कहाजाता है ॥ ८५ ॥

१ ब्रध्नालयस्थं विशदं विभाति चिह्नं द्विरेखं विततस्वरूपम् ।
तदा मनुष्यः कटिघातमेति कामी कलावान्कलहातुरश्च ॥ ८६ ॥

सूर्य के स्थान में टिका हुआ साफ़ व लम्बेरूपवाला होकर दो रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी कामी व कलावान् होकर लड़ाई करने में आतुर होता हुआ कमर में आघात (चोटचपेट) को पाता है ॥ ८६ ॥

१ सुभोगरेखा गुरुगा विभाति तस्याः सुशाखा यदि याति शौरिम् ।
तदा नरः शत्रुगणाद्विमुक्तः सम्पत्तिशाली सुखतामुपैति ॥ ८७ ॥

सुभोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा) बृहस्पति के स्थान में प्राप्त हुई यदि सोहती हो और उसकी एकशाखा शनैश्चर के स्थान में यदि चली जावे तो वह प्राणी शत्रुगणों से छूटा हुआ संपत्तिशाली होकर सुखसमूह को पाता है ॥ ८७ ॥

१ शुक्रालयाच्चेच्चलिता सुरेखा सञ्छिन्नमस्ता गुरुगा विभाति ।
महाधिकारी मनुजस्तदानीं मान्यो वदान्योऽभयतामुपैति ॥ ८८ ॥

शुक्र के स्थान से चली हुई रेखा कटे मस्तकवाली होकर बृहस्पति के स्थान में प्राप्त होती हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी महाधिकारी (बड़े ओहदेवाला) होकर मान्य व वदान्य (दाता) होता हुआ अभयता को पाता है ॥ ८८ ॥

मातुस्सुरेखोपरिगं विशुद्धं भिन्नं त्रिकोणं यदि भाति चिह्नम् ।
प्राप्नोति प्राणी जननीविरागं तदास्य माता मृतिमेति जन्तोः ॥ ८९ ॥

माता की रेखा के ऊपर प्राप्त हुआ साफ़ होकर कटा फटा तीन कोणोंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी माता के विराग को पाता है उसीसे इस प्राणी की माता पहले मौतको पाती है ॥ ८९ ॥

मातुस्सुरेखा यदि नीचभागे स्वल्पस्वरूपा वितता तथोर्ध्वे ।
दौर्भाग्ययुक्तो वयसि प्रवृद्धे संवक्रगा चेदतिलोभशाली ॥ ९० ॥

माताकी रेखा यदि निचलेभाग में पतलेरूपवाली प्रतीत हो तथा ऊपरले भाग यदि फैली हुई देखीजावे तो वह प्राणी वृद्धावस्था में दौर्भाग्यसे संयुत होता है यदि पूर्वोक्त रेखा टेढ़ीसी प्रतीत हो तो वह प्राणी बड़ा लोभी होता है (यानी बड़ लालची) कहाता है ॥ ६० ॥

७ पितुस्सुरेखोपरिगं विभाति तिर्यग्विभिन्नं समकोणयुक्तम् ।
मानस्य हानिं लभते मनुष्यस्तथा विनाशं विषयस्य नूनम् ॥ ६१

पिताकी रेखाके ऊपरले भागमें प्राप्त व तिरीछा कटाहुआ समकोणसे संयुक्त होकर यदि सोहता हो तो वह प्राणी मानहानि को तथा विषयविनाशको निश्चयकर पाताहै ॥ ६

८ भाग्याधरस्थं विशदं विभाति चिह्नं विशालं सरलं द्विरेखम् ।
दौर्जन्ययुक्तो मनुजस्तदानीं विश्वासघाती विषयानुपैति ॥ ६२ ॥

भाग्यरेखा के निचले भाग में टिका, साफ़, विशाल व सीधा होकर दो रेखाओंवा निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी दुर्जनता से संयुत होकर विश्वासघाती होता हु विषयों को पाता है ॥ ६२ ॥

९ पितुस्ससुतथा यदि याति भाग्या मात्रीं सुभोगां च विभिद्य सूर्यम् ।
क्षयार्तियुक्तो मनुजस्तदा स्यात् क्षीणो दरिद्रो दयिताविहीनः ॥ ६

पिताकी रेखा से उठीहुई भाग्यरेखा (दौलत की रेखा) मातृरेखा व भोगरेखाको वि पता से भेदन कर यदि सूर्य के समीप चलीजावे तो वह प्राणी क्षयरोग (कंजम्पशन संयुत होता हुआ दुबला व दरिद्री होकर दयिता (प्राणप्यारी) से विहीन रहताहै ॥ ६

१० अङ्गुष्ठशाखावृतमध्यभागा रेखा सुवक्रा यदि याति चोर्ध्वम् ।
तदा जनो मज्जति वारिराशौ रामा[1]भिभूतो रसिको रसायाम् ॥ ६४

अँगूठे की शाखाओं से घिरी मध्यभागवाली रेखा टेढ़ी होकर यदि ऊपर को च जावे तो वह प्राणी सुन्दरियों से अनादृत होता हुआ पृथ्वीमण्डल में रसज्ञाता हो नदी व नाले आदिकों में डूबजाता है ॥ ६४ ॥

११ निशाकरस्थानगतं विशुद्धं तारानुरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
कुशाग्रबुद्धिर्मनुजस्तदानीं महाधिकारी विषयान्भुनक्ति ॥ ६५ ॥

चन्द्रमा के स्थान में प्राप्तहुआ साफ़ होकर तारा के समान निशान यदि सोहता हो

१ सुन्दरी रमणी रामेत्यमरः ॥

ह प्राणी बुद्धिमान् या तीक्ष्ण बुद्धिवाला होकर महाधिकारी (बड़े ओहदेवाला) होता
हुआ भोगों को भोगता है ॥ ९५ ॥

१२ क्षपाकरस्थानसमीपवर्ति त्रिकोणचिह्नं विशदं चकास्ति ।
महाधिकारी मनुजो मनस्वी मायामयोयं ममतामुपैति ॥ ९६ ॥

चन्द्रस्थान के समीपवर्ती होकर साफ़ होताहुआ त्रिकोण का निशान यदि चमकता हो तो वह प्राणी महाधिकारी व मनमौजी होताहुआ मायावी होकर ममता को पाता है ॥ ९६ ॥

१३ समुत्थितं चेन्मणिबन्धदेशात्सर्पानुरूपं समुपैति भाग्याम् ।
तदा नरः क्षीणकलेवरोसौ दुःखाभिभूतो नितरां दुनोति ॥ ९७ ॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठाहुआ सांप के समान निशान यदि भाग्यरेखा (दौलत की रेखा) के पास पहुँचजावे तो वह प्राणी दुबले शरीरवाला होकर दुःखों से पीड़ित होताहुआ अधिकता से शोकित होता है ॥ ९७ ॥

१४ पैत्री सुवक्रा मणिबन्धगा चेत्तदन्तिके स्यात्सरलं द्विरेखम् ।
तदा मनुष्यो मृतिमेति पूर्वं पश्चात्स्वमाता मरणं प्रयाति ॥ ९८ ॥

पिताकी रेखा टेढ़ी सी होकर यदि मणिबन्ध (कब्जे) के पास पहुँच जावे और उसी के समीप सीधा होकर दो रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी पहले ही से मरजाता है और पीछे से उसकी माता मरजाती है ॥ ९८ ॥ (देखो चित्र नं० २७)

अथ षोडशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ सौम्यालयाच्चेच्चलिता सुरेखा सर्पानुरूपा समुपैति चोर्ध्वम् ।
भार्याविहीनो मनुजस्तदानीं यज्वा परस्त्रीं भजते नितान्तम् ॥ ९९ ॥

बुध के स्थान से चली हुई शोभायमान रेखा सर्प के समान होकर यदि ऊपर को चलीजावे यानी कनिष्ठा की तीसरी पोर में पहुँच जावे तो वह प्राणी भार्या से रहित होकर विधान से यज्ञ करता हुआ सदैव परनारी (उपपत्नी) का सेवन करता है ॥ ९९ ॥

२ अनामिकामूलगतं विभाति च्छिद्रस्वरूपं विशदं सुचिह्नम् ।
प्रणष्टदृष्टिर्मनुजो विशोकी विनष्टवित्तो विषयाद् बिभेति ॥ १०० ॥

अनामिकाकी मूल में प्राप्तहुआ साफ़ होकर छिद्र के समान शोभायमान निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी बड़ा शोच करनेवाला व विनाशहुए धनवाला होताहुआ अन्धा होकर भोगों से डरताहै यानी जिसकी दृष्टि जातीरहती है इसीसे वह विशोकी होकर गवाँये धनवाला होताहुआ विषयों से विभीत होता है ॥ १०० ॥

३ अनामिकामध्यमिकासुमध्यं मातुस्समुत्था यदि याति रेखा।
तदा नरो दीनदशासुपेतः प्राप्नोति मृत्युं निजकर्मदोषात् ॥ १ ॥

माताकी रेखा से उठी हुई रेखा यदि अनामा व मध्यमा के बीचमें पहुँचजावे तो व प्राणी दीनदशा (बुरी हालत) को प्राप्त होताहुआ अपने कर्मदोषसेही मौत को पाताहै ॥ १ ॥

४ भोगात्समुत्थं विशदस्वरूपं चन्द्रार्धचिह्नं यदि याति मन्दम्।
कारागृहं याति नरस्तदानीं कारुण्यहीनः कलहे रतश्च ॥ २ ॥

भोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा) से उगाहुआ स्पष्टरूपवाला होकर अर्धचन्द्रा-कार निशान शनैश्चर के स्थान में यदि देखा जावे तो वह प्राणी दयासे विहीन व लड़ाई में रत होताहुआ जेलखाने में जाता है ॥ २ ॥

५ संभोगरेखा यदि नीचदेशे पीना सुहीना गुरुगा विभाति।
चण्डाभिघातान्मृतिमेति प्राणी स्थूला यदा चेच्छिरघातपातात् ॥ ३ ॥

संभोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा) निचले भाग में मोटी व ऊपरले भाग में पतली होकर बृहस्पति के स्थानमें प्राप्त हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी बड़ी भारी चोट चपेट के लगने से मौत को पाता है और यदि पूर्वोक्त रेखा मोटी सी देखी जावे तो वह प्राणी शीश में चोट आजाने से मौतको पाता है ॥ ३ ॥

६ भोगाधरस्थं विशदं विभाति रेखासमेतं यदि सप्तमाङ्कम्।
तदा जनः स्वीयजनाभिभूतो नीचोर्ध्वगा चेद्रिपुवृन्दपूर्णः ॥ ४ ॥

भोगरेखा के निचले भाग में टिकाहुआ साफ़ व रेखा से संयुत होकर सात के अंक के समान निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी अपने कुटुम्बीवर्गों से अनादृत होकर यानी आदर नहीं पाता है और यदि पूर्वोक्त निशान निचले या ऊपरले भागमें देखाजावे तो वह प्राणी शत्रुगणों से पूर्ण रहता है ॥ ४ ॥

७ मातुस्सुरेखोपरिगं सुचिह्नं गुणाख्यचिह्नेन युतं त्रिरेखम्।
द्वीपान्तरं याति नरस्तदानीं दाता दयालुर्दयिताविलासी ॥ ५ ॥

मातृरेखा के ऊपरले भाग में प्राप्त हुआ गुणा × के निशान से संयुक्त होकर तीन रेखाओंवाला शोभायमान निशान यदि देखाजावे तो वह प्राणी दाता व दयालु होकर दयिताओं में विलास (ऐश) करता हुआ द्वीपान्तर (दूसरे द्वीप) में चलाजाता है ॥ ५ ॥

८ भोगाधरस्थं विशदं विभाति गुणानुरूपं यदि भाति चिह्नम्।
तदा नरो धर्मपदावलम्बी धन्यो धरित्र्यां धनतामुपैति ॥ ६ ॥

भोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा) के निचलेभाग में टिकाहुआ साफ़ होकर
णा के समान निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी धर्मपदका अवलम्बन करने
ला होकर धरामण्डल में धन्यवाद देने के योग्य होता हुआ धनसमूह को पाता है ॥ ६ ॥

पितुस्सुरेखोपरिगा विभाति ह्यङ्गुष्ठशाखासहिता सुरेखा ।
तदा नरो नीचनराभिलाषी व्रीडाविहीनो वनिताविलासी ॥ ७ ॥

पितृरेखा के ऊपरले भाग में प्राप्त हुई अँगूठे की शाखाओं से संयुक्त होकर शोभाय-
ान रेखा यदि सोहती हो तो वह प्राणी निर्लज्जरूप होकर रमणियों में रमण करता
ुआ नीच नरों की चाहना रखता है ॥ ७ ॥

१० मातुस्सुरेखाधरगं विशुद्धं त्र्यङ्कानुरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
विश्वासहीनो मनुजो विलासी संधारणाशक्तियुतोऽभिषाशी ॥ ८ ॥

मातृरेखा के निचले भाग में प्राप्त हुआ साफ़ होकर तीन अंक के समान निशान
दि सोहता हो तो वह प्राणी विलासी व भलीभांति धारणाशक्ति से युक्त होता हुआ मांसभक्षी
होकर विश्वास से हीन होता है ॥ ८ ॥

११ मातुस्सुरेखाधरगं विभाति गुणत्रयेणापि युतं सुचिह्नम् ।
तदा परस्त्रीं हरते मनुष्यो नार्या यदा चेत्कुलटा भवेत्सा ॥ ६ ॥

मातृरेखा के निचले भाग में प्राप्त हुआ तीनगुणों के निशानों से संयुक्त होकर शोभाय-
ान निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी पराई भार्या (लुगाई) को हरता है और यदि
पूर्वोक्त निशान स्त्री के करतल में प्रतीत हो तो वह व्यभिचारिणी होती है ॥ ६ ॥

१२ पितुस्सुरेखा यदि नीचभागे चिह्नेन गोलाकृतिना युता स्यात् ।
नेत्राभिघातं लभते मनुष्यो मन्त्रे सुतन्त्रे निरतो नितान्तम् ॥ १० ॥

पिताकी रेखा निचले भाग में गोलाकार निशान से संयुक्त होकर यदि प्रतीत होवे
तो वह प्राणी मन्त्रशास्त्र व तन्त्रशास्त्र में हमेशा निरत होता हुआ नेत्रों में चोट चपेट को
पाता है यानी नेत्ररोगी होता है ॥ १० ॥

१३ मातुस्सुरेखा यदि चोर्ध्वभागे स्थूलस्वरूपा मिलिता च वप्रे ।
निर्बोधरूपो मनुजस्तदानीं व्याजेन युक्तो व्यवसायपूर्णः ॥ ११ ॥

माता की रेखा ऊपरले भाग में मोटी होकर पिता की रेखा में यदि मिलजावे तो वह
प्राणी अज्ञानी होकर छल से संयुक्त होता हुआ रोज़गार से परिपूर्ण बना रहता है ॥ ११ ॥

१४ अङ्गुष्ठमूले विशदं विशालं वृत्तार्धचिह्नं नियतं चकास्ति ।

लोहाग्निघातं लभते स्वनेत्रे मानी मनुष्यो ममताविहीनः ॥ १२

अँगूठे की मूल में साफ़ व विशाल होकर अर्धवृत्तका निशान निश्चित होता हुआ च
चमकता हो तो वह प्राणी मानी व ममता से विहीन होकर अपने नेत्रों में लोह व अ
के द्वारा आघात को पाता है ॥ १२ ॥

१५ पितुस्सुरेखा मणिबन्धहीना कौटिल्यरूपा मिलिता जनन्याम् ।
जल्पाकरूपो मनुजस्तदानीं स्वल्पेन कालेन मृतिं प्रयाति ॥ १३ ।

पिताकी रेखा मणिबन्ध (कब्जे) से हीन होकर टेढ़ेरूपवाली होती हुई यदि म
रेखा में मिली देखीजावे तो वह प्राणी बकवादी (बड़बड़िया) होता हुआ थोड़े का
मेंही मौतको पाता है ॥ १३ ॥

१६ पितुस्समुत्था यदि भाग्यरेखा वृत्तार्धयुक्ता जननीमुपैति ।
आयुष्यहानिं लभते मनुष्यो ह्यानन्दहीनो निधनं प्रयाति ॥ १४ ॥

पितृरेखा से उठी हुई भाग्यरेखा (दौलतकी रेखा) अर्धवृत्त निशान से संयुक्त हो
मातृरेखा के समीप यदि चली जावे तो वह प्राणी आयुर्दायकी हानि को पाता हु
आनन्द से हीन होकर मरणको प्राप्त होता है ॥ १४ ॥ (देखो चित्र नं० २८)

अथ पञ्चदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ अनामिकायास्त्रितये परुष्के नन्दाङ्करूपं यदि भाति चिह्नम् ।
चतुष्पदादष्टतनुर्मनुष्यश्चाञ्चल्ययुक्तश्चरणामयश्च ॥ १५ ॥

अनामिका अँगुली की तीसरी पोर में नौके अङ्कका सा निशान यदि सोहता हो त
वह प्राणी चौपाये जानवर (घोड़े आदिकों) से काटे अंगवाला होता हुआ चञ्चलता
संयुक्त होकर पैरों का रोगी होता है ॥ १५ ॥

२ भोगासमुत्था सरलासुरेखा सौम्यालयं याति गभीररूपा ।
सत्पात्रशीलो मनुजस्तदा स्यान्नार्या यदा चेत्तु भवेत्सती सा ॥ १६ ॥

भोगरेखा से उठी हुई रेखा सीधी व गहरी होकर बुधके स्थान में चली जावे तो व
प्राणी सत्पात्रशाली होता है और पूर्वोक्त रेखा जिस स्त्री के करतल में देखी जावे तो व
पतिव्रता होती है ॥ १६ ॥

३ चण्डालयस्थं विशदं चकास्ति चिह्नं यदैकं यदि न्यूनकोणम् ।
तदा जनोयं जनयूथभिन्नः प्राप्नोति मृत्युं सहसा सुभीतः ॥ १७ ॥

सूर्यके स्थान में टिकाहुआ साफ़ होकर एक न्यूनकोणवाला निशान यदि चमकता

तो वह प्राणी जनसमूहों से पीटा हुआ बहुतही डरकर एकाएक (अचानक) हीं मौत को पाता है ॥ १७ ॥

४ अनामिकामध्यमिकासुमध्यं भोगासमुत्था यदि याति रेखा।
तापी सुशोकी मनुजो विदुःखी स्वल्पा यदा चेत्फलताल्पता स्यात्॥१८॥

अनामिका व मध्यमिका अँगुली के बीचमें भोगरेखा से उठी हुई रेखा यदि चली जावे तो वह प्राणी सन्ताप को करताहुआ बड़ा शोकी होकर विशेषता से दुःखी होता है और यदि पूर्वोक्त रेखा छोटी सी प्रतीत होवे तो फलकी अल्पता होती है ॥ १८ ॥

५ वृद्धाङ्गुलीतश्चलिते सुरेखे बृहस्पतिस्थानगते यदास्तः।
तदाग्निदग्धो मनुजो विभीतः संमुग्धचित्तो भ्रमते नितान्तम् ॥ १९ ॥

अँगूठे से चली हुई दो रेखायें यदि बृहस्पति के स्थानमें पहुँच जावें तो वह प्राणी आगी से जला व डरा हुआ भलीभांति मोहित चित्तवाला होकर हमेशा घूमा करताहै ॥ १९ ॥

६ भोगाधरस्थं विशदं विभाति वृत्तार्धचिह्नं यदि चोर्ध्ववक्त्रम्।
तदा नरो वह्निविदग्धगात्रो विभ्रान्तचित्तो भयतामुपैति ॥ २० ॥

भोगरेखा के निचले भाग में टिकाहुआ साफ़ होकर अर्धवृत्त का निशान ऊर्ध्वमुख वाला यदि सोहता हो तो वह प्राणी आगी से जले शरीरवाला होकर विभ्रान्तचित्त होताहुआ भयसमूहों को पाता है ॥ २० ॥

७ भोगाधरस्थं विशदं विभाति चिह्नं त्रिकोणं यदि क्षुल्लरूपम्।
चतुष्पदाघातमुपैति प्राणी चञ्चत्प्रभावश्चपलस्वभावः ॥ २१ ॥

भोगरेखा के निचले भाग में टिका हुआ साफ़ होकर छोटा सा त्रिकोण का निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी बड़े प्रभाववाला होकर चपलस्वभाववाला होताहुआ चौपाये के आघात को पाता है ॥ २१ ॥

८ संभोगरेखा मिलिता जनन्यां क्षुद्राविभिन्ना यदि चोर्ध्वभागे। संभोगरेखा
मिथ्याप्रलापी मनुजः प्रमादी संयोगहीना यदि वा सशाखा ॥ २२ ॥

सुभोगरेखा माताकी रेखा में मिलजावे और ऊपरले भाग में छोटी रेखा से कटीहुई यदि देखी जावे तो वह प्राणी मिथ्याभाषी होता हुआ प्रमादी होताहै और यदि पूर्वोक्त रेखा संयोग से हीन होकर शाखासमेत प्रतीत होवे तो भी कहाहुआ फल होता है ॥ २२ ॥

९ पितुस्सुरेखा मणिबन्धहीना संछिन्नमस्ता कुटिला विभाति। पितृरेखा
तदा नरो मस्तकघातमेति मूर्च्छादिरोगैः परिपीडिताङ्गः ॥ २३ ॥

पिता की रेखा मणिबन्ध (क़ब्जे) से हीन होकर कटे मस्तकवाली व टेढ़ी हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी मूर्च्छादिरोगों से पीड़ित अंगवाला होता हुआ म में आघात (चोट चपेट) को पाता है ॥ २३ ॥

१० निशाकरस्थानगतं सुचिह्नं संलग्नमस्तं सरलं द्विरेखम् ।
चतुष्पदाघातमुपैति प्राणी वामाभिलाषी वनिताविलासी ॥ २४ ॥

चन्द्रमा के स्थान में प्राप्त हुआ मिले मस्तकवाला व सीधा होकर दो रेखाओं शोभायमान निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी सुन्दरियों की चाहनावाला वनिताओं में विलास (ऐश) करता हुआ चौपाये के आघात को प्राप्त होता है ॥ २

११ मातुस्सुरेखोपरिगा विभान्ति रेखा विक्षुद्राः सरलाश्च षट्काः ।
जङ्घाभिघातं प्रतिपद्य सद्यः पादाभिघातं लभते मनुष्यः ॥ २५ ॥

माता की रेखा के ऊपर प्राप्त हुई छोटी व सीधी होकर छः रेखायें यदि सोहती तो वह प्राणी जंघाओं में आघात को पाकर शीघ्रही पावों में आघात को पाता है ॥ २

१२ पितुस्सुरेखानिकटे विभाति ह्यङ्गुष्ठशाखा सहितं त्रिकोणम् ।
संभ्रान्तचित्तो निजमानहीनो नरो भवेद्ध्वस्तपदाधिकारः ॥ २६

पितृरेखा के समीपही अँगूठे की शाखाओं समेत त्रिकोण का निशान यदि सो हो तो वह प्राणी संभ्रान्तचित्तवाला होता हुआ अपने मान से हीन होकर ओह पतित होता है ॥ २६ ॥

१३ मातुस्सुरेखा यदि सर्वदेशे क्षुद्राविभिन्ना विशदस्वरूपा ।
वातार्तियुक्तो मनुजो महौजाः पीडां कठोरां लभते दिनान्ते ॥ २७

मातकी रेखा साफ होकर सर्वदेश में छोटी छोटी रेखाओं से कटी हुई यदि देखी तो वह प्राणी महाबलवान् होकर वातरोग से पीड़ित होता हुआ सन्ध्यासमय में पीड़ा को पाता है ॥ २७ ॥

१४ पितुः सुरेखाधरगं विभाति रेखाद्वयं रेखयुगेन भिन्नम् ।
शोकाकुलोयं पुरुषस्तदानीं पाशाग्रविद्धो मरणं प्रयाति ॥ २८ ॥

पिताकी रेखा के निचले भाग में प्राप्त हुआ दो रेखाओंवाला निशान यदि दो रे से कटा हुआ प्रतीत होवे तो वह प्राणी शूली में टँगाहुआ मौतका को पाता है ॥ २८

१५ काण्यालयान्ते यदि भाति चिह्नं वृत्तार्धरूपं विशदं गभीरम् ।
वेश्याविहारी मनुजो विकारी मित्रापकारी परवित्तहारी ॥ २९ ॥

शुक्र के स्थान में यानी अँगूठे की मूल में अर्धवृत्त का निशान साफ़ व गहरा होकर यदि सोहता हो तो वह प्राणी वेश्याओं में विहार करता हुआ विकारी व मित्रों का अपकारी होकर परद्रव्य का हरनेहारा होता है ॥ २६ ॥ (देखो चित्र नं० २६)

अथ चतुर्दशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ सर्वाङ्गुलीनां युगरामपर्वके एका विक्षुद्रा सरला च रेखिका।
असाध्यरोगी मनुजः प्रकीर्तितो दौर्बल्यगात्रो बहुकोपकोपितः ॥ ३० ॥

समस्त अँगुलियों की दूसरी व तीसरी पोर में एकरेखा छोटी व सीधी होकर सोहती हो तो वह प्राणी असाध्य रोगी कहाता है व दुबला होकर घनेकोप से कोपित होता है॥ ३० ॥

२ कनिष्ठिकामूलगता विभान्ति रेखा विक्षुद्राः कुटिलाश्च तिस्रः।
तदा कुकाले जननं प्रयातो मानी मनुष्यो ममतामुपैति ॥ ३१ ॥

कनिष्ठा अँगुलीकी मूल में प्राप्तहुई तीन रेखायें छोटी होकर टेढ़ीसी प्रतीत होवें तो वह प्राणी कुसमय में जन्म को पाता हुआ मानी होकर ममता को पाता है ॥ ३१ ॥

३ सोमात्मजस्य सदने यति भान्ति रेखा-
स्तावन्मिता विकथिताः शुभदा विवाहाः।
पाणिग्रहैर्विरहिता यदि गर्तयुक्ता
भिन्ना यदा मृतिगताः प्रथमं नृनार्यः ॥ ३२ ॥

बुध के स्थान में यानी कनिष्ठा के मूलतल में जितनी टेढ़ी व गंभीर रेखायें प्रतीत हों उतने ही नरनारीगणों के शुभदायक विवाह कहेजाते हैं और यदि पूर्वोक्त रेखायें छिद्र से संयुत होकर प्रतीत होवें तो नरनारीगण ब्याहसे विहीन होते हैं यानी उनका ब्याहही नहीं होता है और यदि पूर्वोक्त रेखायें भिन्न हों तो नरनारीगण प्रथमही मृत्युगत होते हैं यानी स्त्री पुरुषों के करतल में उक्त रेखायें मध्य में भिन्न हों तो पहले पुरुष मरजाते हैं और यदि पार्श्व में कटीसी प्रतीत हों तो पहले स्त्रियां मरजाती हैं ॥ ३२ ॥

४ संभोगरेखोपरिगं विभाति वृत्तार्धचिह्नं विशदस्वरूपम्।
मातापितृभ्यां रहितो मनस्वी प्राप्नोति प्राणी बहुदूरदेशम् ॥ ३३ ॥

संभोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा) के ऊपरले भागमें प्राप्त हुआ साफ़ होकर अर्धवृत्तका निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी मनमौजी होकर बड़े दूरदेश को जाता है ॥ ३३ ॥

५ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशाद् भाग्या सुरेखा समुपैति शौरिम्।
तदा नरो दुःखशतानि भुङ्क्ते संस्पृष्टमूला यदि याति कारम् ॥ ३४ ॥

मणिबन्ध (कब्ज़े) से उठीहुई भाग्यरेखा शनैश्चर पर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी सं
दुःखों को भोगता है और यदि पूर्वोक्त रेखा मध्यमा की मूल को स्पर्श करती हुई दे
जावे तो वह प्राणी जेलखाने को जाता है ॥ ३४ ॥

६ संभोगरेखा यदि मध्यमान्तं गम्भीररूपा कुटिला प्रयाति ।
कष्टेन कालं नयते मनुष्यः साहाय्यतो वित्तमुपैति नूनम् ॥ ३५ ॥

संभोगरेखा गहिरी होकर टेढ़ी होतीहुई यदि मध्यमा के समीप चलीजावे तो
प्राणी कष्टसे अपने समयको बिताता है और सहायतासे निश्चयकर धनको पाता है ॥ ३

७ सुभोगरेखाधरगं त्रिरेखं वामेन मध्येन च भिन्नरूपम् ।
तदा नरो वह्निभयाद्विभीतो वित्तक्षयं वै लभते नितान्तम् ॥ ३६ ॥

सुभोगरेखा के निचले तरफ़ प्राप्त हुआ तीन रेखाओंवाला निशान वामभाग और म
भाग से कटाहुआ प्रतीत होवे तो वह प्राणी आगी की भय से डरता हुआ हमेशा धन
को पाता है ॥ ३६ ॥

८ भोगात्समुत्था यदि वक्ररेखा मात्रीं विभित्त्वा समुपैति पैत्रीम् ।
तदा जनो वैरिगणाभिभूतः क्षयार्तियुक्तो भयतामुपैति ॥ ३७ ॥

वैद्यक

भोगरेखा से उठी हुई टेढ़ी रेखा मातृरेखा को काटकर पितृरेखा के पास यदि प
जावे तो वह प्राणी शत्रुगणों से सताया हुआ क्षयीरोग से संयुक्त होकर भय
को पाता है ॥ ३७ ॥

९ पितुस्सुशीर्षोपरिगं विभाति रेखाद्वयं रेखयुगेन भिन्नम् ।
तदाश्वपृष्ठात्पतितो मनुष्यः क्षुद्रं यदा चेत्फलमन्दता स्यात् ॥ ३८ ॥

पितृरेखा के शीशपै प्राप्त हुआ दो रेखाओंवाला निशान दो रेखाओं से भिन्न हो
यदि सोहता हो तो वह प्राणी घोड़े की पीठ पर से गिर कर मरजाता है और यदि पू
निशान छोटासा प्रतीत हो तो फलकी अल्पता होती है ॥ ३८ ॥

१० क्षपाकरस्योपरिगा विभान्ति रेखा विक्षुद्रा यदि यान्ति मात्रीम् ।
तदा नरो दुर्बलगात्रयष्टिः संक्रुद्धचित्तो धननाशमेति ॥ ३९ ॥

चन्द्रस्थान के ऊपरले भागमें प्राप्त हुई छोटी छोटी बहुतसी रेखायें यदि मातृरेखा के
पहुँच जावें तो वह प्राणी दुबला व दिलमें बड़ा क्रोधी होताहुआ धनक्षयको पाता है ॥ ३

११ बृहस्पतिस्थानगता कुरेखा गम्भीररूपा यदि याति मन्दम् ।
शीतज्वरान्मृत्युमुपैति मर्त्यः सूक्ष्मा यदा चेत्फलताल्पता स्यात् ॥ ४

बृहस्पति के स्थान में प्राप्तहुई छोटीसी रेखा गहिरी होकर शनैश्चर के स्थान में पहुँच जावे तो वह प्राणी शीतज्वर (जूड़ी व बुखार) से मौतको पाता है और यदि पूर्वोक्त रेखा तली सी प्रतीत हो तो फल की अल्पता होती है ॥ ४० ॥

२ काव्यालयोत्था समुपैति रेखा पैत्रीं सुभाग्यां च विभिद्य मात्रीम्।
आघातवृन्दं लभते मनुष्यश्चानन्दहीनो दयिताविहीनः ॥ ४१ ॥

शुक्र के स्थान से उठीहुई रेखा पितृरेखा व भाग्यरेखा को काट कर मातृरेखा के पास पहुँचजावे यानी मिलजावे तो वह प्राणी आनन्द से हीन होताहुआ प्राणप्यारी से विहीन होकर बहुतसी चोट चपेटों को पाता है ॥ ४१ ॥

३ भाग्यान्तिकस्थं धटदण्डतुल्यं सप्ताङ्कभिन्नं यदि भाति चिह्नम्।
स्त्रैणो मनुष्यो निरपत्रपः स्यान्नार्यां यदा चेद्गणिका भवेत्सा ॥४२॥

भाग्यरेखा के समीप टिकाहुआ तराजूकी डण्डी के समान होकर सात के अङ्क से भिन्नहुआ निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी स्त्रीलम्पट होकर निर्लज्ज होताहै और यदि पूर्वोक्त निशान स्त्री के करतल में प्रतीत हो तो वह वेश्या होती है ॥ ४२ ॥

४ निशाकरस्थानगता सुरेखा क्षुद्राविभिन्ना कुटिलस्वरूपा।
लज्जाकरस्स्यान्मनुजस्सुखेप्सुर्नार्यां यदा चेदुपपत्निका स्यात् ॥ ४३ ॥

चन्द्रमा के स्थान में प्राप्त हुई रेखा टेढ़ी होकर छोटी छोटी रेखाओं से भिन्न होती हुई प्रतीत होवे तो वह प्राणी सुख की चाहनावाला होता हुआ लज्जाकारी होता है और यदि पूर्वोक्त रेखा स्त्री के करतल में प्रतीत हो तो याजक की उपपत्नी होती है ॥ ४३ ॥
(देखो चित्र नं० ३०)

अथ सप्तदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह —

कनिष्ठिकायास्त्रितये परुष्के रेखा विक्षुद्राः सरला यति स्युः।
तावन्मिता बोधयुताः सुपुत्राः संवक्रगाश्चेत्तति कन्यकाश्च ॥ ४४ ॥

कनिष्ठा अँगुली की तीसरी पोर में छोटी व सीधी होकर जितनी रेखायें प्रतीत हों तो उतनेही ज्ञानी सुपुत्र पैदा होते हैं और यदि पूर्वोक्त रेखायें टेढ़ी सी देखी जावें तो उतनीही कन्या पैदा होती हैं ॥ ४४ ॥

कनिष्ठिकाया द्वितये परुष्के रेखाद्वयं चेद्गुरुणा समेतम्।
पुत्रादिहीनं मनुजं करोति विद्याविहीनं वचसा विहीनम् ॥ ४५ ॥

+ याजकस्येति शेषः ॥

कनिष्ठा की दूसरी पोर में ऽगुरुसमेत ॥ दो रेखाओंवाला यानी भगण का सा नि-
यदि सोहता हो तो उस प्राणी को विद्याविहीन व वचनविहीन तथा पुत्रादिकों से
करता है ॥ ४५ ॥

३ शनैश्चरस्थानगता कुरेखा कौटिल्यरूपा विशदा विभाति ।
श्लेष्मप्रधानो मनुजस्तदा स्यात् कासादिरोगैः परिपीडिताङ्गः ॥ ४६

Asthma

शनैश्चर के स्थान में प्राप्तहुई छोटीसी रेखा टेढ़ी व साफ़ होकर यदि सोहती हो
वह प्राणी कास व श्वास आदि रोगोंसे पीड़ित होताहुआ कफरोगवाला होता है ॥ ४६

४ चन्द्रात्मजस्थानगतं गभीरं चिह्नं त्रिरेखं सरलं चकास्ति ।
सोयं जनः सज्जनसंगकारी संवक्रगं चेदधमानुगः स्यात् ॥ ४७ ॥

चन्द्रमा के स्थान में प्राप्तहुआ गहरा तीनरेखाओंवाला निशान सीधा होकर यदि सो-
हो तो वह प्राणी सज्जनों का साथ करता है और यदि पूर्वोक्त निशान टेढ़ा सा प्रतीत
तो वह प्राणी अधर्मोंका अनुगामी होता है ॥ ४७ ॥

५ संभोगरेखा यदि मध्यमान्ता संभिन्नरूपा कुटिला विभाति ।
स्वाधुस्वभावो मनुजस्तदानीं सत्कर्मशाली सततं सुखी स्यात् ॥ ४८

संभोगरेखा

संभोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा) मध्यमातक पहुँची हुई कटी व टेढ़ी होकर य-
सोहती हो तो वह प्राणी साधुस्वभाववाला होताहुआ सत्कर्मशाली होकर निर-
सुखी रहता है ॥ ४८ ॥

६ प्रदेशिनीमध्यमिकासुमध्ये रेखा यदैका सरला विभाति ।
आघातपातान्मृतिमेति प्राणी संकर्तिता चेत्फलमन्यथा स्यात् ॥ ४९ ॥

जिससमय तर्जनी व मध्यमा के बीच में एकरेखा सीधी होकर यदि सोहती हो
वह प्राणी चोटचपेट के लगजानेसे अचानक मौतको पाता है और यदि पूर्वोक्त रेखा कटी
प्रतीत हो यानी भोगरेखा से कटी देखीजावे तो फल अन्यथा होता है ॥ ४९ ॥

७ भोगाधरस्थं सरलं त्रिरेखं चिह्नं गभीरं विशदं विभाति ।
तदा जनश्शत्रुगणाभिभूतो शान्त्या विहीनो भयतामुपैति ॥ ५० ॥

भोगरेखा के निचले भागमें टिका हुआ सीधा व तीन रेखाओंवाला निशान गहरा
साफ़ होकर सोहता हो तो वह प्राणी वैरिगणों से अनादृत होताहुआ शान्ति से र-
होकर भयको पाता है ॥ ५० ॥

१श्लिष्यति 'श्लिष् आलिंगने' (दि. प. अ.) सर्वधातुभ्यो मनिन् श्लेष्मेति सिद्ध्यति ।

मातुः सुरेखोपरिगं गभीरं वृत्तार्धचिह्नं विशदं विभाति ।
गुदामयं वै लभते मनुष्यश्चोर्ध्वं यदा चेत्पशुघातमेति ॥ ५१ ॥

मातृरेखा के ऊपरले भागमें प्राप्तहुआ गहरा व साफ़ होकर अर्धवृत्तका निशान यदि होता हो तो वह प्राणी गुदारोग (भगन्दर बवासीर आदि) को पाता है और यदि वोंक्त निशान ऊर्ध्वमुख होकर प्रतीत हो तो वह प्राणी पशुघात को पाताहै ॥ ५१ ॥

मातुस्सुशीर्षोपरिगं विभाति गर्ताख्यचिह्नं विशदं गभीरम् ।
नक्तान्ध्यरोगी मनुजः सुभोगी विद्याविशेषो विभुतामुपैति ॥ ५२ ॥

मातृरेखा के शीश के ऊपर प्राप्तहुआ गड्ढे का निशान गहिरा व साफ़ होकर यदि होता हो तो वह प्राणी रतौंधीवाला व बड़ा भोगवाला होकर विद्याओं में विशेष होता हुआ विभुताको पाता है ॥ ५२ ॥

१० मातुस्सुशीर्षोपरिगा सुरेखा गम्भीररूपा यदि याति मन्दम् ।
उद्बन्धयुक्तो मृतिमेति जन्तुर्जायासमेतो जयतामुपेतः ॥ ५३ ॥

मातृरेखा के शीशपर प्राप्तहुई शोभायमान रेखा गहरी होकर शनैश्चरपर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी जायासमेत जयताको प्राप्त हुआ उद्बन्धन (फांसी आदिकों) से मौत को पाता है ॥ ५३ ॥

११ स्वल्पा सुमात्री विशदा सुरेखा संवक्ररूपा यदि याति वक्रम् ।
चतुष्पदाघातमुपैति प्राणी चञ्चत्प्रभावश्चपलस्वभावः ॥ ५४ ॥

माताकी रेखा छोटी व साफ़ होकर टेढ़ी होती हुई यदि मङ्गल के समीप चलीजावे तो वह प्राणी बड़े प्रभाववाला होकर चपलस्वभाववाला होता हुआ चौपये से चोट चपेट को पाता है ॥ ५४ ॥

१२ वक्रा सुपैत्री मिलिता जनन्यां कोणेन युक्ता मणिबन्धगा चेत् ।
सोयं जनः शत्रुगणादिभिन्नः कारागृहं प्राप्य मृतिं प्रयाति ॥ ५५ ॥

पिताकी रेखा टेढ़ी व मातृरेखा में मिली हुई कोण के निशान से संयुक्त होकर कब्जे पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी वैरिगणों से ताड़ित होता हुआ जेलख़ाने में जाकर मौत को पाता है ॥ ५५ ॥

१३ अङ्गुष्ठशाखासहितं गभीरं कोणद्वयं चिह्नतमं चकास्ति ।
श्लेष्माधिकोयं मनुजस्तदानीं दौर्बल्यगात्रो दयितामुपैति ॥ ५६ ॥

---

१ अङ्गानि वेदाश्चत्वारो मीमांसा न्यायविस्तरः । धर्मशास्त्रं पुराणं च विद्या ह्येताश्चतुर्दश ॥
२ मरणं मृतिस्तां मृतिम् ॥

अँगूठेकी शाखाओं समेत गहरा दो कोणों का निशान यदि सोहता हो तो वह प्रा कफीला होकर दुबला होता हुआ दयिता (प्राणप्यारी) को पाता है ॥ ५६ ॥

१४ वृद्धाङ्गुलेर्वैनिकटे नखस्य मध्ये विभिन्नं यदि भाति वृत्तम् ।
चौर्ये प्रवृत्तो मनुजस्तदानीं स्त्रैणो महाव्याधियुतो बिभेति ॥ ५७ ॥

अँगूठे के नख के समीप बीच में सरल छोटी रेखा से कटाहुआ गोलाकार नि यदि सोहता हो तो वह प्राणी चौरकर्म में परायण व स्त्रीलम्पट होताहुआ महाव्या से युक्त होकर डरता है ॥ ५७ ॥

१५ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशात्स्वल्पा सुभाग्या समुपैति मात्रीम् ।
तदा जनो जीवति दीर्घकालं दाता दयालुर्दयिताविहीनः ॥ ५८ ॥

मणिबन्धन (कब्जे) से उठीहुई छोटी सी भाग्यरेखा यदि मातृरेखा के पास च जावे तो वह प्राणी दाता व दयालु होकर प्राणप्यारी से विहीन होता हुआ ब समयतक जीता है ॥ ५८ ॥

१६ अङ्गुष्ठमूले विशदं विशालं कीटानुरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
कफार्तियुक्तो मनुजस्तदा स्यात्कान्ताविहीनः कलहे रतश्च ॥ ५९ ॥

अँगूठेकी मूल में साफ़ व विशाल होकर बीछू के समान निशान यदि सोहता हो वह प्राणी स्त्री से विहीन होकर लड़ाई करता हुआ कफरोग से घिरा रहता है ॥ ५९ ॥

१७ पित्रोः सुमध्ये परिदृश्यमानं सर्पानुरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
तदा कलङ्की मनुजो विशङ्की नार्या यदा चेत्कुलटा भवेत्सा ॥ ६० ॥

मातृरेखा व पितृरेखा के बीच में देखा हुआ सांप के समान निशान यदि भासता तो वह प्राणी कलङ्की होकर विशङ्की होता है और यदि पूर्वोक्त निशान स्त्री के करतल सोहता हो तो वह व्यभिचारिणी होती है ॥ ६० ॥ (देखो चित्र नं० ३१)

अथ सप्तदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह —

१ कनिष्ठिकायास्तृतये परुष्के रेखाद्वयं चेत्सरलं विभाति ।
जङ्घार्तिभीतिं लभते मनुष्यो जायाभिलाषी जनतासमेतः ॥ ६१ ॥

कनिष्ठा अँगुली की तीसरी पोर में सीधा दो रेखाओंवाला निशान यदि सोहता तो वह प्राणी जाया की अभिलाषा करता हुआ जनसमूहों से घिर कर जंघापीड़ा भय को पाता है ॥ ६१ ॥

१ केन जलेन फलति 'फलनिष्पत्तौ' (स्वा. प. से.) अन्येभ्योपीति डः यद्वा के शिरसि फ फक्तीतिवा ॥

✓ Fate line

२ अनामिकायास्त्रितये परुष्के रेखाद्वयं चेत्कुटिलं चकास्ति ।
चतुष्पदादष्टतनुर्मनुष्यो दीनो दरिद्रो दमतामुपैति ॥ ६२ ॥

अनामिका की तीसरी पोर में टेढ़ा दो रेखाओं का निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी दीन व दरिद्री होकर चौपाये से डसा हुआ दमता को पाता है ॥ ६२ ॥

३ चन्द्रात्मजस्थानगता विक्षुद्रा स्थूलस्वरूपा यदि भाति रेखा ।
चौर्ये प्रवृत्तो मनुजस्तदा स्याच्चञ्चत्प्रभावश्चपलस्वभावः ॥ ६३ ॥

बुधके स्थान में प्राप्त छोटी व मोटी होकर रेखा यदि सोहती हो तो वह प्राणी दीप्त प्रभाववाला होता हुआ चपलस्वभाववाला होकर चोरी करनें में लगा रहता है ॥ ६३ ॥

४ अब्जालये चेद्विशदे विक्षुद्रे स्यातां सुरेखे विरलस्वरूपे ।
कट्यार्तिभीतिं भजते मनुष्यो भाग्येन हीनो भ्रमतासमेतः ॥ ६४ ॥

सूर्य के स्थान में साफ़ व छोटी होकर सीधी दो रेखायें यदि विरलरूप से सोहती हों तो वह प्राणी भाग्य सें हीन होकर भ्रमसमूहों सें घिरा हुआ कमरपीड़ा की भयको भजता यानी सेवन करता है ॥ ६४ ॥

५ प्रदेशिनीमूलतलाच्चलन्ती रेखा यदैका यदि याति चान्द्रिम् ।
व्युत्पन्नबुद्धिर्मनुजस्तदा स्याद्वेदान्तभाषी व्यवसायपूर्णः ॥ ६५ ॥

तर्जनी अँगुलीकी मूल सें चली हुई एक रेखा यदि बुध के स्थान में विराजमान हो तो वह प्राणी वेदान्तभाषी होकर उद्यम सें पूर्ण होता हुआ व्युत्पन्न बुद्धिवाला होता है । यह रेखा प्रायः अखबारसंपादकों के हाथों में पाई जाती है ॥ ६५ ॥

६ संभोगरेखा यदि नीचभागे रेखाद्वयेनाप्यवखण्डिता स्यात् ।
तदा नरो बन्धुजनोपकारी प्राप्नोति वित्तं वनिताविहारी ॥ ६६ ॥

संभोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा) निचले भाग में दो रेखाओं सें खण्डित देखी जाती हो तो वह प्राणी बन्धुजनों का उपकारी होकर वनिताओं में विहार करता हुआ धनको पाता है ॥ ६६ ॥

७ अम्बोत्थरेखा युतशीर्षदेशा संभोगरेखा गुरुगा विभाति ।
तदा नरो मृत्युभयाद्विभीतो व्यासक्तचित्तः परितः प्रयाति ॥ ६७ ॥

मातृरेखा से उठी हुई रेखा से संयुत शीशवाली भोगरेखा यदि बृहस्पति के स्थान में पहुंच कर सोहती हो तो वह प्राणी मौतके डर से डरता हुआ विशेषता सें व्यासक्तचित्त वाला होकर चारों तरफ़ घूमता है ॥ ६७ ॥

८ गुर्वालयोत्था विशदास्सुरेखा यावन्मिता मातृपदं प्रयान्ति ।
तावद्विवाहान्कुरुते मनुष्यो मान्यो वदान्यो धनतासमेतः ॥ ६८॥

बृहस्पति के स्थान से उठी हुई साफ़ शोभायमान जितनी रेखायें मातृरेखा के पहुँच जावें तो वह प्राणी मानी व अतिदानी होकर धनसमूहों से सम्पन्न होता हुआ उत विवाहों को करता है ॥ ६८ ॥

९ मातुस्सुरेखा यदि नीचभागे शाखासमेता गुरुगा विभाति ।
दाता दयालुर्मनुजस्तदानीं सुखाभिलाषी ललनामुपैति ॥ ६९ ॥

माताकी रेखा निचले भाग में शाखाओं से संयुत होकर यदि बृहस्पति के स्था पहुँची हुई सोहती हो तो वह प्राणी दाता व दयावान् होकर सुखाभिलाषी होता ललना (दुलारी प्यारी) को पाता है ॥ ६९ ॥

१० मातुस्सुरेखा यदि मध्यभिन्ना गम्भीररूपा गुरुगा विभाति ।
कट्यार्तिभीतिं लभते मनुष्यः पूर्वोक्तमानेन विचारणीयम् ॥ ७०

माताकी रेखा बीच में भिन्न व गहरी होकर बृहस्पति के स्थान में पहुँची हुई सोहती हो तो वह प्राणी कमरपीड़ा की भयको पाता है यह पूर्वोक्तमान से विचा चाहिये ॥ ७० ॥

११ मात्रा वियुक्ता यदि पितृरेखा सञ्छिन्नमस्ता कुजगा विभाति ।
तदा नरः स्याद्बहुजग्धिकारी प्रमत्तचित्तः प्रमदाविहारी ॥ ७१ ॥

माताकी रेखा से अलग होकर पिताकी रेखा कटे मस्तकवाली व मंगल के घ पहुँची हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी मतवाला होकर प्रमदाओं में विहरता हुआ से भोजनों का करनेवाला होता है ॥ ७१ ॥

१२ वृद्धाङ्गुलेर्वै निकटे नखस्य चापानुरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
शस्त्रास्त्रविद्धो मनुजो मनस्वी मानी धनी स्याज्जनतासमेतः ॥७

अँगूठे के नाखून के पास धन्वाकार निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी मनस्वी मानी व धनी होता हुआ जनसमूहों से संपन्न होकर शस्त्रास्त्रों से वेधाजाता है ॥ ७२

१३ मातुस्सुरेखाधरगं गभीरं त्र्यङ्कानुरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
तदा नरस्स्याच्छरजालबद्धो वामी सुकामी खलधामगामी ॥ ७३

मातृरेखा के निचले भाग में प्राप्त हुआ गहिरा होकर तीन के आंक कासा नि यदि सोहता हो तो वह प्राणी वामी व बड़ा कामी होकर खलधामगामी होता बाणसमूहों से बांधा जाता है ॥ ७३ ॥

१४ समुत्थितं चेन्मणिबन्धदेशात्सर्पानुरूपं समुपैति मात्रीम्।
तदा नरः स्याद्व्यभिचारशीलो नार्या यदा चेत्कुलटा भवेत्सा ॥७४॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठा हुआ सर्प के समान निशान मातृरेखा के समीप यदि चलाजावे तो वह प्राणी व्यभिचारशाली होता है और यदि पूर्वोक्त निशान स्त्री के करतल में विराजता हो तो वह व्यभिचारिणी होती है ॥ ७४ ॥

१५ पैत्री सुरेखा यदि मध्यदेशे वृत्तार्धयुक्ता कुटिला विभाति।
प्राप्नोति प्राणी हृदयाभिघातं पूर्वोक्तमानेन विदोहनीयम् ॥ ७५ ॥

पिता की रेखा मध्यभाग में गोलाकार या अर्ध गोलाकार निशान से संयुत होती हुई टेढ़ी होकर यदि सोहती हो तो वह प्राणी हृदय में चोट चपेट को पाता है यह विद्वान् को पूर्वोक्त मान से विचारना चाहिये ॥ ७५ ॥

१६ निशाकरस्थानगतं सुचिह्नं चुल्लीसरूपं विशदं विभाति।
तदा नरो मज्जति वारिराशौ व्यायामसक्तो विषयातुरश्च ॥ ७६ ॥

चन्द्रमा के स्थान में प्राप्त हुआ चुल्ही के समान साफ़ शोभायमान निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी कसरती होता हुआ विषयों से आतुर होकर नदी या नाले आदिकों में डूब जाता है ॥ ७६ ॥

१७ पैत्रीसुरेखा यदि नीचभागे संखण्डिता भुग्नतरा विभाति।
तदा महोच्चात्पतितो मनुष्यो मानी महौजा ममतामुपैति ॥ ७७ ॥

पिता की रेखा निचले तरफ़ भलीभांति खण्डित होकर टेढ़ी होती हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी मानी व महाबलवान् होकर बड़े ऊंचे से गिरता हुआ ममताको पाताहै॥७७॥
(देखो चित्र नं० ३२)

अथ द्वादशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ सर्वाङ्गुलीनां युगरामपर्वके रेखाद्वयं वै सरलं विभाति चेत्।
तदा जनोसौ निजवाक्यपालकः पारुष्यपूर्णः परमार्थशालकः॥ ७८ ॥

समस्त अँगुलियों की दूसरी व तीसरी पोर में सीधी दो रेखायें यदि सोहती हों तो वह प्राणी अपने वाक्यका पालनेवाला होकर कठोरता से पूर्ण रहता हुआ परमार्थ का शालनेवाला होता है ॥ ७८ ॥

---

१ निशाकरश्चन्द्रः २ "ओजो दीप्तौ बल इत्यमरः" महदोजो बलं यस्मिन्निति महाबलवानिति यावत् ॥

२ सौम्यालयाच्चेच्चलिता सुरेखा चापानुरूपा यदि याति सूर्यम् ।
तदा नरोऽसौ वयसः क्रमेण प्राप्नोति वृद्धिं बलवीर्ययुक्ताम् ॥ ७९ ॥

बुधके स्थान से चली हुई शोभायमान रेखा धनुष के समान होकर यदि सूर्य के स्थान में पहुँचजावे तो वह प्राणी अवस्था के क्रमसे बल व वीर्य से युक्त वृद्धि को पाता है यानी बाल्यावस्था से युवावस्था में व युवावस्था से वृद्धावस्था में उन्नतिको पाता है ॥ ७९ ॥

३ वक्रालयाच्चेच्चलिता सुरेखा पित्रोर्विभित्त्वा यदि याति भोगाम् ।
रक्तार्तियुक्तो मनुजो मनीषी सौजन्यपूर्णो मृतिमेति सद्यः ॥ ८० ॥

मङ्गल के स्थान से चली हुई शोभायमान रेखा मातृरेखा व पितृरेखा को काटकर भोग-रेखा पर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी बुद्धिमान् व सुजनता से पूर्ण होकर रक्तपीड़ा से संयुक्त होता हुआ वेगही मौतको पाता है ॥ ८० ॥

४ संभोगरेखोपरिगं विभाति वृत्तार्धयुग्मेन युतं सुचिह्नम् ।
तदा नरोसौ गुणगौरवाढ्यो गुदार्तियुक्तो गुरुतामुपैति ॥ ८१ ॥

सुभोगरेखा के ऊपर प्राप्त हुआ दो अर्धगोलाकारों से संयुत शोभायमान निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी गुणों की गौरवता से सम्पन्न होकर गुदारोग से पीड़ित होता हुआ गुरुता को पाता है ॥ ८१ ॥

५ मातुस्सुरेखा यदि मध्यभागे धन्वाकृतिभ्यामवखण्डिता स्यात् ।
दौर्बल्यगात्रो विकलस्वभाको मानेन हीनो मनुजो बिभेति ॥ ८२ ॥

माता की रेखा यदि मध्यदेश में दो धन्वाकार निशानों से खण्डित देखीजावे तो वह प्राणी दुर्बल शरीरवाला व विकल स्वभाववाला होकर मान से विहीन होता हुआ डरता रहता है ॥ ८२ ॥

६ पित्रा समेता यदि मातृरेखा कोणेन युक्ता कुटिला विभाति ।
विश्वासयुक्तो मनुजो मनस्वी स्यात्तीक्ष्णबुद्धिर्विषयस्य गोप्ता ॥ ८३ ॥

पिता की रेखा से मिली मातृरेखा टेढ़ी होकर कोण के निशान से संयुत होती हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी मनमौजी, तीखी बुद्धिवाला व विषयका छिपानेहारा होकर विश्वासयुक्त रहता है ॥ ८३ ॥

७ पितुः सुरेखोपरिगं सुचिह्नं भिन्नत्रिकोणं यदि वज्रभिन्नम् ।
तदा नरो वह्निविदग्धगात्रो व्यासक्तचित्तः परितः प्रयाति ॥ ८४ ॥

पिताकी रेखा के ऊपरले भाग में प्राप्त हुआ वज्र से कटे हुए भिन्नत्रिकोण

निशान यदि देखा जावे तो वह प्राणी आगी से जली देहवाला होकर विशेषता से आसक्तचित्त होता हुआ या कि सबोंसे अलग चित्तको रखता हुआ चारोंतरफ़ घूमता है॥८४॥

८ काव्यालयाच्चेच्चलिता सुरेखा नतस्वरूपा यदि याति चोर्ध्वम् ।
तदा नरो भिक्षुकवृत्तियुक्तो नीचप्रवृत्तिर्नितरां विभाति ॥ ८५ ॥

शुक्र के स्थान से चली हुई रेखा लचेरूपवाली होकर यदि ऊपरको चली जावे तो वह प्राणी नीचों में प्रवृत्ति रखता हुआ भिक्षुकों की जीविका से संयुत होकर बहुत ही सोहता है ॥ ८५ ॥

९ आरालयोत्थं कुटिलं गभीरं रेखाद्वयं भ्रातृपदं प्रयाति ।
शीर्षच्छिदाभीतियुतो मनुष्यो मायामयोयं ममतामुपैति ॥ ८६ ॥

मंङ्गल के स्थान से उठाहुआ टेढ़ा व गहिरा होकर दो रेखाओं का निशान भ्रातृ स्थानको यदि चलाजावे तो वह प्राणी मायावी होकर शीशकाटने की भय से संयुत होता हुआ ममता को पाता है ॥ ८६ ॥

१० चन्द्रालयस्थं सघनं गभीरं रेखात्रयं चिह्नतरं चकास्ति ।
तदा नरोसौ शठतामुपैति सम्पत्तिपूर्णो नितरामसभ्यः ॥ ८७ ॥

चन्द्रमा के स्थान में टिकाहुआ + घनसमेत गहिरा तीन रेखाओंवाला निशान यदि चमकता हो तो वह प्राणी सम्पत्तियों से पूर्ण रहता हुआ बहुत ही असभ्य होकर शठता को पाता है ॥ ८७ ॥

११ भाग्या सुरेखा खलु स्वल्परूपा शाखासमेता शशिनं प्रयाति ।
तदा जनोयं जठरामयार्त्तो जाज्वल्यमानो ज्वरतामुपैति ॥ ८८ ॥

भाग्यरेखा (फार्चूनलाइन) शाखा समेत छोटेरूपवाली होकर यदि चन्द्रमा के सामने चली जावे तो वह प्राणी उदररोग से पीड़ित होकर बहुत ही जलता हुआ ज्वरसमूहों को पाता है ॥ ८८ ॥

१२ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशाद्वक्रा सुरेखा यदि याति मात्रीम् ।
तदा नरो घूर्णितशीर्षदेशो दौर्बल्यगात्रो भयतामुपैति ॥ ८९ ॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठी रेखा टेढ़ी होकर मातृरेखा के पास यदि चलीजावे तो वह प्राणी शिरोभ्रान्ति (घुमनी) रोग से पीड़ित होता हुआ दुबली देहवाला होकर भयता (भयसमूह) को पाता है यानी उस प्राणीका शीश हमेशा चक्कर खाया करता है इसी से दुबला रहता हुआ डरा करता है ॥ ८९ ॥ (देखो चित्र नं० ३३)

---

१ शुक्रो दैत्यगुरुः काव्य उशना भार्गवः कविरित्यमरः ॥

अथ पञ्चदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ मध्याङ्गुलेर्वै द्वितये परुष्के वक्रा सुरेखा विशदा विभाति।
तदा नरोऽनिष्टतरं प्रयाति विषाद्युपायैर्विषयाभिभूतः॥ ९०॥

मध्यमा अँगुली की दूसरी पोर में रेखा साफ़ व टेढ़ी होकर यदि सोहती हो तो प्राणी विषयों से टूटे अहंकारवाला होता हुआ विषादि उपायों द्वारा अनिष्टताको पाताहै॥

२ सौम्यार्कमध्ये विशदं विभाति तिर्यक्स्वरूपं यदि युग्मरेखम्।
नेत्राभिघातं लभते मनुष्यो नारीविहीनो नयतासमेतः॥ ९१॥

बुध व सूर्य के मध्य में यानी कनिष्ठा व अनामा के नीचे तरफ़ विचले भाग में स होकर दो रेखाओंवाला निशान तिरीछे रूपवाला होता हुआ यदि सोहता हो तो प्राणी प्राणप्यारी से विहीन होकर नीति से संपन्न होता हुआ लोचनों में चोट चपेट पाता है॥ ९१॥

३ मन्दालयस्थं विशदं विभाति तिर्यक्त्रिभिन्नं यदि युग्मरेखम्।
कारागृहं याति नरः कदापि ज्वरेण भग्नश्चतुराहिकेण॥ ९२॥

शनैश्चर के स्थान में टिकाहुआ साफ़ व तिरीछी तीन रेखाओं से भिन्न होकर रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी चतुराहिक ज्वर से पीड़ित हो हुआ कभी जेलखाने को जाता है॥ ९२॥

४ गुर्वालयस्था कुटिला कुरेखा तिर्यग्विभिन्ना यदि याति भोगाम्।
पदाधिकारं लभते मनुष्यो ऋज्वी यदा चेद्धठतः पदाप्तिम्॥ ९३

बृहस्पति के स्थान में टिकी हुई टेढ़ी व छोटी सी रेखा तिरीछी रेखा से भिन्न हो यदि भोग रेखा पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी पदाधिकार को पाता है और य पूर्वोक्त रेखा सीधी सी प्रतीत हो तो वह प्राणी हठ से पदको पाता है॥ ९३॥

५ गुर्वालयान्ताच्चलिता सुरेखा पित्रोर्विभित्त्वा यदि याति भौमम्।
रक्तार्तियुक्तो मनुजो मनीषी मान्यो वदान्यो ज्वरतामुपैति॥ ९४

बृहस्पतिस्थान के समीप से चली हुई शोभायमान रेखा मातृरेखा व पितृरेखा काटकर यदि मङ्गलपर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी बुद्धिमान्, मान्य व वदान्य (दानी) होकर रक्तपीड़ा से संयुत होता हुआ ज्वरसमूह को पाता है॥ ९४॥

६ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशात्क्षुण्णा सुरेखा समुपैति सौम्यम्।
दीर्घायुषं तं मनुजं करोति विद्याधरं बोधवरं वरेण्यम्॥ ९५॥

१ आत्तगर्वोऽभिभूतस्स्यादित्यमरः॥

जिस प्राणी के करतल में मणिबन्ध (कब्ज़े) से उठी हुई रेखा टेढ़ी होकर यदि बुध पर्यन्त चली जावे तो उस प्राणी को दीर्घ उमरवाला, विद्या का धारनेवाला, बड़े बोधवाला तथा सबों में प्रधान बना देती है ॥ ९५ ॥

७ संभोगरेखा गुरुगा गभीरा शाखासमेता यदि नीचभागे।
बाह्ये गुदे रोगयुतो मनुष्यः संखण्डिता चेद् गुदमध्यरोगी ॥ ९६ ॥

भोगरेखा (हार्टलाइन) बृहस्पति के स्थान में पहुँची हुई गहरी होकर यदि निचले स्थान में शाखा समेत देखी जावे तो वह प्राणी गुदा स्थान में बाहिरी तरफ़ रोगों से संयुत रहता है और यदि पूर्वोक्त रेखा निचले भाग में खण्डित पाई जावे तो वह प्राणी गुदा के बीच में रोगवाला होता है ॥ ९६ ॥

८ संभोगमात्रोर्यदि नीचदेशे चिह्नं चतुष्कोणयुतं चकास्ति।
तदा विवादी मनुजो विषादी महाप्रतापी खलु विप्रलापी ॥ ९७ ॥

संभोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा) व मातृरेखा के निचले भाग में चौकोणसंयुक्त निशान यदि भासमान हो तो वह प्राणी विषाद का करनेवाला, बड़े प्रतापवाला व छल से भाषणकर आशाभंग का करनेहारा होकर झगड़ालू होता है ॥ ९७ ॥

९ मातुस्सुरेखा गुरुगा गभीरा क्षुद्राविभिन्ना यदि मध्यदेशे।
तदा मनुष्यः सुविचारशाली काले भविष्ये कुविचारपाली ॥ ९८ ॥

माता की रेखा बृहस्पति के स्थान में पहुँची हुई गहरी होकर यदि बिचले भाग में क्षुद्ररेखाओं से कटी देखी जावे तो वह प्राणी वर्तमानकाल में बड़ा विचारशाली होता है तथा भविष्यकाल में निन्दित विचार का पालनेवाला होता है यानी बुरा विचार किया करता है ॥ ९८ ॥

१० मातुस्सुरेखा यदि नीचदेशे क्षुद्राविभिन्ना गुरुगा विभाति। मातृरेखा
अल्पायुषं तं पुरुषं करोति ह्यानन्दहीनं मतिमन्दपीनम् ॥ ९९ ॥

बृहस्पति के स्थान में पहुँची माता की रेखा यदि निचले भाग में छोटी रेखा से कटी हुई सोहती हो तो उस प्राणी को आनन्द से हीन, मोटी बुद्धिवाला तथा थोड़ी उमर वाला करती है यानी वह प्राणी आनन्द से रहित होकर मतिमन्दों में मोटा होता हुआ अल्पायु होजाता है ॥ ९९ ॥

११ आरालयान्ताच्चलिते सुरेखे अङ्गुष्ठपृष्ठाभिमुखं प्रयातः।
तदा जनो मज्जति वारिराशौ कर्तव्यकार्ये बहुतर्ककारी ॥ १०० ॥

---

१ विप्रलापो विसंवाद इत्यमरः ॥

मङ्गलस्थान के निकटदेश से चली हुई शोभायमान दो रेखायें अँगूठे की पी सामने यदि पहुँच जावें तो वह प्राणी करने योग्य कार्य में बहुतसा तर्क करनेहारा नदी व नाले आदिकों में डूबजाता है ॥ १०० ॥

१२ वृद्धाङ्गुलेर्वै निकटे नखस्य रेखाद्वयं चेद्ग्रथितं मिथः स्यात् ।
तदा नरो नास्तिकतामुपैति पाखण्डकारी परवित्तहारी ॥ १ ॥

अँगूठ के नखके पास टेढ़ी फनाकार दो रेखाओंवाला परस्पर (ꕕ) गुँथा हुआ नि सोहता हो तो वह प्राणी पाखण्डकारी होकर परधन का हरनेवाला होताहुआ नास्तिक को पाता है ॥ १ ॥

१३ मन्दालयाच्चेच्चलिता सुरेखा स्वल्पस्वरूपा समुपैति पैत्रीम् ।
तदा नरस्तूच्चपदं प्रयाति राज्यात्प्रतिष्ठां प्रतिपद्य सम्यक् ॥ २ ॥

शनैश्चर के स्थानसे चली हुई शोभायमान रेखा छोटे रूपवाली होकर पितृरेखा के प पहुँच जावे तो वह प्राणी भलीभांति किसी राज्य से प्रतिष्ठा को पाकर ऊंचे पद अधिकारी होता है यानी बड़ी प्रतिष्ठा के साथ ऊंचेपद को पाता है ॥ २ ॥

१४ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशाद् वक्रा सुरेखा पितरं प्रयाति ।
ज्वरार्दितः क्षीणतनुर्मनुष्यो दीनो दरिद्रो दयितासमेतः ॥ ३ ॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठी हुई शोभायमान रेखा टेढ़ी होकर पितृरेखा के पास पहुँ जावे तो वह प्राणी क्षीणकायावाला, दयितासमेत, दीन व दरिद्री होकर बुखार व्याकुल रहता है ॥ ३ ॥

१५ काव्यालयस्थं परिभाति चिह्नं बाणैर्विभिन्नं यदि षट्करेखम् ।
हासी विलासी रतिरङ्गलासी[१] ह्यानन्दराशी पुरुषः प्रकाशी ॥ ४ ॥

शुक्र के स्थान में टिका व पांच तिरीछी रेखाओं से कटा हुआ छः रेखाओंवाल निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी हँसनेवाला, ऐयाश व रतिरंगमें लसाहुआ आन की राशिवाला होकर प्रकाश का करनेवाला कहाता है ॥ ४ ॥ (देखो चित्र नं० ३६

अथ चतुर्दशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ प्रदेशिनी चन्द्रमिते परुष्के रेखाद्वयं चेत्कुटिलं चकास्ति ।
उग्रस्वभावो मनुजस्तदा स्यात्क्रोधातुरः क्षीणकलेवरश्च ॥ ५ ॥

तर्जनी अँगुली की पहिली पोर में दो रेखाओंवाला निशान टेढ़ा होता हुआ

१ रतिरङ्गे लसितुं शीलमस्येति ॥

सोहता हो तो वह प्राणी कठोर चित्तवाला होकर कोप से घबड़ाया हुआ क्षीण कायावाला होता है ॥ ५ ॥

२ मन्दालयाच्चेच्चलिते कुरेखे सन्तर्जनी मूलगते यदा स्तः ।
सम्पत्तिहीनो मनुजो विशोकी प्रासभ्यदोषान्मरणं प्रयाति ॥ ६ ॥

शनैश्चर के स्थान से चलीहुई छोटीसी दो रेखायें टेढ़ी होकर तर्ज्जनी अँगुली पर्यन्त यदि चलीजावें तो वह प्राणी बड़े शोचका करनेवाला होकर संपत्तियों से हीन होता हुआ अपने हठतादोष से मौत को पाता है ॥ ६ ॥

३ संभोगशाखा गुरुगा गभीरा स्वल्पस्वरूपा कुटिला विभाति ।
तदा ह्यपस्मारयुतो मनुष्यो जलाग्निभीतो जडतामुपैति ॥ ७ ॥

संभोगरेखाकी शाखारेखा बृहस्पति के स्थान में पहुँची गहरी व टेढ़ी होकर छोटेरूपवाली होती हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी मिरगीरोग से संयुत होकर पानी व आगी से डरता हुआ जड़ता को पाता है ॥ ७ ॥

४ संभोगरेखा निजमध्यदेशे क्षुद्राविभिन्ना सरला विभाति । संभोगरेख
मानी मनुष्यो ममतासमेतो मन्दाग्निरोगं लभते नितान्तम् ॥ ८ ॥

संभोगरेखा (अस्मदेशीय आयुरेखा) सीधी होकर अपने विचले भाग में छोटी छोटी रेखाओं से कटी हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी मानी व ममता से संपन्न होकर हमेशा मन्दाग्निरोग को पाता है ॥ ८ ॥ संभोगरेखा

५ संभोगरेखा यदि चोर्ध्वभागे शाखाविहीना शनिगा विभाति ।
द्वीपान्तरं याति नरस्तदानीं सम्भ्रान्त[1]चित्तः परितो भ्रमेच्च ॥ ९ ॥

सुभोगरेखा (आयुरेखा=हार्टलाइन) ऊपरले भाग में शाखा से विहीन होती हुई शनैश्चर पर्यन्त पहुँचकर यदि सोहती हो तो वह प्राणी संभ्रान्तचित्त होता हुआ दूसरे द्वीपको चला जाता है और चारों तरफ़ घूमता रहता है ॥ ९ ॥

६ काव्यालयाच्चेच्चलिता सुरेखा पित्रोर्विभित्त्वा भजते सुभोगाम् ।
सोयं नरो वह्निविदग्धगात्रो ह्याप्नोति मृत्युं सहसासमेतः ॥ १० ॥

शुक्र के स्थान से चली हुई शोभायमान रेखा मातृरेखा व पितृरेखा को काटकर भोगरेखा को सेवती हो तो वह प्राणी बल से संपन्न होकर आगी से जली कायावाला होता हुआ मौतको ही पाता है ॥ १० ॥

७ मातुः सुरेखा सरला गभीरा शाखासमेता यदि चोर्ध्वदेशे ।

---

१ सम्भ्रमन्त्रयमिच्छन्ति भयमुद्वेगमादरम् ॥

तदा जनो वैरिगणान्विजित्य विश्वासपात्रो विभुतामुपैति ॥ ११ ॥

माताकी रेखा सीधी व गहरी होकर यदि ऊपर ले भाग में शाखाओं समेत दे
जावे तो वह प्राणी विश्वासशाली होकर वैरिगणों (शत्रुसमूहों) को विजयकर वि
को पाता है ॥ ११ ॥

८ वृद्धाङ्गुलेर्वै निकटे नखस्य रेखात्रयं चेत्सरलं विभाति ।
विश्वासशाली मनुजस्तदा स्याद्रेखाद्वयं चेत्तु फलं तदेव ॥ १२ ॥

अँगूठे के नह के निकट देश में तीन रेखाओंवाला निशान सीधा होकर यदि सो
हो तो वह प्राणी विश्वासपात्र होता है और यदि पूर्वोक्त निशान दो रेखाओंवा
प्रतीत होता हो तो फल वही होता है जो कि पहले कहा गया है ॥ १२ ॥

९ संभोगरेखाधरगं विभाति तिर्यक्स्वरूपं यदि युग्मरेखम् ।
तदा नरो रोगगणाभिभूतो रक्तातिसारं लभते रसज्ञः ॥ १३ ॥

संभोगरेखा (हार्टलाइन) के निचले भाग में प्राप्त हुआ दो रेखाओंवाला नि
टेढ़ेरूपवाला होकर यदि सोहता हो तो वह प्राणी रोगसमूहों से व्याकुल होता हु
रसज्ञाता होकर रक्तातिसार (पित्तातिसार में गर्मवस्तु के खाने से होताहै) को पाता है ॥१

१० मातुः सुरेखा यदि नीचभागे शाखासमेता सरला विभाति ।
निर्बोधरूपो मनुजस्तदा स्यात्सत्येन हीनो ह्यनभिज्ञमुख्यः ॥ १४ ॥

माता की रेखा सीधी होकर यदि निचले भाग में शाखासमेत सोहती हो तो
प्राणी सत्य से हीन होकर मूर्खों में मुखिया होता हुआ अबोधरूप से रहता है ॥ १४ ॥

११ पैत्री सुरेखा मणिबन्धहीना वक्रा सकोणा मिलिता जनन्याम् ।
दीर्घायुषं तं पुरुषं करोति पारुष्यहीनं परमार्थलीनम् ॥ १५ ॥

पिता की रेखा मणिबन्ध (कब्जे) से हीन, टेढ़ी व कोण समेत होकर मातृरेखा
मिली हुई देखी जावे तो उस प्राणी को कठोरता से हीन व परमार्थ में लीन हुआ ब
उमरवाला बनादेती है ॥ १५ ॥

१२ स्वल्पा सुभाग्या कुटिला चकास्ति क्षुद्राविभिन्ना यदि मध्यदेशे ।
अल्पायुषं तं पुरुषं करोति ह्यानन्दहीनं वसुधाविहीनम् ॥ १६ ॥

भाग्यरेखा

भाग्यरेखा (ऊर्ध्वरेखा) छोटे रूपवाली व टेढ़ी होकर यदि बिचले भाग में छो
छोटी रेखाओं से कटी हुई देखी जावे तो उस प्राणी को आनन्द से हीन व वसुधा
विहीन बनाकर अल्पायु करती है ॥ १६ ॥

१३ भाग्या सुरेखा यदि चोर्ध्वभागे शाखासमेता जननीं प्रयाति ।
तदा नरो रोगचयाभिभूतो भोगाभिभूतो भयतामुपैति ॥ १७ ॥

भाग्यरेखा (फेटलाइन) यदि ऊपर ले भाग में शाखाओं समेत होती हुई मातृरेखा के पास जावे या सामने ही रहै तो वह प्राणी रोगसमूहों से पीड़ित व भोगों से व्याकुल हुआ भय (डर) समूह को पाता है ॥ १७ ॥

१४ काव्यालये चेद्विशदं विभाति भिन्नोर्ध्वभागं गुणितस्य चिह्नम् ।
सोयं जनः स्याद्वनिताविलासी हासी विघासी चसदा सुखाशी ॥१८॥

शुक्र के स्थान में गुणित × का निशान साफ़ होकर ऊपरले भाग में कटा हुआ यदि सोहता हो तो वह प्राणी वनिताओं में विलास करता व हँसता व बहुत खानेवाला होता हुआ हमेशा सुख की आशावाला होता है ॥ १८ ॥ (देखो चित्र नं० ३५)

अथ पञ्चदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ प्रदेशिनीभूमियुगे[२] परुष्के धनाख्यचिह्नं विशदं विभाति ।
तदा नरः स्वं लभतेबलाया नार्या यदा चेत्कुलटा भवेत्सा ॥ १९ ॥

तर्जनी अँगुली की पहली व दूसरी पोर में यदि धन का + निशान साफ़ होकर सोहता हो तो वह प्राणी किसी स्त्री के पास से धन को पाता है और यदि पूर्वोक्त निशान स्त्री के करतल में प्रतीत हो तो वह व्यभिचारिणी होती है ॥ १९ ॥

२ अनामिकामध्यमिकासुमूले रेखाचतुष्कं यदि भाति स्वल्पम् ।
दाता दयालुर्मनुजस्तदा स्याद्विश्वासशाली विषयैर्विरक्तः ॥ २० ॥

अनामिका व मध्यमा अँगुली की मूल में छोटासा चार रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी दाता व दयावान् होकर विश्वासपात्र होता हुआ भोगों से विरक्त रहता है ॥ २० ॥

३ मन्दालयाच्चेच्चलिता सुरेखा गम्भीररूपा समुपैति सूर्यम् ।
पापाधिकारी पुरुषस्तदा स्यात्पारुष्ययुक्तः पशुतुल्यबुद्धिः ॥ २१ ॥

शनैश्चर के स्थान से चली हुई शोभायमान रेखा गहरी होकर यदि सूर्यपर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी पापाधिकारी होकर कठोरता से संयुक्त होता हुआ पशुकी समान बुद्धिवाला होता है ॥ २१ ॥

४ सौम्यालयान्ताच्चलिता सुरेखा कौटिल्यरूपा यदि याति मन्दम् ।
मन्दस्वभावो घृणया समेतः पापे प्रवृत्तः पुरुषोधमः स्यात् ॥ २२ ॥

बुधके स्थान से चली हुई शोभायमान रेखा टेढ़ी होकर यदि शनैश्चरपर्यन्त च
जावे तो वह प्राणी मन्दस्वभाववाला व घृणा (घिन) से संयुत होकर पाप में परा
होताहुआ निन्दित होता है ॥ २२ ॥

५ गुर्वालयस्थं विशदं विभाति रेखात्रयं चेत्सरलस्वरूपम् ।
सोयं जनो मस्तकघातमेति राज्याधिकारी रमणीविहारी ॥ २३ ॥

बृहस्पति के स्थान में टिकाहुआ साफ़ व सीधा होकर तीन रेखाओंवाला नि
यदि सोहता हो तो वह प्राणी किसी महाराजा की राज्य में अधिकारी होकर रमणियं
विहार करता हुआ मस्तक में चोट चपेट को पाता है ॥ २३ ॥

६ सौम्यालये चेत्सरला सुरेखा गम्भीररूपा विशदा विभाति ।
मान्यो वदान्यो मनुजस्तदा स्यान्नार्या यदा चेत्सुरता भवेत्सा ॥ २४

बुधके स्थान में सीधी, गहरी व साफ़ होकर शोभायमान रेखा यदि सोहती हो
वह प्राणी मान्य होकर वदान्य (बड़ादानी) या बोलनेवाला होता है और यदि पू
रेखा स्त्री के करतल में प्रतीत हो तो वह बड़ी रमनेवाली होती है ॥ २४ ॥

७ भोगा सुरेखा यदि नीचदेशे गम्भीररूपा भगिनीसमेता ।
तदा नरः स्याद्दृढगात्रयष्टिः संभोगशाली सुषमासमेतः ॥ २५ ॥

संभोगरेखा (हार्टलाइन) गहरी होकर यदि निचले भागमें भगिनीरेखा स
प्रतीत होवे तो वह प्राणी मज़बूत कायावाला होकर बड़ा भोगी होता हुआ परमशो
वाला होता है ॥ २५ ॥

८ संभोगरेखा यदि मध्यदेशे क्षुद्राविभिन्ना कुजगा विभाति ।
कामातुरः कार्यरतो मनुष्यो व्रीडाविहीनो वनितामुपैति ॥ २६ ॥

मङ्गल के स्थान में पहुँची संभोगरेखा यदि बिचले भागमें छोटी छोटी रेखाओं से
हुई सोहती हो तो वह प्राणी कामातुर व कार्य में परायण होताहुआ निर्लज्ज हो
वनिता (लुगाई) को पाता है ॥ २६ ॥

९ संभोगरेखा यदि चोर्ध्वदेशे मातापितृभ्यां सहिता सकोणा ।
सत्येन हीनो विपदा समेतः संकष्टशाली मरणं प्रयाति ॥ २७ ॥

संभोगरेखा यदि ऊपरले भाग में कोणसमेत होकर मातृरेखा व पितृरेखा से मि
हुई देखी जावे तो वह प्राणी झूठा व विपदा से घिराहुआ महाकष्ट का भोगनेवा
होकर मौतको पाता है ॥ २७ ॥

---

१ सुषमा परमा शोभेत्यमरः ॥

१० अङ्गुष्ठशाखानिकटे विभाति रेखात्रयं रेखयुगेन भिन्नम्।
धूर्त्तः कुशीदी मनुजो मिथश्चेद्भिन्नं मृतिं चैत्यधनी सचक्रम् ॥ २८ ॥

अँगूठे की शाखाओं के समीप ऊपरल भागमें तिरीछी दो रेखाओं से कटाहुआ तीन रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी जुआरी होकर ब्याजखोर होता है और यदि पूर्वोक्त निशान परस्पर रेखाओं से कटाहुआ देखाजावे तो वह प्राणी मौत को पाता है और यदि पूर्वोक्त निशान चक्राकार देखाजावे तो वह धनरहित होता है ॥ २८ ॥

११ शुक्रालये चेद्विशदस्वरूपं चिह्नं त्रिशूलानुमितं विभाति।
सोयं नरो वह्निविदग्धगात्रो यज्ञादिकार्यं कुरुते नितान्तम् ॥ २९ ॥

शुक्र के स्थान में त्रिशूल के समान निशान साफ़ होकर यदि सोहता हो तो वह प्राणी आगीसे जलेहुए गात्रवाला होकर हमेशा यज्ञादि कार्यों को करता है ॥ २९ ॥

१२ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशाद्रेखा गभीरा समुपैति सौम्यम्।
सोयं नरः स्याद्विनयी जयी च संक्षीणचेता यदि कर्त्तिता स्यात् ॥ ३० ॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठी हुई रेखा गहरी होकर यदि बुध पर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी विनयी होकर वैरियों का जीतनेवाला होता है और यदि पूर्वोक्त रेखा कटीहुई प्रतीत हो तो वह क्षीणचित्तवाला होता है ॥ ३० ॥

१३ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशाद्भाग्या सुरेखा यदि याति शौरिम्।
औत्कण्ठ्ययुक्तो मनुजस्तदा स्याद्रेखा नता चेत्फलताविशेषः ॥ ३१ ॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठी हुई भाग्यरेखा (फेटलाइन) यदि शनैश्चर पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी उत्कण्ठा से संयुक्त होता है और यदि पूर्वोक्त रेखा लचीहुई प्रतीत हो तो विशेष उत्कण्ठावाला होता है ॥ ३१ ॥

१४ अङ्गुष्ठमूले विशदस्वरूपं वज्रानुरूपं यदि भाति चिह्नम्।
सोयं नरः स्यात्कुविचारशाली ह्याचारहारी व्यभिचारकारी ॥ ३२ ॥

अँगूठे की मूलमें वज्र के समान निशान साफ़ होकर यदि सोहता हो तो वह बुरे विचार का विचारनेवाला व आचारका हरनेवाला होकर व्यभिचारका करनेवाला होताहै ॥ ३२ ॥

१५ पित्रोः सुमध्ये परिदृश्यमानं वस्वङ्कतुल्यं यदि भाति चिह्नम्।
दुःखाकरः स्यान्मनुजो जनानामुद्बन्धतो मृत्युमुखं प्रयाति ॥ ३३ ॥

---

१ धूर्तोऽक्षदेवी कितवोऽक्षधूर्त्तो द्यूतकृत्समा, इत्यमरः २ आचाराल्लभते ह्यायुराचारादीप्सिताः प्रजाः। आचाराद्धनमक्षय्यमाचारो हन्त्यलक्षणमिति मनुः ॥

मातृरेखा व पितृरेखा के बीचमें देखाहुआ आठअङ्क के समान निशान यदि सो
हो तो वह प्राणी मनुष्योंके लिये दुःखकारी होता हुआ फांसी से मौत को पाताहै ॥ ३
(देखो चित्र नं० ३६)

अथ पञ्चदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ मध्याङ्गुलेर्वै प्रथमे परुष्के चिह्नं त्रिरेखं यदि वेदभिन्नम् ।
औत्कण्ठ्ययुक्तो मनुजस्तदा स्यादौदास्यपूर्णो नितरामुदारः ॥ ३४

मध्यमा अँगुली की पहली पोर में तिरीछी चार रेखाओं से कटा हुआ सीधी
रेखाओंवाला निशान यदि भासमान होता हो तो वह प्राणी उत्कण्ठा से संयुक्त
कर उदासीनता से पूर्ण रहता हुआ बहुतही उदार होता है ॥ ३४ ॥

२ प्रदेशिनीचन्द्रमिते परुष्के वक्रं त्रिरेखं यदि भाति चिह्नम् ।
सोयं नरो धर्मपरो नितान्तं धन्यो धरित्र्यां धनतामुपैति ॥ ३५ ॥

तर्जनी अँगुली की पहली पोर में टेढ़ा होकर तीन रेखाओंवाला निशान यदि
हता हो तो वह प्राणी हमेशा धर्म में परायण रहता हुआ पृथ्वीमण्डल में धन्य हो
धनसमूहों को पाता है ॥ ३५ ॥

३ मातुः सुरेखाधरतश्चलन्ती भिन्ना सुरेखा दिनपं[1] प्रयाति ।
द्रव्यादिहेतोः पुरुषान्निहन्ति ह्रस्वा यदा चेत्तनुघातमेति ॥ ३६ ॥

मातृरेखा के निचले भाग से चली हुई रेखा छोटी रेखा से कटकर सूर्यपर्यन्त च
जावे तो वह प्राणी द्रव्यादिकों के लिये पुरुषों का वध करता है यानी डाकेजनी करत
और यदि पूर्वोक्त रेखा छोटीसी प्रतीत होकर क्षुद्ररेखाओं से कटी फटी देखी जावे
वह प्राणी अपने शरीर में चोट चपेट को पाता है ॥ ३६ ॥

४ संभोगरेखानिकटे विभाति भग्नीसुरेखा वितता गभीरा ।
सोयं जनः स्याद्वनिताविलासी संमोदराशी बहुधा प्रहासी ॥ ३७

सुभोगरेखा के समीप भग्नीरेखा फैली व गहरी होकर यदि सोहती हो तो वह
प्रमदाओं में विलास करनेवाला होकर बड़े आनन्द की राशि होता हुआ प्रायः
हँसनेवाला होता है ॥ ३७ ॥

५ संभोगरेखा यदि नीचभागे क्षुद्राविभिन्ना कृशतासमेता ।
वक्षस्थलाघातमुपैति जन्तुर्जायाविरोधी जनतासमेतः ॥ ३८ ॥

---

१ दिनपं दिनपतिं सूर्यमितियावत् ॥

संभोगरेखा (अस्मद्देशीय आयुरेखा) यदि निचले भाग में पतली होकर छोटी छोटी रेखाओं से कटी हुई सोहती हो तो वह प्राणी लुगाई (अपनी प्यारी) का विरोधी होकर जनसमूहों से संपन्न होता हुआ छाती में चोट चपेट को पाता है ॥ ३८ ॥

६ भोगा गभीरा मिलिता सुवप्रे तन्मध्यगा स्वल्पतरा च माता ।
रोगाभिभूतो मनुजस्तदानीं भूतादिदोषैरपमृत्युमेति ॥ ३९ ॥

भोगरेखा " ऊपर ले भाग में " यदि गहरी होकर पितृरेखा में मिली हुई देखी जावे और उन दोनों रेखाओं के बीच में पहुँची हुई मातृरेखा छोटीसी प्रतीत होवे तो वह प्राणी रोगों से पीड़ित होता हुआ भूतादि दोषों से अकालमौत को पाता है ॥ ३९ ॥

७ पितुः सुशीर्षोपरिगं विभाति तारानुरूपं युगलस्वरूपम् ।
तदा नरोऽसौ यशसा समेतो मान्यो वदान्यो बलतासमेतः ॥ ४० ॥

पितृरेखा के मत्थे के ऊपरले भाग में प्राप्त हुए नक्षत्र (नखत) के समान आकार वाले दो निशान यदि सोहते हों तो वह प्राणी बली व यशस्वी होकर माननीय होता हुआ दानी होता है ॥ ४० ॥

८ अङ्गुष्ठशाखोपरिगं विभाति रेखाचतुष्कं यदि स्वल्परूपम् ।
श्लेष्मार्दितोऽसौ मनुजः कृशाङ्गो भामाभिभूतो श्रमतामुपैति ॥ ४१ ॥

अँगूठे की शाखा रेखा के ऊपरले भाग में प्राप्त हुआ छोटासा चार रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी कफरोग से पीड़ित व दुर्बल देहवाला होकर लुगाइयों से अनादृत होता हुआ श्रमसमूहों को पाता है ॥ ४१ ॥

९ भोगाधरस्थं विशदं विभाति चिह्नं त्रिकोणं यदि दृश्यमानम् ।
कान्ताभिलाषी कलही मनुष्यः प्राप्नोति मृत्युं द्विषतः[1] करेण ॥ ४२ ॥

भोगरेखा के निचले भाग में टिका व देखा हुआ त्रिकोण का निशान साफ होकर यदि सोहता हो तो वह प्राणी कामिनी की अभिलाषा करता हुआ लड़ाई लड़नेवाला होकर दुश्मन के हाथ से मौत को पाता है ॥ ४२ ॥

१० पितुःसुरेखोपरिगं चकास्ति चिह्नं त्रिशूलानुमितं यदा चेत् ।
तदा नरो वह्निविदग्धगात्रो व्यासक्तचित्तो व्ययतामुपैति ॥ ४३ ॥

पितृरेखा के ऊपरले भाग में प्राप्त हुआ त्रिशूल के समान निशान यदि सोहता हो यानी चमकता हो तो वह प्राणी आगी से जले हुए अङ्गवाला होकर घवड़ाये मनवाला होता हुआ घने खर्च को पाता है यानी बड़ा खर्चीला होता है ॥ ४३ ॥

१ रिपौ वैरिसपत्नारिद्विषद्द्वेषणदुर्हृदइत्यमरः ॥

११ पैत्री समुत्था विशदा गभीरा रेखा यदा भ्रातृपदं प्रयाति।
सोयं जनः शत्रुपराजितः स्यात्संकर्तिता चेदरिवृन्दमुक्तः॥ ४४॥

पितृरेखा से उठी रेखा साफ़ व गहरी होकर यदि भ्रातृस्थान पर्यन्त पहुँच जावे
वह प्राणी शत्रुओं से पराजित होता है और यदि पूर्वोक्त रेखा कटी हुई देखी जावे
वह प्राणी वैरिसमूहों से छूट जाता है॥ ४४॥

१२ चन्द्रालयस्थं विशदस्वरूपं तिर्यक्त्रिरेखं यदि भाति चिह्नम्।
सोयं जनः स्याज्जलयानयायी मायाविधायी ममतापहायी॥ ४५॥

चन्द्रमा के स्थान में टिका हुआ तिरीछा तीन रेखाओंवाला निशान साफ़ होकर
सोहता हो तो वह प्राणी माया का विधान करनेवाला होकर ममता को त्यागता हु
जहाज़ की सवारी से गमन करता है यानी जलपथ में परिभ्रमण करता है॥ ४५॥

१३ भाग्यासमुत्था विशदा सुरेखा वक्रा गभीरा मिलिता जनन्याम्।
जङ्घास्थिभङ्गं लभते जनो वै जाज्वल्यमानो ज्वरजार्तियुक्तः॥ ४६

भाग्यरेखा से उठी हुई साफ़ शोभायमान रेखा टेढ़ी व गहरी होकर मातृरेखा
मिल जावे यानी मिली हुई प्रतीत होवे तो वह प्राणी ज्वर से उपजी पीड़ा से संयुक्त
कर बहुत ही जलता हुआ जङ्घा की हड्डी के भङ्ग को पाता है यानी उस प्राणी की जां
की हड्डी टूट जाती है॥ ४६॥

१४ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशाद्भाग्या सुरेखा समुपैति शौरिम्।
चौर्ये प्रवृत्तो मनुजस्तदा स्याद्दुष्टस्वभावो विगतप्रभावः॥ ४७॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठी हुई भाग्यरेखा यदि शनैश्चरपर्यन्त चली जावे तो
प्राणी दुष्टस्वभाववाला होता हुआ विशेषता से गतप्रभाववाला होकर चौरकर्म
परायण रहता है यानी चोरी करता है॥ ४७॥

१५ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशाद्वक्रा सुरेखावरजं प्रयाति।
तदा जनो बन्धुगणाभिभूतः प्राप्नोति दुःखं दयितासमेतः॥ ४८॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठी हुई शोभायमान रेखा टेढ़ी होकर यदि भ्रातृस्थान
चलीजावे तो वह प्राणी बन्धुगणों से अनादृत होता हुआ यानी क्षति को पाता हु
भार्यासमेत दुःख को पाता है॥ ४८॥ (देखो चित्र नं० ३७)

---

१ अभीष्टेभीप्सितं हृद्यं दयितं वल्लभं प्रियमित्यमरः॥

अथ पञ्चदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ कनिष्ठिकायाः प्रथमे परुष्के वृत्तार्धचिह्नं विशदं विभाति।
राज्याभियोगे नियतो नरः स्याद्विवादशाली विषये रतश्च ॥ ४६ ॥ वकील

कनिष्ठा अँगुली की पहली पोर में अर्धवृत्त का निशान साफ़ होकर यदि सोहता हो तो वह प्राणी झगड़ालू होकर विषयों में रत होता हुआ राज्य के मुक़दमा फ़ैसल कराने में नियत रहता है यानी बैरिस्टर या वक़ील कहाता है ॥ ४६ ॥

२ सौम्यालये चेद्विशदस्वरूपं चिह्नं द्विरेखं सरलं चकास्ति।
बाहौ विघातं लभते मनुष्यो विद्याविवेकी प्रथितः पृथिव्याम् ॥ ५० ॥

बुधके स्थान में दो रेखाओं वाला निशान साफ़ व सीधा होकर यदि सोहता हो तो वह प्राणी विद्वान् व विवेकी होकर पृथ्वीमण्डल में विख्यात होता हुआ भुजाओं में चोट चपेट को पाता है ॥ ५० ॥

३ अनामिका मध्यमिकासुमध्ये वक्रा कुरेखा समुपैति सूर्यम्।
जङ्घाभिघातं लभते जनो वै जञ्जप्यमानो जनतासमेतः ॥ ५१ ॥

अनामिका व मध्यमा के बीच में छोटी सी रेखा टेढ़ी होकर यदि सूर्य के स्थान को चली जावे तो वह प्राणी निन्दित को जपताहुआ जनसमूहों से सम्पन्न होकर जङ्घामें आघात (चोट) को पाता है ॥ ५१ ॥

४ मन्दालये चेद्विशदं विभाति गुणाख्यचिह्नं युगलस्वरूपम्।
संपत्तियुक्तो मनुजस्तदा स्यात्सौभाग्यशाली सुषमासमेतः ॥ ५२ ॥

शनैश्चरके स्थानमें दो गुणाके ×× निशान साफ़ होकर यदि सोहते हों तो वह प्राणी सम्पदाओं से संयुक्त होता हुआ सौभाग्यशाली होकर बड़ी शोभावाला होताहै ॥ ५२ ॥

५ संभोगशाखा विशदा गभीरा संतर्जनीमूलगता विभाति।
सोयं जनो मध्यमवित्तशाली संरक्तमध्या यदि वित्तपाली ॥ ५३ ॥

संभोगरेखा (हार्टलाइन) की शाखारेखा साफ़ व गहरी होकर भलीभांति तर्जनी अँगुली की मूल में पहुँची हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी साधारण धनी होताहै और यदि पूर्वोक्त रेखा बीचमें लाल वर्णवाली होकर प्रतीत हो तो वह प्राणी बड़ा धनवान् होकर धनकी रखवारी करताहुआ खा नहीं सक्ता है ॥ ५३ ॥

६ वक्रा सुभोगा शनिगा विभाति क्षुद्राविभिन्ना यदि गर्तयुक्ता।
लाभं विना भ्राम्यति दूरदेशे दारिद्र्ययुक्तो मनुजो भयार्तः ॥ ५४ ॥

१ गर्हितं जपति जञ्जप्यते इति जञ्जप्यमानः ॥

सुभोगरेखा (अस्मदेशीय आयुरेखा) टेढ़ी व शनैश्चर के स्थान में पहुँची व छोटी रेखाओं से कटी हुई गड़हे से संयुक्त होकर यदि सोहती हो तो वह प्राणी दरिद्रता सम्पन्न होकर भयसे घबड़ाताहुआ लाभके विनाही दूरदेश में घूमता है ॥ ५४ ॥

७ संभोगरेखाधरगं चकास्ति चन्द्राङ्कनन्दाङ्कयुतं सुचिह्नम् ।
सोयं नरस्स्यान्नरघातकारी पापाधिकारी परवित्तहारी ॥ ५५ ॥

संभोगरेखा (हार्टलाइन) के निचले भागमें प्राप्तहुआ एकाङ्क व नवाङ्क से संयुत हो शोभायमान निशान यदि चमकता हो तो वह प्राणी पापोंका अधिकारी होकर पर का हरनेहारा होताहुआ मनुष्यों का घात करनेवाला होता है ॥ ५५ ॥

८ मातुस्सुरेखा यदि नीचभागे भग्नीसमेता कुटिला चकास्ति ।
गर्वी गुणज्ञो मनुजस्तदास्याद्दुष्टाशयश्चौर्यरतो नितान्तम् ॥ ५६ ॥

मातृरेखा निचले भागमें टेढ़ी होकर यदि भग्नीरेखा समेत सोहती हो तो वह प्रा दुरेमतलबवाला व हमेशा चोरी करने में लगाहुआ गुणों का ज्ञाता (जाननेवाला) हो घमण्डी बना रहता है ॥ ५६ ॥

९ संभोगशाखा सरला गभीरा भग्नीसमेता गुरुगा विभाति ।
सोयं नरो धर्मपरो मनस्वी दानी सुमानी धनतासमेतः ॥ ५७ ॥

संभोग

संभोगरेखा (हार्टलाइन) की शाखारेखा सीधी, गहरी व भग्नीरेखा से संयुत हो बृहस्पति के स्थान में पहुँची हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी धर्मपरायण, मनस्वी दानी व बड़ामानी होकर धनसमूहों से संपन्न होता है ॥ ५७ ॥

१० पितुः सुरेखोपरिगं विशुद्धं चिह्नं द्विरेखं सरलं चकास्ति ।
तदा जनो बन्धुविरोधकारी व्यासक्तचित्तः प्रमदाविहारी ॥ ५८ ॥

पितृरेखा के ऊपरले भाग में प्राप्तहुआ साफ़ व सीधा होकर दो रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी बन्धुवर्गों से विरोधरखनेवाला होकर घबड़ाये मनवाला होताहुआ प्रमदाओं में विहार करनेवाला होता है ॥ ५८ ॥

११ पैत्री सुवक्रा मिलिता सुमात्र्यां स्वल्पा गभीरा विशदा विभाति ।
आयुष्यमल्पं लभते मनुष्यो भग्नीसमेता यदि दीर्घमायुः ॥ ५९ ॥

पिताकी रेखा टेढ़ी, छोटी, गहरी व साफ़ होकर यदि मातृरेखा में मिली हुई सोहती हो तो वह प्राणी अल्पायु को पाताहै और यदि पूर्वोक्त रेखा भग्नीरेखा समेत देखी तो वह प्राणी दीर्घायु को पाता है यानी छानवे वर्षपर्यन्त जीता है ॥ ५९ ॥

१२ चन्द्रालयाच्चेच्चलिता सुरेखा वक्रा सशाखा यदि याति भाग्याम्।
आरातिभीतः स्वजनैर्विहीनः क्रान्ता यदा चेन्मनुजो विजेता॥ ६०॥

चन्द्रमा के स्थान से चलीहुई शोभायमान रेखा टेढ़ी व शाखासमेत होकर यदि भाग्य रेखा (फेटलाइन) पर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी वैरियों से डरताहुआ अपने बन्धुवर्गों से रहित होताहै यानी उस प्राणी के कुटुम्बीलोग शत्रु होजाते हैं और यदि पूर्वोक्त रेखा किसी रेखा से अतिक्रमण की जावे तो वह प्राणी वैरियों को विजय करता है॥ ६०॥

१३ भाग्या समुत्था मणिबन्धदेशान्मध्ये विभिन्ना शनिगा विभाति। भाग्य रेखा
वातार्तियुक्तो मनुजस्तदानीं जङ्घाभिघातं लभते ज्वरार्तः॥ ६१॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठी भाग्यरेखा बीचमें कटी व शनैश्चर पर्यन्त पहुँची हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी ज्वररोग से पीड़ित होकर वातव्याधि से संयुक्त होताहुआ जांघों में चोट चपेट को पाता है॥ ६१॥

१४ चन्द्राधरस्था कुटिला सुरेखा भाग्यां विभित्त्वा यदि याति काव्यम्।
कौतूहलासक्तमना मनुष्यः कल्याणयुक्तः सुभगः सुशीलः॥ ६२॥

चन्द्रमा के निचले भागमें टिकी व टेढ़ी शोभायमान रेखा भाग्यरेखा (फेटलाइन) को काटकर शुक्रस्थान के पास पहुँचजावे तो वह प्राणी खेलमें आसक्त मनवाला व कल्याण से संयुक्त होताहुआ बड़े ऐश्वर्यवाला होकर बड़ा शीलवान् कहाजाता है॥६२॥

१५ पित्रोस्सुमध्ये विशदस्वरूपं शैलाङ्कतुल्यं यदि भाति चिह्नम्।
दौर्जन्ययुक्तो मनुजो मलाक्तो ह्युद्बन्धतो मृत्युमुखं प्रयाति॥ ६३॥

मातृरेखा व पितृरेखा के बिचलेभाग में साफ़ स्वरूपवाला होकर सातके आंक कासा निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी दुर्जनता से संयुक्त होकर मलसे भराहुआ फांसी से मौतको पाता है यानी मौत के मुख में जाता है॥ ६३॥ (देखो चित्र नं० ३८)

अथ षोडशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ सौम्यालये चेद्विशदास्सुवक्राः क्षुद्रास्सुरेखा बहुशो विभान्ति।
चौर्ये प्रवृत्तो मनुजस्तदा स्याच्चञ्चत्प्रभावश्चपलस्वभावः॥ ६४॥

बुधके स्थान में साफ़, टेढ़ी व छोटी होकर बहुतसी रेखायें यदि सोहती हों तो वहप्राणी दीप्त प्रभाववाला होकर चपल स्वभाववाला होता हुआ चोरी करनेमें लगा रहता है॥६४॥

२ चण्डांशुजस्थानगतं सुचिह्नं संमध्यभिन्नं वृजिनं द्विरेखम्।
सम्पत्समेतो मनुजो विलासी सौभाग्यशाली मणिरत्नमाली॥ ६५॥

शनैश्चर के स्थान में प्राप्त होकर टेढ़ा व दो रेखाओंवाला निशान यदि बीच में रेखा से कटा हुआ सा प्रतीत होवे तो वह प्राणी सम्पदाओं से सम्पन्न होता विलासी व सौभाग्यशाली होकर मणिरत्नोंकी मालावाला होता है ॥ ६५ ॥

३ संभोगरेखा यदि चोर्ध्वभागे क्षुद्राविभिन्ना गुरुगा विभाति।
मस्ताभिघातं लभते मनुष्यो मानी मनीषी ममतासमेतः ॥ ६६ ॥

संभोगरेखा (हार्टलाइन) ऊपरले भागमें छोटी छोटी रेखाओंसे भिन्न होकर बृह के स्थान में पहुँची हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी मानी व बुद्धिमान् होकर ममत संपन्न होता हुआ मस्तक में आघात को पाता है ॥ ६६ ॥

४ प्रदेशिनीमूलगतं सुचिह्नं ध्वजस्वरूपं विशदं विभाति।
सोयं जनः सज्जनसङ्गकारी धर्मी धरित्र्यां धनताविधारी ॥ ६७ ॥

तर्जनी अँगुलीकी मूलमें प्राप्त हुआ ध्वजा (झण्डी) के समान रूपवाला शोभाय निशान साफ होकर यदि सोहता हो तो वह प्राणी सज्जनों का संग करनेवाला ह पृथ्वीमण्डल में धर्मी होता हुआ धनसमूहों का धारनेवाला होता है ॥ ६७ ॥

५ मातुः सुरेखा यदि चोर्ध्वभागे संभिन्नशीर्षा गुरुगा विभाति।
शोकाकुलस्स्यान्मनुजो गदार्तो गम्भीरभावो विगताभिमानः ॥ ६

माताकी रेखा (ह्रडलाइन) ऊपरले भाग में भलीभांति कटे शीशवाली होकर स्पति के स्थान में पहुँची हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी रोगों से पीड़ित ह गम्भीर आशयवाला व निरभिमानी होता हुआ शोक से व्याकुल होता है ॥ ६८ ॥

६ भोगा सुरेखा यदि शृङ्खलाङ्गा गम्भीररूपा गुरुगा विभाति।
भार्याविहीनो मनुजस्तदानीं गत्वा विदेशं समुपैति मृत्युम् ॥ ६६

भोगरेखा (हार्टलाइन) सांकलके समान अङ्गवाली व गहरी होकर बृहस्पति स्थान में पहुँची हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी लुगाई से रहित होता हुआ परदे जाकर मौतको पाता है ॥ ६९ ॥

७ संभोगमात्रोर्यदि मध्यदेशे गुणाख्यचिह्नं विपुलं विभाति।
चिन्तातुरः स्यान्मनुजो मनस्वी पदाभिलाषी श्रमतासमेतः ॥ ७० ॥

संभोगरेखा व मातृरेखा के बिचले भाग में बड़ाभारी गुणकासा निशान यदि सो हो तो वह प्राणी चिन्ताओं से आतुर व मनमौजी होकर पदकी अभिलाषा करता बड़ा परिश्रमी होता है ॥ ७० ॥

मातुःसुरेखा यदि नीचभागे भिन्ना सुभोगाभिमुखं प्रयाति ।
आयुष्यमल्पं लभते मनुष्यो ह्याचारहीनो व्यभिचारशीलः ॥ ७१ ॥

माताकी रेखा यदि निचले भाग में कटी हुई सुभोगरेखा के सामने चली जावे तो वह ...णी अनाचारी होता हुआ व्यभिचारी होकर अल्पायु को पाता है ॥ ७१ ॥

भाग्यासुपित्रोर्यदि मध्यदेशे भिन्ना सुरेखा कुटिला विभाति ।
विश्वासघाती मनुजो विवादी दुष्टस्वभावो नृपदण्डमेति ॥ ७२ ॥

भाग्यरेखा व पितृरेखा के बिचले भाग में कटी हुई रेखा टेढ़ी होकर यदि सोहती हो ... वह प्राणी विश्वासघाती व विवादी होकर बुरे स्वभाववाला होता हुआ राजदण्ड ... पाता है ॥ ७२ ॥

...० मातुस्सुरेखाधरगं विभाति मध्ये विभिन्नं कुटिलं द्विरेखम् ।
सोयं महोच्चात्पतितो मनुष्यो मानी महौजा मदनातुरश्च ॥ ७३ ॥

मातृरेखा के निचले भाग में प्राप्त व बीच में कटाहुआ दो रेखाओंवाला निशान टेढ़ा ...कर यदि सोहता हो तो वह प्राणी मानी व महाबली होकर कामातुर होता हुआ बड़े ...चे स्थान से लुढ़कपड़ता है यानी गिरकर बड़ी चोट को पाता है ॥ ७३ ॥

...१ पैत्री सुवक्रा मणिबन्धहीना वृत्तार्धमध्या गुरुगा विभाति ।
सोयं जनो विन्दति नेत्रघातं नारीविहीनो नयतासमेतः ॥ ७४ ॥

पिताकी रेखा टेढ़ी व मणिबन्ध (कब्जे) से छुटी तथा मध्य में अर्धवृत्त से संयुक्त ...कर बृहस्पति के स्थान में पहुँची हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी स्त्री से विहीन ...कर नीतिसमूहों से संपन्न होता हुआ नेत्रों में चोटको पाता है ॥ ७४ ॥

...२ वृद्धाङ्गुलेर्वै निकटे नखस्य वेदाङ्कतुल्यं यदि भाति चिह्नम् ।
चौर्ये रतः स्यान्मनुजः कुसङ्गी धर्मादिभङ्गी भयदो जनानाम् ॥ ७५ ॥

अँगूठे के नह (नाखून) के निकट चारके आंक कासा निशान यदि सोहता हो तो ...ह प्राणी बुरे लोगों का साथी बन धर्मादिकों को भङ्ग करता हुआ जनोंको भयदायक ...कर चोरी करने में परायण रहता है ॥ ७५ ॥

...३ वृद्धाङ्गुलेर्वै द्वितये परुष्के वक्रं द्विरेखं विरलं विभाति ।
विज्ञानहीनो मनुजो बलिष्ठो बालादिलीनो मृतिमेति पाशात् ॥ ७६ ॥

अगूठे की दूसरी पोर में टेढ़ा होकर दो रेखाओंवाला निशान विरल होता हुआ यदि ...हता हो तो वह प्राणी विज्ञान से विहीन व बलवान् होकर बालादिकों में लीन होता ...आ फांसी से मौत को पाता है ॥ ७६ ॥

१४ भाग्याचलन्ती मणिबन्धदेशात्सञ्छिन्नमस्ता समुपैति सूर्यम् ।
सौख्यान्वितोऽसौ सुभगो मनुष्यो व्यापारशाली वसुधासुपाली॥७

मणिबन्ध (कब्जे) से चली हुई भाग्यरेखा (फेटलाइन) क्षुद्ररेखाओं से कटे ग वाली होकर सूर्यके पास पहुँच जावे तो वह प्राणी सुखता से संपन्न व बड़ा भाग्य होता हुआ व्यापारी (रोजगारी) होकर पृथ्वी का पालक होता है ॥ ७७ ॥

१५ वक्रा सुवप्राधरतश्चलन्ती क्षुद्रासमेता यदि याति मात्रीम् ।
संभ्रान्तमस्तो मनुजो भयार्तो ह्युद्विग्नचित्तो विफलं विवेति ॥ ७८

पितृरेखा के निचले भागसे चलीहुई छोटीरेखाओं समेत रेखा टेढ़ी होकर मातृरेखा समीप पहुँच जावे तो वह प्राणी डरा हुआ भलीभांति घूमे शीशवाला व ऊबेदिल होकर सबकामों में विफलता को पाता है ॥ ७८ ॥

१६ चन्द्रालयस्थं सरलं ध्वजाङ्कं तिर्यग्विभिन्नं ग्रथितं मिथश्चेत् ।
दुष्टस्वभावोऽधमतासमेतो ह्याप्नोति मृत्युं जनतापकारी ॥ ७९ ॥

चन्द्रमा के स्थान में टिका व सीधा होकर ध्वजा (झण्डी) कासा निशान व तिरीछा कटा व परस्पर गुथाहुआ प्रतीत होवे तो वह प्राणी दुष्टस्वभाववाला व नीचपना सम्पन्न होताहुआ जनसमूहों का अपकारी होकर मौतको पाता है ॥७९॥ (देखो चित्र नं०

अथ चतुर्दशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह —

१ भोगासमुत्था सरला गभीरा रेखा यदैका यदि याति चान्द्रिम् ।
ज्ञानी गुणी स्यादुपदेशदाता मानी महौजाः परवृत्तगोप्ता ॥ ८० ॥

भोगरेखा (हार्टलाइन) से उठीहुई सीधी व गहरी होकर एकरेखा यदि बुधपर चलीजावे तो वह प्राणी ज्ञानी, गुणी व उपदेशदाता होकर मानी व बलवान् होताहु परकथा का प्रकाशक नहीं होता है यानी सबों के चरितों को छिपाये रहता है ॥ ८०॥

२ संभोगरेखोपरिगा गभीरा वक्रा सुरेखा समुपैति सूर्यम् ।
सोयंजनो विज्ञतमो गुणज्ञो नामी सुधामी धनतामुपैति ॥ ८१ ॥

संभोगरेखा (आयुरेखा) के ऊपरले भागमें पहुँचीहुई गहरी व टेढ़ी होकर शोभाय रेखा यदि सूर्य के समीप चलीजावे तो वह प्राणी महाज्ञाता व गुणज्ञाता होकर ना व सुधामी होताहुआ धनसमूहों को पाता है ॥ ८१ ॥

३ पैत्रीसमुत्था विशदा सुरेखा स्वल्पा गभीरा यदि याति मन्दम् ।
साँव्वत्सरो ना खलु पारदर्शी दैवज्ञवर्यो यदि दीर्घगा चेत् ॥ ८२ ॥

पिताकी रेखासे उठी हुई साफ़, छोटी व गहरी होकर शोभायमान रेखा यदि शनैश्चर-पर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी ज्योतिर्वेत्ता होकर निश्चय कर पारदर्शी होताहै और यदि पूर्वोक्त रेखा भारी देखीजावे तो वह प्राणी दैवज्ञों में प्रधान कहाता है ॥ ८२ ॥

४ पैत्रीसमुत्थं विशदं गभीरं केतुस्वरूपं गुरुगं विभाति । पैत्रीसमुत्था
शास्ता जनानां मनुजस्तदा स्याद्दाता दयालुर्दयितासमेतः ॥ ८३ ॥

पैत्रीरेखा से उठा साफ़ व गहरा होकर ध्वजा (झण्डी) के समान निशान बृहस्पति के स्थान में पहुँचाहुआ यदि सोहता हो तो वह प्राणी प्राणप्यारी समेत दयालु व दाता होकर सर्वजनों का शासन करनेवाला होता है ॥ ८३ ॥

५ देवेन्द्रवन्द्यालयगं विभाति चिह्नं त्रिकोणं विशदस्वरूपम् । △
सोयं जनः सर्वजनप्रधानः प्रख्याते[2]कीर्तिं लभते नितान्तम् ॥ ८४ ॥

बृहस्पति के स्थान में पहुँचाहुआ त्रिकोण का निशान यदि साफ़ होकर सोहता हो तो वह प्राणी सर्वजनों में प्रधान होताहुआ हमेशा विख्यात कीर्तिको पाताहै यानी किसी रियासत का एजण्ट होता है ॥ ८४ ॥

६ भोगा सुरेखा यदि नीचदेशे वक्रा द्विशाखा खलु मध्यमान्ता ।
विंशाब्दमायुर्लभते मनुष्यः शाखात्रयं चेत्त्रिगुणाब्दमायुः ॥ ८५ ॥

भोगरेखा (हार्टलाइन) निचले भागमें दो शाखाओंवाली होकर यदि टेढ़ी होतीहुई मध्यमातक चलीजावे तो वह प्राणी बीस वर्ष की आयुको पाता है और यदि पूर्वोक्तरेखा में तीन शाखायें प्रतीत होवें तो तीस वर्षकी आयुको पाता है ॥ ८५ ॥ मातृ रेखा

७ मातुः सुरेखा यदि नीचभागे शूलाख्यचिह्नेन युता यदा स्यात् ।
सोयं विनीतो मनुजो महात्मा यज्ञादिधर्माङ्गयुतो जनानाम् ॥ ८६ ॥

माताकी रेखा निचलेभागमें त्रिशूल के समान निशान से संयुक्त होकर यदि प्रतीत होवे तो वह प्राणी शिक्षित व मनुष्यों में महात्मा होकर यज्ञादिधर्मसम्बन्धी अङ्गों से संयुत होता है ॥ ८६ ॥ मातृ रेखा

८ मात्री सुरेखा मिलिता सुपैत्र्यां संमध्यभिन्ना शशिगा विभाति ।
व्याजी विवादी मनुजो विलासी सम्पत्तिराशी च महाप्रकाशी ॥ ८७ ॥

पिताकी रेखा में मिली व बीचमें कटी फटी हुई माता की रेखा यदि चन्द्रमा के स्थान में पहुँचकर सोहती हो तो वह प्राणी छली, बहसी व विलासी होकर संपदाओं की राशिवाला होताहुआ महाप्रकाशी होता है ॥ ८७ ॥

---

१ धिषणं प्रयाति २ राज्याधिकारमिति पाठान्तरम् ॥

पितृसमुत्था

९ पैत्रीसमुत्था मिलिता सुमात्र्यां रेखा सकोणा कृशगा विभाति।
विश्वासशाली मनुजो विशोकी वेदान्तभाषी विदुषां वरेण्यः॥ ८

पिताकी रेखा से उठी व माताकी रेखा में मिलीहुई रेखा त्रिकोण समेत होकर प
सी सोहती हो तो वह प्राणी विश्वासी व विशोकी होकर वेदान्तवेत्ता होताहुआ वि
में प्रधान कहाता है॥ ८८॥

१० मातुस्सुरेखोपरिगा सुभोगा संभुग्नमध्या समुपैति शौरिम्।
अल्पायुषं तं पुरुषं करोति सौभाग्यवन्तं बहुभोगवन्तम्॥ ८९॥

मातृरेखा के ऊपर ले भागमें प्राप्तहुई भोगरेखा (हार्टलाइन) बीचमें टेढ़ी हो
शनैश्चरपर्यन्त पहुँचजावे तो उस प्राणी को सौभाग्यवान् व महाभोगवान् बनाकर अल
करदेती है॥ ८९॥

११ समुत्थितं चेन्मणिबन्धदेशात्सार्प्यं[1] द्विरेखं जननीमुपैति।
दौर्भाग्ययुक्तो मनुजो दुराशो दीनो दरिद्रो दुरितान्युपैति॥ ९०॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठा हुआ सर्प के समान दोरेखाओंवाला निशान यदि म
रेखा के पास पहुँचजावे तो वह प्राणी बुरी आशावाला, दीन व दरिद्री होकर दौर्भाग्य
संयुत होता हुआ पापों को पाता है॥ ९०॥

१२ वक्रा सुपैत्री मिलिता जनन्यां संमध्यभिन्ना भगिनीसमेता।
सोयं जनो विन्दति देहघातं कण्डूसमेतो ज्वरजार्तियुक्तः॥ ९१॥

माताकी रेखा में मिली पिताकी रेखा टेढ़ी होकर बीच में कटीहुई भगिनीसमेत देखी
तो वह प्राणी खजुली से संपन्न होकर ज्वर से उपजी पीड़ा से संयुक्त होता हुआ दे
चोट चपेट को पाता है॥ ९१॥

१३ रेखा समुत्था मणिबन्धदेशाद्वक्रा गभीरा पितरं प्रयाति।
संतीक्ष्णबुद्धिर्मनुजः सुकर्मा सौभाग्यशाली सुखतामुपैति॥ ९२॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठी हुई रेखा टेढ़ी व गहरी होकर पितृरेखा के पास प
जावे तो वह प्राणी भलीभांति तीव्र बुद्धिवाला व शोभन कर्मोंवाला होकर सौभा
शाली होता हुआ सुखसमूहों को पाता है॥ ९२॥

१४ अङ्गुष्ठमूले विशदं सुवक्रं रेखाचतुष्कं यदि याति काव्यम्।
सोयं मनुष्यः प्रथमे वयस्के प्राप्नोति सौख्यं शुभतासमेतः॥ ९३॥

---

१ सर्पसमानाकारम्॥

अँगूठे की मूलमें चार रेखाओंवाला निशान साफ़ व टेढ़ा होकर यदि शुक्रके पास चलाजावे तो वह प्राणी शुभसमूहों से संपन्न होकर पहली उमर में सौख्यको पाता है ॥ ९३॥ (देखो चित्र नं० ४०)

अथ षोडशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ सुतर्जनीपर्वयुगे विभाति तिर्यग्विभिन्नं सरलैकरेखम् ।
सोयं जनः स्याद्बुधवर्गबन्धुः प्रधानलोकानुगतः सहिष्णुः ॥ ९४ ॥

तर्जनी अँगुली की पहिली व दूसरी पर्व में तिरीछी रेखासे कटाहुआ सीधी एक रेखा वाला निशान यानी धनका चिह्नसा प्रतीत हो तो वह प्राणी पण्डितसमूहों का बान्धव होकर प्रधानलोगों का अनुगामी होता हुआ क्षमाशील होता है ॥ ९४ ॥

२ कनिष्ठिकायाः प्रथमे परुष्के संकर्तिता वै यति सन्ति रेखाः ।
तावत्प्रमाणा मनुजस्य नूनं नश्यन्ति गर्भा गदपीडिता वा ॥ ९५ ॥

कानिष्ठा अँगुली की पहिली पोर में जितनी रेखायें कटीहुई प्रतीत हों तो उस प्राणी के उतनेही गर्भ निश्चय कर नष्ट होजाते हैं याकि रोगसे पीड़ित होते हैं ॥ ९५ ॥

३ सौम्यालये चेत्सरलं त्रिरेखं तिर्यग्विभिन्नं श्रुतिसंमिताभिः ।
नार्या पिशाच्या परिवञ्चितो ना दारिद्र्यदुःखाभिभवं प्रयाति ॥ ९६ ॥

बुधके स्थान में चार रेखाओंसे तिरीछा कटाहुआ तीन रेखाओंवाला सीधा निशान यदि प्रतीत हो तो वह प्राणी पिशाचरूपिणी नारी से छला हुआ दारिद्र्य व दुःख के तिरस्कार को पाता है ॥ ९६ ॥

४ सूरालये चेद्विशदं विशालं विभाति चिह्नं सरलं द्विरेखम् ।
दाराभिभूतो मनुजो मदान्धो ज्ञानेन मानेन धनेन हीनः ॥ ९७ ॥

सूर्य के घर में साफ़ सीधा विशाल दो रेखाओंवाला निशान यदि प्रतीत होता हो तो वह प्राणी भार्या से अनादृत होताहुआ मदान्ध होकर ज्ञान, मान व धन से हीन होजाता है ॥ ९७ ॥

५ भाग्या सुरेखा समुपैति सौरिं सञ्छिन्नमस्ता सरला गभीरा ।
कष्टार्दिताङ्गो मनुजस्तदानीं कारालयं याति करालरूपः ॥ ९८ ॥

भाग्यरेखा (फेटलाइन) गहरी व सीधी होकर कटे शीशवाली होती हुई यदि शनैश्चर के समीप पहुँचजावे तो वह प्राणी कष्टों से पीड़ित अङ्गोंवाला होताहुआ करालरूपधारी होकर कारालय (जेलखाने) को जाता है ॥ ९८ ॥

६ भोगा सुरेखा जननीमुपैति कौटिल्यमस्ता यदि मध्यभिन्ना ।

सोयं जनः स्याद्व्यभिचारशाली नार्या यदा चेत्कुलटा तदा सा ॥ ९९

भोगरेखा बीच में कटीहुई टेढे शीशवाली होकर मातृरेखा के पास पहुँच जावे वह प्राणी व्यभिचारशाली होताहै और यदि पूर्वोक्त रेखा रमणी के करतल में प्र हो तो वह कुलटा होजाती है ॥ ९९ ॥

७ भोगा सुरेखा यदि नीचदेशे क्षुद्राविभिन्ना कृतचुल्लिरूपा ।
तदा सुतानां प्रसवे जनस्य प्रभूतपीडा स तु भोगशाली ॥ १०० ॥

यदि भोगरेखा निचले भागमें क्षुद्ररेखाओं से कटीहुई चूल्हों कासा रूप बनालेवे उस प्राणी के सन्तानों के प्रसवकाल में अधिक वेदना होती है और वह भोगश कहाता है ॥ १०० ॥

८ क्षुद्रा गभीरा जननीसुरेखा संभिद्य भोगां यदि याति मन्दम् ।
स यौवने मृत्युमुखं प्रयाति स्पर्शेन हीना खलु पानसक्तः ॥ १ ॥

छोटी व गहरी होकर मातृरेखा यदि भोगरेखा को काटकर शनैश्चर के पास चली तो वह प्राणी युवावस्था में ही मौत को पाता है और यदि पूर्वोक्त रेखा भोगरेखा स्पर्श न करे तो वह प्राणी मद्यपायी होजाता है ॥ १ ॥

९ पित्रा वियुक्ता यदि मातृरेखा तदन्तरे क्षुद्रतरा विभान्ति ।
विश्वासहीनो मनुजो महौजा वेश्यारतः स्याद्विषयाभिभूतः ॥ २ ॥

यदि पैत्रीरेखा से जुदी मातृरेखा प्रतीत हो और उन दोनों के बीच छोटी छोटी बहुत रेखायें सोहती हों तो वह प्राणी महाबलवान् व विश्वासहीन होताहुआ वेश्याओं में होकर विषयों से अनादृत होता है ॥ २ ॥

१० काव्यालयाच्चेच्चलिता सुरेखा संभिद्य पैत्रीमभियाति भाग्याम् ।
कापट्यसक्तो मनुजो हि लम्पटो दौर्भाग्ययुक्तो दयया विहीनः ॥ ३

शुक्रके घरसे चलीहुई एक रेखा यदि पैत्रीरेखा को काटकर भाग्यरेखा के सम्मु पहुँच जावे तो वह प्राणी छलछन्दी व लम्पट होकर दौर्भाग्य से युक्त होता हुआ द विहीन होता है ॥ ३ ॥

११ पैत्री सुरेखा यदि मध्यदेशे क्षुद्राविभिन्ना कुटिला विभाति ।
चिन्ताभिभूतो मनुजस्तदा स्यादौदास्ययुक्तो दयितासमेतः ॥ ४ ॥

पैत्रीरेखा यदि बिचले भागमें छोटी छोटी रेखाओं से कटीहुई टेढी होकर सोहती हो तो प्राणी नारीसमेत चिन्तासे व्याकुल होताहुआ उदासीनतासे युक्त बना रहता है ॥ ४ ॥

१२ वृद्धाङ्गुलेरूर्ध्वगतं सुचिह्नं तिर्यग्द्विरेखं सरलं द्विरेखम्।
चौर्ये प्रवृत्तो मनुजो मनस्वी विश्वासहीनो वनिताविहीनः ॥ ५ ॥

अँगूठा के ऊपरले भागमें यानी नहके पास तिरीछी दो रेखाओंवाला व सीधी दो रेखाओंवाला निशान यदि प्रतीत हो तो वह प्राणी चोरकर्मकारी व मनमौजी होकर विश्वास रहित होताहुआ वनिता से विहीन होजाता है ॥ ५ ॥

१३ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशात्क्षुद्राविभिन्ना यदि याति चान्द्रिम्।
स्यान्मन्दभाग्यो मनुजो जनानां मत्या विहीनो मदनातुरश्च ॥ ६ ॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठी व छोटी छोटी रेखाओं से कटी हुई रेखा यदि बुधालय के पास चलीजावे तो वह प्राणी मनुष्यों के बीच मन्दभागी होता हुआ निर्बुद्धि होकर कामातुर होजाता है ॥ ६ ॥

भाग्यरेखा

१४ पित्रा वियुक्ता यदि चोर्ध्वरेखा तदन्तरे बाणसमा विभाति।
सोयं जनः स्याद्व्यवसायशाली विश्वासहीनो बलतासमेतः ॥ ७ ॥

यदि पैत्रीरेखा से जुदी ऊर्ध्वरेखा (भाग्यरेखा) प्रतीत हो और उन दोनों के बीचमें बाणाकारसी एक रेखा सोहती हो तो वह प्राणी रोज़गारी होकर अविश्वासी होता हुआ बलसमूहों से संपन्न बना रहता है ॥ ७ ॥

१५ पैत्री सुरेखा यदि नीचदेशे शाखाप्रशाखासहिता विभाति।
बुद्ध्या विहीनो मनुजो गदार्तो मस्तिष्कपीडां लभते नितान्तम् ॥ ८ ॥

पैत्रीरेखा यदि निचले भाग में शाखा प्रशाखाओं समेत सोहती हो तो वह प्राणी निर्बुद्धि होकर रोगों से पीड़ित होता हुआ गाढ़ी माथेकी पीड़ाको पाता है ॥ ८ ॥

१६ अङ्गुष्ठमूले विशदं विशालं चिह्नं त्रिकोणादियुतं यदा स्यात्।
प्रवञ्चको ना जगतो जनानां मायारतो मानववृन्दवन्द्यः ॥ ९ ॥

अँगूठेकी मूल में साफ़ व विशाल निशान यदि त्रिकोण आदिकों से संयुक्त होता हुआ प्रतीत हो तो वह प्राणी जगत् के जनों का छलनेहारा होकर माया में रत होता हुआ मानवसमूहों से वन्दनीय होता है ॥ ९ ॥ (देखो चित्र नं० ४१)

अथ पञ्चदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ सौम्यालये चेद्युगपङ्क्तिसंस्थाः क्षुद्राः सुरेखाः सरला विभान्ति।
सोयं जनः स्याज्जनघातकारी हत्यासमूहैः सहितोऽपकारी ॥ १० ॥

१ " मदनो मन्मथो मारः " (इत्यमरवाक्यम्) ॥

दो पांतियों में टिकीं, छोटी व सीधी बहुतसी रेखायें यदि बुधालय में सोहती हों वह प्राणी प्राणियों का घातुक होकर हत्यासमूहों से संयुत होता हुआ अपकार (बुरा) का करनेवाला होता है ॥ १० ॥

२ ब्रध्नालये चेद्विशदं विशालं चिह्नं त्रिरेखं सरलं विभाति ।
संस्थापकोयन्तु विना परीक्षां मतस्य नारीकृतहानिमेति ॥ ११ ॥

सूर्यके स्थान में साफ़ सुथरा सीधा व तीन रेखाओंवाला निशान विशाल होकर सोहता हो तो वह प्राणी विना परीक्षा मतका चलानेवाला होकर रमणीगणों से हुई हानि को पाता है ॥ ११ ॥

३ भोगाद्यशाखा यदि याति मन्दं तथा द्वितीया धिषणं प्रयाति ।
मातापितृभ्यां घृणितोऽरिभीतो दीर्घा न चेन्नारिकृता विपत्तिः ॥ १२ ॥

सौभाग्यरेखा (फेटलाइन) की पहिली शाखा शनैश्चर के स्थान में व दूसरी शाखा बृहस्पति के घरमें पहुँच जावे तो वह प्राणी माता पिता से घृणित होकर वैरियों से डरता और यदि पूर्वोक्तरेखा फैली हुई न हो तो वह नारी से की विपदा को भोगता है ॥ १२ ॥

४ सौम्यालयान्ते विशदस्वरूपं चिह्नं त्रिकोणं यदि भाति भिन्नम् ।
सोयं श्रमासक्तमना मनुष्यो नारी तदीया मृतिमेति सूतौ ॥ १३ ॥

बुधालय के समीप साफ़ सुथरा त्रिकोण का निशान भिन्न होकर यदि प्रतीत हो वह प्राणी बड़ा परिश्रमी होता है और उसकी भार्या सन्तान उपजाने के समय मौत पाती है ॥ १३ ॥

५ पैत्रीसमुत्था जननीं विभित्त्वा भोगां च रेखा समुपैति सूरम् ।
भूपालवन्द्यो मनुजो महात्मा मायारतः स्यान्ममतासमेतः ॥ १४ ॥

पैत्रीरेखा से उठी हुई रेखा मातृरेखा और भोगरेखा को काटकर सूर्य के पास चली जाय तो वह प्राणी राजाओं से वन्दनीय व महात्मा होकर माया में रमता हुआ ममता से संयुत रहता है ॥ १४ ॥

६ चिह्नं सकोणं सरलं द्विरेखं तिर्यक्त्रिरेखं गुरुगं विभाति ।
आचारहीनो मनुजस्तदानीं वित्तस्य हानिं लभते नितान्तम् ॥ १५ ॥

कोणसमेत सीधा दो रेखाओंवाला व तिरीछी तीन रेखाओंवाला निशान यदि बृहस्पति के स्थान में सोहता हो तो वह प्राणी आचार से हीन होताहुआ धनकी बड़ीभारी हानि को पाता है ॥ १५ ॥

---

१ निकृतः इत्यपपाठः २ सोमस्यापत्यम् ३ मरणम् ॥

७ भोगा सुरेखा यदि नीचभागे भग्नस्वरूपा विशदा विभाति ।
विश्वासहीनो मनुजो महौजा मत्या विहीनो मदनातुरः स्यात् ॥ १६ ॥

सौभाग्यरेखा यदि निचले भागमें भग्न होकर साफ़ सोहती हो तो वह प्राणी महाबलवान् व विश्वास हीन होकर निर्बुद्धि होता हुआ कामी होता है ॥ १६ ॥

८ भोगा सुरेखा भगिनीसमेता कुबिन्दुमध्या शनिगा विभाति ।
सन्तानहीनो मनुजस्तदा स्याद्दौर्बल्ययुक्तो दयितो दयालुः ॥ १७ ॥

भोगरेखा भगिनी समेत होती हुई बीचमें छोटे विन्दुओंवाली होकर शनैश्चर के पास पहुँचकर प्रतीत हो तो वह प्राणी अपुत्री व दुर्बल होकर सबोंका प्यारा होता हुआ दयावान् होता है ॥ १७ ॥

९ पैत्रीमुखे चेद्विशदं विशालं जालस्वरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
सोयं जनः सज्जननिन्दकः स्यादाचारहीनो व्यभिचारशाली ॥ १८ ॥

पैत्रीरेखा के मुखके समीप साफ़ व विशाल जालरूपसा चिह्न यदि प्रतीत हो तो वह प्राणी सज्जनों का निन्दक होकर आचार से विहीन होता हुआ व्यभिचारी होता है ॥ १८ ॥

१० मात्री विभिन्ना यदि नीचभागे क्षुद्राः समीपे कुटिला विभान्ति । मातृरेखा
नाप्नोति सौख्यं पुरुषः कदापि संक्षीणबुद्धिः सरलस्वभावः ॥ १९ ॥

मातृरेखा यदि निचले भागमें कटी हो और पासही छोटी छोटी तिरीछी बहुतसी रेखायें सोहती हों तो वह प्राणी कभी सौख्य को नहीं पाता है और क्षीणबुद्धि होकर सीधे स्वभाववाला बना रहता है ॥ १९ ॥

११ वप्रस्य रेखा यदि कण्ठदेशे शाखात्रयेणापि युता यदा स्यात् ।
सोयं मतालम्बनतो हि पीडां प्राप्नोति जन्तुर्जनताविहीनः ॥ २० ॥

पितृरेखा यदि कण्ठदेश में तीन शाखाओं से संयुत होकर प्रतीत होवे तो वह प्राणी जनसमूहों से विहीन होता हुआ मतके आलम्बन से पीड़ाको पाता है ॥ २० ॥

१२ चन्द्रालये भाति मिथो विभिन्नं गुणस्वरूपं यदि चिह्नयुग्मम् ।
सोयं जनः कृत्रिमबन्धुयुक्तो भुग्नं न चेत्स्यादुपकारहीनः ॥ २१ ॥

चन्द्रमा के स्थान में परस्पर कटे, गुणा केसे रूपवाले दो निशान यदि प्रतीत हों तो वह प्राणी बनाये भाइयों से संयुक्त होता है अथवा पूर्वोक्त निशान क्रमसे गमन करें तो वह प्राणी अनेक भाइयोंवाला कहाता है और यदि दोनों निशान टेढ़े न हों तो वह पुरुष उपकार से हीन रहता है यानी किसीकी भलाई नहीं करता है ॥ २१ ॥

---

१ दयितं वल्लभं प्रियम् (इत्यमरः) २ वप्रः पितरि केदारे चेति कोषः ॥

१३ पैत्रीसमुत्था भगिनीसमेता रेखा गभीरा यदि याति चान्द्रिम्।
सोयं नरः स्याच्चपलस्वभावो भग्ना यदा चेत्फलमन्यथा स्यात्॥ २२॥

पैत्रीरेखा से उठीहुई रेखा भगिनीसहित होकर यदि गहरी होतीहुई बुध के चलीजावे तो वह प्राणी चपलस्वभाववाला होता है और यदि पूर्वोक्त रेखा कटी प्रतीत होवे तो फल अन्यथा होजाता है ॥ २२ ॥

१४ मात्रा वियुक्ता कुटिला सुपैत्री ह्यधो द्विशाखा मणिबन्धमेति।
स मन्दभाग्यः पुरुषस्तदानीं दारिद्र्यदुःखाभिभवं प्रयाति ॥ २३ ॥

मातृरेखा से जुदी व टेढ़ी पैत्रीरेखा निचले भागमें दो शाखाओंवाली होतीहुई मणिबन्ध (कब्जे) के पास पहुँचजावे तो वह प्राणी मन्दभागी होता हुआ दारिद्र्य से दुःख के अनादर को पाता है ॥ २३ ॥

१५ सञ्छिन्नमस्तं मणिबन्धगं चेच्चिह्नं द्विरेखं समुपैति मात्रीम्।
मिथ्याभ्रमेणापि युतो मनुष्यो दारिद्र्ययुक्तो विगताभिमानः ॥ २४ ॥

कटेशीशवाला व मणिबन्धगामी दो रेखाओंवाला निशान यदि मातृरेखा के पहुँचजावे तो वह प्राणी मिथ्याभ्रम से युक्त होताहुआ दरिद्री होकर घमण्ड से रहित होजाता है ॥ २४ ॥ (देखो चित्र नं० ४२)

अथ चतुर्दशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ कनिष्ठिकानामिकपर्वयुग्मे रेखाद्वयं चेत्सरलं विभाति।
सोयं जनो विन्दति बाहुघातं भ्रात्रा विहीनो भ्रमतासमेतः ॥ २५ ॥

कनिष्ठिका और अनामिका अँगुली की पहली व दूसरी पोर में सीधा दो रेखाओंवाला निशान यदि प्रतीत होता हो तो वह प्राणी भुजाओं में चोट चपेट को पाताहै और भ्रम समूहों से संपन्न होताहुआ भाइयों से विहीन रहताहै ॥ २५ ॥

२ सुतर्जनीपर्वयुगे द्विरेखं मध्यापरुष्के यदि द्वित्रिरेखम्।
शोफार्दितोयं मनुजस्तदा स्याज्ज्वरादिरोगैः परिपीडिताङ्गः ॥ २६ ॥

तर्जनी अँगुली की पहली व दूसरी पोर में सीधा दो रेखाओंवाला और मध्यमा अँगुली की पोरों में दो तीन रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी ज्वरादि रोगों से व्याकुल अङ्गवाला होकर शोथरोग से पीड़ित होता है ॥ २६ ॥

शोथ रोग

३ सौम्यालयान्तेऽसरलैकरेखं तिर्यग्विभिन्नं यदि भाति चिह्नम्।
ज्ञानी सुमानी पुरुषस्तदानीं स्याद्दौत्यकारी दयितापहारी ॥ २७ ॥

बुधालय में असरल एकरेखावाला तिरीछा कटाहुआ निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी ज्ञानी व सुमानी होकर द्यूतकर्म को करता हुआ किसी विजातीय प्राणी की प्यारी का हरनेवाला होता है ॥ २७ ॥

४ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशात्सर्पाननना वै समुपैति मध्याम् ।
धूर्तस्वभावो मनुजो धनाढ्यः धन्यो धरित्र्यां धरयासमेतः ॥ २८ ॥

मणिबन्धदेश से उठीहुई रेखा सर्प के समान मुँहवाली होकर यदि मध्यमा अँगुलीकी पहली पोर में पहुँचजावे तो वह प्राणी धूर्तस्वभाववाला व धनी होकर धरासमेत होता हुआ पृथ्वीमण्डल में धन्य गिनाजाता है ॥ २८ ॥

५ भोगाद्यशाखा समुपैति सौरिं[1] तथा द्विशाखे जननीमुपेतः ।
सोयं मनुष्यः शुभकर्मकारी दानी सुमानी तु महोपकारी ॥ २९ ॥

भोगरेखा की पहली शाखा शनैश्चर के पास चलीजावे तथा दो शाखायें मातृरेखा के सामने सामने होवें तो वह प्राणी शुभदायक कर्मों का करनेहारा होताहुआ दानी व सुमानी होकर बड़ाभारी उपकारी होताहै ॥ २९ ॥

६ लूता[2]सुजालं विशदं विशालं चिह्नं यदा चेद्गुरुगं विभाति ।
सोयं जनो मज्जति वारिवाहे बाल्ये वयस्के बलतासमेतः ॥ ३० ॥

बृहस्पति के स्थान में प्राप्तहुआ साफ़ सुथरा मकड़ी जाल के समान विशाल होकर निशान यदि प्रतीत होता हो तो वह प्राणी बाल्यावस्था में ही बलसमूहों से संपन्न होता हुआ जल में डूबजाता है ॥ ३० ॥

७ चन्द्रालयान्ते परिभाति चिह्नं भिन्नत्रिकोणं यदि बाहुभिन्नम् ।
सोयं नरःस्यान्निग[3]मार्गमज्ञः सत्यप्रवक्ता सरलस्वभावः ॥ ३१ ॥

चन्द्रालय के समीप भिन्न त्रिकोणवाला निशान यदि भिन्नबाहुवाला होताहुआ सोहता हो तो वह प्राणी वेद व शास्त्रों का ज्ञाता होकर सत्यवक्ता होताहुआ सरलस्वभाववाला कहाजाता है ॥ ३१ ॥

८ वृद्धाङ्गुलेर्वै द्वितये परुष्के वेदाङ्कतुल्यं यदि भाति व्यस्तम् ।
सोयं जनःस्याद्व्यभिचारशाली ह्याचारहीनः कुविचारपाली ॥ ३२ ॥

अँगूठे की दूसरी पोरमें चार ४ अङ्क के समान निशान यदि उलटा होकर सोहता हो तो वह प्राणी व्यभिचारशाली होकर आचार से हीन रहताहुआ निन्दित विचारों का पालनेवाला होता है ॥ ३२ ॥

---

१ शनैश्चरम् २ मर्कटकः ३ वेदः ४ शास्त्राणि ॥

९ मात्रीस्वशीर्षे मिलिता सुपैत्र्या तदन्तरे चापसमा विभाति ।
दुःखार्दितोयं पुरुषस्तदानीं मृत्युं स्वतो वाञ्छति सर्वदैव ॥ ३३ ॥

मातृरेखा अपने शिरोभाग में पैत्रीरेखा से मिलाप करती हो और उन दोनों रेखा- के बीच में धन्वाकारसी एक और रेखा यदि प्रतीत हो तो वह प्राणी दुःखों से घबड़ा हुआ आपही से हमेशा मौतको चाहता है ॥ ३३ ॥

१० भोगासमीपेहि मिथो विभिन्नं गुणानुरूपं यदि लक्ष्मयुग्मम् ।
दारिद्र्ययुक्तो मनुजो विबन्धुश्चिह्नप्रमाणैरपि बन्धुता वा ॥ ३४ ॥

सौभाग्यरेखा के पासही परस्पर कटेहुए गुणा के आकार वाले दो निशान य- प्रतीत होते हों तो वह प्राणी भाइयों से रहित या सहायता से हीन होता हुआ दरि- बनारहता है अथवा जितनेही चिह्न प्रतीत होते हों उतनेही भाई होते हैं ॥ ३४ ॥

११ समुत्थितं चेन्मणिबन्धदेशाच्चिह्नं द्विरेखं यदि याति चान्द्रिम् ।
सोयं जनःस्यात्परदास्ययुक्तो भग्नं यदा चेत्परबन्दिमेति ॥ ३५ ॥

मणिबन्ध से उठाहुआ दो रेखाओं वाला निशान यदि बुधालय में चलाजावे तो व- प्राणी पराई दास्यता को करता है यानी परपुरुषों का सेवक होता है और यदि पूर्व- निशान कटा हुआ प्रतीत हो तो वह प्राणी परवन्धनको पाता है ॥ ३५ ॥

१२ अङ्गुष्ठमूले यदि भाति चिह्नं रेखासुषट्कं कुटिलं विशुद्धम् ।
सोयं नरः स्यात्प्रमदाविलासी ह्यानन्दराशी महतामुपासी ॥ ३६ ॥

अँगूठेकी मूलमें साफ़ सुथरा छःरेखाओं वाला निशान यदि टेढ़ा होकर सोहता हो तो वह प्राणी प्रमदाओं में विलास करनेवाला होकर आनन्द की राशिवाला होता हु- महात्मालोगों का सेवक बनारहता है ॥ ३६ ॥

१३ अब्जालयान्ते विशदं गभीरं घनस्वरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
सोयं निमग्नो हि जलप्रवाहे बाधिर्ययुक्तो विधुरस्वभावः ॥ ३७ ॥

चन्द्रालय के पासही साफ सुथरा व गहरा निशान हथौड़े के समान रूपवाला या घण्टा बजाने की मुगरी के समान होकर यदि सोहता हो तो वह प्राणी बहिरा हो- हुआ टेढ़े स्वभाववाला होकर जलमें डूबजाता है ॥ ३७ ॥

१४ तिस्रःसुरेखा मणिबन्धसंस्थास्तासां विभिन्ना यदि चाद्यरेखा ।
सोयं यशस्वी मनुजो नराणां प्राज्ञः प्रशंसी परमायुषाढ्यः ॥ ३८ ॥

शोभन तीनरेखायें जो मणिबन्ध (कुब्ज़े) में बनी रहती हैं उन्हींके बीच पह-

खा कटीसी प्रतीत होवे तो वह प्राणी मनुष्यों के मध्य में यशस्वी होकर प्राज्ञ प्रशंसापात्र होता हुआ परमायु से संयुक्त होता है ॥ ३८ ॥ (देखो चित्र नं० ४३)

अथ पञ्चदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ भोगासमुत्था सरलैकरेखा समध्यभिन्ना यदि याति सूरम् ।
मान्यो वदान्यो मनुजस्तदानीं सद्धर्मशाली धनतामुपैति ॥ ३९ ॥

भोगरेखा से उठी, सीधी एकरेखा बीचमें कटी हुई यदि सूर्यालय में पहुँचजावे तो वह प्राणी मानी व दानी होकर सद्धर्मशाली होता हुआ धनसमूहों को पाता है ॥ ३९ ॥

२ मन्दालये चेद्विशदं गभीरं चिह्नं त्रिरेखं सरलं विभाति ।
शान्तस्वभावो मनुजो हि नूनमुद्वेगहीनः समयं समेति ॥ ४० ॥

शनैश्चर के स्थान में साफ़, गहरा, सीधा होकर तीनरेखाओं वाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी निश्चयकर शान्तस्वभाव वाला होता हुआ व्याकुलता से रहित होकर अपने समय को व्यतीत करता है ॥ ४० ॥

३ पूज्यालये चेत्सरलं त्रिरेखं रेखाचतुष्कैस्तु तिरो विभिन्नम् ।
सोयं मनुष्यो विधनो विदीनो हीनो जनैर्गच्छति सर्वदेशम् ॥ ४१ ॥

बृहस्पति के स्थान में सीधा तीनरेखा वाला व तिरीछी चाररेखाओं से कटाहुआ निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी अधनी व दरिद्री होकर सर्वजनों से विहीन होता हुआ सवदेशों में जाता है ॥ ४१ ॥

४ सौम्यालयान्ताच्चलिता सुभोगा रेखा गभीरा गुरुगेहमेति ।
कोपान्वितोऽयं पुरुषस्तदानीं पारुष्ययुक्तः खलु साहसी स्यात् ॥ ४२ ॥

बुधके स्थान से चलीहुई भोगरेखा गहरी होकर बृहस्पति के स्थान पर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी कोपशाली होकर कठोरता से संयुक्त होताहुआ साहसी होता है ॥ ४२ ॥

५ देवेन्द्रवन्द्यालयगा सुभोगा संकर्तिता चेद्यदि कण्ठदेशे ।
धर्मेण हीनो हि नरो नराणां भूपादिभीत्या नितरां बिभेति ॥ ४३ ॥

बृहस्पति के स्थान में पहुँची हुई भोगरेखा यदि कण्ठदेशमें कटी फटीसी प्रतीत हो तो वह प्राणी नरोंके बीचमें अधर्मी होताहुआ राजा, आगी और चोरके डरसे बहुतही डरता रहता है ॥ ४३ ॥

६ चन्द्रालये चेत्सरलं द्विरेखं चिह्नं सुभोगाभिमुखं प्रयाति ।
विश्वासहीनो मनुजो विबन्धुर्वेश्याविलासी वनिताविहीनः ॥ ४४ ॥

चन्द्रमा के स्थानमें सीधा व दो रेखाओं वाला निशान यदि भोगरेखा के सामने च
जावे तो वह प्राणी अविश्वासी व भाइयोंसे रहित होकर वेश्यागामी होता हुआ निजन
से विहीन होजाता है ॥ ४४ ॥

७ मात्री सुरेखा यदि नीचभागे क्षुद्राविभिन्ना मिलिता सुपैत्र्याम्।
मात्रानिरस्तो[1] मनुजो हि त्रस्तो विध्वस्तमानो ममतामुपैति ॥ ४५

मात्रीरेखा यदि निचलेभाग में छोटीरेखाओं से कटीहुई पैत्रीरेखा में जाकर मिल
तो वह प्राणी मातासे निकाला व घबड़ाताहुआ टूटेमानवाला होकर ममताको पाता है॥

८ भोगासमीपे करवाल[2]चिह्नं भित्त्वा सुमात्रीं समुपैति पैत्रीम्।
सांघातिकं मृत्युमुपैति मर्त्यो मत्याविहीनो मदनातुरात्मा ॥ ४६ ॥

भोगरेखाके पास टिकाहुआ तरवारका निशान यदि मातृरेखाको भेदनकर पैत्रीरे
सामने चलाजावे तो वह प्राणी निर्बुद्धि होकर कामदेव से पीड़ित होताहुआ सांघा
मौतको पाता है ॥ ४६ ॥

९ पैत्रीस्वशीर्षे मिलिता सुमात्र्या चिह्नं विधत्ते यदि कोणरूपम्।
सोयं जनःस्याद्गणितां[3]गमज्ञो गौरस्वरूपो ह्यतिगौरवाढ्यः ॥ ४७ ॥

शिरोभाग में पैत्रीरेखा मात्रीरेखा के साथ मिलाप करती हुई कोणरूप चिह्नको धा
हो तो वह प्राणी गणितशास्त्रका ज्ञाता होताहुआ गौराङ्ग होकर अति गौरवता से सं
बना रहता है ॥ ४७ ॥

१० संमध्यभिन्ना मिलिता जनन्यां भाग्यासुरेखा कुरुते हि कोणम्।
सोयं विवादी मनुजो विषादी कष्टप्रदायी तु महज्जनानाम् ॥ ४८ ॥

बीचमें कटी होकर भाग्यरेखा मातृरेखामें मिलतीहुई कोणरूप निशान को बनाती हो
वह प्राणी विवादी होकर विषादी होता हुआ महज्जनलोगोंको बड़ाकष्टदायक होता है ४

११ कण्ठत्रिशाखा विनता गभीरा पैत्री सुरेखा समुपैति भाग्याम्।
सोयं जनो विन्दति वित्तवृ[4]न्दं संस्था[5]समेतः सरलस्वभावः ॥ ४९ ॥

कण्ठमें तीन शाखाओंवाली, लचीहुई गहरी होकर पैत्रीरेखा भाग्यरेखा के पास च
जावे यानी मिलजावे तो वह प्राणी मर्यादासमेत सीधेस्वभाववाला होताहुआ धनस
को पाता है ॥ ४९ ॥

१२ अङ्गुष्ठमूले च पितुः समीपे त्रिपुण्ड्ररूपं यदि भाति चिह्नम्।

---

१ निष्कासितः २ खड्गचिह्नम् ३ गणितशास्त्रवेत्ता ४ समूहम् ५ मर्यादा ॥

सोयं मनुष्यो बलवीर्यहीनो दीनो ह्यधीनो ललनाविहीनः[1] ॥ ५० ॥

अँगूठे की मूल व पैत्रीरेखा के पास त्रिपुण्ड्ररूपवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी बल व वीर्य से हीन होकर दीन व अधीन होताहुआ विशेषता से रमणीविहीन होता है ॥ ५० ॥

१३ चन्द्रालयान्ते विशदं गभीरं तारानुरूपं[2] यदि भाति लक्ष्म।

सोयं नरो मज्जति नीरमध्ये[3] मानापमानेन युतो यविष्ठः[4] ॥ ५१ ॥

चन्द्रालय के पास साफ़ सुथरा व गहरा होकर ताराके समान आकारवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी जल में डूबजाता है और उसका छोटा भाई मान व अपमान से संयुक्त होता है ॥ ५१ ॥

१४ विद्योतते चेन्मणिबन्धदेशे गुणानुरूपं यदि लक्ष्मयुग्मम्।

सत्येन हीनो मनुजो मलाढ्यो मान्योऽधमानां[5] धनतासमेतः[6] ॥ ५२ ॥

मणिबन्ध (कब्जे) के ऊपरले भागमें गुणाके आकारवाले दो निशान यदि सोहते हों तो वह प्राणी धनाढ्य व मैला होकर अधमजनों का माननीय होताहुआ सत्यसे हीन होजाता है ॥ ५२ ॥

१५ सर्पानुरूपं मणिबन्धसंस्थं वक्रं सुचिह्नं सुतरां विभाति।

सोयं नरः स्यात्परिणामदर्शी[7] ज्ञानाधिकारी परकार्यकारी ॥ ५३ ॥

सर्पके समान आकारवाला, टेढ़ा निशान मणिबन्ध (कब्जे) में टिकाहुआ अधिकता से यदि सोहता हो तो वह प्राणी ज्ञानाधिकारी व परकार्यकारी होकर परिणामदर्शी होता है ॥ ५३ ॥ (देखो चित्र नं० ४४)

अथ त्रयोदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह-

१ कनिष्ठिकापर्वयुगे विभाति कोणार्धरूपं यदि लक्ष्म शुद्धम्।

चौर्ये[8] प्रवृत्तः पुरुषस्तदा स्याच्चातुर्ययुक्तश्चपलस्वभावः ॥ ५४ ॥

कनिष्ठा अँगुली की पहली व दूसरी पोरमें अर्धकोण निशान यदि शुद्ध होकर सोहता हो तो वह प्राणी चतुरता से संयुत होता हुआ चपलस्वभाववाला होकर चौरकर्म में लगा रहता है ॥ ५४ ॥

२ सुमध्यमायाः प्रथमे परुष्के त्रिकोणरूपं यदि भाति चिह्नम्।

सोयं मनुष्यः सकले स्वकार्ये प्राप्नोति हानिं न सुखं कदापि ॥ ५५ ॥

---

१ निजरमणीरहितः २ नक्षत्ररूपम् ३ जलमध्ये ४ तस्यकनिष्ठोभ्राता ५ नीचजनानां माननीयः ६ धनानां समूहः ७ "परिणामो विकारो द्वे समे" (इत्यमरः) ८ चोरकर्मणि ॥

मध्यमा अँगुली की पहली पोरमें त्रिकोणरूपवाला निशान यदि सोहता हो तो प्राणी समस्तकार्यों में हानि को पाता है और सुखको कभी नहीं पाता है ॥ ५५ ॥

३ पूज्यालयस्योपरिगं विभाति पार्श्वत्रिरेखं सरलद्विरेखम् ।
पित्तार्दितोयं लभते सुशोथं दीर्घापरा चेद्रमणीकृतार्थम् ॥ ५६ ॥

बृहस्पति के स्थान के ऊपरलेभाग में प्राप्तहुआ पार्श्वमें तीनरेखावाला होकर सी दो रेखावाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी पित्तरोग से पीड़ित होताहुआ क सूजनको पाता है और यदि पूर्वोक्त दो रेखाओं में से कोई रेखा दीर्घ होकर प्रतीत हो किसी नारीकृत धनको पाता है ॥ ५६ ॥

४ सूरालये चेत्कुटिला सशाखा भोगां विभित्त्वा जननीं प्रयाति ।
सोयं जनः संशयसक्तचित्तो भूपादिकोपाद्बहुहानिमेति ॥ ५७ ॥

सूर्यके स्थान में टेढ़ी होकर शाखा समेत रेखा भोगरेखाको काटकर मातृरेखा के स मने पहुँचजावे तो वह प्राणी सन्देह में मनको लगाता हुआ राजा महाराजा आदि लोगों के कोपसे घनी हानिको पाता है ॥ ५७ ॥

५ भोगा सुरेखा यदि नीचभागे संकर्तिता चेन्मिलिता जनन्याम् ।
सोयं श्रमासक्तमना मनुष्यो विश्रामहीनो विपदामुपैति ॥ ५८ ॥

भोगरेखा यदि निचलेभाग में कटीहुई मातृरेखा में मिलजावे तो वह प्राणी विश्र रहित होकर परिश्रम में मनको लगाता हुआ विपदाको पाता है ॥ ५८ ॥

६ संभोगरेखा सरला गभीरा शीर्षे नता चेन्मिलिता सुमात्र्याम् ।
उग्रस्वभावो मनुजो महौजा विख्यातकीर्तिर्विजितारिपक्षः ॥ ५९ ॥

भोगरेखा सीधी व गहरी होकर शिरोभागमें लचीहुई यदि मातृरेखा में मिलाप करत हो तो वह प्राणी उग्रस्वभाववाला व बड़ा बलवान् होताहुआ विख्यातकीर्तिवाला होक शत्रुपक्षका विजय करनेवाला होता है ॥ ५९ ॥

७ चन्द्रालयान्ताच्चलिता सुमात्री भोगासुशीर्षे मिलिता यदा चेत् ।
सोयं जनो विन्दति वित्तनाशं शाखायुता चेत्खलु साहसी स्यात् ॥ ६०

चन्द्रालय के समीप से चलीहुई मातृरेखा भोगरेखा के शिरोभाग में यदि मिली तो वह प्राणी धननाश को पाता है और यदि पूर्वोक्त रेखा शाखाओं से संयुत हो तो साहसी होता है ॥ ६० ॥

८ चन्द्रालये चेन्मिलितं स्वशीर्षे रेखाद्वयं वै विरलं विभाति ।

---

१ " पेलवं विरलं तनु " (इत्यमरः) ॥

तत्प्राणनाशं कुरुते विपक्षो दीर्घापरा चेत्खलु वैरिजेता ॥ ६१ ॥

चन्द्रमा के स्थान में दो रेखाओंवाला निशान यदि शिरोभागमें मिलाहुआ विरल होकर प्रतीत हो तो वैरीलोग उस प्राणी के प्राण को हरते हैं और यदि पूर्वोक्त रेखाओं से कोई रेखा दीर्घ हो तो वह प्राणी वैरियों को विजय करता है ॥ ६१ ॥

वृद्धाङ्गुलेर्वै द्वितये परुष्के रेखाद्वयं चेत्सरलं सशाखम्।
सोयं ह्यगम्यागमनं करोति गम्भीरबुद्धिर्गणितागमज्ञः ॥ ६२ ॥

अँगूठे की दूसरी पोरमें दो रेखाओंवाला निशान यदि सीधा होकर शाखासहित प्रतीत होवे तो वह प्राणी गंभीर बुद्धिशाली होकर गणितशास्त्र का ज्ञाता होताहुआ अगम्या रमणियों में गमन करता है ॥ ६२ ॥

० रेखाचतुष्कं सरलं विभाति रेखाचतुष्कैस्तु तिरोविभिन्नम्।
सोयं निमग्नो मनुजो जलौघे जायाजितो जल्पति जन्तुवादम् ॥ ६३ ॥

चाररेखावाला सीधा और चार रेखाओं से तिरिछा कटाहुआ निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी निजनारी से पराजित होकर प्राणियों का झगड़ा बकताहुआ जलसमूह में डूबजाता है ॥ ६३ ॥

१ काव्यालयान्ते विशदं सकोणं गुणानुरूपं यदि भाति चिह्नम्।
सोयं मनुष्यो धनधान्ययुक्तो मायारतो मानववृन्दमुख्यः ॥ ६४ ॥

शुक्रालय के पास यदि साफ़ सुथरा होकर कोणों समेत गुणा के आकारवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी धन धान्य से संयुक्त होकर माया में रत होताहुआ मानवसमूहों का मुखिया गिनाजाता है ॥ ६४ ॥

२ भुग्ना चलन्ती मणिबन्धदेशाद्भाग्यां सपैत्रीं प्रविभिद्य याति।
प्रेमास्पदो वै पुरुषस्तदानीं प्राप्नोति पारं भवसागरस्य ॥ ६५ ॥

मणिबन्ध (कब्जे) से चलीहुई रेखा टेढ़ी होकर भाग्यरेखा और पितृरेखा को काट कर शुक्रके पास पहुँचजावे तो वह प्राणी प्रेमका धाम होताहुआ भवसागर के पारको जाता है ॥ ६५ ॥

३ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशाद्रेखा गभीरा समुपैति सौम्यम्।
नारीकृतापत्तियुतो मनुष्यो मित्राभिभूतो हि समेति काराम् ॥ ६६ ॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठीहुई रेखा गहरी होकर बुधालय पर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी मित्रों से अनादृत होकर स्त्रीकृत विपदा से संयुत होता हुआ कारालय (जेलखाने) में जाता है ॥ ६६ ॥ (देखो चित्र नं० ४५)

अथ पञ्चदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ ब्रध्नालयस्योपरिगं विभाति रेखाद्वयं चेत्सरलं सुदीर्घम् ।
सोयं महात्मा मनुजस्तदा स्याज्ज्ञानेन मानेन धनेन धन्यः ॥ ६७ ॥

सूर्यालय के ऊपरले भागमें प्राप्तहुआ यानी अनामिका अँगुली की पहली पोरसे उठा दूसरीपोर के मध्य में पहुँचाहुआ लम्बा दो रेखाओंवाला सीधा निशान यदि प्रतीत हो तो वह प्राणी महात्मा होकर ज्ञान–मान और धनसे प्रशंसनीय होता है ॥ ६७ ॥

२ सौम्यालये चेद्विशदं च सूक्ष्मं रेखाचतुष्कं सरलं विभाति ।
सोयं निमग्नो हि जलप्रवाहे वृद्धे वयस्के बहुसौख्यमेति ॥ ६८ ॥

बुधालय में साफ सुथरा व छोटासा होकर चार रेखाओंवाला सीधा निशान यदि प्रतीत होता हो तो वह प्राणी जलमें डूबाहुआ वृद्धावस्था में घने सौख्यको पाता है ॥ ६८

३ सूरालये चेत्सरलं विभाति रेखाचतुष्कं खलु स्वल्परूपम् ।
पुत्रप्रपौत्रादियुतो मनुष्यो महामनीषी ममताविहीनः ॥ ६९ ॥

सूर्यालय में सीधा चाररेखाओंवाला छोटासा निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी पुत्र व प्रपौत्र आदिकों से संपन्न होताहुआ बड़ाबुद्धिमान् होकर ममता से विहीन रहता है ॥ ६९ ॥

४ देवेन्द्रवन्द्यालयगं विभाति चिह्नं त्रिकोणं विशदस्वरूपम् ।
संस्थासमेतो मनुजो धनाढ्यो धन्यो धरायां सरलस्वभावः ॥ ७० ॥

बृहस्पति के स्थानमें पहुँचा हुआ साफ सुथरा त्रिकोणका निशान यदि प्रकाशमान होता हो तो वह प्राणी मर्यादा समेत धनाढ्य होकर धरामण्डल में प्रशंसनीय होताहुआ सीधे स्वभाववाला होता है ॥ ७० ॥

५ पूज्यालये चेद्विशदस्वरूपं तारानुरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
सोयं मनोव्याधियुतो मनुष्यो मस्तिष्कपीडां लभते सशोकः ॥ ७१ ॥

बृहस्पति के स्थान में यानी भोगरेखा के कण्ठदेश के पास तारा के समान निशान यदि चमकता हो तो वह प्राणी मानसी पीड़ा से पीड़ित होताहुआ शोकसमेत मस्तिष्क पीड़ाको पाता है ॥ ७१ ॥

६ पैत्रीसुशीर्षोपरिगं विशुद्धं गुणानुरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
पुरोहिताचार्यनिपीडिताङ्गो बाधासमेतो बहुदुःखमेति ॥ ७२ ॥

---

१ "संस्था तु मर्यादा धारणा स्थितिः" (इत्यमरः) २ मन्त्रव्याख्याकृदाचार्यः ॥

पैत्रीरेखा के शिरोभाग के ऊपरले भागमें प्राप्तहुआ साफ़ सुथरा होकर गुणाके आकार वाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी पुरोहित और आचार्य या गुरुसे पीड़ित अङ्गवाला होताहुआ बाधासमेत बहुतसे दुःखोंको पाता है ॥ ७२ ॥

७ भोगासुशीर्षे मिलिता सुपैत्री भोगा मुखं चैति यदा सुमात्री ।
धूर्तस्वभावो मनुजो नराणां कार्यं विधत्ते सततं समस्तम् ॥ ७३ ॥

भोगरेखा के शिरोदेश में पितृरेखा यदि मिलाप करती हो और यदि भोगरेखा के मुख समीप में मातृरेखा चलीगई हो तो वह प्राणी मनुष्यों के बीच धूर्तस्वभाववाला (छलछन्दी) होता हुआ समस्तकार्यों को हमेशाही किया करता है ॥ ७३ ॥

८ भिन्ना सुमात्री यदि नीचभागे गोलार्धरूपं कुरुते हि चिह्नम् ।
सोयं नरः स्यान्निजबन्धुवर्गे[2] विश्वासहीनो बहुसेवकाढ्यः ॥ ७४ ॥

मात्रीरेखा यदि निचलेभाग में छिन्नभिन्न होकर अर्धगोलाकार निशानको बनाती हो तो वह प्राणी अपने बान्धववर्गों में अविश्वस्त होताहुआ अनेकानेक दासगणों से सेव्यमान होता है ॥ ७४ ॥

मन्दालये चेत्खलु भोगरेखा क्षुद्राविभिन्ना समुपैति सौम्यम् ।
नानापदार्थैः सहितो मनुष्यो भूपादिभीत्या बहुहानिमेति ॥ ७५ ॥

शनैश्चरके स्थान के पासही यदि भोगरेखा छोटी २ रेखाओं से कटीहुई बुधालय पर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी नानावस्तुओं से संयुत होता हुआ राजा महाराजा आदिकों के डरसे घनी हानिको पाता है ॥ ७५ ॥

१० मात्रीसुरेखा यदि मध्यदेशे क्षुद्राविभिन्ना विनता विभाति ।
अल्पायुषं तं पुरुषं करोति सौभाग्यवन्तं बहुपुत्रवन्तम् ॥ ७६ ॥

मातृरेखा यदि मध्यभागमें यानी शनैश्चरालय के सामने छोटी २ रेखाओं से कटीहुई नीचीसी प्रतीत होवे तो उस प्राणी को सौभाग्यवाला व अनेक पुत्रोंवाला बनाकर अल्पायु करदेती है यानी वह प्राणी छत्तीस वर्ष के भीतरही मरजाता है ॥ ७६ ॥

११ पैत्रीसमुत्था खलु चोर्ध्वरेखा शेषे सशाखा शशिनं प्रयाति ।
सांघातिकं मृत्युमुपैति मर्त्यो मत्या विहीनो ममतासमेतः ॥ ७७ ॥

पैत्रीरेखा से उठीहुई ऊर्ध्वरेखा (फेटलाइन) शेषभागमें शाखासमेत चन्द्रालय में चली जावे तो वह प्राणी निर्बुद्धि होकर ममतासमेत होताहुआ सांघातिक मौतको पाता है ॥ ७७ ॥

---

१ पापो धूर्तस्तु वञ्चकः २ स्वकीयबन्धुसमूहे ॥

१२ भौमालयान्ते मिलितं गभीरं तिर्यक्त्रिरेखं समुपैति काव्यम् ।
अपव्ययेनापि युतो मनुष्यः शेषेनुतापं कुरुते सदैव ॥ ७८ ॥

मङ्गल के स्थान में मिलाहुआ गहरा होकर तिरीछी तीन रेखाओंवाला निशान शुक्रालय के पासही पहुँच जावे तो वह प्राणी बुरेकामों में पैसे को खर्चताहै और धन चुकजाता है तो सदैव पछितावा किया करता है ॥ ७८ ॥

१३ भाग्यासुरेखा मिलिता सुपैत्र्यां तदन्तरे चेत्समकोणचिह्नम् ।
साधारणोयं पुरुषस्तदा स्यान्नार्या यदा चेत्तनयं प्रसूते ॥ ७९ ॥

भाग्यरेखा पैत्रीरेखा में मिली हो यानी ऊर्ध्वरेखा पितृरेखा से मिलाप करती हो उन रेखाओं के बीच में समकोणकासा चिह्न यानी बीछी के डङ्ककासा निशान यदि होताहो तो वह प्राणी साधारणपुरुष होताहै और यदि पूर्वोक्त निशान रमणी के कर सोहता हो तो वह पुत्रों को पैदाकरती है ॥ ७९ ॥

१४ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशाद्रेखा गभीरा समुपैति भाग्याम् ।
सर्वप्रियो वै पुरुषस्तदानीं विजित्य बन्धुं सुखतां समेति ॥ ८० ॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठी हुई रेखा गहरी होकर भाग्यरेखा के पास पहुँच तो वह प्राणी सर्वजनों का प्यारा होताहुआ वैरीभाई का विजयकर सुख को पाता है ॥ ८० ॥

१५ चन्द्रालये चेद्विशदस्वरूपं चिह्नं चतुष्कोणयुतं विभाति ।
सोयं यशस्वी मनुजो मनस्वी विश्वासशाली बहुवित्तमेति ॥ ८१

चन्द्रालय के निकटवर्ती साफ़ सुथरा होकर चारकोनों से संयुत होताहुआ नि यदि सोहता हो तो वह प्राणी यशस्वी व मनमौजी होताहुआ विश्वासशाली होकर धन को पाता है ॥ ८१ ॥ (देखो चित्र नं० ४६)

अथ चतुर्दशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ सौम्यालयान्ते सरलैकरेखं संमध्यगोलं यदि भाति चिह्नम् ।
दुर्दृष्टियुक्तो विकलो मनुष्यो विक्षीणवीर्यो विषयानुरागी ॥ ८२ ॥

बुधालय के पास सीधी एकरेखावाला व बीच में गोलाकार यानी मोहरवा समान होकर निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी विशेषता से क्षीणवीर्यवाला व में अनुराग करनेवाला होकर दुर्बलदृष्टिसे संयुक्त होताहुआ व्याकुलही बनारहताहै ॥ ८

१ तदन्तरे चेदलिंदंशनाढ्यमिति वा पाठः ॥

२ भोगा गभीरा गुरुगा विभाति शाखा तदीया यदि याति मन्दम् ।
सोयं मनुष्यो वनिताविलासाद्दौर्भाग्ययुक्तो धनहानिमेति ॥ ८३ ॥

सौभाग्यरेखा गहरी होकर बृहस्पति के घरमें पहुँची हुई यदि सोहती हो और यदि उसकी शाखा शनैश्चर के स्थान में चलीगई हो तो वह प्राणी रमणियों में आसक्त होनेसे दौर्भाग्यशाली होताहुआ धनहानि को पाता है ॥ ८३ ॥

३ मात्रीसमुत्था विशदा विभुग्ना रेखा यदैका धिषणं प्रयाति ।
स मन्दभाग्यो मनुजस्तदानीं प्राप्नोति सौख्यं चरमे वयस्के ॥ ८४ ॥

मातृरेखा से उठी हुई साफ़ सुथरी व टेढ़ी होकर एकरेखा यदि बृहस्पति के स्थान पर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी मन्दभागी होताहुआ अन्तिम अवस्थामें सौख्यको पाता है ॥ ८४ ॥

४ आरम्भदेशे खलु भोगमात्र्योस्तारानुरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
सोयं गतो वै मनुजो विदेशं प्राप्नोति भद्रं भयताविहीनः ॥ ८५ ॥

भोगरेखा व मातृरेखा के आरम्भदेश में तारा के समान निशान यदि प्रकाशमान होताहो तो वह प्राणी विदेशको गयाहुआ भयसमूहों से निडर होकर कल्याण को पाता है ॥ ८५ ॥

५ भोगासुमध्ये सरलं त्रिरेखं तिर्यग्विभिन्नं खलु चन्द्रमित्या ।
सोयं मनुष्यो रिपुतासमेतो मातापितृभ्यां कुरुते विवादम् ॥ ८६ ॥

भोगरेखा के मध्यभाग में एकरेखा से तिरीछा कटाहुआ सीधा तीन रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी माता पिता के साथ विवाद (झगड़ा) करता है ॥ ८६ ॥

६ चिह्नं गभीरं जठरे जनन्या वृत्तार्धरूपं विशदं विभाति ।
त्यक्त्वा स्वकीयौ पितरौ मनुष्यो ह्यात्मम्भरिर्वै भ्रमते विदेशम् ॥ ८७ ॥

माताके उदरस्थल में साफ़ सुथरा व गहरा होकर वृत्तार्धरूप यानी अर्ध गोलाकार निशान यदि सोहताहो तो वह प्राणी अपने मातापिताको छोड़कर आतमा को पालताहुआ विदेश में घूमता है ॥ ८७ ॥

७ मात्रीसुरेखा शशिनं समेति पैत्री विभुग्ना मणिबन्धमेति ।
एवं विधे गर्ततरे प्रयाते करोति चौर्यं चपलस्वभावः ॥ ८८ ॥

मात्रीरेखा चन्द्रालयके पास चलीजावे और पैत्रीरेखा टेढ़ी होकर मणिबन्ध (कब्ज़े)

---

१ सहयोगं विनापि तृतीया वृद्धो यूनेत्यादिनिर्देशात् ॥

में मिलगई हो जबकि ऐसा गड़हेकासा निशान प्रतीत होवे तो वह प्राणी चर स्वभाववाला होताहुआ चोरीको करता है ॥ ८८ ॥

८ पैत्रीगले चेत्सरलं त्रिरेखं रेखाचतुष्कैस्तु तिरोविभिन्नम् ।
सोयं जनो वै कुरुते कुकृत्यं विषप्रयोगैर्विषयानुरक्तः ॥ ८९ ॥

पैत्रीरेखा के कण्ठदेश में सीधा तीन रेखाओंवाला और चाररेखाओं से तिरछा कटाहुआ निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी विषयों में लगाहुआ विषप्रयोगों निन्दित कार्य को करता है ॥ ८९ ॥

९ पित्रा वियुक्ता यदि मातृरेखा द्विधा विभक्ता खलु चाग्रभागे ।
सोयं नरो भिन्नतरस्वभावो ह्याप्नोति खञ्जं खलतासमेतः ॥ ९० ॥

पैत्रीरेखासे वियोग करतीहुई मातृरेखा यदि अग्रभाग में दो प्रकार से बटगई हो वह प्राणी खलतासमेत भिन्नस्वभाववाला होताहुआ खञ्जरोग को पाता है यानी पैर लँगड़ा होजाता है ॥ ९० ॥

१० नतद्विरेखं मणिबन्धसंस्थं तद्भूतचिह्नं सरलद्विरेखम् ।
सांघातिकं मृत्युमुपैति मर्त्यो मन्दस्वभावो मदनाकुलात्मा ॥ ९१ ॥

मणिबन्ध (कब्जे) में टिका हुआ लची दो रेखाओंवाला और उनसे उपजा हुआ निशान सीधी दो रेखाओंवाला होकर यदि प्रतीत होवे तो वह प्राणी नीच स्वभाववाला होता हुआ काम से पीड़ित आत्मावाला होकर सांघातिक मौत को पाता है ॥ ९१ ॥

११ अङ्गुष्ठमूले विशदं विभाति कोणस्वरूपं यदि युग्मचिह्नम् ।
सोयं दरिद्रः परिवारयुक्तो भिक्षासुवृत्तिं कुरुतेऽप्यजस्रम् ॥ ९२ ॥

अँगूठे की मूल में साफ़ सुथरे होकर कोणरूपवाले दो निशान यदि प्रतीत होवें तो वह प्राणी परिवार से संयुत होता हुआ दरिद्री होकर हमेशा भीख को मांगता है यानी भिक्षावृत्ति से निर्वाह करता हुआ जीता है ॥ ९२ ॥

१२ पैत्रीसुरेखा यदि नीचभागे वृत्तार्धभिन्ना मणिबन्धमेति ।
सोयं हठान्मृत्युमुपैति मर्त्यो मत्या विहीनो विपदासमेतः ॥ ९३ ॥

पैत्री रेखा यदि निचले भाग में अर्धवृत्ताकार निशान से कटी हुई मणिबन्ध (कब्जे) के पास पहुँच जावे यानी अँगूठे की मूल में समा जावे तो वह प्राणी विपदासमेत निर्बुद्धि होता हुआ हठ (ज़िद) से मौत को पाता है ॥ ९३ ॥

---

१ निन्दितकार्यम् २ खोड़खञ्जः ३ खलानां समूहः ४ चिह्नद्वयम् ५ नित्यम् ॥

१३ सर्पाननाभा मणिबन्धसंस्था ह्येवंविधाश्चेद्यति सन्ति रेखाः ।
तावन्मितं वै भ्रमते विदेशं व्यापद्ग्रहग्रस्तमना मनुष्यः ॥ ६४ ॥

मणिबन्ध (कब्जे) के ऊपरले भाग में टिकी हुई सर्प के समान मुखवाली रेखा यदि सोहती हो अथवा ऐसीही जितनी रेखायें प्रतीत होवें तो वह प्राणी उतनेही बार विशिष्ट आपदारूप ग्रह से ग्रसे हुए मनवाला होता हुआ निश्चयकर विदेश में घूमता है ॥ ६४॥

१४ सर्वाङ्गुलीनां त्रितये परुष्के सार्प्यं द्विरेखं यदि भाति चिह्नम् ।
बाल्याद्यवस्थाङ्गुलिकक्रमेण नूनं नरो मज्जति वारिवाहे ॥ ६५ ॥

समस्त अँगुलियों की तीसरी पोर में सर्प समान वक्राकार दो रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी बाल्यादि अवस्था और कनिष्ठादि अँगुलियों के अनुक्रम से निश्चयकर जलसमूह में डूबता है यानी पूर्वोक्त निशान यदि कनिष्ठा में हो तो बाल्यावस्था में व अनामिका में हो तो युवावस्था में व मध्यमा में हो तो मध्यावस्था में तर्जनी में हो तो वृद्धावस्था में और यदि अँगूठे में हो तो अतिवृद्धावस्था में जल निमग्न होता है ॥ ६५ ॥ (देखो चित्र नं० ४७)

अथ पञ्चदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ सर्वाङ्गुलीनां त्रितये परुष्के वक्रं द्विरेखं यदि भाति चिह्नम् ।
सोयं मनुष्यो बलवीर्यहीनो दौर्बल्ययुक्तो दयितो दयालुः ॥ ६६ ॥

समस्त अँगुलियों की तीसरी पोर में वक्राकार दो रेखाओंवाला निशान यदि प्रतीत होता हो तो वह प्राणी बल व वीर्य से हीन तथा दुर्बल शरीरवाला होता हुआ प्यारा होकर दयालु होता है ॥ ६६ ॥

२ सौम्यालये चेत्सरलं सकोणं समध्यरेखं विशदं विभाति ।
सोयं नरो नीतिपरो भयार्तो भिक्षासुवृत्तिं कुरुतेऽप्यजस्रम् ॥ ६७ ॥

बुधालय में सीधा कोण समेत बीच में रेखावाला व साफ़ सुथरा होकर निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी नीतिपरायण होकर भय से व्याकुल होताहुआ निरन्तर भिक्षा वृत्ति को करता है ॥ ६७ ॥

३ भोगासुरेखा खलु नीचभागे शाखाद्वयेनापि युता यदा स्यात् ।
सोयं विवादी मनुजो विषादी व्यासक्तचित्तो व्यवसायशाली ॥ ६८ ॥

भोगरेखा यदि निचले भाग में दो शाखाओं से संयुत होकर प्रतीत होवे तो वह

१ त्रिरेखमिति वा पाठः ॥

प्राणी वित्तादी व विषादी होकर विषयों में आसक्त मनवाला होता हुआ रोज़ग
होता है ॥ ९८ ॥

४ भाग्यासुरेखा रविगा विभाति त्वर्धार्धवृत्तेन युता सुशीर्षे ।
दौष्कर्म्यदोषान्मनुजस्तदानीं कारालयं याति करालरूपः ॥ ९९ ॥

भाग्यरेखा यदि गहरी होकर सूर्यालयपर्यन्त चली जावे और यदि शिरोभाग अर्धार्धवृत्त से संयुत होकर प्रतीत होवे तो वह प्राणी बुरे कर्मों के दोष से कराल होता हुआ जेलखाने को जाता है ॥ ९९ ॥

५ भोगासमुत्था गुरुगेहमेति संकर्तिता चेत्खलु कण्ठदेशे ।
सोयं जनो वै भ्रमते विदेशं प्राप्नोति मृत्युं ममतासमेतः ॥ १०० ॥

भोगारेखा से उठी हुई शाखारेखा यदि बृहस्पति के स्थानपर्यन्त चली जावे अ यदि कण्ठभाग में कटी फटीसी प्रतीत होवे तो वह प्राणी विदेश में घूमता है और मम समेत मौत को पाता है ॥ १०० ॥

६ द्विधा विभक्ता खलु शेषभागे सौभाग्यरेखा गुरुगा विभाति ।
प्रवञ्चयित्वा पितरौ स्वकीयौ ह्यनारतं कुप्यति कोपशाली ॥ १ ॥

शेषभाग में दो प्रकार से बटीहुई सौभाग्यरेखा बृहस्पति के स्थान में पहुँचकर यदि हती हो तो वह प्राणी अपने माता पिताओं को अत्यन्त छलकर कोपशाली होताहु सदैव कोपित होता है ॥ १ ॥

७ भाग्या विभिन्ना खलु भोगरेखा कोणं विधत्ते यदि मध्यदेशे ।
वित्ताभिलाषी मनुजो विलासी प्राप्नोति कामं कलयासमेतः ॥ २ ॥

भाग्यरेखा (फेटलाइन) से कटीहुई भोगरेखा यदि मध्यभाग में कोणको बनाती तो वह प्राणी धनाभिलाषी होकर कलासमेत विलासी होताहुआ कामको पाता है॥२

८ मात्रीसुरेखा मिलिता सुपैत्र्यां वृत्तार्धयुक्ता खलु कण्ठदेशे ।
सोयं विदीनो दयिताविहीनो भङ्क्त्वा स्ववाटिं भयतामुपैति ॥ ३ ॥

पैत्रीरेखा में मिलीहुई मात्रीरेखा कण्ठदेशमें अर्धगोलाकार निशान से संयुक्त हो यदि प्रतीत होवे तो वह प्राणी दरिद्री होकर दयिता से विहीन होताहुआ अपनी बाड़ी विनाशकर भयसमूहों को पाता है ॥ ३ ॥

९ भौमालयान्ते सरलं द्विरेखं संवृकणमध्यं यदि भाति चिह्नम् ।
उच्चस्थलाद्वै पतनं जनस्य नो कर्तितं चेन्मरणं प्रयाति ॥ ४ ॥

---

१ "भोगाद्यशाखा गुरुगा विशुद्धा" इति वा पाठः ॥

भौमालय के पास सीधा व दो रेखाओंवाला निशान बीचमें कटाहुआ यदि प्रतीत होवे तो उस प्राणी का ऊंचे से गिरना होता है और यदि पूर्वोक्त निशान बीचमें कटाहुआ नहीं प्रतीत होवे तो वह प्राणी मरणको पाता है यानी गिरकर मरजाता है ॥ ४ ॥

१० पैत्रीसमुत्था मिलिता सुमात्र्यां कोणं विधत्ते विशदस्वरूपम्।
दौर्जन्ययुक्तो मनुजोतिलुब्धो लावण्यहीनो ललनां समेति ॥ ५ ॥

पैत्रीरेखा से उठी व मात्रीरेखा में मिलीहुई रेखा यदि साफ़ सुथरा कोणरूप निशान को बनाती हो तो वह प्राणी दुर्जनता से संयुक्त व सुन्दरता से हीन होता हुआ बड़ालोभी होकर रमणी को पाता है ॥ ५ ॥

११ समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशात्सर्पानुरूपा जननीमुपैति।
विना प्रयासं लभते हि वित्तं विश्वासघाती जनवञ्चकश्च ॥ ६ ॥

मणिबन्ध (कब्ज़े) से उठीहुई सर्पाकार रेखा यदि मातृरेखा के पास पहुँचजावे तो वह प्राणी जनोंका छलनेवाला होकर विश्वासघाती होताहुआ विना परिश्रम धनको पाता है ॥ ६ ॥

१२ मातुःसमीपे विशदस्वरूपा रेखा यदैका भगिनी विभाति।
संलब्धवित्तो मनुजोऽधिकारी दीर्घा यदा चेद्बहुवित्तमेति ॥ ७ ॥

साफ़ सुथरी एक भगिनीरेखा मातृरेखा के पास यदि सोहती हो तो वह प्राणी अधिकारी होकर धनको पाता है और यदि पूर्वोक्त रेखा दीर्घाकार होकर प्रतीत होवे तो वह प्राणी बहुतसा धन पाता है ॥ ७ ॥

१३ पूज्यालयाच्चेच्चलिता[1] सुरेखा चापस्वरूपा[2] शशिजं समेति।
धूर्तस्वभावो मनुजो हि लम्पटो दान्यो वदान्यो ध्वजभङ्गमेति ॥ ८ ॥

बृहस्पति के स्थान से चलीहुई रेखा धनुषाकारवाली होकर यदि बुधालय पर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी धूर्तस्वभाववाला व व्यभिचारी होकर बड़ादाता व बड़ावक्ता होता हुआ ध्वजभङ्गताको पाता है ॥ ८ ॥

१४ मात्रीसमुत्था कुटिला सुपैत्री ह्यधोद्विभिन्ना[3] मणिबन्धमेति।
सोयं जनः स्यात्परिमाणभोजी प्रमाणपायी दयितानुयायी ॥ ९ ॥

मात्रीरेखा से उठीहुई टेढ़ी होकर पैत्रीरेखा यदि निचले भागमें छोटी दो रेखाओं से कटतीहुई मणिबन्ध (कब्ज़े) में समाजावे तो वह प्राणी परिमाणभोजी व परिमाणपायी होकर प्यारी का अनुगामी होताहै ॥ ९ ॥

---

१ बृहस्पतिगेहात् २ धनुषाकृतिः ३ द्वाभ्यां छिन्नेति यावत् ॥

१५ सर्वाङ्गुलीनां द्वितये परुष्के कोणस्वरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
नानार्तियुक्तो मनुजोऽतिदुर्बलो मूर्च्छामयं वै लभतेऽलसाङ्गः ॥ १० ॥

समस्त अँगुलियों की दूसरी पोर में कोणरूपवाला निशान यदि सोहता हो तो प्राणी नानाव्याधियों से संयुक्त होता हुआ बड़ा दुबला व आलसी होकर मूर्च्छारोग पाता है ॥ १० ॥ (देखो चित्र नं० ४८)

अथ त्रयोदशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ इज्यालयाच्चेच्चलिता कुरेखा भित्त्वा सुभोगां समुपैति सौरिम् ।
शीर्षाभिघातं लभते मनुष्यो लावण्यलीलालसितोऽलसाङ्गः ॥ ११ ॥

बृहस्पति के स्थान से चलीहुई एक छोटीसी रेखा सौभाग्य रेखा को काटकर यदि शनैश्चरालय पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी सुन्दरता की लीला से विलसित होताहुआ सुस्तदेहवाला होकर शीशकी पीड़ा को पाता है ॥ ११ ॥

२ भोगाविभुग्ना शनिगा विभाति क्षुद्रा विभिन्ना यदि नीचभागे ।
विसूचिकाक्रान्तवपुर्ज्वरार्तो जम्भायुतो याम्यपदं प्रयाति ॥ १२ ॥

भोगरेखा टेढ़ी होकर शनैश्चर के स्थान में पहुँची व निचले भागमें एक छोटी रेखा से कटती हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी हैज़ेरोगसे ग्रसा शरीरवाला व ज्वर से पीड़ित होकर जँभुवाई लेताहुआ यमालय को जाता है ॥ १२ ॥

३ मात्रीसुरेखा भगिनीसमेता स्वल्पस्वरूपा पितरं समेति ।
तदास्थिभङ्गं लभते नरो वै त्वन्या यदा चेदधिकाङ्गनः स्यात् ॥ १३ ॥

भगिनीसमेत मात्रीरेखा छोटीसी होकर पैत्रीरेखा में समाजावे यानी पैत्रीरेखा में मिलाप करती हो तो वह प्राणी हड्डीटूटनेकी पीड़ाको पाताहै और यदि दूसरी भगिनी रेखा प्रतीत होतीहो तो वह नाना अङ्गनाओंवाला होताहै यानी अनेकानेक रमणियों में रमता है ॥ १३ ॥

४ पैत्रीसमुत्थां शनिगां स्वशीर्षे संयुज्य भाग्या मणिबन्धमेति ।
सोयं मनुष्यः कलहानुरक्तः प्राप्नोति कारां कमलाविहीनः ॥ १४ ॥

अपने शिरोभाग में पैत्रीरेखा से उठी व शन्यालय में पहुँची हुई रेखासे मिलकर भाग्यरेखा मणिबन्ध (कब्ज़े) के पास आजावे तो वह प्राणी लड़ाका होता हुआ लक्ष्मी से विहीन होकर जेलखाने को जाता है ॥ १४ ॥

---

१ अनेकव्याधिपीडितः २ मूर्च्छारोगम् ३ कुरेखा स्वल्परेखेति यावत् ॥

अङ्गुष्ठशाखा यदि सन्तु तिस्रस्तासां सुमध्या खलु कर्तिता चेत् ।
सोयं जनो वैरिगणान्विजित्य सत्यप्रतिज्ञः क्षमतामुपैति ॥ १५ ॥

अँगूठे की शाखायें यदि तीन होवें उन्हींमें से बीचवाली शाखा कटी हुई प्रतीत होवे वह प्राणी सत्यसंकल्पवाला होताहुआ वैरिगणों का विजयकर क्षमाको पाताहै ॥ १५ ॥

समुत्थितं चेन्मणिबन्धदेशाच्चिह्नं द्विरेखं यदि याति चन्द्रम् ।
सोयं नरो मूढतरो नराणां विश्वासघाती वनितारतः स्यात् ॥ १६ ॥

मणिबन्ध (कब्जे) से उठाहुआ दोरेखाओंवाला चिह्न यदि चन्द्रालय में चलाजावे वह प्राणी मनुष्यों के मध्य में महामूर्ख होताहुआ विश्वासघाती होकर वनिता में रहता है ॥ १६ ॥

पैत्री विभुग्ना मणिबन्धमेति शाखाचतुष्केन युता स्वमध्ये ।
सोयं जनः स्यान्निजबन्धुवर्गे विश्वासहीनो विषमस्वभावः ॥ १७ ॥

पैत्रीरेखा टेढ़ी होकर अपने बिचलेभाग में चार शाखाओं से मिलती हुई मणिबन्ध (कब्जे) के पास चलीजावे तो वह प्राणी अपने बन्धुवर्गों में अविश्वासी होताहुआ क-ठिन स्वभाववाला होता है ॥ १७ ॥

वृद्धाङ्गुलेर्वै द्वितये परुष्के तिरोद्विभिन्नं सरलं द्विरेखम् ।
विश्वासराहित्यमुपैति जन्तुर्जाज्वल्यमानः खलु नास्तिकश्च ॥ १८ ॥

अँगूठे की दूसरी पोर में तिरिछी दोरेखाओं से कटाहुआ सीधा दो रेखाओंवाला निशान यदि प्रतीत होता हो तो वह प्राणी कोपसे अतीव जलताहुआ नास्तिक होकर विश्वासहीनता को पाता है ॥ १८ ॥

वृद्धाङ्गुलेर्वै नखतः समुत्थं द्विपर्वगं चेत्सरलं द्विरेखम् ।
विश्वासशाली मनुजो रसाली प्रजासुपाली जनदुःखदाली ॥ १९ ॥

अँगूठेके नाखून से उठा व दूसरी पोरतक गया हुआ सीधा दो रेखाओंवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी विश्वासी व मिष्टभाषी होकर सन्तानों का पालनेवाला होताहुआ जनोंके दुःखों का विदारक होता है ॥ १९ ॥

सुतर्जनी चेद्द्वितये परुष्के धत्ते सकोणं यदि बाहुभिन्नम् ।
सोयं मनुष्यो रसनारसज्ञो रामारतो द्यूतयुतो दयालुः ॥ २० ॥

यदि तर्जनी अँगुलीही दूसरे पोरमें कोण समेत व भुजाभिन्न चिह्नको धारती हो तो वह प्राणी जिह्वाके स्वादका ज्ञाता व दयालु होकर सुन्दरियोंमें रत होताहुआ जुवाड़ी होता है२०॥

११सुमध्यमाया द्वितये परुष्के चिह्नं सकोणं यदि मध्यकोणम् ।
द्युरोदराक्रान्तमना मनुष्यो मान्यो वदान्यो बलतामुपैति ॥ २१ ॥

मध्यमा अँगुलीकी दूसरी पर्वमें कोण समेत व बीच में कोणका रखनेवाला चिह्न यदि प्रतीत होवे तो वह प्राणी जूत्रा खेलने में मनको लगाता हुआ माननीय व बड़ा दानी होकर बलसमूह को पाता है यानी महाबलवान् बना रहता है ॥ २१ ॥

१२ अनामिकाया द्वितये परुष्के चिह्नं सकोणं यदि बाहुभिन्नम् ।
द्यूते रतो वै मनुजो विलासी ह्यानन्दराशी खलु सुद्ध्युपासी ॥ २२ ॥

अनामिका अँगुली की दूसरी पोर में यदि कोणसमेत व भुजाभिन्न होकर चिह्न प्रतीत होवे तो वह प्राणी जुवाड़ी होकर भोगी व आनन्दकी राशि होताहुआ विद्वानों का उपासक होता है ॥ २२ ॥

१३कनिष्ठिकाया द्वितये परुष्के चिह्नं सकोणं यदि मध्यकोणम् ।
सोयं नरो द्यूतपरोऽप्युदारो ह्याप्नोति शङ्कां निजजीवनेप्सुः ॥ २३ ॥

कनिष्ठा अँगुली की दूसरी पोर में कोणसमेत व बीच में कोणका रखनेवाला चिह्न यदि प्रतीयमान होता हो तो वह प्राणी जूवा खेलताहुआ उदार व अपने जीवन में अभिलाषावान् होकर सन्देह को पाता है ॥ २३ ॥ (देखो चित्र नं० ४९)

अथ दशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ पैत्री विभुग्ना मणिबन्धमेति वृत्तार्धयुक्ता खलु चोर्ध्वभागे ।
श्वासादिरोगान्मृतिमेति मर्त्यो न्यूना यदा चेद्वयसोऽनुमानात् ॥ २४ ॥

यदि पैत्रीरेखा टेढ़ी होकर मणिबन्ध (कब्ज़े) के समीप चली जावे और यदि ऊपर भाग में वृत्तार्धसे संयुक्त होकर प्रतीत होवे तो वह प्राणी श्वासरोग व क्रमिरोग आदि से मौतको पाताहै और यदि पूर्वोक्त रेखा स्वल्परूप होकर सोहती हो तो वह अवस्था अनुमान से मौतको पाता है ॥ २४ ॥

२ पैत्रीसमीपाच्चलितं सरेखं वेत्रस्वरूपं शशिजं समेति ।
सोयं नरो मूढतरो बलीयान् वामाजितो वै भ्रमते विदेशम् ॥ २५ ॥

पैत्रीरेखा के निकटदेश से चलाहुआ रेखा समेत बेत के समान प्रकाशमान निशान बुधालयपर्यन्त चलाजावे तो वह प्राणी महामूर्ख व बड़ा बलवान् होकर वनिता से पराजित होताहुआ विदेश में घूमता है ॥ २५ ॥

३ चन्द्रालयाच्चेच्चलितं द्विरेखं भित्त्वा सुमात्रीं गुरुमभ्युपैति ।
सोयं सुभाग्यो मनुजो मनस्वी धन्यो यदा चेन्मणिबन्धसंस्थम् ॥ २६ ॥

चन्द्रालय से चलाहुआ दो रेखाओंवाला निशान यदि मात्रीरेखा को काटकर बृहस्पति
स्थानके सामने पहुँच जावे तो वह प्राणी बड़ाभाग्यशाली होताहुआ मनमौजी होता है
ौर यदि पूर्वोक्त चिह्न कब्ज़े के पास टिकाहुआ प्रतीत होता हो तो वह प्राणी धन्य
ोता है ॥ २६ ॥

समुत्थितं चेन्मणिबन्धदेशाच्चिह्नं द्विरेखं बुधमभ्युपैति ।
गाम्भीर्यशाली गणको गरिष्ठो ज्येष्ठो वरिष्ठो जनतामुपैति ॥ २७ ॥

मणिबन्ध (कब्ज़े) से उठाहुआ दो रेखाओंवाला निशान यदि बुधालयपर्यन्त
लाजावे तो वह प्राणी गाम्भीर्यशाली, ज्योतिर्वेत्ता, गरिष्ठ, ज्येष्ठ व श्रेष्ठ होताहुआ
नसमूह को पाता है ॥ २७ ॥

शेषे सुभागे खलु मातृकाया मध्ये विभिन्नं यदि भाति सार्प्यम् ।
आत्माभिमानी पुरुषोऽतिलुब्धो मन्दो मलाढ्यो मदनातुरश्च ॥ २८ ॥

मातृरेखा के शेषभाग में यदि बीच में कटाहुआ सर्पाकार निशान प्रतीत होता हो तो
ह प्राणी आत्माभिमानी, बड़ालोभी, मूर्ख व मलिनस्वभाववाला होताहुआ काम से
याकुल रहता है ॥ २८ ॥

मात्रीसमीपे विशदं विभाति सर्पानुरूपं यदि युग्मचिह्नम् ।
सोयं नरो मज्जति वारिवाहे मध्ये वयस्के सुखतामुपैति ॥ २९ ॥

मात्रीरेखा के समीपवर्ती साफ़ सुथरे सर्पसमान आकारवाले दो निशान यदि सोहते
ं तो वह प्राणी जल में डूबता है और मध्यावस्था में घने सुखको पाता है ॥ २९ ॥

सुमध्यमायास्तृतये परुष्के चिह्नं त्रिशूलं वृजिनं विभाति ।
श्वासावरोधात्खलु पाशतो वा प्राप्नोति मृत्युं भुवि चौरमुख्यः ॥ ३० ॥

मध्यमा अँगुली की तीसरी पर्वमें त्रिशूल का चिह्न टेढ़ा होकर यदि सोहता हो तो वह
ाणी पृथ्वीमण्डल में मुखिया चोर होकर श्वासारोध या फांसी से मौतको पाता है ॥ ३० ॥

अनामिकायास्तृतये परुष्के संमध्यगोलं वृजिनैकरेखम् ।
सोयं नरश्चौरवरोऽतिलम्पटो विसंकटो वै विकटो नराणाम् ॥ ३१ ॥

अनामिका अँगुलीकी तीसरी पर्वमें टिकाहुआ बीचमें गोलाकार व तिरीछी एकरेखा
ला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी चोरोंमें मुखिया होकर व्यभिचारी व मनुष्यों
विकट होताहुआ घने संकटवाला होता है ॥ ३१ ॥

सौम्यालयाच्चेच्चलिता गभीरा भोगा सुरेखा गुरुगा विभाति ।

जैवातृकोयं मनुजो जवाढ्यो ह्याप्नोति नित्यं ललनासुभोगम् ॥ ३

यदि बुधालय से चलीहुई गहरी होकर भोगरेखा बृहस्पति के स्थानपर्यन्त सोहती तो वह प्राणी वेगवान् होकर दीर्घजीवी होताहुआ नित्यही रमणियोंमें भोगको पाता है।

१०चन्द्रालयाच्चेच्चलिता विभुग्ना मात्रीसुरेखा पितरं परैति ।
सोयं मनुष्यो निजवप्रजातो मान्यो वदान्यो विभुतामुपैति ॥ ३३

चन्द्रालय से चलीहुई टेढ़ी होकर मातृरेखा यदि पितृरेखा से मिलाप करती होते प्राणी अपने पितासे जन्माहुआ मान्य व वदान्य (वक्ता) होकर विभुताको पाता है ॥

(देखो चित्र नं० ५०)

अथैकादशलक्षणाङ्कितकरतलफलमाह—

१ सौम्यालये चेद्विशदं विशालं यवानुरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
नैजे कुटुम्बे कुरुते विवाहं त्वन्यालये चेत्फलमुक्तमेव ॥ ३४ ॥

बुधालय में साफ़ सुथरा व विशालरूप यवके आकारवाला निशान यदि सोहत तो वह प्राणी अपने कुटुम्ब या बन्धुगणों में ब्याहको करता है और यदि अन्य य होतो भी कहाहुआ ही फल होता है ॥ ३४ ॥

२ समुष्टिका चेत्करवालरूपा भोगा सुरेखा गुरुगा विभाति ।
सोयं ह्यगम्यागमनं करोति चेत्थं सुपैत्री तु फलं तदेव ॥ ३५ ॥

मुठिया समेत तरवार के समान आकारवाली होकर भोगरेखा बृहस्पति के स्था पहुँची हुई यदि सोहती हो तो वह प्राणी मौसी, चाची, दादी, बेटी व बहू आदिक गमन करता है और यदि ऐसेही पैत्रीरेखाभी प्रतीत होवे तो भी अगम्यागमन करता है ॥

३ भाग्या सशाखा शनिगा विभाति वृत्तेन युक्ता खलु नीचभागे ।
नीचाङ्गनां वै भजते मनुष्यो वाप्री यदीत्थन्तु फलं तदेव ॥ ३६ ॥

भाग्यारेखा (फ़ैटलाइन) शनैश्चर के स्थान में पहुँची व निचलेभाग में शाखा वृत्ताकार निशान से संयुक्त होतीहुई यदि प्रतीत होवे तो वह प्राणी नीचरमणी को से है और यदि ऐसेही पैत्रीरेखा भी प्रतीत होवे तो भी पूर्वोक्त फल होता है ॥ ३६ ॥

४ अङ्गुष्ठमूले विशदस्वरूपं वेदाङ्कतुल्यं यदि भाति भिन्नम् ।
संतापशाली मनुजो विशोकी दीर्घं यदा चेद्बहुशोकमेति ॥ ३७ ॥

---

१ जैवातृकः स्यादायुष्मान् ॥

अँगूठेकी मूल में शुद्धरूपधार चारअङ्क के समान भिन्न होकर निशान यदि प्रतीत होता हो तो वह प्राणी विशोकी होकर सन्तापशाली होता है और यदि पूर्वोक्त चिह्न लम्बायमान होकर प्रतीत होवे तो घने शोक को पाता है ॥ ३७ ॥

५ अङ्गुष्ठशाखा यदि सन्तु तिस्रो वृत्तार्धयुक्ता प्रथमा हि तासाम् ।
लोके भ्रमन्वै मनुजस्तदानीमुद्वाह्य पत्नीं पितरं समेति ॥ ३८ ॥

अँगूठेकी शाखायें तीन हों उन्हों में से पहली शाखा अर्धवृत्ताकार से युक्त होती हुई यदि प्रतीत होवे तो वह प्राणी लोक में भ्रमण करताहुआ विजातीय रमणी के साथ व्याहकर पिताके पास पहुँचता है ॥ ३८ ॥

६ मात्रीसमीपे सरलं त्रिरेखं रेखाचतुष्कैस्तु तिरोविभिन्नम् ।
सोयं नरो मज्जति वारिवाहे प्राप्नोति मृत्युं मदनातुरश्च ॥ ३९ ॥

मात्रीरेखा के पास सीधा तीनरेखाओंवाला व तिरीछी चाररेखाओं से कटाहुआ निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी जल में डूबजाता है और कामातुर होकर मौतको पाता है ॥ ३९ ॥

७ रेखाचतुष्कं सरलं विभाति रेखाचतुष्कैस्तु तिरोविभिन्नम् ।
सोयं निमग्नो हि जलप्रवाहे नानार्तियुक्तो मरणं प्रयाति ॥ ४० ॥

चन्द्रालय के समीप सीधा चाररेखाओंवाला व तिरीछी चाररेखाओं से कटाहुआ निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी जलमें डूबा व अनेकानेक व्याधियों से घिरा हुआ मरण को पाता है ॥ ४० ॥

८ चिह्नं यदा चेन्मणिबन्धसंस्थं तिर्यक्त्रिभिन्नं सरलं त्रिरेखम् ।
सोयं जनो वै पतितो जलौघे जायाजितो याम्यपदं प्रयाति ॥ ४१ ॥

मणिबन्ध (कब्ज़े) में टिका व तिरीछा तीन रेखाओं से कटाहुआ सीधा तीन रेखाओं वाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी भार्या से पराजित होकर जलसमूह में गिराहुआ यमालय को जाता है ॥ ४१ ॥

९ कनिष्ठिकायाः प्रथमे परुष्के समद्विकोणं यदि भाति चिह्नम् ।
चौर्याभियोगे लभते हि शास्तिं न मन्यते ना निजदोषजालम् ॥ ४२ ॥

कनिष्ठा अँगुली की पहली पर्वमें समद्विकोणवाला निशान यदि सोहता हो तो वह प्राणी चोरी के मुक़दमा में सज़ा को पाता है परन्तु वह अपने दोषजालको नहीं मानता है ॥ ४२ ॥

---

१ चन्द्रालये इति शेषः ॥

१० चन्द्रालयाच्चेच्चलिता सुमात्री संयुज्य पैत्रीं कुजमभ्युपैति ।
भ्रात्रा युतो वै मनुजो धनाढ्यो धन्यो धरायां धरया समेतः ॥ ४३

यदि चन्द्रालय से चलीहुई मात्रीरेखा पैत्रीरेखा से मिलापकर मङ्गलालय में प्र
गई हो तो वह प्राणी धरा समेत व भाई से संयुत होकर धनाढ्य होताहुआ पृथ्वीमण्ड
में धन्य होता है ॥ ४३ ॥

११ मात्रीसमुत्था कुटिला सुपैत्री संवृत्तकण्ठा मणिबन्धमेति ।
सोयं मनुष्यो वनितावियुक्तो रामे रतो रामपदं प्रयाति ॥ ४४ ॥

मात्रीरेखा से उठी व टेढ़ी होकर पैत्रीरेखा कण्ठमें वृत्ताकार निशान को धारती
यदि मणिबन्ध के पास चली जावे तो वह प्राणी रमणी से वियोगी होकर राममें पराय
होताहुआ रामालय को जाता है ॥ ४४ ॥ (देखो चित्र नं० ५१)

अथ अंग्रेज़िमतानुसाराज्जन्मवारमासादिज्ञानमाह—

सुतर्जनी निम्नतलाच्चलन्ती रेखा गभीरा मणिबन्धमेति ।
तां वै सुपैत्रीं प्रवदन्ति सन्तो ह्यायुष्यरेखां कथयन्ति केपि ॥ ४५ ॥

तर्जनी अँगुली के निचले भागसे चली हुई गहरी रेखा यदि मणिबन्ध के पास पहुँ
जावे तो उसको पण्डितों ने पैत्रीरेखा कहा है और कितेक इंगलिशवेत्ता विद्वानलो
आयुष्य रेखा (लाइफ़लाइन) भी कहते हैं ॥ ४५ ॥

तन्निम्नदेशाच्चलिता गभीरा रेखा यदा चन्द्रमसं प्रयाति ।
तां मातृकां वै प्रवदन्ति प्राज्ञा विज्ञा महान्तो नितरामुदाराः ॥ ४६ ॥

पैत्रीरेखा के निचले देश से गहरी रेखा यदि चन्द्रालयपर्यन्त चली जावे तो उ
रेखा को अतीव उदार व बड़े प्राज्ञ विज्ञलोगों ने मातृरेखा (हेडलाइन) कहाहै ॥ ४६

एषा सुरेखा खलु दर्शनीया कुत्र स्थले वै गमनं करोति ।
तदन्तिके चेत्कति सन्ति वज्राश्छिन्ना न भिन्ना बहुरेखिकाभिः ॥ ४७ ॥

निश्चयकर यह मातृरेखा किस स्थल में गमन करती है और उसके समीपवर्ती कित
से वज्राकार चिह्न प्रतीत होते हैं और यदि वे बहुतसी रेखाओं से छिन्न व भिन्न होक
प्रतीत न होवें तो वक्ष्यमाण जन्म वारादि कहना चाहिये ॥ ४७ ॥

रेखास्वरूपं सकलं विचार्य ध्यात्वा सुदेवं गणपं गुरुं च ।
वारं वदेद्वै जनुषो विपश्चिद्ब्रूयात्सुमासं तु तथा तिथींश्च ॥ ४८ ॥

---

१ गोत्राकुः पृथिवी पृथ्वीत्यमरः । कुःपृथ्वी ततो जातं भौममिति यावत् २ तदं
मिति वा पाठः ॥

देवाधिप गणनायक और गुरुदेव का ध्यानधर व रेखाका सारारूप विचार कर विद्वान् को वार, महीना व तिथि या तारीख को बताना चाहिये ॥ ४८ ॥

पैत्रीसमुत्था विशदा गभीरा मात्री सुरेखा शशिनं समेति ।
तत्रस्थले चेत्खलु चैकवज्रं ज्येष्ठं सजूनं प्रवदेत्ससोमम् ॥ ४९ ॥

पैत्रीरेखा से उठी व साफ़ सुथरी व गहरी होकर मात्रीरेखा यदि चन्द्रालयपर्यन्त चलीगई हो और यदि उसी स्थान में एकला वज्राकार निशान प्रतीयमान होता हो तो ज्येष्ठमास वा चन्द्रवार समेत जूनमास कहना चाहिये ॥ ४९ ॥

वज्रैकचिह्ने विशदे प्रयाते दिनानि ब्रूयाद्दशसंख्यकानि ।
वज्रद्वये चेत्खलु विंशकानि वज्रत्रये स्युः सति त्रिंशकानि ॥ ५० ॥

यदि शुद्धरूप होकर एकही वज्राकार चिह्न प्रतीत होता हो तो दश दिन व दो वज्र हों तो वीस दिन व तीन वज्र हों तो तीस दिन कहना चाहिये ॥ ५० ॥

मात्रीसुरेखा विशदा गभीरा भौमालयं चेद्व्रजते यदानीम् ।
आक्टूबरं चैव तथा सुमार्चं ब्रूयात्सुमासं सह भौमवारम् ॥ ५१ ॥

यदि मात्रीरेखा साफ़ सुथरी व गहरी होकर मङ्गलालय पर्यन्त चलीजावे तो भौमवार समेत आक्टूबर या मार्च मास कहना चाहिये ॥ ५१ ॥

सौम्यालयान्तं यदि याति मात्री रेखा गभीरा विशदस्वरूपा ।
आगस्टमासं सबुधं मयं वा ब्रूयान्न वज्राः खलु चेद्विभिन्नाः ॥ ५२ ॥

साफ़ सुथरी व गहरी होकर माताकी रेखा यदि बुधालय पर्यन्त चलीजावे और यदि वज्राकार चिह्न भिन्न होकर नहीं प्रतीत होवें तो बुधवार समेत आगस्टमास या मई मास कहना चाहिये ॥ ५२ ॥

मात्रीसुरेखा विशदाऽविभिन्ना गंभीररूपा धिषणं प्रयाति ।
नवम्बरं वा खलु फ़ेब्रुआरिं बृहस्पतिं वारमुदाहरन्ति ॥ ५३ ॥

यदि मात्रीरेखा साफ़ सुथरी व गहरी होकर अन्यरेखाओं से नहीं कटती हुई बृहस्पति के स्थानपर्यन्त पहुँचजावे तो आचार्यलोग गुरुवार समेत नवम्बर मास या फ़रवरी मास कहते हैं ॥ ५३ ॥

रेखा जनन्या विशदस्वरूपा शुक्रालयं याति गभीररूपा ।
एप्रेलमासं भृगुवासराढ्यं सेप्टेम्बरं वा प्रवदन्ति विज्ञाः ॥ ५४ ॥

---

१ बृहस्पतिं २ शुक्रवारसंयुक्तम् ॥

माताकी रेखा साफ़ सुथरी व गहरी होकर यदि शुक्रालय पर्यन्त चलीजावे तो शु
वार समेत अपरैल मास या सितम्बरमास पण्डितों ने कहा है ॥ ५४ ॥

धात्रीसुरेखा धवलस्वरूपा मन्दालयस्याभिमुखं प्रयाति ।
डिसेम्बरं वा खलु जानुवारिं सूरात्मजं वै कथयन्ति धन्नम् ॥ ५५ ॥

यदि मात्रीरेखा निर्मलरूप होकर शन्यालय पर्यन्त चलीजावे तो शनिवार समे
दिसम्बर या जनवरी मास कहते हैं ॥ ५५ ॥

मात्रीसुरेखा विशदस्वरूपा सूरालयस्याभिमुखं प्रयाति ।
जौलाइमासं रविवासराढ्यं वदन्ति विज्ञा वदतां वरेण्याः ॥ ५६ ॥

यदि मात्रीरेखा उज्ज्वलरूप होकर सूर्यालय के सामने आकर प्राप्त होजावे तो क
वालों में प्रधान होकर विज्ञलोगों ने रविवार समेत जुलाईमास कहा है ॥ ५६ ॥

मासद्वयं चेत्कथितं तु यत्र कथं विचार्यं विदुषा च तत्र ।
एषा सुरेखा विशदा यदा स्यादाद्यो हि मासो भणितः सुधीभिः ॥ ५७

जिस स्थान में दोमास कहे गये हों वहांपर विद्वानों को कैसे विचार करना चाहिये
कहते हैं कि यदि यह पूर्वोक्त मात्रीरेखा उज्ज्वलरूप होकर प्रतीत हो तो पण्डितों
पहिलामास कहा है ॥ ५७ ॥

रेखा सुमात्री मलिना यदा चेन्मासो द्वितीयो विदुषा विचार्यः ।
एषा यदा चन्द्रमसं प्रयाति मातुः स्वरूपं लभते हि प्राणी ॥ ५८ ॥

यदि मात्रीरेखा मैली होकर प्रतीत होवे तो पण्डितों को दूसरा मास कहना चाहि
और यदि यह पूर्वोक्त मात्रीरेखा चन्द्रालयपर्यन्त चलीजावें तो वह प्राणी माता का स्
रूप पाता है ॥ ५८ ॥

रक्ता सुमात्री धवलस्वरूपा रेखा गभीरा समुपैति सूरम् ।
वप्रस्वरूपं भजते हि जन्तुर्जाज्वल्यमानो जडताविहीनः ॥ ५९ ॥

यदि मात्रीरेखा लाली व उजली होकर गहरी होती हुई सूर्यालय पर्यन्त च
जावे तो वह प्राणी जड़ता से विहीन होकर निजतेज से प्रकाशमान होता हुआ पित
रूप पाता है ॥ ५९ ॥

तिस्रः सुरेखा मणिबन्ध संस्था एकैकशश्चेत्खलु त्रिंशदब्दम् ।
वयःक्रमं वै मुनयो वदन्ति संकर्तिताश्चेत्खलु चोनत्रिंशत् ॥ ६० ॥

---

१ शन्यालयाभिमुखम् २ सूर्यालयस्य ॥

मणिबन्ध (कब्जे) में टिकी हुई जो तीन रेखायें प्रतीयमान होती हैं उन्होंमें से त्येक रेखा का वयःक्रम मुनियों ने तीस तीस वर्ष का कहा है और यदि पूर्वोक्त तीनों खायें कटी हुई प्रतीत होवें तो उनतीस वर्षका वयःक्रम जानना चाहिये ॥ ६० ॥

अथ महाराष्ट्राणां मते करतलफलमाह—

सुकोमलं पाणितलं च यस्य नरो भवेत्कामिजनप्रधानः ।
कलाप्रवीणः कलहेन हीनः कान्ताविलासी कमनीयकायः ॥ १ ॥

कोमल हथेली

जिसकी हथेली बहुतही कोमलसी प्रतीत हो तो वह प्राणी कामी जनों में मुख्य, लाओं में चतुर व कलह (लड़ाई) से हीन होकर कान्ताविलासी होता हुआ न्दर शरीरवाला होता है ॥ १ ॥

कठोरकं पाणितलं च यस्य नरो भवेत्कार्यकरो बलाढ्यः ।
परिश्रमासक्तमना मनस्वी मन्दो मदार्तो ममतासमेतः ॥ २ ॥

कड़ी हथेली

जिसका हस्ततल कठोरसा प्रतीत होता हो तो वह प्राणी कार्यकारी व बलवान् होकर रिश्रम में मनको लगाये हुए मनमौजी व मूर्ख तथा मदार्त होता हुआ ममता से संपन्न ोता है ॥ २ ॥

यदा महत्योङ्गुलयो हि सन्ति मनुष्यपाणेस्तु तलात्तदानीम् ।
सोयं जनः शिल्परतः कलाढ्यः कुशाग्रबुद्धिः कृतकृत्यकः स्यात् ॥ ३ ॥

जिस मनुष्य की हथेली से जब अँगुलियां बड़ीसी प्रतीत होती हों तो वह प्राणी कारी- री में रत व कलाओं से युक्त होकर कुशाग्रबुद्धिवाला होता हुआ कृतकृत्य कहलाताहै ॥३॥

मनुष्यपाणेस्तु तलाद्यदानीं करस्य शाखाः खलु सन्ति ह्रस्वाः ।
सोयं नरः संसृतिलाभकारी बाल्ये स्ववृत्तं नितरां प्रवेत्ति ॥ ४ ॥

यदि मनुष्य के करतल से अँगुलियां छोटीसी प्रतीत होवें तो वह प्राणी दुनिया का ाभ उठाता है और बाल्यावस्था में ही अपनी हालत को समझता है ॥ ४ ॥

संक्षेपतः सप्तविधा हि सन्ति नारीनराणां कथिताः[1] कराश्च ।
आद्यो हि मुख्यो मुनिसम्मतोपि तथा द्वितीयः श्रुतिकोणयुक्तः ॥ ५ ॥

स्त्री पुरुषों के हाथ संक्षेप से सात प्रकार के कहे हैं उनमें से पहला मुख्य कहाजाता कि जिसको मुनियों ने माना है उसी प्रकार दूसरा चौकोण कहलाता है ॥ ५ ॥

वक्रस्तृतीयो भणितो हि शास्त्रे कोटीस्वरूपः कथितश्चतुर्थः ।

---

१ गदिताः शयाश्चेत्यपि पाठः ॥

कोणस्वरूपः शरसंमितश्च ज्यौतिष्यरूपः खलु षष्ठकोयम् ॥ ६ ॥

सामुद्रिकशास्त्र में तीसरा टेढ़ेरूपवाला कहाता है चौथा नोकीला कहलाता है पां कोनीला और छठा ज्यौतिष्यरूप कहा है ॥ ६ ॥

प्रोक्तः पुराणैः खलु सप्तमश्च मिश्रस्वरूपो मिलिताङ्गुलीकः ।
आरक्तवर्णो मृदुतासमेतो सौमांसलो लोमशवृन्दहीनः ॥ ७ ॥

मिश्रस्वरूप,मिली अँगुलियोंवाला सातवां हाथ पुरातन पण्डितों ने कहा है जोकि कु लालवर्ण व कोमलतासमेत होकर बड़ा मांसल होता हुआ लोमसमूहों से हीन होताहै ॥

१ स्थौल्येन युक्तो दृढतासमेतो वृद्धाङ्गुलीको यदि भाति पाणिः ।
सोयं नरः शूरतरः सुधीरः प्रोक्तो हि मल्लो विदितो धरायाम् ॥ ८ ॥

यदि मोटा—मजबूत बड़ी अँगुलीवाला हाथ सोहता हो तो वह प्राणी बड़ा सूरमा सुधीर होकर धरामण्डल में विख्यात होता हुआ मल्ल (पहलवान) कहलाता है ॥ ८

२ गोलाङ्गुलीको मनुजस्य यस्य विभाति पाणिर्मृदुतासमेतः ।
सोयं जनः शुद्धतरस्वभावो भेदस्य वेत्ता खलु गुप्तकस्य ॥ ९ ॥

जिस मनुष्य का हाथ कोमलता समेत गोल अँगुलीवाला होता है तो वह प्रा सीधे स्वभाववाला होकर गुप्तभेद का ज्ञाता होता है ॥ ९ ॥

गोलाङ्गुलीको यदि नास्ति पाणिः पारुष्ययुक्तो मनुजस्तदानीम् ।
कामी कलावान्कलहेन युक्तो मन्दो मलाढ्यो ममताविहीनः ॥ १०

यदि गोल अँगुलीवाला हाथ न हो तो वह प्राणी कठोर,कामी, कलावान् व कल तथा मन्द व मलाढ्य होकर ममता से विहीन होताहै ॥ १० ॥

३ वक्राङ्गुलीको यदि भाति पाणिश्चारक्तवर्णो मलिनः कठोरः ।
परिश्रमासक्तमना मनुष्यस्त्वारामसक्तो रमया समेतः ॥ ११ ॥

यदि कुछेक लालवर्ण, मैला, कठोर होकर टेढ़ी अँगुलीवाला हाथ सोहता हो तो प्राणी मेहनती, आरामतलब व लक्ष्मीवान् होता है ॥ ११ ॥

पांलीस्वरूपो यदि भाति पाणिः प्रीत्यायुतो दिव्यतनुर्दयालुः ।
नानांशुकालंकरणैः समेतो मानी महौजा मदनातुरश्च ॥ १२ ॥

यदि नोकीला हाथ सोहता हो तो वह प्राणी प्रीतिमान्, दिव्यशरीरी, दयाव अनेक वस्त्र व अलंकारोंवाला, मानी व महाबलवान् होकर कामी होताहै ॥ १२ ॥

---

१ कोनिस्वरूपः २ कामातुरः ॥

कोणस्वरूपो यदि भाति पाणिः प्रसन्नताहीनवपुर्मनुष्यः।
धनाभिलाषी भ्रमतेप्यजस्रं भ्रान्तो भयार्तो धनतामुपैति ॥ १३ ॥

यदि कोनीला हाथ सोहता हो तो वह प्राणी प्रसन्नता से हीनतनुवाला होकर धना-भिलाषी होताहुआ निरन्तर घूमताहै और भ्रान्त व भयार्त होकर धनसमूहोंको पाताहै ॥ १३ ॥

ज्यौतिष्यरूपो मनुजस्य यस्य विभाति पाणिः खलु शुद्धरूपः।
सोयं नरः स्यान्निगमागमज्ञः सत्यप्रवक्ता निजदेवभक्तः ॥ १४ ॥

जिस प्राणी का हाथ शुद्धरूप व ज्यौतिष्य रूपवाला होकर सोहता हो तो वह मनुष्य द व शास्त्र का ज्ञाता व सत्यवक्ता होकर अपने इष्टदेव का भक्त होता है ॥ १४ ॥

मिश्राङ्गुलीको मलताविहीनो विभाति पाणिः पुरुषस्य यस्य।
सोयं मनुष्यो धनतासमेतो विपत्तिमल्पां लभते कदापि ॥ १५ ॥

जिस पुरुष का हाथ मलसमूहों से हीन व मिली अँगुलीवाला होकर सोहता हो तो ह प्राणी धनसमूहोंसे संपन्न होताहुआ किसी समय थोड़ीसी विपदाको पाताहै ॥ १५ ॥

नखफलान्याह–

लम्बायमानानि तथायतानि संरक्तवर्णानि नखानि यस्य।
सोयं जनः स्यात्कविवृन्दमुख्यः साँव्वत्सरो वेदविदां वरेण्यः ॥ १६ ॥

जिसके नख लम्बे व चौड़े होकर लालवर्णवाले प्रतीत हों तो वह प्राणी कविसमूहों प्रधान होकर ज्योतिःशास्त्र का ज्ञाता होताहुआ वेदवेत्ताओं में श्रेष्ठ होताहै ॥ १६ ॥

वक्रस्वरूपाणि नखानि सन्ति दीर्घायमाणानि जनस्य यस्य।
सोयं नरो वक्रतरस्वभावो वेश्याप्रसक्तो वनिताविहीनः ॥ १७ ॥

जिस जन के नख टेढ़े व लम्बे होकर प्रतीत हों तो वह प्राणी टेढ़ेस्वभाववाला व श्यागामी होकर रमणी से विहीन होता है ॥ १७ ॥

स्वल्पस्वरूपा मनुजस्य यस्य आपीतवर्णाश्च पुनर्भवाः स्युः।
सोयं जनः स्यात्सभिको हि धूर्तो मिथ्याप्रभाषी ममतासमेतः ॥ १८ ॥

पीला नख

जिस मनुष्य के छोटे व पीलेसे नख प्रतीत होते हों तो वह प्राणी फड़बाज़ या दग़ा-ज़, छलछन्दी और झूठा होकर ममतासे सम्पन्न होता है ॥ १८ ॥

श्यामायमाना नखरा हि सन्ति क्षुद्रस्वरूपाः पुरुषस्य यस्य।
धूर्तस्वभावो मनुजस्तदानीं व्याजेन युक्तो विदितो धरायाम् ॥ १९ ॥

१ "प्रसादस्तु प्रसन्नता" (इत्यमरः) ॥

जिस पुरुषके नख काले व छोटेसे प्रतीत होते हों तो वह प्राणी धूर्तस्वभाव व ... होकर पृथ्वीतल में प्रख्यात होता है ॥ १९ ॥

पुनर्भवाश्चेच्चिपिटा हि यस्य श्यामायमानाः पृथुताविहीनाः ।
सोयं मनुष्यश्छलतासमेतो निर्लज्जरूपो नितरां विलासी ॥ २० ॥

जिसके नख चौड़ाई से विहीन व काले वर्णवाले होकर चपटेसे प्रतीत होतेहों वह प्राणी छली व निर्लज्जरूप होकर बड़ाभोगी होता है ॥ २० ॥

लम्बायमानानि तथा सितानि नखानि शुद्धानि भवन्ति यस्य ।
सोयं नरः स्यादुपकारकारी मान्यो वदान्योऽवनिराजवन्द्यः ॥ २१ ॥

जिसके नख लम्बे, सफ़ेद होकर स्वच्छता से प्रतीत होते हों तो वह प्राणी उपका... मान्य और वदान्य होकर राजाओं से वन्दनीय होता है ॥ २१ ॥

आरक्तवर्णा नखरा यदानीं भवन्ति कार्श्या मनुजस्य यस्य ।
व्युत्पन्नबुद्धिश्चपलः कृशाङ्गो व्याख्याकरः स्यादुपदेशकारी ॥ २२ ॥

जिस मनुष्य के नख पतले व रक्तवर्णवाले प्रतीत होतेहों तो वह प्राणी व्यु... बुद्धिवाला व चलते पुर्जेवाला व दुबला होकर व्याख्याकारी होताहुआ उपदे... कहाता है ॥ २२ ॥

गोलस्वरूपा नखरा हि सन्ति श्वेतेन[१] हीनां मनुजस्य यस्य ।
चिन्तासमूहेन युतो मनुष्यो धनाभिलाषी भ्रमते भयार्तः ॥ २३ ॥

जिस पुरुष के नख सफ़ेद होकर गोलाकारसे प्रतीत होते हों तो वह मनुष्य चि... समूहों से घिराहुआ व धनाभिलाषी होकर डरसे डरताहुआ घूमाकरता है ॥ २३ ॥

नखस्थचिह्नफलमाह—

वृद्धाङ्गुलेश्चेन्नखरोपरिस्थं विभाति चिह्नं धवलस्वरूपम् ।
प्रेमी मनुष्यो रमणीसमेतो धन्यो धरायां धनतामुपैति ॥ २४ ॥

यदि अँगूठे के नख पर टिकाहुआ सफ़ेद निशान सोहता हो तो वह प्राणी प्रेमी, ... परायण व धरामण्डल में धन्य होकर धनसमूहों को पाता है ॥ २४ ॥

वृद्धाङ्गुलेश्चेन्नखरोपरिस्थं श्यामायमानं यदि भाति चिह्नम् ।
सोयं जनो मन्दमतिर्महौजा मानेन हीनो ममतां प्रयाति ॥ २५ ॥

---

१ श्वेतेन युक्ताः—सपाटलाभा वेत्यपि पाठः ॥

यदि अँगूठे के नखपर टिकाहुआ काला निशान प्रतीत होता हो तो वह प्राणी मन्द-मति, महाबलवान् व मानहीन होकर ममताको पाता है ॥ २५ ॥

आद्याङ्गुलेश्चेन्नखरोपरिस्थं श्वेतस्वरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
सम्पत्समूहं लभते नितान्तं श्यामे तु चिह्ने धनहानिमेति ॥ २६ ॥

यदि तर्जनी अँगुली के नखपर टिका हुआ सफ़ेदसा कोई दाग़ देख पड़ता हो तो वह प्राणी बड़ी दौलत को पाता है और यदि वह निशान कालासा भासता हो तो वह प्राणी धनहानि को पाता है ॥ २६ ॥

मध्याङ्गुलेश्चेन्नखरोपरिस्थं गौरस्वरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
सांयात्रिकःस्यान्मनुजस्तदानीमाकस्मिकं मृत्युमुपैति नीले ॥ २७ ॥

यदि मध्यमा अँगुली के नखपर टिका हुआ सफ़ेद निशान प्रतीत होता हो तो वह प्राणी जहाज़ी होता है और यदि वह निशान काला दीखता हो तो वह मनुष्य अचानक मौत को पाता है ॥ २७ ॥

अनामिकाया नखरोपरिस्थं चिह्नं यदानीमवदातरूपम् ।
कीर्तिं च वित्तं लभते नितान्तं श्यामायमाने त्वपकीर्तिमेति ॥ २८ ॥

यदि अनामिका अँगुली के नखपर टिका हुआ सफ़ेद दाग़ देख पड़ता हो तो वह प्राणी नामवरी व बड़ी दौलत को पाता है और यदि काला निशान भासता हो तो वह बुराई को पाता है ॥ २८ ॥

कनिष्ठिकाया नखरोपरिस्थं शुक्लस्वरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
सांवँत्सरः कीर्तियुतो धनाढ्यो व्यापारवृंन्दाद्बहुवृद्धिमेति ॥ २९ ॥

यदि कनिष्ठिका अँगुली के नखपर टिका हुआ सफ़ेद निशान सोहता हो तो वह प्राणी ज्योतिषी, कीर्तिमान्, धनवान् होकर व्यापारसमूहों से घनी वृद्धिको पाता है ॥२९॥

श्यामायमानं यदि भाति चिह्नं पीतस्वरूपं यदि वा विभाति ।
सोयं नरो व्याधिपरो नितान्तमल्पे वयस्के मरणं प्रयाति ॥ ३० ॥

यदि कनीनिका अँगुली के नख पै काला निशान सोहता हो या पीला निशान भासता हो तो वह प्राणी अत्यन्त रोगी बना रहता है और थोड़ीही उमर में मरजाता है ॥३०॥

गुरुस्थानफलमाह—

प्रदेशिनीमूलगतं विशुद्धं बृहस्पतेः स्थानमुदाहरन्ति ।

---

१ नीले तु मृत्युं सहसा समेति इत्यपि पाठः २ ज्योतिर्वेत्ता ३ व्यापारसमूहादिति ॥

समुन्नतं यस्य करे विभाति सुखी सुविद्यो विषयी नरः स्यात् ॥ ३१

तर्जनी अँगुली की मूल में प्राप्त साफ़ सुथरा बृहस्पति का स्थान कहते हैं जिसके हाथ में ऊंचा होकर सोहता हो तो वह प्राणी सुखी व विद्वान् होकर विष होता है ॥ ३१ ॥

अधोनतं चेन्मनुजस्य यस्य गुरुस्थलं वै विशदं विभाति ।
महालसी स्यात्पुरुषो धनाशी सुसाहसी काव्यकरो विवादी ॥ ३२ ॥

जिस प्राणी के पाणितल में बृहस्पति का स्थान साफ़ नीचा होकर भासता हो वह पुरुष महालसी, सुसाहसी व बहसी होता हुआ धनाशी होकर कविता का करने वाला होता है ॥ ३२ ॥

देवेन्द्रवन्द्यालयगा यदानीमृज्वी सुरेखा विशदा विभाति ।
सोयं मनुष्यो महतामुपासी सर्वेषु कार्येषु च सिद्धिमेति ॥ ३३ ॥

यदि बृहस्पति के स्थान में साफ़ सीधीसी रेखा सोहती हो तो वह प्राणी बड़े आदमियों का अनुयायी होकर सब कामों में सिद्धिको पाता है ॥ ३३ ॥

पूज्यालयस्था विशदा यदानीं क्षुद्राः सुरेखा बहुशो विभान्ति ।
सोयं नरो धर्मपरो नितान्तं सिद्धिं स्वकार्ये लभते कदापि ॥ ३४ ॥

यदि बृहस्पति के स्थान में टिकी हुई बहुतसी छोटी २ रेखायें सोहती हों तो वह प्राणी अत्यन्त धर्मपरायण होकर कभी अपने कार्य में सिद्धिको पाता है ॥ ३४ ॥

एका कुरेखा गुरुगा यदानीं पारंगता स्यान्मनुजस्य यस्य ।
शीर्षाभिघातं लभते मनुष्यो मन्दस्वभावो ममतामुपैति ॥ ३५ ॥

जिस मनुष्य के करतल में यदि बृहस्पति की जगह में एक छोटीसी रेखा आरपार हो गई हो तो वह प्राणी शीश में चोट चपेट को पाता है और मन्दस्वभाववाला होता हुआ ममता को पाता है ॥ ३५ ॥

रक्तस्वरूपा विशदैकरेखा पूज्यालयस्था विरला विभाति ।
वामां मनोज्ञां लभते मनुष्यो धर्मानुयायी धनतासमेतः ॥ ३६ ॥

बृहस्पति के स्थान में टिकी हुई साफ़ एक रेखा चटकीले रङ्गवाली विरल होकर सोहती हो तो वह प्राणी सुन्दरी रमणी को पाता है और धनसमूहों से संपन्न होते हुए धर्मानुयायी होता है ॥ ३६ ॥

देवेशवन्द्यालयगं विशुद्धं तारास्वरूपं यदि भाति चिह्नम् ।

सोयं कुलीनो मनुजो महेच्छो धन्यो धरायां धनदानुगः स्यात् ॥३७॥

यदि बृहस्पति के स्थान में प्राप्त साफ़ तारा के समान निशान सोहता हो तो वह प्राणी कुलीन व महाशय होकर धरामण्डल में धन्य होता हुआ धनेश (कुबेर) का अनुगामी होता है ॥ ३७ ॥

नार्या यदा चेन्महतां जनानां तारानुरूपं गुरुगं विभाति ।
सा नष्टकीर्तिर्विधनाभिमाना स्वच्छन्दरूपा विचरेन्नितान्तम् ॥ ३८ ॥

यदि बड़े लोगों की रमणियों के करतल में तारा के समान निशान बृहस्पति के स्थान में पहुँचकर सोहता हो तो वह नारी कि जिसकी नामवरी जाती रहती है धन व अभिमान भी चला जाता है और जोकि स्वेच्छाचारिणी होकर अत्यन्त विचरती है ॥३८॥

गुर्वालयस्थं विशदस्वरूपं चिह्नं चतुष्कोणयुतं विभाति ।
बाधाविमुक्तो मनुजस्तदानीं सौभाग्यशाली सुखतासमेतः ॥ ३९ ॥

यदि बृहस्पति के स्थान में साफ़ सुथरा चार कोनोंवाला निशान सोहता हो तो वह प्राणी बाधाओं से विमुक्त व सौभाग्यशाली होकर सुखसमूहों से संपन्न होता है ॥ ३९ ॥

इज्यालयस्थं विशदस्वरूपं बिन्दुप्रयुक्तं यदि भाति चिह्नम् ।
आत्मम्भरिःस्यान्मनुजस्तदानीं नैजे कुटुम्बे त्वपकीर्तिमेति ॥ ४० ॥

यदि बृहस्पति के स्थान में टिका हुआ साफ़ सुथरा बिन्दु (नुक्तेवाला) निशान सोहता हो तो वह प्राणी पेटू होकर अपने कुटुम्ब में बुराई को पाता है ॥ ४० ॥

चिह्नं त्रिकोणं धिषणालयस्थं भिन्नं त्वधोगं यदि दृश्यते चेत् ।
सोयं जनो दीपशलाकिकाढ्यो दौर्भाग्यशाली जनतापकारी ॥ ४१ ॥

यदि बृहस्पति के स्थान में टिका हुआ त्रिकोणाकार निशान दबा हुआ देखा जाता हो तो वह प्राणी दियासलाई के बनाने से धनाढ्य होकर दौर्भाग्यशाली होता हुआ जनसमूहों का अपकारी होता है ॥ ४१ ॥

समुन्नतं चेद्धिषणालयस्थं चिह्नं त्रिकोणं विशदं विभाति ।
सोयं नरो मन्त्रिवरो महौजा विख्यातकीर्तिर्विमलस्वभावः ॥ ४२ ॥

यदि बृहस्पति के स्थान में टिकाहुआ साफ़ सुथरा त्रिकोण का निशान ऊंचासा प्रतीत होताहुआ सोहता हो तो वह प्राणी प्रधानमन्त्री व बलवान् तथा प्रख्यातकीर्तिवाला होकर अमल स्वभाववाला होता है ॥ ४२ ॥

पूर्वोक्तचिह्नं विशदं विशालं गम्भीररेखं यदि भ्राजमानम्[1] ।

---

१ भासमानमिति वा पाठः ॥

गर्वी धनाढ्यो मनुजस्तदानीं स्वार्थी सहायी विमना विरोधी ॥ ४३

यदि पूर्वोक्त निशान साफ़ सुथरा, बड़ा व गहरी रेखावाला होकर सोहता हो तो प्राणी गर्वी, धनाढ्य, स्वार्थी, सहायी और विमन होकर विरोधी होता है ॥४३॥

आयुष्यरेखाफलमाह—

प्रदेशिनीमूलतलाच्चलन्ती चाक्रान्तशुक्रा मणिबन्धमेति।
आयुष्यरेखां कथयन्ति सन्तः पैत्रीं सुरेखां प्रवदन्ति केपि ॥ ४४ ॥

तर्जनी अँगुली के मूलतल से चलती व शुक्रालय को तैं करती हुई मणिबन्ध के प पहुँचजावे तो उस रेखाको आयुरेखा कहतेहैं और कितेक आचार्य पैत्रीरेखा कहतेहैं ॥ ४

एषा सुरेखा विशदा यदानीं छिन्ना न भिन्ना खलु लम्बिता चेत्।
शुद्धस्वभावो मनुजोऽतिधन्यो जैवातृकः स्याद्विपदाविहीनः ॥ ४५

यह रेखा साफ़ कटी, फटी न होकर यदि लम्बी भासती हो तो वह प्राणी शुद्धस्व वाला व महाधनवान् तथा आयुष्यवान् होकर विपदाओं से विहीन होता है ॥ ४५ ॥

श्यामायमाना विततता विभाति पैत्री सुरेखा पुरुषस्य यस्य।
मात्सर्ययुक्तो मनुजो मलाढ्यो दौर्जन्यशाली कृशतासमेतः ॥ ४६ ॥

जिस पुरुष के हाथ में पैत्री रेखा चौड़ी होकर कालीसी सोहती हो तो वह प्रा डाहयुक्त न मलाढ्य होकर दौर्जन्यशाली होता हुआ दुवला वना रहता है ॥ ४६ ॥

पैत्री सुरेखा यदि लम्बमाना संरक्तवर्णा विशदा विभाति।
सोयं जनः क्रोधयुतो नितान्तं वन्यस्य बुद्धिं भजते बलाढ्यः ॥ ४७

यदि पैत्रीरेखा लम्बी, साफ़ व लाल वर्णवाली होकर सोहती हो तो वह प्राणी न क्रोधी व बलवान् होकर वनेचर की बुद्धि को भजता है ॥ ४७ ॥

वप्रस्य रेखा मिलिता जनन्यामन्यासमेता विशदा विभाति।
सोयं जनो दुर्बलतासमेतो दान्तस्वभावो दयितारतश्च ॥ ४८ ॥

यदि पैत्रीरेखा मात्रीरेखा में मिलगई हो और अन्य रेखाओं से संयुक्त होकर साफ़ सो हो तो वह प्राणी दुवला व दान्तस्वभाववाला होता हुआ दयिता में रत रहता है ॥ ४८

हस्तद्वये चेन्मनुजस्य यस्य मध्ये विवर्णा यदि भाति पैत्री।
आजन्मरोगी मनुजस्तदानीं नीचस्वभावः कृशतामुपैति ॥ ४९ ॥

---

१ विस्तीर्णा २ दुर्बलता ३ पैत्रीरेखा ४ प्रियासक्तः ५ जन्मपर्यन्तमिति यावत् ॥

जिस मनुष्य के दोनों हाथों के बीच में यदि पैत्रीरेखा फीके रंगवाली होकर सोहती हो तो वह प्राणी जन्मपर्यन्त बीमार बना रहता है और नीचस्वभाववाला होकर दुर्बलता को पाता है ॥ ४९ ॥

गुर्वालयाचेच्चलिता सुपैत्री चाक्रम्य शुक्रं मणिबन्धमेति।
सोयं कुलीनो धनतासमेतश्चातुर्ययुक्तश्चपलस्वभावः ॥ ५० ॥

यदि बृहस्पति के स्थान से चली हुई पैत्रीरेखा शुक्रालय को तै करती मणिबन्ध (कब्जे) के पास पहुँच जावे तो वह प्राणी कुलीन, धनवान् व चतुर होकर चञ्चलस्वभाववाला होता है ॥ ५० ॥

वप्रोपरिस्था विशदस्वरूपा भौमी सुरेखा पुरुषस्य यस्य।
व्यापद्विहीनो मनुजस्त्वरोगी संपत्तिशाली सुखतामुपैति ॥ ५१ ॥

जिस पुरुष की पैत्रीरेखा के ऊपर टिकी हुई साफ़ सुथरी मङ्गल की रेखा प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी विपदाओं से विहीन व नीरोगी होकर सम्पत्तिशाली होता हुआ सुखसमूहों को पाता है ॥ ५१ ॥

पैत्रीसुमध्याच्चलिता यदानीं शुक्रोच्चगा चेद्विशदा विभाति।
सोयं जनो गच्छति सर्वदेशं सौभाग्यशाली सरलस्वभावः ॥ ५२ ॥

यदि पैत्रीरेखा के मध्यभाग से चली हुई साफ़ सुथरी रेखा शुक्रालय के ऊपर सोहती हो तो वह प्राणी सब मुल्कों की सफ़र करता है और सौभाग्यशाली होकर सीधे स्वभाववाला होता है ॥ ५२ ॥

पैत्रीसमुत्था सरलैकरेखा देवेन्द्रवन्द्योपरिगा विभाति।
सोयं नरः कीर्तियुतः सुविद्यः सर्वार्थसिद्धिं लभते धनाढ्यः ॥ ५३ ॥

यदि पैत्रीरेखा से उठी हुई सीधी एक रेखा बृहस्पतिस्थान के ऊपर सोहती हो तो वह प्राणी यशस्वी, विद्वान् व धनवान् होकर सर्वार्थसिद्धि को पाता है ॥ ५३ ॥

पैत्रीसमुत्था यदि भाग्यरेखा मन्दालयं याति विशुद्धरूपा।
सोयं जनो ग्रामधनादियुक्तो भूम्यश्वयानादिभिरावृतः स्यात् ॥ ५४ ॥

यदि पैत्रीरेखा से उठी हुई भाग्यरेखा साफ़ सुथरी होकर शन्यालयपर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी गांव, धन आदिकों से संयुक्त होता हुआ ज़मीन, घोड़ा व गाड़ी आदि सवारियों से घिरा रहता है ॥ ५४ ॥

आरम्भदेशे मिलिता यदानीं चित्तादिरेखा निखिला विभान्ति।
रोगाभिभूतो मनुजस्तदानीमाकस्मिकं मृत्युमुपैति नूनम् ॥ ५५ ॥

यदि आरम्भदेश में सौभाग्य आदि सारी रेखायें आपसमें मिली हुई सोहती हों तो वह प्राणी बीमार रहता हुआ अवश्य ही एकाएकी मौत को पाता है ॥ ५५ ॥

वृद्धाङ्गुलेर्वै निकटाच्चलन्ती पैत्री सुरेखा रविजं प्रयाति।
सन्तानहीनो मनुजस्तदानीं संतापशाली सुखताविद्युक्तः ॥ ५६ ॥

यदि अँगूठे के समीपवर्ती देश से चलती हुई पैत्री रेखा शन्यालयपर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी सन्तानरहित होकर संतापशाली होता हुआ सुखता से विहीन बना रहता है ॥५६॥

सौभाग्यरेखाफलमाह— Heart line

सौम्यालयाच्चलिता यदानीं रेखा गभीरा गुरुगा विभाति।
सौभाग्यरेखां प्रवदन्ति सन्तश्चित्तस्य रेखां कथयन्ति केपि ॥ ५७ ॥

यदि बुधालय से चली हुई रेखा गहरी व गुरुगेहगामिनी होकर सोहती हो तो उसे विद्वानों ने सौभाग्यरेखा कहा है और कितेक आचार्य चित्त की रेखा कहते हैं ॥ ५७ ॥

एषा सुरेखा विशदा यदानीं विस्तीर्णरूपा धिषणं प्रयाति।
वित्ताभिलाषी मनुजोतिलुब्धः स्वार्थी सुशंकी भ्रमतेऽप्यजस्रम् ॥ ५८ ॥

यह सौभाग्यरेखा साफ़ सुथरी व चौड़ी होकर बृहस्पति के स्थान को चली जावे तो वह प्राणी धनाभिलाषी व अतिलोभी तथा मतलबी होकर बड़ी शङ्का करता हुआ हमेशा घूमता है ॥ ५८ ॥

सौभाग्यरेखा विशदा यदानीं पीतस्वरूपा गुरुगा विभाति।
सोयं नरो धूर्ततरस्वभावो दौर्भाग्यशाली प्रथितो धरायाम् ॥ ५९ ॥

यदि सौभाग्यरेखा साफ़ व पीली होकर गुरुगेह को प्राप्त हुई सोहती हो तो वह प्राणी धूर्तस्वभाववाला व दौर्भाग्यशाली होता हुआ पृथ्वीमण्डल में प्रख्यात होता है ॥ ५९ ॥

आपीतवर्णा यदि चित्तरेखा गम्भीररूपा गुरुगेहमेति।
सोयं मनोव्याधियुतो मनुष्यो रोगाभिभूतो रमयाविहीनः ॥ ६० ॥

यदि चित्त की रेखा (हार्टलाइन) कुछेक पीली व गहरी होकर बृहस्पति के स्थान

१ आयुष्यरेखामिति वा पाठः ॥

को पहुँच जावे तो वह प्राणी मानसीव्याधि से संयुक्त व रोगी होकर लक्ष्मी से विहीन होता है ॥ ६० ॥

स्वान्तस्य रेखा किल रक्तवर्णा गुर्वालयस्था मनुजस्य यस्य ।
दौर्जन्यहीनोऽधमताविहीनः सौभाग्यशाली सुखतामुपैति ॥ ६१ ॥

जिस प्राणी के करतल में सौभाग्यरेखा लालवर्णवाली होकर बृहस्पति के स्थान में टिकी हुई सोहती हो तो वह प्राणी दुर्जनता व अधमता से विहीन होकर सौभाग्यशाली होता हुआ सुखता को पाता है ॥ ६१ ॥

सूर्यालयाच्चेच्छनिगेहतो वा चित्तस्य रेखा चलिता यदानीम् ।
आजन्मरोगी मनुजस्तदानीं जीवेच्छ्ववृत्या भयतासमेतः ॥ ६२ ॥

यदि सूर्यालय या शन्यालय से चली हुई चित्त की रेखा (हार्टलाइन) सोहती हो तो वह प्राणी जन्मपर्यन्त रोगी बना रहता है और डरता हुआ श्ववृत्ति से जीता है ॥६२॥

सौभाग्यरेखा यदि सर्वदेशे छिन्ना विभिन्ना गुरुगेहगा चेत् ।
भार्यावियुक्तो मनुजस्तदानीमप्रीतिकारी धनतापहारी ॥ ६३ ॥

यदि सौभाग्यरेखा सर्व देश में कटी-फटी हुई बृहस्पति के स्थान में पहुँच गई हो तो वह प्राणी भार्या से वियुक्त व अप्रीतिकारी होकर धनसमूहों का विनाशक होता है ॥ ६३ ॥

शाखाद्वयेनापि युता यदानीमेका गुरुस्था शनिगाऽपरा चेत् ।
रामासमेतः पुरुषस्तदानीमानन्दयुक्तो रमते रसायाम् ॥ ६४ ॥

यदि सौभाग्यरेखा दो शाखाओं से संयुक्त हो उन्होंमें से एक शाखा बृहस्पति के स्थान में गई हो और दूसरी शाखा शनैश्चर के स्थान में पहुँची हो तो वह प्राणी सुन्दरी समेत व आनन्दयुक्त होता हुआ पृथ्वी में रमता है ॥ ६४ ॥

शाखाविहीना विशदा यदानीं गम्भीररूपा गुरुगा विभाति ।
दौर्भाग्यशाली विधनो मनुष्यो दारिद्र्ययुक्तो भ्रमते भयार्तः ॥ ६५ ॥

यदि सौभाग्यरेखा साफ सुथरी व गहरी होकर गुरुस्थान में पहुँची हुई सोहती हो तो वह प्राणी दौर्भाग्यशाली, अधनी व दरिद्री होकर डरता हुआ घूमता है ॥ ६५ ॥

मन्दालये चेन्मनुजस्य पाणौ सौभाग्यमात्र्यौ मिलिते यदानीम् ।
नानार्तियुक्तो मनुजस्तदानीमाकस्मिकं मृत्युमुपैति नूनम् ॥ ६६ ॥

जिस प्राणी के पाणितल में शनैश्वर के स्थान में सौभाग्यरेखा और मातृरेखा मि हुई प्रतीत होवें तो वह मनुष्य नानाव्याधियों से संयुक्त होताहुआ निश्चयकर एका मौतको पाता है ॥ ६६ ॥

मातृरेखाफलमाह— Head Line

चन्द्रालयाच्चेच्चलिता सुरेखा गंभीररूपा पितरं प्रयाति ।
✓ तां शीर्षरेखां कवयो वदन्ति मात्रीं तु रेखां प्रवदन्ति केपि ॥ ६७ ॥

चन्द्रालय से चलीहुई रेखा गहरी होकर पैत्रीरेखा के पास पहुँचजावे तो कवियोंने शीर्षरेखा (ह्वडलाइन) कहाहै और कितेक आचार्य मातृरेखा कहते हैं ॥ ६७ ॥

✓ एषा सुरेखा यदि नास्ति भिन्ना शाखाविहीना विशदा विभाति ।
सोयं नरो बुद्धिवरो बलाढ्यो विख्यातकीर्तिर्विदितो धरायाम् ॥ ६८

यदि यह 'मातृरेखा' कटी फटी न हो व शाखाओं से हीन होकर उज्ज्वलरू सोहती हो तो वह प्राणी बुद्धिमान् व बलवान् व बड़ी नामवरीवाला होकर धरामण्ड में प्रसिद्ध होता है ॥ ६८ ॥

✓ मात्री सुरेखा यदि पीतवर्णा विस्तीर्णरूपा जनकान्तिके चेत् ॥
सोयं जनः स्यात्कृशतासमेतः स्मृत्या विहीनः सरलस्वभावः ॥ ६९

यदि मातृरेखा पीली व चौड़ी होकर पैत्रीरेखा के पास सोहती हो तो वह प्रा दुबला व स्मरणशक्ति से रहित होताहुआ सीधे स्वभाववाला कहाता है ॥ ६९ ॥

शीर्षस्य रेखा कृशगा यदानीं लम्बायमाना मनुजस्य पाणौ ।
सोयं नरः स्यात्सभिको हि धूर्तो नाज्ञाकरः कर्मकरः कृशाङ्गः ॥ ७० ॥

जिस मनुष्य के करतल में मातृरेखा पतली व लम्बी होकर सोहती हो तो वह प्र फड़वाज़ या दगाबाज़, छलछन्दी, कार्यकारी व दुबला होकर आज्ञाकारी नहीं होता है ॥ ७

विस्तीर्णरूपा यदि मातृरेखा श्यामायमाना पुरुषस्य यस्य ।
सोयं जनो वै जठरस्य रोगं प्राप्नोति नित्यं सुखताविहीनः ॥ ७१ ॥

वैद्यर्क जिस पुरुषके पाणितल में यदि मातृरेखा चौड़ी व काली होकर सोहती हो तो प्राणी सुखसमूहों से हीन रहताहुआ हमेशा पेटकी बीमारीको पाताहै ॥ ७१ ॥

मातुः सुरेखोपरिगं विशुद्धं संरक्तवर्णं यदि भाति चिह्नम् ।

शीर्षाभिघातं लभते मनुष्यो गौरे तु वैद्यो विदितो धरायाम् ॥ ७२ ॥

यदि मातृरेखा के ऊपरले भाग में प्राप्तहुआ निशान साफ़ सुथरा व लालवर्णवाला होकर सोहता हो तो वह प्राणी शीश में चोट चपेट को पाता है और यदि पूर्वोक्त निशान सफ़ेद होकर प्रतीत हो तो वह वैद्य—डाक्टर या हकीम होताहुआ पृथ्वीमण्डल में मख्यात होता है ॥ ७२ ॥

ऊर्ध्वरेखाफलमाह—

रेखा चलन्ती मणिबन्धदेशान्मध्याङ्गुलिं याति गभीररूपा।
तामूर्ध्वरेखां प्रवदन्ति सन्तो वित्तस्य रेखां कथयन्ति केपि ॥ ७३ ॥

मणिबन्ध देश से चलती हुई रेखा गहरी होकर मध्यमा अँगुली के पास जाती है तो उसको विद्वान् लोग ऊर्ध्वरेखा कहते हैं और कितेक आचार्य दौलत की रेखा बतलाते हैं ॥ ७३ ॥

भाग्यस्य रेखा मणिबन्धदेशाद्गम्भीररूपा यदि याति मन्दम्।
सोयं धनाढ्यो मनुजो मनीषी संपत्तिशाली सुखतामुपैति ॥ ७४ ॥

मणिबन्ध (कब्जे) से चली हुई यह भाग्यरेखा गहरी होकर यदि शन्यालय पर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी धनवान्, बुद्धिमान् व सम्पत्तिशाली होकर सुखसमूहों को पाता है ॥ ७४ ॥

आक्रम्य चन्द्रं यदि भाग्यरेखा मन्दालयं याति विशुद्धरूपा।
सोयं जनो मध्यधनो हि लोके लावण्ययुक्तां ललनामुपैति ॥ ७५ ॥

यदि विशुद्धरूपवाली भाग्यरेखा चन्द्रालय को आक्रमण कर मन्दालय पर्यन्त चली जाती है तो वह प्राणी लोक में मध्यम धनवाला होकर सुन्दरतासंपन्न सुन्दरी को पाता है ॥ ७५ ॥

पैत्रीसमुत्था यदि भाग्यरेखा गम्भीररूपा विशदा विभाति।
नैजात्कुटुम्बात्सुखतां समेत्य संपत्तिशाली सरलस्वभावः ॥ ७६ ॥

यदि पैत्रीरेखा से उठी हुई भाग्यरेखा गहरी व साफ़ होकर सोहती हो तो वह प्राणी अपने कुटुम्ब से सुखसमूहों को पाकर संपत्तिशाली होता हुआ सीधे स्वभाववाला कहलाता है ॥ ७६ ॥

भाग्यस्य रेखा विशदा यदानीं देवेन्द्रवन्द्यालयगा विभाति।

सोयं नरो नीतिपरो नराणां सर्वाधिकारी प्रभुतासमेतः ॥ ७७ ॥

यदि भाग्यरेखा साफ़ सुथरी होकर बृहस्पति के स्थान में पहुँची हुई सोहती हो तो वह प्राणी नरों के मध्य में नीतिपरायण होकर सर्वाधिकारी होता हुआ प्रभुता से संपन्न होता है ॥ ७७ ॥

भौमात्समुत्था यदि भाग्यरेखा मध्याङ्गुलिं याति विशुद्धरूपा ।
भाग्येन हीनो मनुजस्तदानीं कार्ये समस्ते न हि सिद्धिमेति ॥ ७८ ॥

भौमालय से उठी हुई भाग्यरेखा साफ़ सुथरी होकर यदि मध्यमा अँगुलीपर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी भाग्यहीन होता हुआ सम्पूर्ण कार्यों में सिद्धिको नहीं पाताहै ॥ ७८ ॥

प्रारम्भदेशे वृजिना विभाति प्रान्ते तु भाग्या सरला यदानीम् ।
महादरिद्रोपि भवेद्धनाढ्यो वृद्धे वयस्के सुखतामुपैति ॥ ७९ ॥

यदि प्रारम्भदेश में भाग्यरेखा टेढ़ी हो और आखिरीमें सीधी होकर भासती हो तो वह प्राणी महादरिद्री हो तो भी धनवान् होता हुआ वृद्धावस्था में सुखसमूहों को पाताहै ॥ ७९ ॥

आरम्भदेशे सरला च रक्ता भिनत्ति भाग्या यदि चित्तरेखाम् ।
सोयं जनः स्याच्चरमे वयस्के सौभाग्यशाली धनतामुपैति ॥ ८० ॥

यदि आरम्भदेश में सीधी व लालवर्णवाली भाग्यरेखा चित्तरेखा (सौभाग्यरेखा) को भेदती है तो वह प्राणी आखिरी अवस्था में सौभाग्यशाली होता हुआ धनता को पाता है ॥ ८० ॥

नो भाति पाणौ मनुजस्य यस्य भाग्यस्य रेखा विशदा यदानीम् ।
सोयं नरः स्याद्बलवीर्यहीनो दीनो धरायां न तु मांसभक्षी ॥ ८१ ॥

जिस मनुष्य के पाणितल में यदि भाग्यरेखा साफ़ सुथरी होकर नहीं सोहती हो तो वह प्राणी बल व वीर्य से हीन होता हुआ पृथ्वीमण्डल में दीन बना रहता है परन्तु मांस को नहीं खाता है ॥ ८१ ॥

सूर्यरेखाफलमाह—

चन्द्रारगेहात्खलु भाग्यतो वा रेखा यदैका दिनपं प्रयाति ।
तां सूर्यरेखां कथयन्ति सन्तो ह्यन्ये सुरूपां प्रवदन्ति चान्ये ॥ ८२ ॥

चन्द्रमा व मङ्गल के घरसे या भाग्यरेखा से उठीहुई एक रेखा जब सूर्य के पास जाती

तो उसको विद्वान्लोग सूर्यरेखा कहते हैं और आचार्यलोग (अप्लोलाइन) कहते हैं ॥ ८२ ॥

एषा सुरेखा विशदा यदानीं विभाति पाणौ पुरुषस्य यस्य ।
सोयं जनः स्यान्निपुणोऽतिविज्ञो विख्यातकीर्तिर्विदितो धरायाम् ॥८३॥

जिस पुरुषके पाणितल में यह सूर्यकी रेखा साफ़ सुथरी होकर यदि सोहती हो तो वह प्राणी निपुण, अतिविज्ञ व बड़ी नामवरीवाला होकर धरामण्डल में प्रसिद्ध होता है ॥८३॥

भाग्यात्समुत्था दिनपस्य रेखा गम्भीररूपा विशदा विभाति ।
सोयं मनुष्यो हि महायशस्वी विद्वान्धनाढ्यो गणितागमज्ञः ॥ ८४ ॥

यदि भाग्यरेखा से उठीहुई सूर्यकी रेखा गहरी व साफ़ सुथरी होकर सोहती हो तो वह प्राणी बड़ायशस्वी, विद्वान् और धनवान् होताहुआ गणितशास्त्र का ज्ञाता होताहै ॥८४॥

भौमात्समुत्था तपनस्य रेखा रक्ता विशुद्धा यदि भाति पाणौ ।
सोयं महौजा मनुजो मनस्वी नैजाद्गुणात्संलभते हि वित्तम् ॥ ८५ ॥

यदि भौमरेखा से उठीहुई सूर्य की रेखा लाल व साफ़ होकर हाथ में सोहती हो वह प्राणी बलवान् व मनमौजी होकर अपने गुण से धन को पाता है ॥ ८५ ॥

शैर्षीसमुत्था सवितुः सुरेखा विद्योतते चेत्पुरुषस्य पाणौ ।
सोयं धनाढ्यो मनुजो हि लोके विख्यातकीर्तिः कृषिकारकः स्यात् ॥८६॥

यदि शैर्षीरेखा (मातृरेखा) से उठीहुई सूर्यकी रेखा जिस पुरुषके पाणितलमें सोहती हो तो वह प्राणी लोकमें धनवान् व विख्यातकीर्तिवाला होकर खेती किसानीका करने वाला होता है ॥ ८६ ॥

वक्राङ्गुले पाणितले गभीरे ऋज्वी सुरेखा दिनपस्य भाति ।
सोयं मनुष्यः सकले स्वकार्ये नाप्नोति सिद्धिं सरलस्वभावः ॥ ८७ ॥

यदि टेढ़ी अँगुलीवाले गहरे पाणितल में सीधी सूर्यकी रेखा सोहती हो तो वह प्राणी सरल स्वभाववाला होकर सारे अपने कामों में सिद्धि को नहीं पाता है ॥ ८७ ॥

ब्रध्नस्य रेखा यदि द्वित्रिशाखा गम्भीररूपा विशदा विभाति ।
नाना सुकार्यं कुरुते मनुष्यो नाप्नोति सिद्धिं चरमे च कार्ये ॥ ८८ ॥

यदि सूर्यकी रेखा दो तीन शाखाओंवाली व साफ़ सुथरी होकर चटकीले रंगवाली

प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी अनेकानेक कार्यों को करता है परन्तु आख़िरी कार्य सिद्धि को नहीं पाता है ॥ ८८ ॥

सूर्यस्य रेखोपरिगं विशुद्धं तारानुरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
सोयं मनुष्यः सरलस्वभावः सख्युः सकाशाल्लभते हि वित्तम् ॥ ८६ ॥

यदि सूर्यकी रेखा के ऊपर विराजमान साफ़ सुथरा तारा के समान निशान सोहता हो तो वह प्राणी सीधे स्वभाववाला होकर मित्र के द्वारा धन को पाता है ॥ ८६ ॥

चित्तार्कयोगे यदि बिन्दुरूपं श्यामायमानं विशदं विभाति ।
नेत्रामयं वै लभते मनुष्यो हस्तद्वये चेज्जनुषान्धकः स्यात् ॥ ९० ॥

चित्तरेखा (हार्टलाइन) और सूर्यरेखा (अपोलाइन) के योगमें काला व साफ़ होकर बिन्दुरूपवाला निशान यदि प्रकाशमान होता हो तो वह प्राणी नेत्ररोग को पाता है और यदि दोनों हाथों में पूर्वोक्त निशान भासता हो तो वह प्राणी जन्म ही से अन्धा होजाता है ॥ ९० ॥

बलरेखाफलमाह—

रेखाचलन्ती मणिबन्धदेशात्संयुज्य पैत्रीं यदि सौम्यमेति ।
वीर्यस्य रेखां प्रवदन्ति तज्ज्ञा हैप्टिक्यरूपां कथयन्ति चान्ये ॥ ९१ ॥

यदि मणिबन्धदेश से चली हुई रेखा पैत्रीरेखा से मिलकर बुधालयपर्यन्त चली जावे तो उसे विद्वान्लोग वीर्यरेखा कहते हैं और कितेक आचार्य (हिप्टिकलाइन) कहते हैं ॥ ९१ ॥

एषा सुरेखा पुरुषस्य पाणौ संरक्तवर्णा विशदा विभाति ।
सोयं मनुष्यो बलतासमेतस्त्वारामसक्तः सुखतां प्रयाति ॥ ९२ ॥

जिस पुरुष के पाणितल में यह वीर्यरेखा साफ़ सुथरी होकर लालवर्णवाली प्रतीत होवे तो वह प्राणी बलसमूहों से संपन्न होता हुआ आरामतलब होकर अनेक सुखों को पाता है ॥ ९२ ॥

आरम्भदेशे मिलिता सुपैत्र्यां वीर्यस्य रेखा धवला विभाति ।
सोयं मनो व्याधियुतो मनुष्यो दौर्बल्ययुक्तो दयितारतश्च ॥ ९३ ॥

यदि आरम्भदेश में वीर्यरेखा पैत्रीरेखा से मिलाप करती हुई उजली होकर सोहती हो तो वह प्राणी मानसीव्याधि से पीड़ित व दुबला होकर प्यारी में परायण बना रहता है ॥ ९३ ॥

श्यामायमाना यदि वीर्यरेखा विद्योतते चेन्मनुजस्य पाणौ ।
सोयं जनो व्याधियुतो नितान्तं वृद्धे वयस्के विपदामुपैति ॥ ९४ ॥

जिस मनुष्य के पाणितल में यदि वीर्यरेखा काली होकर सोहती हो तो वह प्राणी हमेशा रोगी होता हुआ वृद्धावस्था में विपदा को पाता है ॥ ९४ ॥

एषा सुरेखा विशदा गभीरा संरक्तवर्णा यदि भाति पूर्णा ।
गर्वी गुणाढ्यो मनुजस्तदानीं व्यापारयुक्तो व्ययतासमेतः ॥ ९५ ॥

यह वीर्यरेखा साफ़ सुथरी, गहरी व लालवर्णवाली होकर यदि पूर्णरूप से सोहती हो तो वह प्राणी गर्वीला, गुणी व व्यापारी होकर खर्चीला होता है ॥ ९५ ॥

एषोर्ध्वशाखा यदि चैकशाखा संस्पृश्य शैर्षीं कुरुते त्रिकोणम् ।
सोयं सुकीर्तिः सुखतासमेतः सौन्दर्यशाली लभते धनौघम् ॥ ९६ ॥

यह वीर्यरेखा ऊपरले भाग में शाखावाली हो और यदि एक शाखा मात्रीरेखा को छूकर त्रिकोणाकार निशान को बनाती हो तो वह प्राणी बड़े नामवाला व सुखसमूहों से संपन्न होता हुआ सौन्दर्यशाली होकर घने धन को पाता है ॥ ९६ ॥

संस्पृश्य शैर्षीं तु तथा च भाग्यामेषा सुरेखा कुरुते त्रिकोणम् ।
सोयं जनो भाविफलस्य वक्ता चाकृष्टशक्तिं समवैति नूनम् ॥ ९७ ॥

यह वीर्यरेखा मातृरेखा तथा भाग्यरेखा (फेटलाइन) को छूकर त्रिकोणाकार निशान को बनाती हो तो वह प्राणी भविष्यद्वक्ता होता हुआ मिसमेरेजम को निश्चयकर जानता है ॥ ९७ ॥

एषा सुरेखा विनता यदानीं छिन्ना न भिन्ना शशिनं समेति ।
दौर्बल्ययुक्तो मनुजस्तदानीं धातुक्षयं वै लभतेप्यजस्रम् ॥ ९८ ॥

यह वीर्यरेखा लची हुई कटी फटी न होकर यदि चन्द्रालय को चली जावे तो वह प्राणी दुबला होकर हमेशा धातुक्षीणता को पाता है ॥ ९८ ॥

वेलास्किबरेखाफलमाह—

भाग्यासमाना विशदस्वरूपा रेखा यदैका समुपैति सौम्यम् ।
वेलास्किबाख्यां प्रवदन्ति तां वै महानुभावा वदतां वरेण्याः ॥ ९९ ॥

यदि भाग्यरेखा के बराबर साफ़ सुथरी एक रेखा बुधालय पर्यन्त चली जावे तो उसे महानुभाव बोलनेवालों में मुखिया विद्वान् लोग वेलास्किब कहते हैं ॥ ९९ ॥

काव्यालयाच्चेच्चलिता सुरेखा वक्रस्वरूपा यदि याति चान्द्रिम् ।
चौर्ये प्रवृत्तो मनुजस्तदानीं हत्याप्रकाण्डैः सहितो नराणाम् ॥ १०० ॥

यदि शुक्रालय से चली हुई वेलास्किव रेखा टेढ़ी होकर बुधालय पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी चोरी करने का आदी होता हुआ मनुष्यों के बीचमें हत्यारा होता है ॥ १०० ॥

एषा सुरेखा ऋजुतासमेता सौम्यालयं याति गभीररूपा ।
सौभाग्यशाली मनुजो मनीषी विख्यातकीर्तिर्विदितो धरायाम् ॥ १ ॥

यह वेलास्किव रेखा सीधी व गहरी होकर बुधालय पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी सौभाग्यशाली, विद्वान् व विख्यातकीर्तिवाला होकर धरामण्डल में प्रसिद्ध होता है ॥ १ ॥

गर्डलरेखाफलमाह—

रेखा चलन्ती शशिसूनुगेहाद्गोलार्धरूपा धिषणं प्रयाति ।
तां गर्डलाख्यां कवयो वदन्ति वृत्तार्धरूपां प्रवदन्ति चान्ये ॥ २ ॥

यदि बुधालय से चली हुई रेखा गोलार्धरूप होकर बृहस्पति के स्थान में चलीजावे तो उसे कविलोग 'गर्डल' कहते हैं और अन्याचार्य 'वृत्तार्धरूप' बतलाते हैं ॥ २ ॥

एषा सुरेखा विशदा सरक्ता छिन्ना न भिन्ना यदि भाति पाणौ ।
सोयं नरस्तूच्चपदाधिकारी सौन्दर्यशाली सुखतामुपैति ॥ ३ ॥

यदि पाणितल में यह 'गर्डलरेखा' साफ़ सुथरी व लालवर्णवाली होकर कटी फटी न होती हुई सोहती हो तो वह प्राणी ऊंचेपदका अधिकारी होताहुआ सौन्दर्यशाली होकर सुखसमूहों को पाता है ॥ ३ ॥

श्यामा च पीता खलु धूसरा वा छिन्ना च भिन्ना यदि भाति चैषा ।
सोयं बलिष्ठो हि पदाधिकारी स्वार्थी सहायी लभते धनौघम् ॥ ४ ॥

यदि यह पूर्वोक्त रेखा काली, पीली व भूरी होकर कटी फटी होतीहुई सोहती हो तो वह प्राणी बड़ाबली, पदाधिकारी, मतलबी व सहायी होकर घने धनको पाता है ॥ ४ ॥

मन्दालयाच्चेच्चलिता यदानीं वृत्तार्धरूपा समुपैति सौम्यम् ।
सोयं जनो धूर्ततरो हि दम्भी मिथ्याप्रभाषी मदनातुरश्च ॥ ५ ॥

मन्दालय से चलीहुई गोलार्धरूप रेखा यदि बुधालय पर्यन्त चलीजावे तो वह प्राणी बड़ाधूर्त, छली व झूंठा होकर कामी होता है ॥ ५ ॥

एष सुरेखा विशदा यदानीं ब्रध्नेन भिन्ना शशिजं समेति ।
सोयं मनुष्यो व्यभिचारयुक्तो दुष्टस्वभावो धनतामुपैति ॥ ६ ॥

यदि पाणितल में यह पूर्वोक्त रेखा साफ़ सुथरी होकर सूर्य की रेखा से कटी फटी हुई बुधालय पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी व्यभिचारी व बुरे स्वभाववाला होता हुआ धनसमूहों को पाता है ॥ ६ ॥

क्षुद्राविभिन्ना यदि गर्डलाख्या काव्येन्दुरेखे विशदे विभातः ।
सोयं ह्यपस्मारयुतो मनुष्यो मान्यो वदान्यो ममताविहीनः ॥ ७ ॥

यदि गर्डलाख्या रेखा छोटी छोटी रेखाओं से भिन्नहुई प्रतीत होती हो और यदि शुक्र व चन्द्रमा की रेखायें साफ़ सुथरी होकर सोहती हों तो वह प्राणी मिरगी रोगवाला होकर मान्य व वदान्य होकर ममता से विहीन रहता है ॥ ७ ॥

एषा विशुद्धा यदि भाति पाणौ चारक्तवर्णा पुरुषस्य यस्य ।
सोयं सुकीर्तिर्मनुजो धनाढ्यो नान्दीकरो नीतिपरो नितान्तम् ॥ ८ ॥

जिस पुरुषके पाणितल में यह 'गर्डलाख्या' रेखा साफ़ सुथरी व कुछेक लालवर्ण वाली होकर यदि सोहती हो तो वह प्राणी बड़ी कीर्तिवाला व धनवान् होकर नान्दी,[1] वादी व बड़ा नीतिपरायण होता है ॥ ८ ॥

आध्यापिकीवृत्तिपराः प्रवीणाः संपादका ये किल पत्रकाणाम् ।
तेषां हि पाणावियमेव भाति रेखा गभीरा विशदा सदैव ॥ ९ ॥

जो लोग पढ़ाने की जीविका करते हैं व जो प्रवीण हैं और जो अखबारों के संपादक हैं उन्हीं लोगों के पाणितल में यह पूर्वोक्त रेखा साफ़ सुथरी व गहरी होकर सदैव सोहती है ॥ ९ ॥

नार्या यदा पाणितले विभाति रेखा विशुद्धा वितता हि यस्याः ।
भूतादिबाधापरिपीडिताङ्गा सांगीतरक्ता प्रमदा तदा स्यात् ॥ १० ॥

जिस नारी के पाणितल में गर्डलाख्या रेखा साफ़ सुथरी व चौड़ी होकर यदि सोहती हो तो वह रमणी भूत-प्रेत आदि की बाधाओं से पीड़ित अङ्गवाली व गानेवाली होती है ॥ १० ॥

---

१ आशीर्वचनसंयुक्ता स्तुतिर्यस्मात्प्रवर्तते । देवद्विजनृपादीनां तस्मान्नान्दीति कीर्त्यते (इति भरतः) ॥

मणिबन्धस्थरेखाफलमाह—

तिस्रो हि रेखा मणिबन्धदेशे वित्तस्य चाद्या गदिता सुधीभिः।
प्रोक्ता द्वितीयाखिलशास्त्रकाणामेवं तृतीया भणिता हि भक्तेः॥ ११॥

मणिबन्धदेश (कब्ज़े) में तीन रेखायें तिरीछी होती हैं उन्होंमें से पहली रेखा धनकी पण्डितों ने कही है, दूसरी शास्त्रों की रेखा और तीसरी भक्ति की रेखा कहलाती है॥ ११॥

मतान्तरमाह—

रेखाश्चतस्रो मणिबन्धदेशे द्रव्यस्य मुख्या द्वितयी च शास्त्री।
भक्तेस्तृतीया भणिता बुधेन्द्रैर्दारिद्र्ययुक्ता श्रुतिसंमिता स्यात्॥ १२॥

मणिबन्ध देश में तिरीछी चार रेखायें होती हैं उन्होंमें से पहली धन की रेखा है और दूसरी शास्त्री रेखा कहाती है व तीसरी भक्ति की रेखा पण्डितों ने कही है और चौथी दरिद्र की रेखा कहलाती है॥ १२॥

पुनरप्याह–

हेल्थस्वरूपा प्रथमा हि रेखा प्रोक्ता द्वितीया किल वेल्थरूपा।
प्रास्पेरिटी वै भणिता तृतीया रेखा कवीन्द्रैर्बुधसंमता च॥ १३॥

पहुँचे में पहली आरोग्य की रेखा होती है व दूसरी धन दौलत की कहलाती है और तीसरी बढ़ती की रेखा कवीन्द्रों ने कही है कि जिसको पण्डितों ने माना है॥ १३॥

एतास्तु तिस्रो मणिबन्धदेशे गम्भीररूपा विशदा विभान्ति।
सोयं बलिष्ठो मनुजो धनाढ्यो गभीरबुद्धिर्विदितो धरायाम्॥ १४॥

जिसके पहुँचे (कब्ज़े) में ये तीनों रेखायें गहरी व साफ़ सुथरी होकर यदि सोहती हों तो वह प्राणी बलवान् व धनवान् होता हुआ गम्भीर बुद्धिवाला होकर पृथ्वीमण्डल में प्रसिद्ध होता है॥ १४॥

आद्या तु रेखा मिलिता यदानीं विद्योतते चेत्खलु स्वल्परूपा।
यत्नेन जीवेन्मनुजस्तदानीमुद्विग्नचित्तो भ्रमतेप्यजस्रम्॥ १५॥

यदि पहली रेखा कम या ज़्यादः जुड़ी हो और छोटे रूपवाली होकर प्रतीत होवे तो वह प्राणी बड़े उपाय से जीता है और उद्विग्न चित्तवाला होकर हमेशा घूमा करताहै॥ १५॥

---

१ पहुँचे रेखा एक धन, द्वितिये पण्डित जान। तीन सुरेखा भक्तनर, चार दरिद्र बखान।

आरोग्यरेखा मणिबन्धदेशे गम्भीररूपा यदि भाति भिन्ना ।
दौर्भाग्ययुक्तो मनुजस्तदानीमल्पं च वित्तं लभते कदापि ॥ १६ ॥

यदि पहुँचे में आरोग्य वा धनकी रेखा गहरी व भिन्न होकर सोहती हो तो वह प्राणी
र्भाग्यशाली होकर कभी थोड़े धन को पाता है ॥ १६ ॥

रेखात्रयीणां यदि मध्यदेशे चिह्नं त्रिकोणं विशदं विभाति ।
सोयं जनो हृष्टमना महौजा वृद्धे वयस्के सुखतामुपैति ॥ १७ ॥

यदि पहुँचे में टिकीहुई तीनरेखाओं के बिचले देश में साफ़ सुथरा होकर त्रिकोण का
नशान सोहता हो तो वह प्राणी हर्षित मनवाला व महाबलवान् होकर वृद्धावस्था में
ुखता को पाता है ॥ १७ ॥

संछिन्नकाया यदि भाति चाद्या रेखा गभीरा विशदस्वरूपा ।
सोयं बलिष्ठो मनुजो मदान्धो मन्दस्वभावो ममतामुपैति ॥ १८ ॥

यदि क़ब्जे में पहली रेखा गहरी व साफ़ सुथरी होकर कटी फटीसी प्रतीत होवे तो
ह प्राणी महाबलवान् व मदान्ध होकर नीच स्वभाववाला होता हुआ ममता को
ाता है ॥ १८ ॥

रेखात्रयीतश्चलिता यदानीं भाग्यस्य रेखा तनुतासमेता ।
मिथ्याप्रभाषी मनुजस्तदानीं संस्थाविहीनोऽप्यधमो नराणाम् ॥ १९ ॥

यदि तीनों रेखाओं से चली हुई भाग्य की रेखा पतली होकर सोहती हो तो वह
ाणी झूंठा व बेमर्याद होकर मनुष्यों के बीच अधम होता है ॥ १९ ॥

रेखात्रयस्थं विशदस्वरूपं तारानुरूपं यदि भाति चिह्नम् ।
प्राप्नोति वित्तं मनुजोप्यलभ्यं भूमिस्थितं वा लभते धनौघम् ॥ २० ॥

यदि तीनों रेखाओं पर टिकाहुआ साफ़ सुथरा तारा के समान निशान सोहता हो तो
ह प्राणी अलभ्य धन को पाता है या भूमि में गड़ेहुए धनसमूह को पाता है ॥ २० ॥

पूर्वोक्तचिह्नं मणिबन्धदेशे नो भाति सम्यङ्मनुजस्य यस्य ।
सोयं मनुष्यो व्यभिचारशाली प्राप्नोति वित्तं गणिकादिकेभ्यः ॥ २१ ॥

जिस मनुष्य के क़ब्जे में पूर्वोक्त निशान भली भांति नहीं सोहता हो तो वह प्राणी
ाभिचारी होकर वेश्या आदिकों से धनको पाता है ॥ २१ ॥

---

१ द्रव्यस्य रेखा इति वा पाठः २ वेश्यादिकेभ्यः ॥

आक्रम्य शुक्रं यदि भाग्यभग्नी संभिद्य पैत्रीं शशिनं[1] समेति।
सांयात्रिकः[2]स्यान्मनुजस्तदानीं व्यापारशाली व्ययतासमेतः॥ २२

यदि शुक्रालय को आक्रमण कर भाग्यरेखा की भगिनी रेखा पैत्रीरेखा (लाइफलाइन) को भेदनकर चन्द्रमा के पास पहुँचजावे तो वह प्राणी जहाज़ी व व्यापारी होकर खर्चीला होता है॥ २२॥

समुत्थिता चेन्मणिबन्धदेशादृज्वी सुरेखा यदि याति चान्द्रिम्।
प्राज्यं[3] धनं वै लभते मनुष्यः संपत्तिशाली सरलस्वभावः॥ २३॥

यदि मणिबन्ध (कब्जे) से उठीहुई सीधी भाग्यभगिनी रेखा बुधालय पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी सम्पत्तिशाली होकर सीधे स्वभाववाला होता हुआ महाधन को पाता है॥ २३॥

एषा सुरेखा विशदा यदानीं गम्भीररूपा दिनेपं[4] प्रयाति।
सोयं जनो वित्तवतां सहायात्प्राप्नोति वित्तं सुखदो नराणाम्॥ २४॥

जब यह रेखा साफ़ सुथरी व गहरी होकर सूर्यालय पर्यन्त चली जावे तो वह प्राणी धनवानों की सहायता से धन को पाता है और मनुष्यों को सुखदायक होता है॥२४॥

पूर्वार्द्धयुग्माङ्कमिमं मनोज्ञं संकीर्तयन्तां सुधियो नितान्तम्।
ते लोकवश्याः किल सन्तु भूमौ वित्तं समायन्तु विदांप्रधानाः॥ २५

इस सुन्दर पूर्वार्ध के द्वितीयाङ्क को जो बुद्धिमान् अत्यन्त कीर्तन करते हैं, उनके वश लोग हो जाते हैं और पण्डितों में मुखिया होकर धनको पाते हैं॥ २५॥

एषा पाणितलव्याख्या कीर्तिता देवि दुर्लभा।
य इमांपठन्तु विद्वांसो भूयासुर्भूपवल्लभाः॥ २६॥

अहो देवि! यह दुर्लभ करतल की व्याख्या मैंने कही है जो पण्डित लोग पढ़ेंगे वे राजाओं के प्यारे होवेंगे॥ २६॥

इति श्रीमत्पण्डितशक्तिधरसंकलितसामुद्रिकशास्त्रस्यपूर्वार्धेद्वितीयाङ्कःसमाप्तिपफाणेति शम्।

---

१ चन्द्रमसम् २ "सांयात्रिकः पोतवणिक्" (इत्यमरः) ३ अधिकम् ४ दिवाकरम्॥



सामुद्रिकशास्त्रम्

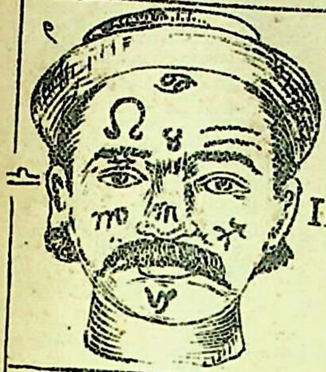
उत्तरार्धः

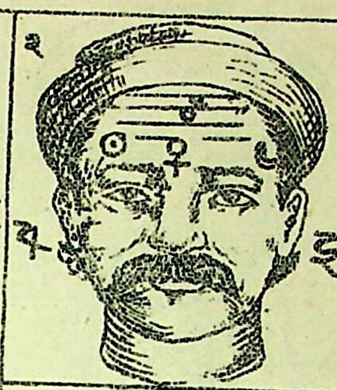
प्रथमोऽङ्कः सटीकः ।

अथ सामुद्रिकशास्त्रस्योत्तरार्द्धे प्रथमाङ्कस्य सूचीपत्रम् ।

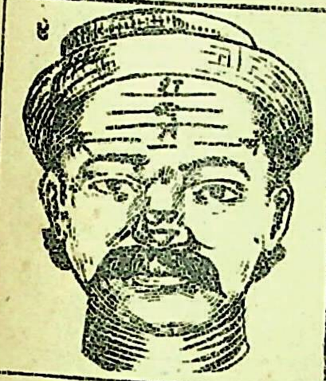
इति सामुद्रिकशास्त्रस्योत्तरार्द्धे प्रथमाङ्कस्य सूचीपत्रम् ।

৫



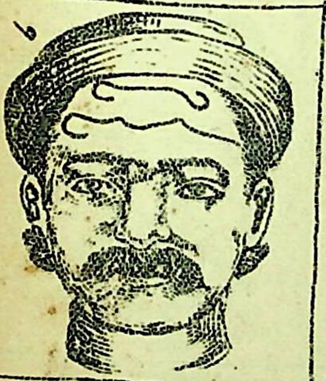


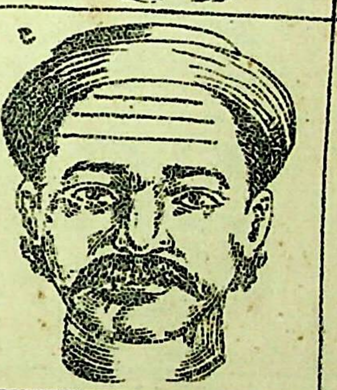




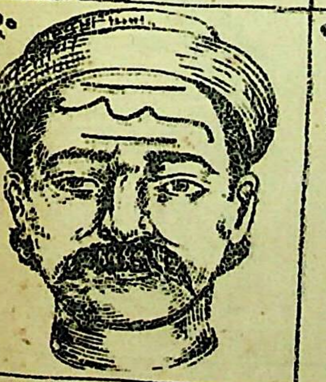


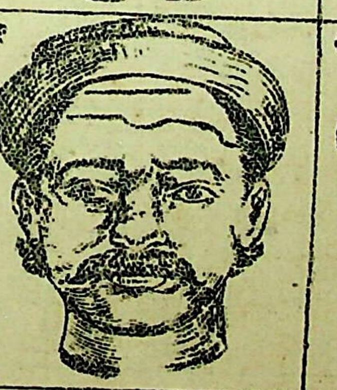


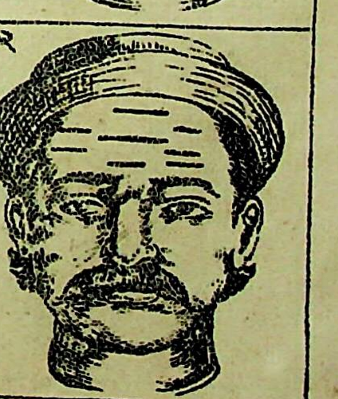


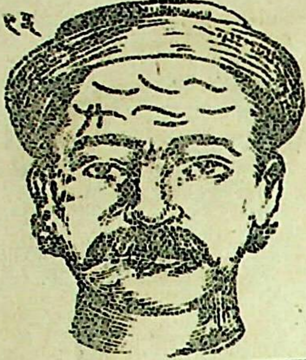


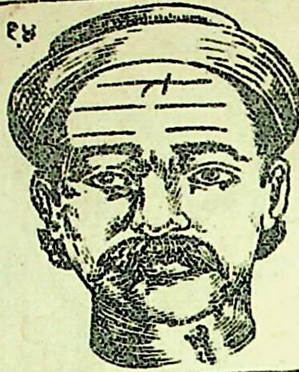


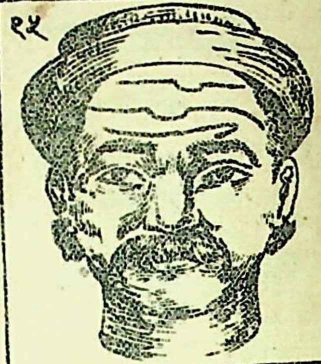


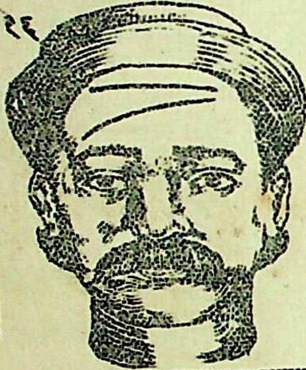


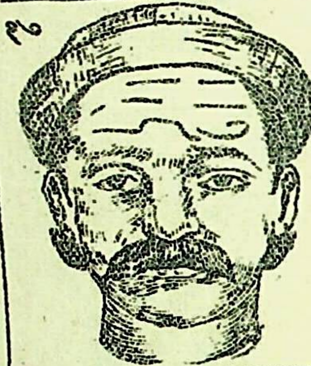


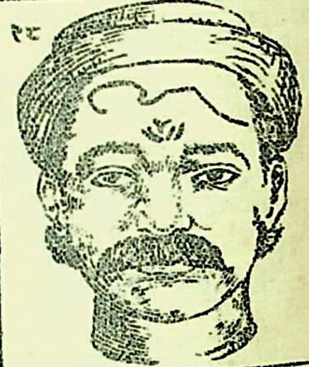

১৩

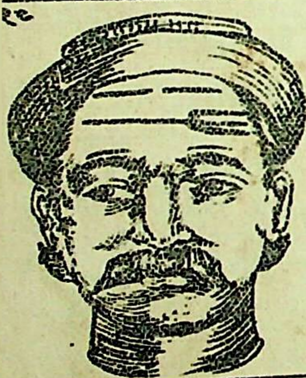

১৪

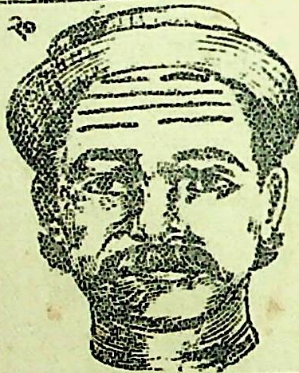

১৫

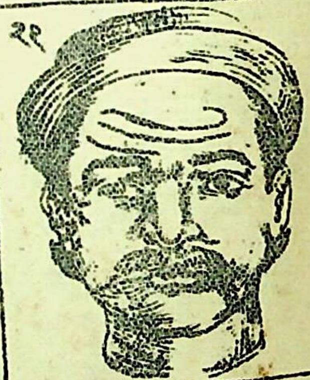

১৬


১৭

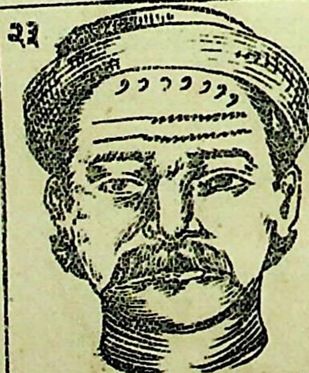

১৮

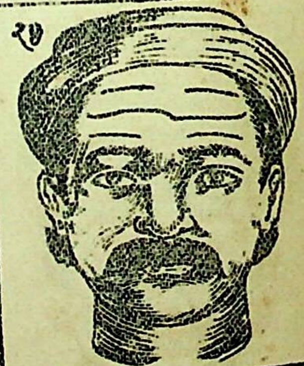

১৯


২০

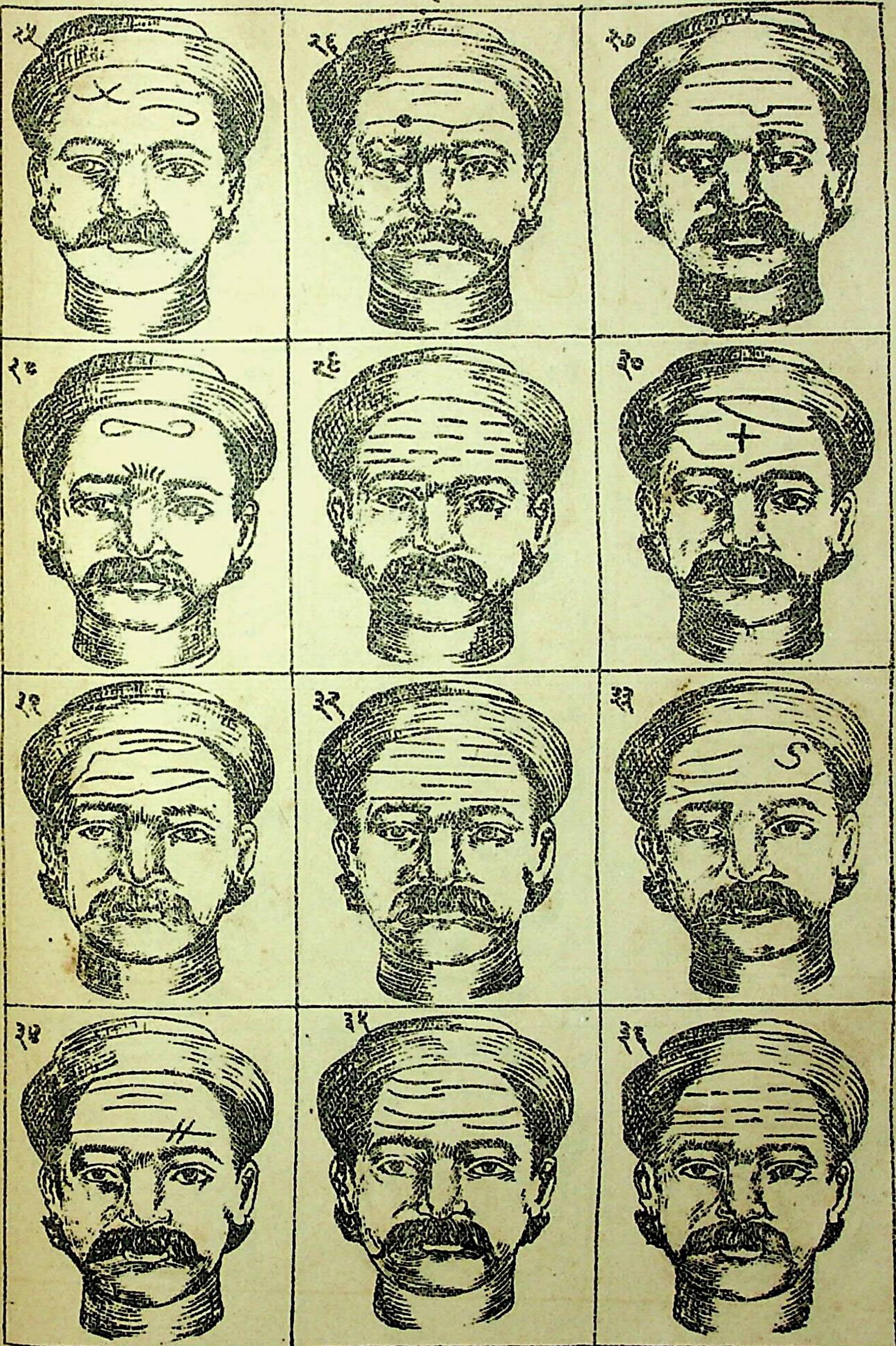

২১


২২


২৩


২৪

२



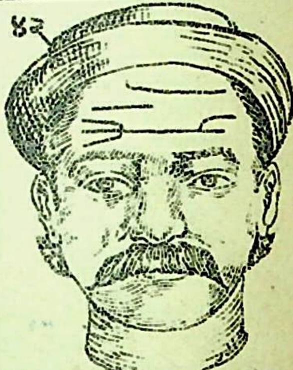

૩૭

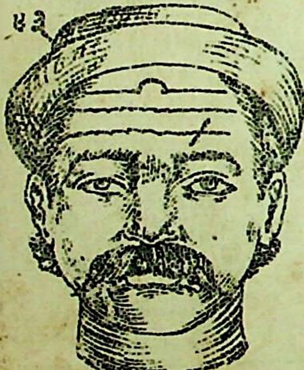

૩૮


૩૯


૪૦

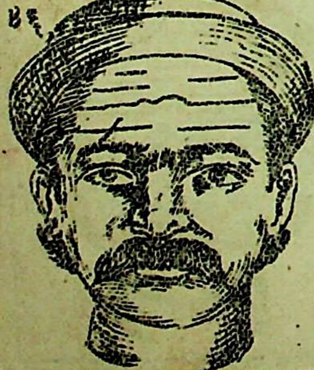

૪૧


૪૨

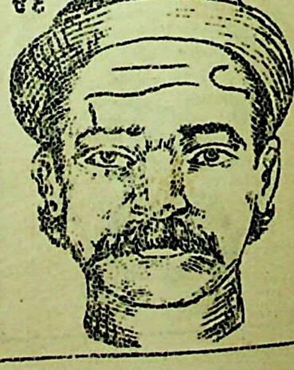

૪૩

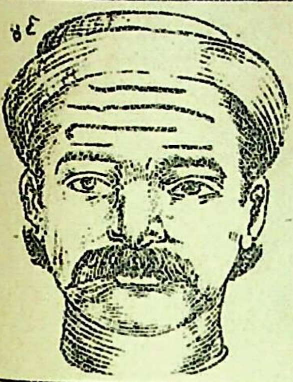

૪૪


૪૫


૪૬


૪૭

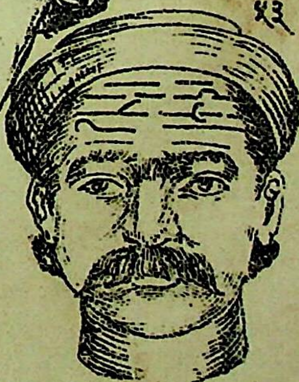

૪૮


४९


५०


५१


५२


५३



सामुद्रिकशास्त्रम्

उत्तरार्धः

द्वितीयोऽङ्कः सटीकः ।

पण्डितवरशक्तिधरशुक्लसंगृहीतम्—श्रीमद्रायबहादुर
प्रयागनारायणभार्गवेण सर्वसुखाय
स्वकीयव्ययेन

प्रथमावृत्तौ

लक्ष्मणपुरे

बाबू मनोहरलाल भार्गव बी. ए., सुपरिंटेंडेंट इत्युपाधिधारिणः प्रबन्धेन
मुंशी नवलकिशोर सी. आई. ई., मुद्रणालये मुद्राप-
यित्वा प्राकाश्यं नीतम् ।

सन् १९१९ ई० ।



अथ सामुद्रिकशास्त्रस्योत्तरार्द्धं

प्रथमाङ्कं सोदाहरणमाह—

मङ्गलाचरणम् ॥

यो देवः सकलाधिपः सुरवरः सर्वार्थसिद्धिप्रदः
कान्त्या विश्वविमोहनः कविपतिः कल्याणकल्पद्रुमः ।
देव्याराधितपादपद्मयुगलो हेरम्बताती हर-
स्तं वन्दे सुरवृन्दवन्दितपदं स्वाभीष्टसिद्ध्यै शिवम् ॥ १ ॥
अथोत्तरार्धे वक्ष्यामि भालरेखा सुलक्षणम् ।
यस्य विज्ञानमात्रेण विज्ञो देवि ! नरो भवेत् ॥ २ ॥

भालरेखातो वयः क्रमाङ्कनिर्णयमाह—

भाले विशाले खलु सप्त सन्ति रेखा विशुद्धा मुनिभिः प्रदिष्टाः ।
तासां स्वरूपं हृदये निधाय ब्रूयुः प्रमाणं वयसो बुधेन्द्राः ॥ १ ॥

विशाल भाल में मुनियों से बतलाई हुई निर्मलरूप सात रेखायें होती हैं उनका स्वरूप हृदय में धर बुधवरों को वयःक्रम का प्रमाण कहना चाहिये ॥ १ ॥

केशस्य निम्ने प्रथमां हि रेखां सौराधिनाथां कवयो वदन्ति ।
ततो द्वितीयां धिषणाधिपालां ततस्तृतीयां क्षितिसूनुनाथाम् ॥ २ ॥

केशों के निचले भाग में कवियों ने पहली रेखा को शनिस्वामिनी कहा है और दूसरी को गुरुस्वामिनी व तीसरी को मङ्गलस्वामिनी कहते हैं ॥ २ ॥

ततश्चतुर्थी दिननाथनाथा शुक्राधिपा पञ्चमिका प्रसिद्धा ।
बुधाधिनाथा खलु षष्ठिका सा या सप्तमी सा क्षणदाधिपेशा ॥ ३ ॥

तदनन्तर चौथी रेखा को सूर्यस्वामिनी, पांचवीं को भृगुस्वामिनी, छठी को बुधस्वामिनी और सातवीं को चन्द्रस्वामिनी मैंने कहा है ॥ ३ ॥

वयःक्रमस्याब्दनिरूपणेऽयं संप्रोच्यते वै नितरामुपायः ।
एका कुरेखा यदि कर्णयुग्मस्नायुं समेतीह तदा विचार्यम् ॥ ४ ॥

वयःक्रमसम्बन्धी वर्षों के निरूपण में अतिशयिता से यह उपाय कहा जाता है कि एकक्षुद्रा रेखा जबकि कानों की नस (रग) को प्राप्त होजाती है उस समय पण्डितों को विचारना चाहिये ॥ ४ ॥

एषा कुरेखा यदि वामकर्णस्नायोः समुत्था समुपैति सीमाम् ।
भालस्य वामां निगदेद्दशाब्दं वयःक्रमं वा रविवर्षसम्मितम् ॥ ५ ॥

यदि यह क्षुद्रारेखा बायें कानकी रग से उठी हुई भालकी वाम सीमा को प्राप्त होती है तो दशवर्ष या बारहवर्ष का वयःक्रम कहना चाहिये ॥ ५ ॥

अस्पष्टरूपा परिदृश्यमाना ह्येषा कुरेखा यदि भालमध्यम् ।
संभेदयित्वा खलु विस्तृता चेदेकोनत्रिंशच्छरदं वदन्ति ॥ ६ ॥

यदि कुछेक स्पष्टरूप होकर परिदृश्यमान होती हुई यह क्षुद्रारेखा कपाल का मध्यभाग भेदनकर फैलजावे तो उनतीस वर्ष का वयःक्रम कहते हैं ॥ ६ ॥

एषा कुरेखा यदि ह्रस्वरूपा वयःक्रमं ह्रस्वतरं वदन्ति ।
दीर्घा यदानीं खलु दीर्घरूपं न्यूनाधिकं वै स्वधिया विचार्यम् ॥ ७ ॥

यदि यह क्षुद्रारेखा ह्रस्वरूप से प्रतीत होवे तो अल्पवयःक्रम और यदि दीर्घरूप से प्रतीत होवे तो बड़ा वयःक्रम कहते हैं इस प्रकार विद्वानों को अपनी बुद्धि से न्यूनता या अधिकता का विचार करना चाहिये ॥ ७ ॥

अथ चक्षुर्दर्शनाज्जन्मसमयनिर्णयमाह—

यस्यास्ति चक्षुः खलु कालवर्णं रात्रौ द्वियामं जनने जनस्य ।
आश्यामवर्णं तदपेक्षया चेद्घटीमितं वै समयं समीयात् ॥ ८ ॥

जिस प्राणी का नेत्र कालावर्ण प्रतीत होता हो तो उसका जन्मसमय रात्रिके दोपहर का कहना चाहिये और जो उसकी अपेक्षा कुछेक कालावर्ण प्रतीत होता हो तो एकघड़ी का जन्म समय जानना चाहिये ॥ ८ ॥

मधुव्रताभं यदि चेच्च चक्षुस्तारासमेतं यदिवा हि कृष्णम् ।
तदा जनन्यां जनने जनस्य दिष्टं वदेद् द्वित्रिघटीप्रमाणम् ॥ ९ ॥

जिसका चक्षु भौंरे के समान वर्णवाला होकर यदि प्रतीत होता हो या तारा समेत कालावर्ण देखपड़ता हो तो उस प्राणी का जन्मसमय दो घड़ी या तीन घड़ी का कहना चाहिये ॥ ९ ॥

यन्नेत्रतारा परितः सिताढ्या सा केवला वा विशदा सनीला ।
रात्रौ वदेद्वेदघटीप्रमाणं निरूपयेद्बाणघटीमितं वा ॥ १० ॥

जिसके नेत्रकी तारा चारों तरफ़ सफ़ेद होकर प्रतीत होती हो या केवल नीलवर्ण होकर सफ़ेद ही देखपड़ती हो तो उस प्राणी का जन्मसमय रात्रि में चार या पांच घड़ी का कहना चाहिये ॥ १० ॥

यल्लोचनस्था खलु चार्धनीला तारा भवेद्वै ससिता सपीता ।
प्रातर्वदेच्छास्त्रघटीमितं वा प्रकाशयेत्सप्तघटीप्रमाणम् ॥ ११ ॥

जिसके लोचनों में टिकी हुई तारा आधी नीलवर्णवाली होकर सफ़ेद या पीली प्रतीत होती हो तो उस प्राणी का जन्मसमय प्रातःकाल छः घड़ी या सात घड़ी का कहना चाहिये ॥ ११ ॥

यस्याक्षितारामणिरेव नीलो ह्येको हि मिश्रो मणिभागको वा ।
रात्रौ वदेदष्टघटीप्रमाणं निरूपयेन्नन्दघटीमितं वा ॥ १२ ॥

जिसके नेत्र की तारामणि ही नीलवर्ण होकर प्रतीत होती हो या केवल मणिभागही मिलेवर्णवाला होकर प्रतीत होता हो तो उस प्राणी का जन्मसमय रात्रि में आठ घड़ी या नव घड़ी का कहना चाहिये ॥ १२ ॥

चक्षुः समस्तं खलु नीलवर्णं क्षुद्रं सुचिह्नं यदि वा समीपे ।
रात्रौ वदेद्दिग्घटिकाप्रमाणं तथादिशेदीशघटीमितं वा ॥ १३ ॥

जिसका सारा नेत्र कालावर्ण होकर प्रतीत होता हो या नेत्रके समीप छोटे २ से चिह्न प्रतीत होते हों तो उस प्राणी का जन्मसमय रात्रि में दश घड़ी या ग्यारह घड़ी का बताना चाहिये ॥ १३ ॥

नेत्रं यदेषद्धरितं च यस्य दिष्टं वदेत्सूर्यघटीमितं वै ।
अर्धं पलाशं यदिवार्धनीलं कालं वदेद् द्व्येकघटीमितं वा ॥ १४ ॥

जिसका नेत्र कुछेक हरासा प्रतीत होता हो तो उस प्राणी का जन्मसमय बारह घड़ी

का कहना चाहिये या जिसका नेत्र आधा हरा या आधा कालावर्ण होकर प्रतीत होता हो तो उसका जन्मसमय एक घड़ी या दो घड़ी का कहना चाहिये ॥ १४ ॥

ईषत्पलाशं मलिनं च यस्य विलोक्यते चेन्मनुजस्य चक्षुः ।
दिवा वदेद् वह्निघटीप्रमाणं निरूपयेद्वेदघटीमितं वा ॥ १५ ॥

जिसका नेत्र कुछेक हरा या मैलासा देखा जाता हो तो उस प्राणी का जन्मसमय दिन में तीन या चार घड़ी का निरूपण करना चाहिये ॥ १५ ॥

नेत्रस्य तारामणिरेव नीलो विदृश्यते वा हरितोऽपराह्णे ।
ब्रूयात्तदा बाणघटीप्रमाणं बुधो वदेच्छास्त्रघटीमितं वा ॥ १६ ॥

जिसके नेत्रकी तारामणिही नील या हरितवर्ण होकर देखी जाती हो तो उस प्राणी का जन्मसमय पण्डितको अपराह्ण में पांच या छः घड़ी का बताना चाहिये ॥ १६ ॥

बिडालनेत्रप्रतिमं च चक्षुः प्रतीयते यस्य जनस्य नूनम् ।
रात्रौ वदेत्सप्तघटीप्रमाणं विचारयेन्नागघटीमितं वा ॥ १७ ॥

जिसका नेत्र बिलार की आंखों के समान प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी का जन्मसमय रात्रि में सात या आठ घड़ी का विचारना चाहिये ॥ १७ ॥

मार्जारदृष्टिप्रभमेव चक्षुः संरक्तमध्यं यदिवा विभाति ।
रात्रौ नदेन्नन्दघटीप्रमाणं विज्ञो वदेद्दिग्घटिकामितं वा ॥ १८ ॥

जिसकी आंख बिलार की आंखों के समान कान्तिवाली होकर सोहती हो या आंख का बिचला भाग लालवर्णवाला होकर सोहता हो तो उस प्राणी का जन्मसमय विद्वान् को नव या दश घड़ी का बताना चाहिये ॥ १८ ॥

आरक्तवर्णं यदिवा हि कृष्णं प्रतीयते यस्य नरस्य नेत्रम् ।
रात्रौ वदेदीशघटीप्रमाणं विचार्य सर्वं हृदये निदेशम् ॥ १९ ॥

जिसका नेत्र लाल या कालावर्ण होकर प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी का जन्मसमय पण्डित को सारा निदेश हृदय में विचारकर ग्यारह घड़ी का कहना चाहिये ॥ १९ ॥

अथ चिह्नद्वारा जन्मलग्नमाह—

नार्या यदा वा पुरुषस्य भाले संदृश्यते चेद्विशदं च चिह्नम् ।
दशांशमध्ये खलु मेषकस्य जन्मं वदेत्तस्य जनस्य नूनम् ॥ २० ॥

---

१ घटीत्रयम् २ कथयेत् ३ पञ्चघटीप्रमाणम् ४ पण्डितः ॥

जिस नारी या पुरुष के ललाट में साफ़ सुथरा निशान यदि देखा जाता है तो उस प्राणी का जन्म मेषलग्नगत दश अंशों के बीच में यानी पहले द्रेष्काण में कहना चाहिये ॥ २० ॥

भाले विशाले वदने[1] च नेत्रे दक्षाक्षिनिम्ने ह्यथवोर्ध्वभागे ।
ओष्ठोच्चदेशे यदि भाति चिह्नं कलायसाम्यं[2] बहुलोमशं वा ॥ २१ ॥

विशालभाल, मुख, वामनेत्र, दाहने नेत्र का निचला भाग अथवा ऊपरला भाग और ओठों का ऊर्ध्व भाग इनमें यदि मटर समान या घने लोमोंवाला निशान सोहता हो ॥ २१ ॥

दशांशमारभ्य नवांशमध्ये[3] मेषस्य ज्ञेया जनिरेव जन्तोः ।
अधःस्थले वै वदनस्य यस्य विभाति चिह्नं चिबुकेऽथ वा स्यात् ॥ २२ ॥

तो उस प्राणी का जन्म मेष लग्न के दश अंश से लेकर बीस अंश के बीच में जानना चाहिये और जिस प्राणी के मुख के निचले भाग में अथवा ठोढ़ी में निशान सोहता हो ॥ २२ ॥

नवांशमारभ्य तदैडकस्य[5] त्रिंशांशमध्ये पुरुषस्य जन्म ।
वदन्ति विप्राः खलु शास्त्रनिष्ठाः साँवत्सरा[6] वेदविदां वरेण्याः ॥ २३ ॥

तो शास्त्रों में निष्ठा रखते हुए वेदवेत्ताओं में प्रधान होकर ज्योतिर्वेत्ता ब्राह्मणों ने मेष लग्नगत बीस अंश से लेकर तीस अंश के भीतर उस प्राणी का जन्म कहा है ॥ २३ ॥

रीत्या यदानीं खलु सूक्ष्मया चेद्विचारणां कर्तुमिहाभिवाञ्छेत् ।
आरभ्य भालाच्चिबुकान्तमेवं कुर्यात्तु भागत्रयमेव धीरः ॥ २४ ॥

जबकि पण्डितलोग सूक्ष्म रीति से विचार करना चाहें तो भाल से लेकर ठोढ़ी पर्यन्त तीन भाग करें ॥ २४ ॥

आद्यं च भागं प्रवदेद्दिगंशं विंशांशतुल्यं खलु युग्मभागम् ।
त्रिंशांशसाम्यं प्रवदेत्त्रिभागं विज्ञाय चेत्थं क्रियतां विचारः ॥ २५ ॥

दश अंशवाला पहला भाग बीस अंशवाला दूसरा भाग और तीस अंशवाला तीसरा भाग कहना चाहिये इस भांति जानकर विचार किया जावे ॥ २५ ॥

होरादिकान्वै सकलान्विचार्य ब्रूयात्फलादेशमिहैव धीमान् ।
ध्यात्वा हि रामं कुजया समेतं न तं विना को भणितुं समर्थः ॥ २६ ॥

होरा–द्रेष्काण–नवांशा आदि समस्त षड्वर्गों का विचार कर बुद्धिमान् फलादेश को

---

१ मुखे २ मटरप्रमाणम् ३ विंशांशमध्ये ४ उत्पत्तिः ५ मेषलग्नस्य ६ ज्योतिर्वेत्तारः ॥

कहे और यहां पर सीताराम का ध्यान धर कहना उचित है क्योंकि उनके विना को कहने के लिये समर्थ नहीं होसक्ता है ॥ २६ ॥

कण्ठप्रदेशे यदि भाति चिह्नं क्षुद्रस्वरूपं यदिवा हि कोलम् ।
संरक्तवर्णं यदिवा विडालं जनिं वदेद्वृक्षदिगंशमध्ये ॥ २७ ॥

यदि कण्ठभाग में छोटासा या बेर के बराबर निशान सोहता हो अथवा लाल बिलार के समान आकारवाला निशान यदि भासता हो तो वृषलग्नगत दश अंशों के बीच में जन्म कहना चाहिये ॥ २७ ॥

गलैकदेशे यदि भाति चिह्नं प्रागुक्तरूपं ह्यथवा किमन्यत् ।
द्रेष्काणयुग्मे वृषलग्नकस्य ब्रूयाज्जनिं वै मनुजस्य तस्य ॥ २८ ॥

यदि कण्ठ के एक देश में पूर्वोक्त निशान अथवा कोई आनही निशान सोहता हो तो वृषलग्नगत दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म कहना चाहिये ॥ २८ ॥

कण्ठोपरिस्थं जलबुद्बुदाभं किंवा सरक्तं पिटिकासमानम् ।
त्रिंशांशमध्ये वृषलग्नकस्य विद्याज्जनुर्वै पुरुषस्य तस्य ॥ २९ ॥

यदि कण्ठके ऊपरले भाग में टिका हुआ जल बुल्ले के समान या लाल फोड़े के समान निशान सोहता हो तो वृषलग्नगत तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म जानना चाहिये ॥ २९ ॥

विद्योतते चेत्खलु दक्षबाहौ स्कन्धद्वये वा यदि भाति चिह्नम् ।
दशांशमध्ये मिथुनस्य यस्य जनिं वदेत्तस्य नरस्य नूनम् ॥ ३० ॥

जिसकी दाहिनी भुजा या दोनों कन्धों में यदि कोईसा निशान प्रतीत होता हो तो मिथुन लग्नगत दश अंशों के बीच में उस प्राणी का जन्म कहना चाहिये ॥ ३० ॥

विभाति चिह्नं यदि वामबाहौ तथांसयोर्वा निकटे विभाति ।
द्रेष्काणयुग्मे खलु युग्मकस्य ब्रूयाज्जनुर्वै मनुजस्य तस्य ॥ ३१ ॥

यदि बाईं भुजा या कन्धों के समीपवर्ती निशान सोहता हो तो मिथुनलग्नगत दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म कहना चाहिये ॥ ३१ ॥

मध्ये यदानीं खलु दक्षबाहोर्विराजते चेद्विशदं च चिह्नम् ।
विंशांशतो वै शरविंशभागे युग्मस्य जन्मं प्रवदेज्जनस्य ॥ ३२ ॥

---

१ विस्फोटः पिटकास्त्रिषु २ जानीयात् ३ मिथुनस्य ४ पञ्चविंशांशभागे ॥

जिसकी दाहिनी भुजा के बीच में साफ़ सुथरा निशान प्रतीयमान होता हो तो मिथुन लग्नगत बीस अंश से लेकर पचीस अंश के भीतर उस प्राणी का जन्म बताना चाहिये ॥ ३२ ॥

विद्योतते चेत्खलु वामबाहोर्मध्ये सुचिह्नं विशदं च यस्य ।
आरभ्य विंशं सशरं तदानीं त्रिंशांशमध्ये मिथुनस्य जन्म ॥३३॥

जिसकी बाईं भुजा के बीच में यदि कोईसा निशान सोहता हो तो मिथुन लग्नगत बीस अंश से लेकर तीस अंश के भीतर उस प्राणी का जन्म कहना चाहिये ॥ ३३ ॥

वक्षःस्थले चेच्छशकाङ्घ्रिसाम्यं चिह्नं सपुष्पं ससितं विभाति ।
आद्ये दृकाणे खलु कर्कटस्य जनिं वदेद् बुद्धिवरो जनस्य ॥३४॥

जिसके वक्षःस्थल में यदि खरगोश के पैर के समान या फूल के समान सफ़ेद निशान सोहता हो तो कर्क लग्नगत पहले द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म पण्डित को बताना चाहिये ॥ ३४ ॥

चिह्नं यदा चेत्कुचयोः समीपे कोलस्वरूपं कुसुमप्रभं वा ।
दशांशमारभ्य नखांशमध्ये कर्कस्य जन्मं प्रवदेज्जनस्य ॥ ३५ ॥

जिसके स्तनों के निकट देश में यदि बेर के समान या फूल के समान निशान सोहता हो तो कर्क लग्नगत दश अंश से लेकर बीस अंशों के भीतर उस प्राणी का जन्म कहना चाहिये ॥ ३५ ॥

उरोजनिम्ने यदि भाति चिह्नं पुष्पप्रभं वा खलु फेनिलाभम् ।
वह्नौ दृकाणे सति कर्कटस्य धीरो वदेज्जन्म जनस्य तस्य ॥ ३६ ॥

जिसके स्तनों के निचले भाग में यदि फूल के समान या बेर के समान निशान सोहता हो तो कर्क लग्न के तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म पण्डित को बताना चाहिये ॥ ३६ ॥

वत्सोपरिस्थं यदि वामगं चेच्चिह्नं विशुद्धं नितरां विभाति ।
आद्ये दृकाणे मृगराजकस्य ब्रूयाज्जनुर्वै मनुजस्य तस्य ॥ ३७ ॥

यदि वामभाग में गया व वक्षःस्थल के ऊपर टिका हुआ विशुद्ध होकर चिह्न अतीव चमकता हो तो सिंहलग्न के पहले द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म बताना चाहिये ॥ ३७ ॥

वत्सस्य निम्ने यदि भाति चिह्नं प्रागुक्तरूपं ह्यथवा किमन्यत् ।

---

१ पञ्चभिःसमेतम् २ स्तनयोर्निकटे ३ विंशांशमध्ये ४ बदरसन्निभम् ५ तृतीये ६ पण्डितः ॥

युग्मे दृकाणे खलु सिंहकस्य विचारयेद्वै जननं जनस्य ॥ ३८ ॥

यदि वक्षःस्थल के निचले भाग में पूर्वोक्त चिह्न अथवा आनही कोईसा चिह्न सोहता हो तो सिंहलग्न के दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म विचारना चाहिये ॥ ३८ ॥

संप्रेक्ष्यते चेत्खलु पार्श्वभागे सातीलकाभं यदि वा कुरूपम् ।
कण्ठीरवस्यान्तिमिके[1] दृकाणे जनिं प्रतीयात्[2]पुरुषस्य तस्य ॥ ३९ ॥

पार्श्वभाग में यदि मटरसमान या छोटासा निशान देखा जाता हो तो सिंहलग्न के तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म जानना चाहिये ॥ ३९ ॥

मध्योदरे वा कुचयोः[3] समीपे बिन्दुस्वरूपं यदि नीलरक्तम् ।
आद्ये[4] दृकाणे खलु कन्यकाया धीरो वदेद्वै जननं जनस्य ॥ ४० ॥

जठर (पेट) के बीच में या स्तनों के निकट देश में काला या लाल बिन्दुरूप धारी निशान प्रकाशमान होता हो तो कन्यालग्न के पहले द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म पण्डित को बताना चाहिये ॥ ४० ॥

कुचोदरे चेद्यदि नीचदेशे रक्तं सनीलं खलु बिन्दुयुक्तम् ।
युग्मे दृकाणे सति कन्यकाया विद्याज्जनिं वै मनुजस्य तस्य ॥ ४१ ॥

यदि स्तन या पेटके निचले भाग में लाल या काजेरंगवाला होकर बिन्दुयुक्त होता हुआ निशान सोहता हो तो कन्यालग्न के दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म जानना चाहिये ॥ ४१ ॥

तुन्दस्य निम्ने यदिवा सुनाभ्याश्चिह्नं किमन्यद्विशदं विभाति ।
वह्नौ दृकाणे सति कन्यकाया ब्रूयाज्जनुर्वै खलु मानवस्य ॥ ४२ ॥

यदि तोंद (पेट) या तोंदी (तुण्डी) के निचले भाग में कोईसा आनही निशान सोहता हो तो कन्यालग्न के तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म बताना चाहिये ॥४२॥

नाभौ कटौ वा यदि लोमयुक्तं क्षुद्रस्वरूपं मृदुतासमेतम् ।
आद्ये दृकाणे खलु तौलिकस्य विद्याद्विदीशो मनुजस्य जन्म[5] ॥४३॥

यदि तोंदी या कमर में लोमसंयुक्त होकर कोमल होता हुआ छोटासा निशान भासता हो तो तुलालग्न के पहले द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म पण्डित को जानना चाहिये ॥ ४३ ॥

---

१ तृतीये २ जानीयात् ३ स्तनयोः ४ प्रथमे ५ जन्मशब्दो नान्तोऽदन्तो वेति कोषादवगम्यते ॥

प्रागुक्तचिह्नं यदि वामगं चेद्विभाति शुद्धं खलु नाभिनिम्ने ।
युग्मे दृकाणे सति तौलिकस्य बुधो वदेज्जन्म जनस्य तस्य ॥ ४४ ॥

यदि पूर्वोक्त निशान वामभाग में गया हुआ निर्मल होकर नाभी के निचले भाग में सोहता हो तो तुला लग्न के दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म पण्डित को बताना चाहिये ॥ ४४ ॥

आलोच्यते[1] चेदुदरस्य प्रान्ते चिह्नं सनीलं बहुलोमशं वा ।
वह्नौ दृकाणे सति तौलिकस्य जनिं वदेत्तस्य जनस्य सूरिः[2] ॥ ४५ ॥

यदि उदर के प्रान्तभाग में काला या घने लोमोंवाला निशान देखा जाता हो तो तुला लग्नगत तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म पण्डित को बताना चाहिये ॥ ४५ ॥

श्रोणीप्रदेशस्य तु वामभागे विभाति चिह्नं विशदस्वरूपम्[3] ।
आद्ये दृकाणे खलु वृश्चिकस्य विद्याज्जनिं वै पुरुषस्य तस्य ॥ ४६ ॥

यदि कमर के वामभाग में निर्मल होकर निशान सोहता हो तो वृश्चिक लग्नके पहले द्रेष्काण में उस प्राणीका जन्म जानना चाहिये ॥ ४६ ॥

कटप्रदेशस्य च दक्षभागे कलायसाम्यं[4] खलु भाति चिह्नम् ।
युग्मे दृकाणे सति वृश्चिकस्य ब्रूयाज्जनिं वै मनुजस्य तस्य ॥ ४७ ॥

यदि कमरके दाहिने भागमें मटरसमान निशान प्रतीयमान होता हो तो वृश्चिकलग्न के दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म बताना चाहिये ॥ ४७ ॥

अपाननिम्ने[5] यदि भाति चिह्नं हरेणुरूपं[6] विमलस्वरूपम् ।
वह्नौ दृकाणे सति वृश्चिकस्य वदेद्[7] बुधेशो जननं जनस्य ॥ ४८ ॥

यदि गुदाके निचले देशमें मटरसमान होकर निर्मल निशान प्रतीयमान होता हो तो वृश्चिकलग्न के तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणीका जन्म बुधवरको बताना चाहिये ॥ ४८ ॥

वामोरुसंस्थं विशदस्वरूपं विभाति चिह्नं जलबुद्बुदाभम् ।
आद्ये दृकाणे खलु चापकस्य[8] जनिं वदेद्बुद्धिवरो जनस्य ॥ ४९ ॥

यदि बाईं ऊरु में टिका हुआ निर्मल होकर जलबुल्ले के समान निशान सोहता हो तो धनलग्न के पहले द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म पण्डित को बताना चाहिये ॥ ४९ ॥

---

१ संप्रेक्ष्यते २ पण्डितः ३ निर्मलरूपम् ४ मटरप्रमाणम् ५ गुदाया नीचभागे ६ मटर-समानम् ७ कथयेत् ८ धनुर्लग्नस्य ॥

दक्षोरुसंस्थं विमलस्वरूपं प्रागुक्तचिह्नं नियतं विभाति ।
युग्मे दृकाणे हि धनुर्धरस्य ब्रूयाज्जनुर्वै मनुजस्य तस्य ॥ ५० ॥

यदि दाहिनी ऊरु में टिका हुआ निर्मल होकर पूर्वोक्त निशान निश्चयकर सोहता हो तो धन लग्न के दूसरे द्रेष्काण में उस मानुष का जन्म कहना चाहिये ॥ ५० ॥

ऊरुद्वयस्यापि च तूर्ध्वभागे चिह्नं यदानीं विशदं विभाति ।
वह्नौ दृकाणे खलु कार्मुकस्य समुद्भवं वै कथयेज्जनस्य ॥ ५१ ॥

यदि दोनों ऊरुओं के ऊपरले भाग में निर्मल होकर निशान सोहता हो तो धनलग्न के तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म कहना चाहिये ॥ ५१ ॥

उच्चस्थले चेत्खलु दक्षजानोरनुच्चतारासममेव भाति ।
आद्ये दृकाणे सति नक्रकस्य विद्याज्जनुर्वै मनुजस्य तस्य ॥५२॥

यदि दाहिने घुटनू के ऊपरले भाग में उँचाई रहित ताराके समान निशानही सोहता हो तो मकरलग्न के पहले द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म जानना चाहिये ॥ ५२ ॥

ऊर्ध्वस्थले चेत्खलु वामजानोः प्रागुक्तचिह्नं विशदं विभाति ।
युग्मे दृकाणे मकरस्य पुंसो ब्रूयाज्जनिं बुद्धिमतामधीशः ॥ ५३ ॥

यदि बायें घुटनूके ऊपरले भागमें पूर्वोक्त निशान निर्मल होकर सोहता हो तो मकरलग्नके दूसरे द्रेष्काण में उस पुरुषका जन्म बुधेन्द्रों को बताना चाहिये ॥ ५३ ॥

अष्ठीवतश्चेत्खलु निम्नदेशे प्रागुक्तचिह्नं यदि भाति शुद्धम् ।
वह्नौ दृकाणे सति नक्रकस्य विद्याद् बुधेशो जननं जनस्य ॥ ५४ ॥

यदि जानुओं के निचलेभाग में पूर्वोक्त निशान शुद्ध होकर सोहता हो तो मकरके तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म बुधेशों को जानना चाहिये ॥ ५४ ॥

उच्चप्रदेशे खलु दक्षजङ्घा दीर्घं त्वनुच्चं भजते हि भङ्गम् ।
आद्ये दृकाणे सति कुम्भकस्य विज्ञो वदेद्वै पुरुषस्य जन्म ॥ ५५ ॥

यदि दाहिनी जांघ ऊपरले भागमें फैलाहुआ उच्चतारहित तरङ्गाकार निशानको भजती हो तो कुम्भलग्नगत पहले द्रेष्काण में उस प्राणीका जन्म विज्ञोंको बताना चाहिये॥५५॥

वामा सुजङ्घा खलु चोर्ध्वभागे प्रागुक्तचिह्नं लभते यदानीम् ।
युग्मे दृकाणे घटलग्नकस्य विद्याज्जनिं वै मनुजस्य तस्य ॥ ५६ ॥

१ धनुषः २ मकरस्य ३ निर्मलम् ४ पुरुषस्य ५ नीचभागे ६ मकरस्य ७ तरङ्गाकारं ८ कुम्भलग्नस्य ॥

यदि बाईं जङ्घा ऊपरले भाग में पूर्वोक्त निशान को पाती हो तो कुम्भलग्न के दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म जानना चाहिये ॥ ५६ ॥

जङ्घाद्वयस्योपरिगं विभाति चिह्नं यदानीं बदर¹प्रमाणम्।
वह्नौ दृकाणे सति कुम्भकस्य ब्रूयाज्जनुर्वै खलु मानुषस्य ॥ ५७ ॥

यदि दोनों जङ्घाओं के ऊपरले भाग में बेरके प्रमाण निशान सोहता हो तो कुम्भ लग्नके तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणीका जन्म कहना चाहिये ॥ ५७ ॥

अनुन्नतं चेद्यदि मांसलग्नं चोद्भाति चिह्नं खलु वामपादे।
आद्ये दृकाणे सति मीनकस्य वदेत्सुधीरो जननं जनस्य ॥ ५८ ॥

यदि उँचाई रहित मांस में लगाहुआ निशान वामपाद के ऊपरले भाग में सोहता हो तो मीनलग्न के पहले द्रेष्काण में उस प्राणीका जन्म सुधीरको कहना चाहिये ॥ ५८ ॥

ऊर्ध्वस्थले चेद्यदि दक्षपादे प्रागुक्तचिह्नं विशदं विभाति।
युग्मे दृकाणे पृथु²लोमकस्य जनिं विपश्चि³त्प्रवदेज्जनस्य ॥ ५९ ॥

यदि दाहिने पादके ऊपरले भागमें पूर्वोक्त निशान निर्मल होकर सोहता हो तो मीन लग्नके दूसरे द्रेष्काण में उस प्राणीका जन्म पण्डितको बताना चाहिये ॥ ५९ ॥

अधःस्थलस्थं पदयोर्यदानीं संप्रेक्ष्यते चेद्विशदं च चिह्नम्।
वह्नौ दृकाणे झ⁴षलग्नकस्य ब्रूयाज्जनुर्बुद्धिवरो जनस्य ॥ ६० ॥

यदि दोनों पैरों के निचले भाग में टिकाहुआ साफ़ सुथरा होकर निशान देखा जाता हो तो मीनलग्न के तीसरे द्रेष्काण में उस प्राणी का जन्म बुद्धिमान् को कहना चाहिये ॥ ६० ॥

भाले मुखे वा यदि लक्ष्म मेषं वृषं च कण्ठे मिथुनं च बाह्वोः।
कर्कं च चित्ते जठरे च सिंहं कट्यां च कन्यां कथयन्ति धीराः॥ ६१ ॥

यदि ललाट या मुख में कैसाही निशान प्रतीयमान होता हो तो मेष व कण्ठ में हो तो वृष और भुजाओं में हो तो मिथुन तथा हृदय में हो तो कर्क व पेट में हो तो सिंह और यदि कमर में हो तो कन्या जन्मलग्न धीरों ने कहा है ॥ ६१ ॥

नाभेरधःस्थं प्रवदेत्तुलाख्यं गुह्यप्रदेशे खलु वृश्चिकाख्यम्।
ऊरुस्थलस्थं धनुरेव विद्याज्जानुस्थितं वै मकरं बुधेशः ॥ ६२ ॥

---

१ बेरीफलसमानम् २ मीनलग्नस्य ३ पण्डितः ४ मीनस्य ॥

यदि नाभी के निचले भाग में टिका हुआ निशान प्रतीयमान होता हो तो जन्मलग्न तुला कहना चाहिये और यदि गुह्यप्रदेश में निशान हो तो वृश्चिक व ऊरुओंमें हो तो धनलग्न व घुटनुओं में हो तो मकरलग्न बुधवरों को जानना चाहिये ॥ ६२ ॥

जङ्घास्थितं वै कथयन्ति कुम्भं पादस्थितं चेत्खलु मीनमाहुः।
स्थूलां सुरीतिं हृदये निधाय व्याख्यायि लग्नं जनुषो जनानाम् ॥६३॥

यदि जांघों में टिका हुआ निशान सोहता हो तो पण्डितों ने कुम्भ को जन्मलग्न कहा है और यदि पादतलों में टिकाहुआ चिह्न भासता हो तो आचार्यों ने मीन को जन्मलग्न बतलाया है इस भांति स्थूलरीति को हृदय में धारण कर जनों का जन्मलग्न कहा गया ॥ ६३ ॥

अथ भालस्थमेषादिस्वरूपज्ञानमाह—

चिह्नं यदानीं विशदाङ्कुशाभं प्रोक्तं पुराणैः खलु मेषकस्य।
चत्वेदाङ्कसाम्यं वृषभस्य चिह्नं गायन्ति विप्रा वरबुद्धिमन्तः ॥ ६४ ॥

यदि निर्मल अङ्कुश के समान निशान सोहता हो तो उसे पुराने पण्डितों ने मेष लग्न का चिह्न कहा है और बुद्धिवर ब्राह्मणोंने वृषलग्न का चिह्न चार अङ्कके समान गायाहै॥६४॥

कोणेन युक्तं सरलं द्विरेखं युग्मस्य चिह्नं कविभिः प्रयुक्तम्।
सप्ताङ्कयुग्मं यदि व्यस्तरूपं प्रकाशितं वै खलु कर्कटस्य॥ ६५ ॥

कोण से युक्त सीधा दो रेखाओंवाला मिथुन का चिह्न कवियों ने कहा है और यदि सात अङ्क का जोड़ा उलटे रूप से प्रतीत होता हो तो उसे कर्कलग्न का चिह्न पण्डितों ने प्रकाशित किया है ॥ ६५ ॥

ऋमातृकायुक्तपदं यदानीं विद्योतते चेत्खलु वृत्तकायम्।
सिंहस्य चिह्नं विशदीकृतं वै साँवत्सरैर्वेदविदां वरिष्ठैः ॥ ६६ ॥

यदि ऋकारकी मात्रा से जुड़े हुए पैरोंवाला वृत्ताकार निशान सोहता हो तो उसे वेदवेत्ताओं में प्रधान, ज्योतिर्वेत्ता लोगों ने सिंह का चिह्न प्रकट किया है ॥ ६६ ॥

यन्त्रीस्वरूपं सरलं विशुद्धं प्रोक्तं हि चिह्नं खलु बालिकायाः।
नीचप्रदेशे कुटिलैकरेखं विज्येनयुक्तं धनुषा यदोर्ध्वे[1] ॥ ६७ ॥

सीधा व साफ़ यन्त्री के समान रूपवाला कन्या का चिह्न पण्डितों ने कहा है और जिसके निचले देश में टेढ़ी एक रेखा हो व ऊपरले भाग में रोदारहित धन्वाकार निशान सोहता हो ॥ ६७ ॥

१ ऊर्ध्वभागे विगुणेन धनुषा समेतम् ॥

वदन्ति चिह्नं खलु तौलिकस्य यमस्वरूपं द्रुणिकस्य ज्ञेयम्।
खर्जूरशाखासममेव रूपं चापस्य चिह्नं भणितं प्रवीणैः॥ ६८॥

तो उसे तुला का चिह्न कहते हैं और यम के स्वरूपवाला वृश्चिक का निशान जानना चाहिये और जिसका रूप खजूर की शाखा समानही भासता हो तो उसे पण्डितों ने धनलग्न का चिह्न कहा है॥ ६८॥

द्वीपीस्वरूपं कवयो वदन्ति नक्रस्य चिह्नं गदितं सुधीभिः।
वक्रं द्विरेखं खलु कुम्भकस्य षट्त्रिंशसाम्यं पृथुलोमकस्य॥६९॥

द्वीपी समान रूपवाला पण्डितोंसे कहा हुआ मकर का चिह्न पण्डितोंने कहा है टेढ़ी दो रेखाओंवाला कुम्भ का चिह्न कहाहै और छत्तीस अङ्क सम रूपवाला निशान मीन लग्न का कहा जाता है॥ ६९॥

एतानि चिह्नानि मयोदितानि मेषादिकानां खिलराशिकानाम्।
विज्ञाय चेत्थं सुधिया विचार्यं शुभाशुभं वै मनुजस्य नूनम्॥ ७०॥

मेष आदि समस्त राशियों के ये चिह्न मैंने कहे हैं इस भांति उन सबों को जानकर मानवगणों का शुभाशुभ पण्डितों को विचारना चाहिये॥ ७०॥

अथ भाले मेषादिवासज्ञानमाह—

भालोच्चदेशे वसतीह कर्को मध्यस्थले वै वृषभो विभाति।
दक्षभ्रुकुट्यां भ्रमतीह सिंहो वामभ्रुकुट्यां खलु कुम्भकोऽपि॥ ७१॥

ललाट के ऊपरले भाग में कर्क बसता है व भाल के मध्यभाग में वृष सोहता है व दाहिनी भौंह पर सिंह घूमता है और बाईं भौंह पर कुम्भ रहता है॥ ७१॥

दक्षाम्बकोर्ध्वे धनुरेव भाति दक्षश्रुतोर्ध्वे घटको विभाति।
वामश्रुतोर्ध्वे मिथुनं च मेषो नासोच्चदेशे खलु वृश्चिकोपि॥ ७२॥

दाहिने नेत्र के ऊपरले भाग में धनही विराजता है व दाहिने कान के ऊर्ध्वभाग में तुला सोहती है व बायें कान के ऊपरले भाग में मिथुन और मेष भासता है और नासिका के ऊर्ध्वदेश में वृश्चिक रहता है॥ ७२॥

दक्षे तु गण्डे वसतीह बाला वामे च गण्डे खलु मीनकोऽपि।
नक्रस्थितो वै चिबुकोर्ध्वदेशे वासो हि ज्ञेयोऽखिलराशिकानाम्॥७३॥

१ खर्जूरशाखासदृशं यदानीमिति वा पाठः २ मकरस्य ३ मीनस्य ४ कथितानि ५ ललाटोर्ध्वदेशे ६ दक्षिणभ्रुकुटौ ७ दक्षिणनेत्रोर्ध्वे॥

दाहिने गाल पर कन्या सोहती है और बायें गाल पर मीन और ठोढ़ी के ऊपरले भाग में वृश्चिक टिका रहता है यह समस्त राशियों का वास जानना चाहिये ॥ ७३ ॥ (देखो चित्र नं० १)

अथ रव्यादिग्रहाणां स्वरूपज्ञानमाह—

वृत्तस्वरूपं खलु बिन्दुमध्यं मार्तण्डचिह्नं मुनयो वदन्ति ।
चापानुरूपं विशदस्वरूपं चन्द्रस्य चिह्नं गदितं सुधीभिः ॥७४॥

मध्य में बिन्दुवाला वृत्ताकार सूर्य का चिह्न मुनियों ने कहा है और निर्मलरूप धन्वाकार चन्द्रमा का चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ ७४ ॥

शीर्षत्रिशाखं क्षितिजस्य चिह्नं ठस्यानुरूपं कवयः कुर्वन्ति ।
धनाङ्कयुक्तं खलु वृत्तमध्यं मस्तद्विशाखं भणितं बुधस्य ॥ ७५ ॥

शीश में तीन शाखाओंवाला ठकार के अनुरूप मङ्गल का चिह्न कवियों ने कहा है और धनाङ्क से युक्त व बीच में गोलाकार होता हुआ मस्तक में दो शाखाओंवाला बुध का चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ ७५ ॥

रेखाविभिन्नं विशदस्वरूपं युग्माङ्कसाम्यं धिषणस्य चिह्नम् ।
धनाङ्कयुक्तं यदि नीचदेशे सुवृत्तकायं खलु भार्गवस्य ॥ ७६ ॥

सरल रेखा से कटाहुआ साफ़ दो अंकके समान रूपवाला निशान बृहस्पति का चिह्न कहा जाता है और यदि निचले भाग में धनाङ्क से युक्त होकर गोलाकार निशान प्रतीत होता हो तो उसे शुक्र का चिह्न कहते हैं ॥ ७६ ॥

इकारसाम्यं विशदस्वरूपं चिह्नं संतोक्तं रविजस्य नूनम् ।
विज्ञाय रूपं निखिलग्रहाणां संस्थापयेद्वै वदने बुधेशः ॥ ७७ ॥

विशुद्धरूप इकार के समान आकारवाला शनैश्चर का चिह्न पण्डितों ने कहा है इस भांति समस्तग्रहोंका रूप जानकर पण्डितों को वदनमें स्थापित करना चाहिये ॥ ७७ ॥

अथ ललाटे सूर्यादिवासज्ञानमाह—

भाले विशाले वसतीह भौमो दक्षोम्बके[2] वै दिनपो[3] विभाति ।
वामे सुनेत्रे क्षणदाधिपेशः[4] श्रोत्रे च दक्षे सुरराजवन्द्यः[5] ॥ ७८ ॥

इस विशाल भाल में मङ्गल बसता है व दाहिने लोचन में सूर्य सोहते हैं व बायें नेत्र में चन्द्रमा विराजता है और दाहिने कान में बृहस्पति रहते हैं ॥ ७८ ॥

---

१ मयोक्तमिति वा पाठः २ दक्षिणनेत्रे ३ सूर्यः ४ चन्द्रः ५ बृहस्पतिः ॥

वामे च कर्णे रविजं वदन्ति नासास्थितं वै कथयन्ति काव्यम्।
चन्द्रात्मजं वेदविदो मुखाब्जे वासो हि ज्ञेयोऽखिलखेचराणाम् ॥ ७६ ॥

वेदवेत्ता पण्डितगण बायें कानमें शनैश्चर को बतलाते हैं व नाकमें टिकेहुए शुक्रको और मुखकमल में बुध को कहते हैं इसभांति समस्तग्रहों का वास जानना चाहिये ॥ ७६ ॥ (देखो चित्र नं० २)

अथ भालस्थरेखाज्ञानमाह—

भाले विशाले खलु सप्त सन्ति रेखा विशुद्धा मुनिभिः प्रदिष्टाः।
तासां स्वरूपं हृदये निधाय ब्रूयात्फलादेशमिहैव धीमान् ॥ ८० ॥

विशाल भाल में मुनिप्रणीत विशुद्ध होकर सात रेखायें विद्यमान हैं उनका स्वरूप हृदय में धारकर बुद्धिमान् को फलादेश कहना चाहिये ॥ ८० ॥

केशस्य निम्ने रविजस्य रेखा ज्ञेया ततो वै धिषणस्य धेया।
तन्नीचभागे खलु भौमकस्य तन्निम्नतोथो दिवसाधिपस्य ॥ ८१ ॥

बालों के निचले भाग में शनैश्चर की रेखा जानना चाहिये उसके बाद बृहस्पति की रेखा धारना चाहिये उसके नीचले भाग में मङ्गल की व उसके नीचे सूर्य की रेखा जानना चाहिये ॥ ८१ ॥

ततो ह्यधःस्थां किल भार्गवीयां तन्नीचदेशे विवदेद् बुधस्य।
तन्निम्नदेशे क्षणदाधिपस्य रेखां वदेयुः खलु पण्डितेन्द्राः ॥ ८२ ॥

उसके निचले स्थान में शुक्र की रेखा व उसके अधःस्थल में बुध की रेखा और उसके निचले देश में प्रधान पण्डितलोग चन्द्रमा की रेखा कहते हैं ॥ ८२ ॥ (देखो चित्र नं० ३)

सूक्ष्मे विचारे दिनपस्य रेखां दक्षे च नेत्रे शशिनश्च वामे।
भ्रूमध्यदेशे खलु भार्गवस्य ब्रूयात्सुधीरो विधुजस्य वक्त्रे ॥ ८३ ॥

सूक्ष्म विचार करने पर दाहिने नेत्रके ऊपरले भाग में सूर्य की रेखा, बायें नेत्र के ऊर्ध्वस्थल में चन्द्रमा की रेखा, भौंहों के बिचले भाग में शुक्र की रेखा और वदन में या नासिका के अग्रभाग में बुधकी रेखा पण्डित को कहना चाहिये ॥ ८३ ॥ (देखो चित्र नं० ४)

---

१ शनैश्चरम् २ शुक्रम् ३ वदनसरोजे ४ व्याख्याताः ५ कथयेत् ६ शनैश्चरस्य ७ बृहस्पतेः ८ सूर्यस्य ९ शुक्रस्य १०. चन्द्रस्य ११. कथयेयुः ॥

यस्यास्ति भाले धिषणस्य रेखा संभुग्नमध्या विशदा विभाति।
ज्ञानी धनी स्यान्मनुजस्तदानीं सद्वृत्तशाली सरलस्वभावः ॥ ८४ ॥

जिसके भाल में बृहस्पति की रेखा बीच में टेढ़ी होकर विशुद्ध होतीहुई सोहती हो तो वह प्राणी ज्ञानी व धनी होताहुआ महायशस्वी होकर सीधे स्वभाववाला होता है ॥ ८४ ॥ (देखो चित्र नं० ५)

वृत्तेन युक्ता सुरराजमन्त्रिरेखा विशुद्धा कुटिला विभाति।
वित्तस्य नाशं लभते मनुष्यो भ्रान्तो भवार्तो भयतामुपैति ॥ ८५ ॥

बृहस्पति की रेखा वृत्ताकार निशान से संयुक्त व विशुद्ध होकर टेढ़ी होती हुई सोहती हो तो वह प्राणी भ्रान्त होकर सांसारिक दुःखों से पीड़ित होता हुआ भयसमूह को पाता है ॥ ८५ ॥ (देखो चित्र नं० ६)

मन्दस्य रेखा कुटिला विभाति भौमस्य रेखा धनुषाकृतिश्चेत्।
दुष्टामवस्थामवलम्ब्य जन्तुर्जायाविहीनो जडतामुपैति ॥ ८६ ॥

शनैश्चर की रेखा टेढ़ी होकर सोहती हो और मङ्गलकी रेखा धन्वाकार होकर प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी बुरी दशाका अवलम्बनकर जायारहित होता हुआ जड़ता को पाता है ॥ ८६ ॥ (देखो चित्र नं० ७)

भाले विशाले सरला हि तिस्रो रेखा विशुद्धा नितरां विभान्ति।
सौभाग्यशाली सरलस्वभावो नीतौ रतः स्यात्सकलप्रियश्च ॥ ८७ ॥
प्रवञ्चनाशून्यवपुर्विलासी प्रशंसनीयो महतामुपासी।
सतां चरित्रेण युतो मनस्वी सुती सुविद्यः सुखतामुपैति ॥ ८८ ॥

जिसके विशालभाल में तीन रेखायें विशद होकर अतीव चमकती हों तो वह प्राणी सीधेस्वभाववाला व सबों का प्यारा होकर नीति में परायण होता हुआ सौभाग्यशाली होता है व प्रतारणा से रहित तनुवाला, विलासी, प्रशंसनीय, महात्माओं का उपासक, सच्चरित्र से संयुक्त, मनमौजी होताहुआ पुत्रवान् व विद्यावान् होकर सुखसमूह को पाता है ॥ ८७ । ८८ ॥ (देखो चित्र नं० ८)

मध्ये विभिन्ना यदि मन्दरेखा स्वल्पस्वरूपा सुरपूजितस्य।
भिन्ना यदानीमवनीसुतस्य सूर्याब्जयोश्चेत्खलु स्वल्परूपा ॥ ८९ ॥
सोयं नरः स्याद् बहुकार्यकारी संमानितो मानसशक्तिधारी।
सौभाग्यहीनो हि यदा कदापि चिन्तान्वितो वै चपलस्वभावः ॥ ९० ॥

यदि शनैश्चर की रेखा बीच में छिन्नभिन्न हो व बृहस्पति की रेखा छोटीसी हो व मङ्गल की रेखा भिन्न हो और सूर्य तथा चन्द्रमा की रेखा स्वल्परूपवाली होकर प्रतीत हो तो वह प्राणी घने कामों का करनेवाला व भलीभांति मानित होकर मानसगुणशाली व जवकृव सौभाग्यहीन व चपलस्वभाववाला होता हुआ चिन्ता से युक्त रहता है ।। ८९।९० ।। (देखो चित्र नं० ९)

मन्दाररेखा सरलस्वरूपा तन्मध्यगा चेत्कुटिला गुरोश्च ।
सौभाग्यशाली मनुजस्तदानीं मानी महौजा धनतामुपैति ॥ ९१ ॥

यदि शनैश्चर व मङ्गल की रेखा सीधी होकर प्रतीत हो और उन दोनों के बीच में गई हुई बृहस्पति की रेखा टेढ़ी होकर भासती हो तो वह प्राणी सौभाग्यशाली होता हुआ मानी व महाबली होकर धनसमूह को पाता है ॥९१॥ (देखो चित्र नं० १०)

सौरी सुरेखा विशदा विभाति सर्पानुरूपा सुरबन्दितस्य ।
सोयं नरः स्याद्व्यवसायशाली वित्ताभिलाषी जनवञ्चकश्च ॥ ९२ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा साफ़ सीधी हो व बृहस्पति की रेखा सर्पाकार होकर प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी रोज़गारी होकर धनाभिलाषी होता हुआ जनवञ्चक होताहै॥९२॥ (देखो चित्र नं० ११)

भान्तीह भाले मनुजस्य यस्य छिन्ना विभिन्ना बहुशो हि रेखाः ।
पीडाकराघातमुपैति देहे दौर्भाग्यशाली दयिताविहीनः ॥ ९३ ॥

जिस प्राणी के भाल में बहुतसी रेखायें छिन्नभिन्न होकर सोहती हों तो वह दौर्भाग्य-शाली होकर प्यारी से विहीन होता हुआ देह में कष्टकारक आघातों को पाता है ॥९३ ॥ (देखो चित्र नं० १२)

नीचोर्ध्वभिन्ना वृजिना हि सौरी द्विच्छिन्नकण्ठा धिषणाधिपा स्यात् ।
कौजी कुरेखा यदि भाति भाले प्राप्त्वा त्वनिष्टं धननाशमेति ॥ ९४ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा निचले तथा ऊपरले भाग में भग्न होकर टेढ़ी सोहती हो व बृहस्पतिकी रेखा टेढ़ी व तीन खण्डवाली होकर प्रतीत होती हो तथा मङ्गल की रेखा छोटी होकर जिसके ललाट में सोहती हो तो वह प्राणी अनिष्ट को पाकर धनक्षय को पाता है ॥ ९४ ॥ (देखो चित्र नं० १३)

द्विच्छिन्नमध्या सरलार्कसूनोर्मध्ये विभिन्ना गुरुभौमयोश्च ।
सम्पत्तिनाशं लभते मनुष्यस्तथाधिकारीकृतवस्तुहानिम् ॥ ९५ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा सीधी होकर बिचलेभाग में छोटीसी दो रेखाओं से कटी हुई प्रतीत होवे और बृहस्पति तथा मङ्गल की रेखा मध्यभाग में भग्न देखपड़ती हो तो वह प्राणी सम्पत्तिनाश व अधिकृतवस्तु की हानिको पाताहै॥ ९५ ॥ (देखो चित्र नं० १४)

मन्दस्य रेखा धनुषाकृतिश्चेद्गीर्वाणवन्द्यस्य तथा विभाति ।
भौमी गभीरा विनता यदानीं दौर्जन्ययुक्तो मनुजोऽधमः स्यात् ॥ ९६ ॥

यदि शनैश्चर व बृहस्पति की रेखा धन्वाकार होकर प्रतीत हो और मङ्गल की रेखा गहरी होती हुई लचीसी भासती हो तो वह प्राणी अधम होकर दुर्जनता में परायण रहता है ॥ ९६ ॥ (देखो चित्र नं० १५)

रेखा गभीरा विशदा हि सौरी विभाति वक्रा बृहतां पतेश्च ।
दुष्टामवस्थामवलम्ब्य जन्तुर्जायाभिभूतो भयतामुपैति ॥ ९७ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा विशद होकर गहरी प्रतीत हो और बृहस्पति की रेखा वक्राकार होकर सोहती हो तो वह प्राणी दुष्ट अवस्था का अवलम्बनकर निज नारी से अनादृत होता हुआ भयसमूह को पाता है ॥ ९७ ॥ (देखो चित्र नं० १६)

भाले विशाले मनुजस्य यस्य मध्ये विभग्ना यदि भाति मान्दी ।
नीचोर्ध्वभग्ना वृजिना गुरोश्च सार्प्या सुभग्ना कुटिला हि कौजी ॥९८॥
सोयं मनुष्यो नरघातकारी वेश्याविहारी वनितापहारी ।
दुरोदराक्रान्तमना मनस्वी प्राप्नोति मृत्युं स्वयमेव भीत्या ॥ ९९ ॥

जिसके विशाल भाल में यदि शनैश्चर की रेखा बीचमें कटीहुई सोहती हो व निचले तथा ऊपरले भाग में बृहस्पति की रेखा भग्न होकर टेढ़ी प्रतीत हो और मङ्गल की रेखा सर्पसमान व भग्न होती हुई टेढ़ी होकर प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी नरहत्याकारी, वेश्याविहारी, वनितापहारी होकर जुआड़ी व मनमौजी होताहुआ डरसे आपही मौत को पाता है ॥ ९८ । ९९ ॥ (देखो चित्र नं० १७)

यस्यास्ति भाले विशदा गभीरा रेखा यदैका धनुषाकृतिश्चेत् ।
सोयं जघन्यो मनुजो जनानां नीचस्वभावो भ्रमतेऽप्यजस्रम् ॥ १०० ॥

जिसके भाल में उज्ज्वल व गहरी होतीहुई एकही रेखा धन्वाकार होकर प्रतीत होवे तो वह प्राणी मनुजों में अधम होताहुआ नीच स्वभाववाला होकर हमेशा ही घूमता रहता है ॥ १०० ॥ (देखो चित्र नं० १८)

संमध्यभग्ना रविजस्य रेखा वामात्रिशाखा धिषणस्य भाति ।
सोयं मनुष्यश्चपलस्वभावश्चञ्चत्प्रभावोऽनृतभावमेति ॥ १ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा बीचमें भग्न होकर प्रतीयमान होती हो और यदि बृहस्पति की रेखा वामभाग में तीन शाखाओंवाली होकर सोहती हो तो वह प्राणी चपलस्वभाववाला व प्रदीप्त प्रभाववाला होकर असत्यता को पाता है यानी झूठा होता है ॥ १ ॥ (देखो चित्र नं० १६)

रेखाश्चतस्रो यदि भान्ति भाले संमध्यभग्ना प्रथमा चतुर्थी ।
सोयं नरः स्यात्सरलस्वभावः सतां चरित्रेण युतो मनीषी ॥ २ ॥

यदि भाल में चार रेखायें सोहती हों उन्होंमें से पहली व चौथी विचले भाग में कटीहुई प्रतीत हो तो वह प्राणी सीधे स्वभाववाला व बुद्धिमान् होकर सज्जनों के चरित्रों से युक्त रहता है ॥ २ ॥ (देखो चित्र नं० २०)

सर्पाननाभा यदि भाति मान्दी कुजेज्ययोश्चेत्कुटिला विभाति ।
उच्चस्थलाद्वै पतितो मनुष्यो देहाभिघातं लभते नितान्तम् ॥ ३ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा सर्पफणाकार होकर सोहती हो और मङ्गल व बृहस्पति की रेखा टेढ़ीसी भासती हो तो वह प्राणी ऊंचे स्थान से गिरता हुआ देहमें अत्यन्त चोट चपेट को पाता है ॥ ३ ॥ (देखो चित्र नं० २१)

मान्दी विभुग्ना यदि मध्यभग्ना नीचे विभग्नाधिषणस्य चाल्पा ।
भिन्ना यदोर्ध्वे सरला हि भौमी संमध्यभग्ना कुटिला रवेश्च ॥ ४ ॥
दैत्यार्चिताल्पा क्षणदाधिपस्य द्वाभ्यां विभिन्ना यदि भाति भाले ।
सौभाग्यहीनो हि यदा कदापि पुनर्दरिद्री पुनरेव भोगी ॥ ५ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा टेढ़ी होकर विचले भाग में भग्न हो व बृहस्पति की रेखा निचले भाग में भग्न होकर छोटीसी हो व मङ्गल की रेखा ऊपरले भाग में भिन्न होकर सीधी हो व सूर्य की रेखा बीचमें कटीहुई टेढ़ी सोहती हो व शुक्र की रेखा छोटीसी और चन्द्रमा की रेखा दो रेखाओं से कटी हुई प्रतीत होवे तो वह प्राणी जब कब सौभाग्यहीन होताहुआ फिर दरिद्री व फिर भोगी होता है ॥ ४ । ५ ॥ (देखो चित्र नं० २२)

अर्धेन्दुसाम्याः खलु केशनिम्ने क्षुद्रस्वरूपा यदि सप्त सन्ति ।
भाले विशाले गुरुभौमयोश्च सर्प्ये द्विरेखे विशदे विभातः ॥ ६ ॥

विशाल भाल में बालों के नीचे अर्धचन्द्रसमान छोटीसी सात रेखायें प्रतीत हों और बृहस्पति व मङ्गल इन दोनों की रेखायें विशद होकर सर्पाकार सोहती हों ॥ ६ ॥

सोयं नरो मज्जति वारिवाहे कीलालगर्ते पतितोऽथवा स्यात् ।

---

१ शुक्रस्य २ चन्द्रस्य ३ अर्धचन्द्रसमानाकाराः ४ सर्पाकारे ॥

भ्रान्तो भवार्तो भयतासमेतश्चिन्तान्वितो वै चपलस्वभावः ॥ ७ ॥

तो वह प्राणी जल में डूबता है अथवा पानी के कुण्ड में गिरता हुआ भ्रान्त, दुःखार्त, भयसमूहसे युक्त व चिन्तासमेत होकर चपलस्वभाववाला होता है ॥ ७ ॥ (देखो चित्र नं० २३)

मन्दाररेखा यदि मध्यभग्ना तदन्तरे चेद्विनताग्गुरोश्च ।
सौभाग्यशाली मनुजस्तदानीं व्युत्पन्नबुद्धिर्धनतामुपैति ॥ ८ ॥

यदि शनैश्चर व मङ्गल इन दोनों की रेखायें बीच में भग्न हुई प्रतीयमान होती हों और उन दोनों के बीच में बृहस्पति की रेखा लचीहुई सोहती हो तो वह प्राणी सौभाग्यशाली होताहुआ व्युत्पन्नबुद्धि होकर धनसमूहों को पाता है ॥ ८ ॥ (देखो चित्र नं० २४)

लग्ने मिथश्चेद्यदि मध्यभग्ने मन्देज्यरेखे कुटिले विभातः ।
पाशेन मृत्युं लभते मनुष्यो हत्याप्रकाण्डैः सहितो नराणाम् ॥ ९ ॥

यदि शनैश्चर व बृहस्पति की दोनों रेखायें परस्पर लगी या सटीहुई बीच में भग्न होकर टेढ़ी सोहती हों तो वह प्राणी हत्यासमूहों से संयुक्त होताहुआ फांसी से मौत को पाता है ॥ ९ ॥ (देखो चित्र नं० २५)

मान्दी गभीरा विनता विभाति स्वल्पस्वरूपा सुरपूजितस्य ।
भौमी विभुग्ना जटुलेन युक्ता हत्याकरो वै पुरुषः कठोरः ॥ १० ॥

यदि शनैश्चर की रेखा गहरी होकर लचीसी सोहती हो, बृहस्पति की रेखा छोटीसी हो और मङ्गल की रेखा टेढ़ी होकर मसा से संयुक्त प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी कठोर होकर हत्याकारी होता है ॥ १० ॥ (देखो चित्र नं० २६)

सौरी सुरेखा सरला विभाति सुरेन्द्रवन्द्यस्य च नीचभुग्ना ।
स्वल्पस्वरूपा धरणीसुतस्य सौभाग्यशाली धनतासमेतः ॥ ११ ॥

यदि शनैश्चरकी रेखा सीधीसी भासती हो व बृहस्पति की रेखा निचले भाग में टेढ़ी हो और मङ्गल की रेखा छोटीसी प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी धनवान् होकर सौभाग्यशाली होता है ॥ ११ ॥ (देखो चित्र नं० २७)

सर्पाननाभा यदि भाति भाले भ्रूमध्यदेशे सरला विभान्ति ।
सोयं मनुष्यो बहुभाषणाढ्यो वामाप्रसक्तो बलतासमेतः ॥ १२ ॥

यदि भालमें सर्पसमान होकर एकही रेखा सोहती हो और भौंहों के बिचले भाग में

सीधी बहुतसी रेखायें भासती हों तो वह प्राणी बड़ा वक्ता होकर रमणियों में रत होता हुआ बलसमूहों से संपन्न होता है ॥ १२ ॥ (देखो चित्र नं० २८)

भाले विशाले मनुजस्य रेखाश्छिन्ना विभिन्ना बहुशो विभान्ति ।
सोयं महेच्छो बहुकार्यकारी सामान्यमात्रोऽखिलमानवानाम् ॥ १३ ॥

जिसके विशाल भाल में बहुतसी रेखायें छिन्न भिन्न होकर प्रतीत होवें तो वह प्राणी बड़ी चाहनावाला व घने कार्यों का करनेहारा होकर समस्त मनुष्यों में सामान्यमात्र होता है ॥ १३ ॥ (देखो चित्र नं० २६)

नीचोर्ध्वभग्ने कुजमन्दरेखे दक्षे च वामे भुजगानने स्तः ।
तदन्तरं चेत्पविलाञ्छनाढ्यं पाशेन मर्त्यो मृतिमेति नूनम् ॥ १४ ॥

मङ्गल और शनैश्चर की रेखायें निचले तथा ऊपरले भागमें सर्पानन के समान होकर भासती हों और उन दोनों के मध्य में वज्राकारसा निशान प्रतीयमान होता हो तो वह प्राणी निश्चयकर फांसी से मौतको पाता है ॥ १४ ॥ (देखो चित्र नं० ३०)

सौरी सुरेखा विनता यदानीं भुग्नस्वरूपा धिषणस्य भाति ।
संमध्यभग्ना धरणीसुतस्य दीर्घा गभीरा कुटिला रवेश्च ॥ १५ ॥
महाधनाढ्यो मनुजो मनीषी सौभाग्यशाली सुखदो जनानाम् ।
दाता दयालुर्दयितानुरक्तो धन्यो धरायां धरया समेतः ॥ १६ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा बड़ीभारीं होकर लचीसी प्रतीत हो व बृहस्पति की टेढ़ी होकर सोहती हो व मङ्गल की रेखा बीचमें भग्न होकर भासती हो और सूर्यकी रेखा दीर्घाकार व गहरी होकर टेढ़ीसी दीखती हो तो वह प्राणी महाधनवान्, बुद्धिमान्, सौभाग्यशाली, जनसुखदायक, दाता, दयालु व दयिता में अनुरक्त होकर धरासमेत धरामण्डल में प्रशंसनीय होता है ॥ १५ । १६ ॥ (देखो चित्र नं० ३१)

मन्देज्यरेखे यदि मध्यभग्ने कौजी सुरेखा सरला विभाति ।
स्वल्पस्वरूपा दिनपस्य भाति वामे विभुग्ना किल भार्गवीया ॥ १७ ॥
व्युत्पन्नबुद्धिर्मनुजो हि शास्त्री सौभाग्ययुक्तो धनतासमेतः ।
प्रवञ्चनाशून्यवपुर्विलासी सद्वृत्तशाली चतुरोतिकोपी ॥ १८ ॥

यदि शनैश्चर व बृहस्पति की रेखा बीच में भग्न होकर भासती हो व मङ्गल की रेखा दीर्घाकार होकर सीधी सोहती हो व सूर्यकी छोटीसी व शुक्रकी रेखा बायें तरफ़

टेढ़ीसी देख पड़ती हो तो वह प्राणी शास्त्री, व्युत्पन्नबुद्धि, सौभाग्यवान्, धनवान्, छलरहि व अच्छे चरित्रोंवाला व चतुर होकर महाकोपी होता है ॥ १७ । १८ ॥ (देखो चित्र नं० ३२)

स्वल्पा विभुग्ना रविजस्य रेखा सर्पाननाढ्या धिषणस्य भग्ना ।
शाखासमेता विनता हि भौमी मूढो मनुष्यो नरघातकारी ॥ १९ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा छोटीसी होकर टेढ़ी व बृहस्पति की रेखा बीचमें भग्न होक सर्पानन से संयुक्त हो और मङ्गलकी रेखा शाखा समेत होकर लचीसी भासती हो तो वह प्राणी महामूर्ख होकर नरहत्याकारी होता है ॥ १९ ॥ (देखो चित्र नं० ३३)

मान्दी गभीरा विनता विभाति स्वल्पस्वरूपा सुरपूजितस्य ।
पृथ्वीतनूजस्य तनुस्वरूपा दीर्घाद्विभिन्ना द्युमणेर्नता चेत् ॥ २० ॥
सोयं जनः स्यात्कलहानुरक्तो महाप्रकोपी मदनातुरात्मा ।
खड्गप्रहारेण हतस्समीके शस्त्रप्रहारैरुत खण्डितश्च ॥ २१ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा गहरी होकर लचीसी सोहती हो, बृहस्पति की रेखा छोटीसी हो, मङ्गलकी रेखा गहरी होकर सूक्ष्मरूप से प्रतीयमान होती हो और सूर्य की रेखा गहरी व दो रेखाओं से कटी हुई लचीसी भासती हो तो वह प्राणी कलही, कोपी व कामी होकर समर में तलवार से माराजाता है या शस्त्रों के प्रहारों से काटाजात है ॥ २० । २१ ॥ (देखो चित्र नं० ३४)

मान्दी विभुग्ना यदि नीचभग्ना बृहस्पतेश्चेद्विनता विभाति ।
भौमी सुदीर्घा वृजिना यदानीं संमध्यभग्ना कुटिला रवेश्च ॥ २२ ॥
सोयं नरः स्यात्कलहानुरक्तो रूक्षस्वभावः शठतासमेतः ।
उपद्रवाक्रान्तमना मनस्वी मन्दो[1] मलाढ्यो जनवञ्चकश्च ॥ २३ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा टेढ़ी होकर निचले भाग में भग्न होती हुई सोहती हो व बृहस्पति की रेखा लचीसी भासती हो व मङ्गल की रेखा दीर्घाकार होकर टेढ़ी हो और सूर्य की विचले भाग में भिन्न होकर वक्राकारसी सोहती हो तो वह प्राणी कलही, कठोर स्वभाववाला, शठतासंपन्न, उपद्रवी, मनमौजी, मूर्ख व मैला होकर जनों का छलनेवाला होता है ॥ २२ । २३ ॥ (देखो चित्र नं० ३५)

मान्दी विभुग्ना परितो विभग्ना दीर्घा विभिन्ना सरला गुरोश्च ।
मध्ये च भग्ना कुटिला कुजस्य चापानुरूपा द्युमणेर्यदानीम् ॥ २४ ॥

---

१ "मन्दो मूर्खे शनैश्चरे" (इति विश्वः) ॥

यदि शनैश्चर की रेखा चारों तरफ़ भग्न होकर टेढ़ीसी भासती हो व बृहस्पति की रेखा दीर्घाकार होकर सीधी सोहती हो व मङ्गल की रेखा बिचले भाग में कटी फटी हुई टेढ़ीसी प्रतीत होवे और सूर्य की रेखा धन्वाकार होकर भासती हो ॥ २४ ॥

संमध्यभग्ना किल भार्गवीया रामारतो वै रसिको मनुष्यः ।
सत्यप्रवक्ता सरलस्वभावो नम्रो हि वेत्ता विनयी जयी च ॥ २५ ॥

यदि शुक्र की रेखा बिचले भाग में कटी हुई भासती हो तो वह प्राणी रमणीरत, रसज्ञाता, सत्यवक्ता होकर सीधे स्वभाववाला नम्र, वेत्ता और विनयी होता हुआ जीतनेवाला होता है ॥ २५ ॥ (देखो चित्र नं० ३६)

दक्षे विभग्ना वृजिना हि मान्दी दीर्घा गभीरा विनता गुरोश्च ।
स्वल्पा विभुग्ना धरणीसुतस्य व्याजेन व्याप्तः सरलस्वभावः ॥ २६ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा दाहिने भाग में भग्न होकर टेढ़ी सोहती हो व बृहस्पति की रेखा गहरी होकर लचीसी भासती हो और मङ्गलकी रेखा छोटीसी होकर टेढ़ी देख पड़ती हो तो वह प्राणी कपटसे घिरा हुआ सीधे स्वभाववाला होता है ॥ २६ ॥ (देखो चित्र नं० ३७)

मध्ये विभिन्ना कुटिला हि मान्दी दक्षे च भग्ना बृहतां पतेश्च ।
वक्रार्कयोश्चेत्खलु दक्षसार्प्या व्युत्पन्नबुद्धिर्धननाशमेति ॥ २७ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा बीच में भिन्न होकर टेढ़ी सोहती हो व बृहस्पति की रेखा बिचले भाग में कटी व टेढ़ी होकर दाहिने भाग में भग्न होती हुई भासती हो एवं मङ्गल व सूर्य की रेखा दाहिनी तरफ़ सर्पाकार प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी व्युत्पन्नबुद्धि वाला होकर धनक्षय को पाता है ॥ २७ ॥ (देखो चित्र नं० ३८)

सौरी सुदीर्घा विनता गभीरा दक्षे च भागे जतुलेन युक्ता ।
ऊर्ध्वे विभिन्ना कुटिला गुरोश्च सर्पानुरूपा यदि भाति भौमी[3] ॥ २८ ॥
संभ्रान्तचित्तो मनुजोऽतिखिन्नो वेत्ता[4] विशुद्धो विगताभिमानः ।
उच्चस्थलाद्वै पतितो भयार्तः सांघातिकार्तिं लभते नितान्तम् ॥ २९ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा दीर्घाकार, लची व गहरी होकर दाहिने भाग में मसा से संयुक्त होकर भासती हो व बृहस्पतिकी रेखा ऊपरले भाग में भिन्न होकर टेढ़ी सोहती हो और यदि मङ्गल की रेखा सर्पसमान रूपवाली होकर प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी संभ्रान्त

१ मशकेन युक्तः २ बृहस्पतेः ३ भौमस्य ४ ज्ञाता ॥

मनवाला, महाखिन्न, ज्ञाता, पवित्रात्मा, अभिमानरहित होकर ऊंचे स्थल से गिरा व भय से घबड़ाता हुआ गाढ़ी सांघातिक पीड़ा को पाता है ॥ २८।२९ ॥ (देखो चित्र नं० ३९)

अर्धेन्दुयुक्ते खलु चोर्ध्वभागे मन्देज्यरेखे सरले विभातः ।
सूर्येन्दुयोगो यदि भाति भाले सौभाग्यशाली पुरुषो नितान्तम् ॥ ३० ॥

यदि शनैश्चर व बृहस्पति की रेखा ऊपरले भाग में अर्धचन्द्राकार निशान से संयुक्त होकर सीधी सोहती हो और यदि भाल में सूर्य व चन्द्रमा की रेखा का योग भासता हो तो वह प्राणी बड़ा सौभाग्यशाली होता है ॥ ३० ॥ (देखो चित्र नं० ४०)

ऊर्ध्वे विभिन्ना विनता हि मान्दी दीर्घा विनम्रा धिषणस्य रेखा ।
संमध्यभिन्ना कुटिला हि कौजी भ्रूमध्यदेशे लसितं त्रिशूलम् ॥ ३१ ॥
देहाभिघातं लभते मनुष्यः पातस्य हेतोरतिहानिमेति ।
प्रेमास्पदो वै वनिताविलासी प्रसन्नमूर्तिर्जनरञ्जकश्च ॥ ३२ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा ऊपरले भाग में कटकर लचीसी भासती हो व बृहस्पति की रेखा दीर्घाकार होकर लचीसी देख पड़ती हो व मङ्गल की रेखा बीच में कटी हुई टेढ़ीसी प्रतीत हो और यदि भौंहों के बीच में त्रिशूलाकार निशान सोहता हो तो वह प्राणी देह में आघात को पाता है व गिरने के कारण बड़ी हानि को पहुँचता है व प्रेम का घर होकर वनिताओं में विलास करता हुआ प्रसन्नमूर्ति होकर जनों का मनोरञ्जक होता है ॥ ३१ । ३२ ॥ (देखो चित्र नं० ४१)

सर्पायमाना[1] यदि भाति सौरी[2] स्वल्पस्वरूपा सुरपूजितस्य[3] ।
दक्षत्रिशाखा धरणीसुतस्य वामैकशाखा विशदा यदानीम् ॥ ३३ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा सर्पाकार के समान होकर भासती हो व बृहस्पति की रेखा छोटीसी प्रतीत हो और मङ्गलकी रेखा दाहिनी तरफ़ तीन शाखावाली व बायें भाग में एक शाखावाली होकर साफ़ सोहती हो ॥ ३३ ॥

ऐश्वर्यहीनो मनुजोऽतिलोलो[4] विश्वासघाती बलदर्पितश्च ।
प्रवञ्चकोऽयं जगतो जनानां धूर्तस्वभावो ह्यतिगौरवाढ्यः ॥ ३४ ॥

तो वह प्राणी ऐश्वर्यहीन, अतिचञ्चल, विश्वासघातक व बलगर्वित होताहुआ संसारी जनों का छलनेवाला व धूर्त स्वभाववाला होकर अति गौरवता से संपन्न होता है ॥ ३४ ॥ (देखो चित्र नं० ४२)

---

१ सर्पसमाना २ शनैश्चरस्य रेखा ३ बृहस्पतेः ४ महाचञ्चलः ॥

धन्वाकृतिश्चेद्रविनन्दनस्य सर्पानुरूपा सुरवन्दितस्य ।
वामे विभग्ना महिजस्य भुग्ना स्यान्मानवो वै नरघातकारी ॥ ३५ ॥

यदि शनैश्चरकी रेखा धन्वाकार होकर प्रतीत होवे व बृहस्पतिकी रेखा सर्पाकार होकर भासती हो और यदि मङ्गलकी रेखा टेढ़ी होकर वामभाग में कटीफटीसी सोहती हो तो वह प्राणी नरघातक होता है ॥ ३५ ॥ (देखो चित्र नं० ४३)

सर्पाननाभां विशदस्वरूपां गुरोश्च स्वल्पा समुपैति सौरीम् ।
वक्रा यदानीं शशिजस्य रेखा हिंस्रो विवादी कलही नरः स्यात् ॥३६॥

यदि छोटीसी बृहस्पति की रेखा सर्पसमान मुखवाली विशदस्वरूप शनैश्चर की रेखा के पास पहुँच गई हो और यदि बुध की रेखा वक्राकार होकर प्रतीत हो तो वह प्राणी हिंसाशाली व विवादी होता हुआ लड़ाका होता है ॥ ३६ ॥ (देखो चित्र नं० ४४)

मन्दस्वरूपा[1] यदि भाति मान्दी दक्षे विभिन्ना धिषणस्य[2] दीर्घा ।
कण्ठे विभग्ना कुटिला हि कौजी[3] नीचे गभीरा श्रुतिमेति[4] वामाम् ॥३७॥

यदि शनैश्चरकी रेखा मन्दस्वरूपवाली होकर प्रतीत होवे तथा बृहस्पति की रेखा दाहिने भागमें विभिन्न होकर दीर्घाकार सोहती हो और यदि मङ्गल की रेखा कण्ठ-भाग में विभिन्न होतीहुई टेढ़ी व निचले भाग में गहरी होकर बायें कान के पास पहुँच गई हो ॥ ३७ ॥

सोयं मनुष्यो नरघातकारी ह्यनिष्टकारी प्रमदाविहारी[5] ।
द्यूताभिलाषी भ्रमते नितान्तं क्रोधाभिभूतो मदनाकुलश्च ॥ ३८ ॥

तो वह प्राणी नरघातक, अनिष्टकारक, प्रमदाविहारी व जुआड़ी होकर क्रोध से झुंझलाता व काम से घबड़ाता हुआ हमेशा घूमा करता है ॥ ३८ ॥ (देखो चित्र नं० ४५)

स्वल्पस्वरूपा यदि भाति सौरी[6] संमध्यभिन्ना विशदा गुरोश्च[7] ।
दीर्घा विनम्रा कुटिला हि कौजी[8] छिन्ना विभिन्ना किल भार्गवीया[9] ॥३९॥

यदि शनैश्चर की रेखा छोटीसी होकर सोहती हो व बृहस्पति की रेखा बिचले भाग में कटती हुई साफ़ भासती हो और यदि मङ्गल की रेखा दीर्घ, लची व टेढ़ी होकर प्रतीत होती हो तथा शुक्र की रेखा दाहिने भाग में कटी व बिचले भाग में भग्न होकर सोहती हो ॥ ३९ ॥

सोयं नरः स्यात्सरलस्वभावो दानी च मानी च महाभिमानी ।
क्रोधी परस्त्रीं भजतेऽप्यजस्रं मित्राभिभूतो मदनातुरश्च ॥ ४० ॥

---

१ स्वल्पस्वरूपा २ बृहस्पतेः ३ मङ्गलस्येयम् ४ कर्णम् ५ रमणीरतः ६ शनैश्चरस्य ७ बृहस्पतेः ८ मङ्गलस्य ९ शुक्रस्य रेखेति यावत् ॥

तो वह प्राणी सीधे स्वभाववाला, दाता, मानी व महाभिमानी होता हुआ क्रोधी, मित्रों से तिरस्कृत व कामातुर होकर परस्त्री का सेवन करता है ॥ ४० ॥ (देखो चित्र नं० ४६)

मान्दी गभीरा यदि भाति स्वल्पा वेत्रस्वरूपा बृहतांपतेश्च ।
भ्रूमध्यदेशो बहुकेशयुक्तः संपत्तिशाली धनिकः सुभार्यः ॥ ४१ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा गहरी व छोटी होकर सोहती हो व बृहस्पति की रेखा वेत्ररूपा होकर भासती हो और यदि भौंहों का मध्यदेश बहुत बालों से युक्त होताहुआ प्रतीयमान होता हो तो वह प्राणी संपत्तिशाली व धनवान् होकर अनेक भार्याओंवाला होता है ॥ ४१ ॥ (देखो चित्र नं० ४७)

सौरस्य रेखा यदि भाति चाल्पा भुग्ना गुरोर्वै निकटार्धवृत्ता ।
दक्षभ्रकुट्यां लसितैकरेखा भ्रूमध्यदेशो बहुकेशयुक्तः ॥ ४२ ॥

यदि शनैश्चरकी रेखा छोटीसी भासती हो व बृहस्पति की रेखा टेढ़ी होकर निकटवर्ती अर्धवृत्ताकार से युक्त हो व दाहिनी भृकुटी पर छोटीसी एक रेखा भृङ्गाकार प्रतीत हो और यदि भौंहों का बिचला भाग घनेवालों से संयुक्त होकर सोहता हो ॥ ४२ ॥

मस्ताभिघातं लभते मनुष्यो विदंशितः स्यात्खलु कुक्कुराद्यैः ।
विषप्रयोगैरतिशङ्कितश्च क्रोधाभिभूतो भयतामुपैति ॥ ४३ ॥

तो वह प्राणी मस्तक में चोट चपेट को पाता है व कूकुर आदि दुष्टजीवों से डसा व विषप्रयोगों से अत्यन्त डरा व क्रोधसे घबड़ाता हुआ भयसमूहों को पाता है ॥ ४३ ॥ (देखो चित्र नं० ४८)

भुग्ना गभीरा यदि भाति मान्दी दीर्घा विनम्रा विशदा गुरोश्च ।
सर्पाननाभा विनता हि कौजी संमध्यभिन्ना द्युमणेर्यदानीम् ॥ ४४ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा टेढ़ी व गहरी होकर सोहती हो व बृहस्पति की रेखा दीर्घाकार होकर लची व विशद होती हुई प्रतीत हो तथा मङ्गल की रेखा सर्पानन के समान होकर लचीसी भासती हो और यदि बीच में भग्न हुई सूर्य की रेखा सोहती हो ॥ ४४ ॥

सौभाग्यशाली सुषमासमेतः सौन्दर्ययुक्तो नितरामुदारः ।
सुखी सुविद्यो महतामुपासी मान्यो जनानां सुखदोऽनुजानाम् ॥ ४५ ॥

तो वह प्राणी सौभाग्यशाली व शोभासमेत व सुन्दरता से युक्त बड़ा उदार, सुखी, अच्छी विद्यावाला होकर महात्माओं का उपासी व जनों का माननीय होता हुआ भाइयों को सुखदायक होता है ॥ ४५ ॥ (देखो चित्र नं० ४९)

स्वल्पा गभीरा विनता हि सौरी संमध्यभिन्ना वृजिना गुरोश्च ।
दीर्घा विशुद्धा विनता हि कौजी त्यागी धनी साहसिको नरःस्यात् ॥४६॥

यदि शनैश्चर की रेखा छोटी व गहरी होकर लचीहुई भासती हो व बृहस्पति की रेखा बीच में भग्न होती हुई टेढ़ी सोहती हो और मङ्गलकी रेखा दीर्घाकृति व विशद होकर लचीसी प्रतीयमान होती हो तो वह प्राणी त्यागी व धनवान् होकर साहसिक होता है ॥ ४६ ॥ (देखो चित्र नं० ५०)

नीचोर्ध्वभिन्ना यदि भाति मान्दी संकर्तितालपा सुरपूजितस्य ।
छिन्ना विभिन्ना वृजिना बुधस्य भ्रूमध्यदेशो विशदो द्विशूलः ॥ ४७ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा निचले तथा ऊपरले भाग में भिन्न होकर सोहती हो व बृहस्पति की रेखा कटती हुई छोटीसी प्रतीत हो और यदि बुध की रेखा छिन्न व भिन्न होकर टेढ़ी भासती हो तथा भौहोंका बिचला भाग विशुद्ध होकर दो रेखाओंवाला भासता हो ॥ ४७ ॥

सोयं मनुष्यश्चतुरोऽतिविज्ञो मिष्टप्रभाषी परिणामदर्शी ।
क्लान्त्याविहीनोऽखिलकार्यदक्षो व्युत्पन्नबुद्धिःखलु साहसी स्यात् ॥४८॥

तो वह प्राणी चतुर, अतिविज्ञ, मधुरभाषी, परिणामदर्शी, ग्लानिहीन व समस्त कार्यों में प्रवीण होकर व्युत्पन्नबुद्धि होता हुआ साहसी होता है ॥ ४८ ॥ (देखो चित्र नं० ५१)

चापानुरूपा रविजस्य रेखा सर्पायमाना सुरवन्दितस्य ।
भौमी सुदीर्घा खलु वामभुग्ना चाण्डी सशाखा यदि सव्यभुग्ना ॥४९॥

यदि शनैश्चर की रेखा धन्वाकार होकर प्रतीत होवे व बृहस्पति की रेखा सर्पसमान होकर भासती हो व मङ्गल की रेखा दीर्घाकार होकर वामभाग में टेढ़ी हो और यदि सूर्य की रेखा शाखा समेत बायें तरफ कुटिलरूप से भासती हो ॥ ४९ ॥

संमध्यभिन्ना किल भार्गवीया शान्त्या विहीनो मनुजोतिलुब्धः ।
नाप्नोति सिद्धिं सकले सुकार्ये परिश्रमं वै कुरुते नितान्तम् ॥ ५० ॥

और यदि शुक्र की रेखा बिचले भाग में कटी हुई प्रतीयमान हो तो वह प्राणी शान्तिहीन, अतिलोभी होकर समस्त कार्यों में सिद्धि को नहीं पाता व बड़ा परिश्रम करता है यानी दिन रात उद्योग में ही लगा रहाता है ॥ ५० ॥ (देखो चित्र नं० ५२)

नीचे विभग्ना सरला[1] हि सौरी[2] वामप्रचापा धिषणस्य[3] भग्ना ।
कौजी[4] सशाखा यदि नीचभिन्ना सार्प्या[5] विभिन्ना दिनपस्य[6] भाति ॥५१॥

यदि शनैश्चर की रेखा निचलेभाग में भग्न होती हुई सीधी होकर प्रतीत हो व बृहस्पति की रेखा कि जिसके वामभाग में धन्वाकार चिह्न भासता हो व निचले विचले तथा ऊपरले भाग में भग्न होकर प्रतीत हो व मङ्गल की रेखा शाखासमेत निचले भाग में भिन्न हो और यदि सूर्य की रेखा सर्पसमान होकर भिन्न होती हुई भासती हो ॥५१॥

ऊर्ध्वेगभीरा यदि मध्यभग्ना काव्यस्य[7] रेखा नितरां विभाति ।
सोयं नरःस्यात्सकलप्रधानः सच्छीलयुक्तो गुणभूषितश्च ॥ ५२ ॥

यदि शुक्र की रेखा ऊपरले भाग में गहरी होकर बिचले भाग में कटती हुई अत्यन्त सोहती हो तो वह प्राणी समस्त मनुष्यों में मुखिया होकर भले स्वभाव से संयुत होता हुआ गुणों से भूषित होता है ॥ ५२ ॥

विद्वान्विदेशी खलु धार्मिकश्च दाता धनी स्यादुपदेशकर्ता ।
मान्यो वदान्यो ममताविहीनो विध्वस्तबाधोभ्रमतेऽप्यजस्रम् ॥ ५३ ॥

विद्वान्, विदेशवासी, धार्मिक, दाता, धनवान्, उपदेशक, माननीय व बड़ा वक्ता होकर ममता से रहित व बाधाविहीन होता हुआ निरन्तर विचरा करता है ॥ ५३ ॥ (देखो चित्र नं० ५३)

अथ भालस्थतिलादिलाञ्छनादन्याङ्गेषु तिलादिज्ञानमाह—

नार्या यदा वा पुरुषस्य भाले दक्षे च मध्ये च तथा हि वामे ।
तिलादि चिह्नं यदि दृश्यते चेदन्यत्र चिह्नं विदुषा विचिन्त्यम् ॥ ५४ ॥

यदि नारी या नरके भाल में दाहिने, विचले, तथा वामभाग में तिल आदि का चिह्न प्रतीयमान होता हो तो विद्वान् को अन्य अङ्गों में भी तिल आदि का चिह्न विचारना चाहिये ॥ ५४ ॥ (देखो चित्र नं० ५४)

१—दक्षे च भागे खलु मन्दनिम्ने[8] चन्द्राङ्कपार्श्वे[9] तिलको विभाति ।
स्पृशेन्न मन्दं यदि दक्षभागे ब्रूयादुरस्थं[10] तिलकं तदानीम् ॥ ५५ ॥

यदि शनैश्चर की रेखा के नीचे दाहिने भाग में एक अङ्क के समीप तिल का चिह्न

---

१ सीधी २ शनैश्चरस्य ३ गुरोः ४ मङ्गलस्य ५ सर्पसमाना ६ सूर्यस्य ७ शुक्रस्य ८ शनैश्चर निम्ने ९ एकाङ्कसमीपे १० कथयेदिति ॥

सोहता हो और यदि शनि रेखा को छूता न हो तो दाहिनी ओर वक्षस्थल में टिके हुए तिलको कहना चाहिये ॥ ५५ ॥

२–गुरोश्च निम्ने खलु दक्षभागे युग्माङ्कपार्श्वे तिलकादिकं स्यात् ।
नो स्पृश्यते चेत्तु गुरुर्न भौमो दक्षे च पार्श्वे प्रवदेत्तिलाद्यम् ॥ ५६ ॥

यदि बृहस्पति की रेखा के नीचे भाग में दाहिनी ओर दो २ अङ्क के समीप तिलक आदि सोहतेहों और यदि गुरुरेखा व भौमरेखा को छूते न हों तो दाहिने पार्श्व में तिल आदि को कहना चाहिये ॥ ५६ ॥

३–दक्षे च भागे खलु भौमनिम्ने वह्न्यङ्कपार्श्वे यदि भाति चिह्नम् ।
नो स्पृश्यते चेद्धरणीतनूजो दक्षे च बाहौ भणितं तिलाद्यम् ॥ ५७ ॥

यदि मङ्गलरेखा के नीचे दाहिने भाग में ३ अङ्कके निकट तिल आदिका चिह्न सोहता हो और यदि वह भौमरेखा को छूता न हो तो दाहिनी भुजाके ऊपर तिल आदि का चिह्न कहाजाता है ॥ ५७ ॥

४–सूरस्य निम्ने खलु दक्षभागे वेदाङ्कपार्श्वे यदि भाति चिह्नम् ।
नो स्पृश्यते चेद्दिनपस्य रेखा पृष्ठस्य दक्षे तिलकं वदन्ति ॥ ५८ ॥

यदि सूर्य की रेखा के नीचे दाहिनी ओर ४ अङ्क के निकट तिल आदि का चिह्न सोहता हो और यदि वह सूर्यरेखा को स्पर्श न करता हो तो पीठके दाहिने भाग में तिल को कहते हैं ॥ ५८ ॥

५–काव्यस्य निम्ने खलु दक्षभागे बाणाङ्कपार्श्वे यदि भाति चिह्नम् ।
नो स्पृश्यते चेद्भृगुजस्य रेखा विद्यात्तिलाद्यं जठरस्य दक्षे ॥ ५९ ॥

यदि शुक्र की रेखा के निचले भाग में दाहिनी ओर पांच ५ अङ्क के पास तिल आदि सोहता हो और यदि पूर्वोक्त रेखा को छूता न हो तो पेटकी दाहिनी ओर तिल आदि जानना चाहिये ॥ ५९ ॥

६–दक्षे च[1] भागे खलु सौम्यनिम्ने शास्त्राङ्कपार्श्वे[2] यदि भाति चिह्नम् ।
नो स्पृश्यते चेच्छशिजस्य[3] रेखा वत्सस्य दक्षे प्रवदेत्तिलाद्यम् ॥ ६० ॥

यदि बुधरेखा के निचले भाग में दाहिनी तरफ छः अङ्कके समीप तिल आदिका चिह्न प्रतीत होता हो और यदि पूर्वोक्त रेखा को छूता न हो तो वक्षस्थल के दाहिनी ओर तिल आदिको कहना चाहिये ॥ ६० ॥

७–दक्षे च भागे खलु चन्द्रनिम्ने शैलाङ्कपार्श्वे[4] तिलको विभाति ।

---

१ बुधस्यनीचे २ षडङ्कपार्श्वे ३ बुधस्य ४ सप्तमाङ्कपार्श्वे ॥

नो कर्त्तिता चेत्किल सोमरेखा तुन्दस्य दक्षे तिलकं भणन्ति ॥ ६१ ॥

यदि चन्द्ररेखा के निचले भाग में दाहिनी ओर ७ अङ्क के समीप तिल आदि का चिह्न सोहता हो और यदि उक्तरेखा का स्पर्श नहीं करता हो या कटा हुआ नहीं प्रतीत हो तो पेट के दाहिने तरफ़ तिल आदि को कहते हैं ॥ ६१ ॥

८–वामे च भागे खलु सौरिनिम्ने नागाङ्कपार्श्वे यदि भाति चिह्नम् ।
स्पृशेन्न मन्दं न गुरुं यदानीं पृष्ठस्य वामे तिलकं वदन्ति ॥ ६२ ॥

यदि शनिरेखा के निचले भाग में बाईं तरफ़ ८ अङ्क के समीप तिल आदि का चिह्न सोहता हो और यदि शनैश्चर व बृहस्पति रेखा को स्पर्श नहीं करता हो तो पीठके बाईं ओर तिल आदि को कहते हैं ॥ ६२ ॥

९–वामे च भागे धिषणस्य निम्ने नन्दाङ्कपार्श्वे यदि भाति चिह्नम् ।
ब्रूयात्सुधीरो जठरस्य वामे तिलादिचिह्नं भणितं सुधीभिः ॥ ६३ ॥

यदि गुरुरेखा के नीचे वामभाग में ९ नव अङ्क के समीप तिल आदिका चिह्न सोहता हो तो पण्डित को पेट के बाईं ओर तिल आदि का चिह्न कि जिसको सामुद्रिकवेत्ताओं ने बतलाया है कहना चाहिये ॥ ६३ ॥

१०–भालस्य वामे कुजेकस्यनिम्ने दिशाङ्कपार्श्वे यदि लाञ्छनं चेत् ।
वदेत्तदानीं खलु वामबाहौ चिह्नं तिलाद्यं मुनिभिः प्रणीतम् ॥ ६४ ॥

जिस प्राणी के विशाल भाल में बाईं ओर भौमरेखा के नीचे दश अङ्क के समीप यदि तिलादि का चिह्न प्रतीत होता हो तो उसकी बाईं भुजा में तिलादिका चिह्न कि जिसको मुनियों ने कहा है उसे बताना चाहिये ॥ ६४ ॥

११–ब्रध्नस्य वामे यदि नीचभागे रुद्राङ्कपार्श्वे तिलकादिकं चेत् ।
वत्सस्य वामे प्रवदेत्तिलाद्यं वेत्ता विपश्चित्पुरुषस्य नूनम् ॥ ६५ ॥

यदि सूर्य के वाम भाग में नीचे तरफ़ ११ अङ्क के समीप तिल आदि का चिह्न प्रतीत होता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल में बाईं ओर ज्ञाता पण्डितों को निश्चयकर तिलादि का चिह्न कहना चाहिये ॥ ६५ ॥

१२–वामे च भागे भृगुजस्य निम्ने सूर्याङ्कपार्श्वे तिलको विभाति ।
नो स्पृश्यते चेच्छशिजो न शुक्रो वामांसके वै प्रवदेत्तिलाद्यम् ॥ ६६ ॥

यदि शुक्ररेखा के वामभाग में नीचे तरफ़ १२ बारह अङ्क के समीप तिल आदिका निशान

---

१ भौमस्यनिम्ने २ बुधः ॥

सोहता हो और यदि बुधरेखा व शुक्ररेखा को छूता न हो तो वायें स्कन्ध के ऊपर तिलादि को कहना चाहिये ॥ ६६ ॥

१३–सौम्यस्य निम्ने खलु वामभागे विश्वाङ्कपार्श्वे तिलकादिकं चेत् ।
वदेद्विपश्चिन्मनुजस्य तस्य पार्श्वे च वामे विशदं तिलाद्यम् ॥ ६७ ॥

जिस प्राणी के भाल में बुधरेखा के नीचे बाईं तरफ़ तेरह अङ्क के समीप की जगह में यदि तिल आदि का निशान सोहता हो तो उसके वामपार्श्व में पण्डित को तिल आदि का चिह्न कहना चाहिये ॥ ६७ ॥

१४–शक्राङ्कपार्श्वे खलु वामभागे चन्द्रस्य निम्ने तिलको यदानीम् ।
स्पृशेन्न भिन्द्यान्न हि चन्द्ररेखां ब्रूयात्तिलाद्यं जठरे च नाभ्याम् ॥ ६८ ॥

जिसके भाल में चन्द्ररेखा के नीचे बाईं ओर चौदह अङ्क के समीप तिल आदि का चिह्न सोहता हो और यदि पूर्वोक्त रेखा को छूता न हो और न भेदन करता हो तो उसके पेट और तोंदी में तिलादि कहना चाहिये ॥ ६८ ॥

१५–भाले विशाले यदि मध्यदेशे मन्दस्य निम्ने तिलको विभाति ।
नो स्पृश्यते चेत्खलु मन्दरेखां विद्यात्तिलाद्यं जठरस्य मध्ये ॥ ६९ ॥

यदि विशाल भाल में शनिरेखा के नीचे मध्यभाग में तिल आदि का चिह्न प्रतीत होता हो और यदि मन्दरेखा को न छूता हो तो पेट के बीच में तिल आदि का निशान कहना चाहिये ॥ ६९ ॥

१६–कपालमध्ये धिषणस्य निम्ने चिह्नं तिलाद्यं खलु दृश्यते चेत् ।
स्पृशेन्न रेखां सुरवन्दितस्य वक्षस्थले वै प्रवदेत्तिलाद्यम् ॥ ७० ॥

ललाट के मध्यभाग में बृहस्पति की रेखा के नीचे यदि तिल आदि का चिह्न देखा जाता हो और यदि पूर्वोक्तरेखा का स्पर्श नहीं करता हो तो वक्षस्थल में तिलादि का चिह्न कहना चाहिये ॥ ७० ॥

१७–चिह्नं यदानीमलिकस्य मध्ये भौमस्य निम्ने विशदं विभाति ।
स्पृशेन्न रेखां धरणीसुतस्य प्रोच्यात्तिलाद्यं जठरस्य वामे ॥ ७१ ॥

यदि ललाट के मध्यभाग में भौमरेखा के नीचे उज्ज्वलरूप तिल आदि का चिह्न प्रतीयमान होता हो और यदि मङ्गल की रेखा का स्पर्श नहीं करता हो तो पेट के वाम भाग में तिल आदि का चिह्न कहना चाहिये ॥ ७१ ॥

---

१ विद्वान् २ चतुर्दशाङ्कसमीपे ३ शनिरेखाम् ४ बृहस्पतेः ५ भौमस्य ६ कथयेदिति ॥

१८—लालटमध्ये दिनेपस्य निम्ने तिलादि चिह्नं यदि दृश्यते चेत्।
स्पृशेन्न रेखां दिननायकस्य ब्रूयात्तिलाद्यं जठरस्य मध्ये ॥ ७२ ॥

यदि कपाल के बीच में सूर्यरेखा के नीचे तिल आदि का चिह्न देखाजाता हो और यदि पूर्वोक्तरेखा को छूता न हो तो उस प्राणी के पेट के मध्य में तिलादि कहना चाहिये ॥ ७२॥

१९—भालस्य मध्ये भृगुजस्य निम्ने तिलादि चिह्नं यदि लक्ष्यते चेत्।
स्पृशेन्न रेखां खलु भार्गवस्य वत्सस्य मध्ये प्रवदेत्तिलाद्यम् ॥ ७३ ॥

यदि ललाट के मध्य में शुक्र के नीचे तिल आदि का चिह्न प्रतीयमान होता हो और यदि पूर्वोक्तरेखा को छूता न हो तो उस प्राणी के वक्षस्थलमें तिलादिको कहना चाहिये ॥७३॥

२०—सौम्यस्य निम्ने हि कपालमध्ये चिह्नं तिलाद्यं यदि दृश्यते चेत्।
स्पृशेन्न रेखां किल भार्गवीयां वत्सस्य निम्ने तिलकं वदन्ति ॥ ७४ ॥

यदि कपाल के मध्य में बुधके नीचे तिल आदि का चिह्न देखा जाता हो और यदि शुक्र-रेखा का स्पर्श नहीं करता हो तो वक्षस्थल के नीचे तिल को कहते हैं ॥ ७४ ॥

२१—चिह्नं यदाचेदलिकान्तराले चन्द्रस्य निम्ने विशदं विभाति।
स्पृशेन्न रेखां क्षणदाधिपस्य ब्रूयादपाने तिलकं तदानीम् ॥ ७५ ॥

यदि ललाट के मध्यभाग में चन्द्ररेखा के नीचे उज्ज्वलरूप चिह्न सोहता हो और यदि पूर्वोक्तरेखा का स्पर्श न करता हो तो उस प्राणी के गुदादेश में तिलादि चिह्न कहना चाहिये ॥ ७५ ॥

२२—भाले विशाले खलु दक्षभागे मन्दस्य शेषे यदि भाति चिह्नम्।
संस्पृश्यते चेत् खलु सौरिरेखा दक्षोरुसंस्थं प्रवदेत्तिलाद्यम् ॥ ७६ ॥

यदि विशाल भाल में दाहिनी तरफ़ शनिरेखा के शेषभाग में तिलादि का चिह्न सोहता हो और यदि सौरिरेखा को भलीभांति छूता हो यानी मिलाप करताहो तो दाहिनी ऊरु में तिलादि का निशान कहना चाहिये ॥ ७६ ॥

२३—भालस्य दक्षे धिषणस्य शेषे चिह्नं तिलाद्यं यदि दृश्यते चेत्।
दक्षोरुसन्धौ मनुजस्य तस्य ब्रूयात्सुधीरो विशदं तिलाद्यम् ॥ ७७ ॥

ललाटकी दाहिनी तरफ़ गुरुरेखा के शेषभाग में यदि तिलादि का निशान देखा जाता हो तो उस प्राणी के दाहिनी ऊरु की सन्धि के ऊपर उज्ज्वल तिलादि का चिह्न पण्डितको कहना चाहिये ॥ ७७ ॥

---

१ सूर्यस्य २ शुक्रस्य ३ वक्षस्थलस्य ४ बुधस्य ५ कपालमध्ये ६ चन्द्रस्य ७ गुदायाम् ॥

२४–ललाटदक्षे खलु भौमशेषे तिलादिचिह्नं यदि लक्ष्यते चेत्।
वदेद्विदीशो मनुजस्य तस्य दक्षे च बाहावमलं तिलाद्यम्॥ ७८॥

यदि कपाल की दाहिनी तरफ़ मङ्गलरेखा के शेषभाग में तिलादि का चिह्न लखाजाता हो तो उस प्राणी की दाहिनी भुजा के ऊपर निर्मल तिलादि का चिह्न विद्वान् को कहना चाहिये॥ ७८॥

२५–शूरस्य शेषे यदि भालदक्षे चिह्नं तिलाद्यं विशदं विभाति।
कटस्य दक्षे भणितं तिलाद्यं प्राज्ञैः सुधीरैः खलु मानवस्य॥ ७९॥

यदि ललाटकी दाहिनी तरफ़ सूर्यरेखा के शेषभाग में अमलरूप तिलादिका निशान सोहता हो तो उस प्राणी की कमर के दाहिनी ओर तिलादिका निशान बड़े धीर पण्डितों ने कहा है॥ ७९॥

२६–भालस्य दक्षे भृगुजस्य शेषे चिह्नं तिलाद्यं यदि दीप्यते चेत्।
वत्सस्य मध्ये मनुजस्य तस्य धीरो वदेद्वै तिलकादिचिह्नम्॥ ८०॥

यदि भाल की दाहिनी तरफ़ शुक्ररेखा के शेषभाग में तिलादि का चिह्न चमकता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के बीच में तिलादिका चिह्न पण्डित को कहना चाहिये॥ ८०॥

२७–कपालदक्षे खलु सौम्यशेषे तिलादिचिह्नं यदि दृश्यते चेत्।
वत्सस्य दक्षे पुरुषस्य तस्य ब्रूयात्तिलाद्यं विदुषामधीशः॥ ८१॥

यदि कपाल की दाहिनी तरफ़ बुधरेखा के शेषभाग में तिलादिका चिह्न देखाजाता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल की दाहिनी तरफ़ बुधेश को तिलादि चिह्न बताना चाहिये॥ ८१॥

२८–दक्षे ललाटे खलु चन्द्रशेषे विदृश्यते चेत्तिलकादिचिह्नम्।
ब्रूयाद्विदीशो मनुजस्य तस्य दक्षे तिलाद्यं जठरे च नाभ्याम्॥ ८२॥

यदि ललाट की दाहिनी तरफ़ चन्द्ररेखा के शेषभाग में तिल आदिका चिह्न देखा जाता हो तो उस प्राणी के पेट की दाहिनी ओर या तोंदी के समीप तिलादिका चिह्न कहना चाहिये॥ ८२॥

२९–भालस्य वामे खलु मन्दशेषे चिह्नं तिलाद्यं यदि लक्ष्यते चेत्।
प्रोक्तं कवीन्द्रैर्मनुजस्य तस्य पृष्ठस्य वामे विशदं तिलाद्यम्॥ ८३॥

यदि भाल की बाईं तरफ़ शनिरेखा के शेषभाग में तिलादिका चिह्न लखाजाता हो

तो उस प्राणी की पीठ के वामभाग में उज्ज्वलरूप तिलादिका चिह्न कवीन्द्रों ने कहा है ॥ ८३ ॥

३०—भाले विशाले यदि वामभागे देवेज्यशेषे तिलको विभाति ।
धीरो वदेद्वै पुरुषस्य वामे वत्सस्य निम्ने तिलकं विशालम् ॥ ८४ ॥

यदि विशालभाल में बाईं तरफ़ गुरुरेखा के शेषभाग में तिलादिका चिह्न भासता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के नीचे वामभाग में विशाल तिल का चिह्न पण्डित को बताना चाहिये ॥ ८४ ॥

३१—वामे कपाले खलु भौमशेषे तिलादिचिह्नं यदि दृश्यते चेत् ।
ब्रूयात्सुधीरो मनुजस्य तस्य पृष्ठस्य वामे रुचिरं तिलाद्यम् ॥ ८५ ॥

यदि कपाल की बाईं तरफ़ भौमरेखा के शेषभाग में तिलादिका चिह्न देखाजाता हो तो उस प्राणी की पीठ की बाईं ओर सुन्दर तिलादिका चिह्न पण्डित को कहना चाहिये ॥ ८५ ॥

३२—वामे ललाटे दिनपस्य शेषे चिह्नं तिलाद्यं यदि लक्ष्यते चेत् ।
ब्रूयाद् बुधेन्द्रो मनुजस्य तस्य वामांसनिम्ने ललितं तिलाद्यम् ॥८६॥

यदि भाल के बायें तरफ़ सूर्यरेखा के शेषभाग में तिल आदिका चिह्न लखाजाता हो तो उस प्राणी के बायें कन्धे के नीचे ललितरूपी तिलादिका चिह्न बुधेश को बताना चाहिये ॥ ८६ ॥

३३—भालस्य वामे भृगुजस्य शेषे संलक्ष्यते चेत्तिलकादिचिह्नम् ।
प्रोक्तं सुधीभिर्मनुजस्य तस्य तुन्दस्य वामे विशदं तिलाद्यम् ॥८७॥

यदि ललाट के वाम ओर शुक्ररेखा के शेषभाग में तिलादिका चिह्न भलीभांति लखा जाता हो तो उस प्राणी के पेट के बायें तरफ़ उज्ज्वल तिलादिका निशान पण्डितों ने कहाहै ॥ ८७ ॥

३४—भाले विशाले यदि वामभागे सौम्यस्य शेषे तिलकादिकं चेत् ।
वत्सस्य वामे खलु पञ्जरे वा चिह्नं तिलाद्यं ध्वनितं कवीन्द्रैः ॥ ८८ ॥

यदि विशालभाल में बायें तरफ़ बुधरेखा के शेषभाग में तिलादिका चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के वामभाग में या पांजर में तिलादिका चिह्न कवीन्द्रों ने कहा है ॥ ८८ ॥

३५—भालस्य वामे खलु चन्द्रशेषे चिह्नं तिलाद्यं यदि दृश्यते चेत् ।

प्रोक्तं तिलाद्यं पुरुषस्य तस्य नाभौ च पार्श्वे जठरस्य वामे ॥ ८९ ॥

यदि ललाट के बायें तरफ़ चन्द्ररेखा के शेषभाग में तिलादि का चिह्न देखा जाता हो तो उस प्राणी के तोंदी, पार्श्व और पेट के वामभाग में तिलादि का चिह्न मुनियों ने कहा है ॥ ८९ ॥

३६–दक्षे कपालस्य च नेत्रचुल्ल्यां संदृश्यते चेत्तिलको यदानीम्।
गीतं तदानीं खलु मानवस्य चिह्नं तिलाद्यं जठरस्य दक्षे ॥ ९० ॥

यदि कपाल के दाहिने तरफ़ नेत्रके ऊपर चूल्हे के निकट तिल आदि का चिह्न भली भांति देखा जाता हो तो उस प्राणी के पेट के दाहिने तरफ़ तिलादि का चिह्न महर्षियों ने गाया है ॥ ९० ॥

३७–पार्श्वे च दक्षे पुरुषस्य भाले भ्रुवः समीपे तिलको विभाति।
प्रोक्तं तदानीं खलु पण्डितेन्द्रैश्चिह्नं तिलाद्यं कटकोपरिस्थम् ॥ ९१ ॥

जिस प्राणी के विशालभाल में दाहिने तरफ़ भौंह के निकट तिल आदिका निशान यदि सोहता हो तो उसकी कमरके ऊपर टिके हुए तिलादि का चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ ९१ ॥

३८–भाले विशाले खलु दक्षपार्श्वे नेत्रान्तिके[1] चेत्तिलकादिकं स्यात्।
नितम्बदक्षे पुरुषस्य तस्य चिह्नं तदानीं मुनिभिः प्रणीतम् ॥ ९२ ॥

यदि विशालभाल में दायें तरफ़ नेत्र के समीप तिलादिका चिह्न प्रतीत होता हो तो उस प्राणी के चूतड़ों के दाहिनी ओर तिलादिका चिह्न मुनियों ने कहा है ॥ ९२ ॥

३९–भालस्य निम्ने खलु दक्षपार्श्वे चक्षुस्समीपे तिलकालकः स्यात्।
दक्षे च पार्श्वे किल पञ्जरस्य प्रोक्तं तिलाद्यं पुरुषस्य धीरैः ॥ ९३ ॥

यदि भाल के नीचे दाहिने तरफ़ नेत्र के समीप तिल आदिका चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी की पांजर के दाहिने भाग में तिलादि का निशान धीरों ने कहा है ॥ ९३ ॥

४०–ललाटनिम्ने खलु दक्षपार्श्वे नेत्रान्तिके चेत्तिलको विभाति।
दक्षोरुनिम्ने लसितं तिलाद्यं प्रोक्तं पुराणैः[2] पुरुषस्य तस्य ॥ ९४ ॥

यदि ललाट के नीचे दाहिने तरफ़ नेत्र के समीप तिलादिका निशान सोहता हो तो उस प्राणी की दाहिनी ऊरु के नीचे लसते हुए तिलादिका चिह्न पुराने कवियों ने कहा है ॥ ९४ ॥

---

१ लोचनसमीपे २ पुरातनैः पण्डितैः ॥

४१–वामे कपाले खलु नेत्रकोणे संदृश्यते चेत्तिलको यदानीम् ।
वामोरुनिम्ने कटिदेशके वा चिह्नं तिलाद्यं कथितं कवीन्द्रैः ॥ ९५ ॥

यदि कपाल के वामभाग में नेत्रकोण के ऊपर तिलादिका निशान देखा जाता हो तो उस प्राणी की बाईं ऊरु के नीचे या कमर पर तिलादिका चिह्न कवीन्द्रों ने कहा है ॥ ९५ ॥

४२–वामे ललाटे खलु नेत्रपाते संलक्ष्यते चेत्तिलको यदानीम् ।
नितम्बवामे मनुजस्य तस्य चिह्नं तिलाद्यं भणितं सुधीभिः ॥ ९६ ॥

यदि ललाट के वामभाग में नेत्रपात के समीप तिलादिका चिह्न भलीभांति लखा जाता हो तो उस प्राणी के चूतड़ों के बायें तरफ़ तिलादिका चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ ९६ ॥

४३–भाले विशाले खलु वामनेत्रे विदृश्यते चेत्तिलको यदानीम् ।
वामे नितम्बे पुरुषस्य तस्य ज्ञेयं तिलाद्यं कथितं कवीन्द्रैः ॥ ९७ ॥

यदि विशालभाल में बायें नेत्र के ऊपर तिलादिका चिह्न देखाजाता हो तो उस प्राणी के बायें चूतड़ के ऊपर कवीन्द्रों से कहे हुए तिलादिका चिह्न जानना चाहिये ॥ ९७ ॥

४४–वामाम्बकोणे[1] खलु निम्नभागे कर्णस्य चुल्ल्यां तिलको विभाति ।
पृष्ठे च भागे कटकस्य तस्य ख्यातं तिलाद्यं विदुषामधीशैः ॥ ९८ ॥

यदि बायें नेत्रकोण के निचलेभाग में कर्णचूल्हे के ऊपर तिलादिका चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी की कमर के पीछे तिलादिका निशान पण्डितेन्द्रों ने कहा है ॥ ९८ ॥

४५–गण्डोपरिस्थं खलु वामभागे कर्णस्य निम्ने तिलकादिकं चेत् ।
वामोरुनिम्ने पुरुषस्य तस्य चिह्नं तिलाद्यं प्रवदेत्[2]सुधीरः ॥ ९९ ॥

जिसके बाईं ओर कान के नीचे गाल के ऊपर टिके हुए तिलादिका निशान यदि भासता हो तो उस प्राणी की बाईं ऊरु के नीचे तिलादिका चिह्न पण्डितों को कहना चाहिये ॥ ९९ ॥

४६–ऊर्ध्वे च भागे खलु दक्षकर्णे प्रतीयते वै तिलको यदानीम् ।
प्रोक्तं तिलाद्यं मनुजस्य तस्य दक्षे च देशे जठरस्य[3] नूनम् ॥ २०० ॥

यदि दाहिने कान के ऊपर तिलादिका चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के पेट के दाहिने तरफ़ तिलादिका चिह्न कवियों ने कहा है ॥ २०० ॥

---

१ वामनेत्रकोणस्य २ कथयेत् ३ उदरस्य ॥

४७–विद्योतते चेद्विशदे कपाले दक्षे च कर्णे तिलको यदोर्ध्वे ।
वदन्ति विप्राः पुरुषस्य तस्य दक्षे च पार्श्वे तिलकं तदानीम् ॥ १ ॥

यदि विशदकपाल में दाहिने कान के ऊपर तिलादिका निशान सोहता हो तो उस प्राणी की दाहिनी पार्श्व के नीचे तिलादिका चिह्न बुद्धिमानों ने कहा है ॥ १ ॥

४८–दक्षस्य कर्णस्य च कोणदेशे संलक्ष्यते चेत्तिलको यदानीम् ।
दक्षस्य पार्श्वस्य च निम्नभागे प्रोक्तं तिलाद्यं पुरुषस्य तस्य ॥ २ ॥

यदि दाहिने कान के कोणदेश में तिलादिका निशान भलीभांति लखाजाता हो तो उस प्राणी की दाहिनी पार्श्व के नीचे तिलादिका चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ २ ॥

४९–ऊर्ध्वे च भागे खलु वामकर्णे प्रतीयते चेत्तिलको यदानीम् ।
ख्यातं तिलाद्यं पुरुषस्य तस्य वामे च भागे जठरस्य चिह्नम् ॥ ३ ॥

यदि वामकर्ण के ऊपरले भाग में तिलादिका चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के पेट के वामभाग में तिलादिका चिह्न मुनियों ने कहा है ॥ ३ ॥

५०–वामस्य कर्णस्य च मध्यदेशे संलक्ष्यते चेत्तिलकालको वै ।
वामस्य पार्श्वस्य च निम्नभागे चिह्नं तिलाद्यं भणितं प्रवीणैः ॥ ४ ॥

यदि बायें कान के बिचले भाग में तिलआदि का चिह्न लखाजाता हो तो उस प्राणी की बाईं पार्श्व के नीचे तिलादि का चिह्न प्रवीणोंने कहा है ॥ ४ ॥

५१–वामस्य कर्णस्य च निम्नदेशे विराजते चेत्तिलको यदानीम् ।
वामस्य पार्श्वस्य च निम्नदेशे चिह्नं तिलाद्यं मुनयो वदन्ति ॥ ५ ॥

यदि बायें कान के निचलेदेश में तिलादिका चिह्न भासता हो तो उस प्राणी की बाईं पार्श्व के नीचे तिलादिका चिह्न मुनियों ने कहा है ॥ ५ ॥

५२–दक्षाम्बमध्ये खलु निम्नभागे संलक्ष्यते चेत्तिलको हि यस्य ।
ब्रूयात्तिलाद्यं पुरुषस्य तस्य दक्षे च पार्श्वे किल गुह्यकस्य ॥ ६ ॥

जिसके दाहिने नेत्र के मध्यदेश में नीचे तरफ़ तिलादिका निशान यदि लखाजाता हो तो उस प्राणी की गुदा की दाहिनी ओर तिलादिका चिह्न पण्डितों को कहना चाहिये ॥ ६ ॥

---

१ प्रकाशते २ नीचभागे ३ संदृश्यते ४ नीचभागे ५ अपानदेशस्य ॥

५३–दक्षाम्बकोणे मनुजस्य यस्य नासाविलग्नं यदि भाति चिह्नम् ।
तदा शरीरस्य च मध्यमाङ्गे प्रोक्तं तिलाद्यं वदतां वरेण्यैः ॥ ७ ॥

जिसके दाहिने नेत्रकोणमें नासिकालग्न तिलादि का चिह्न यदि सोहता हो तो उस प्राणी के मध्यमाङ्गमें तिलादिका निशान कहनेवालों में प्रधान पण्डितों ने कहाहै ॥ ७ ॥

५४–दक्षे च भागे खलु नासिकायाः संदृश्यते चेत्तिलको यदानीम् ।
गुह्यप्रदेशे मनुजस्य तस्य प्रोक्तं तिलाद्यं मुनिभिस्तदानीम् ॥ ८ ॥

यदि नासिका के दाहिनेभाग में तिलादिका चिह्न भलीभांति देखाजाता हो तो उस प्राणी की गुदामें तिलादिका चिह्न मुनियों ने कहा है ॥ ८ ॥

५५–वामाम्बनिम्ने पुरुषस्य यस्य घ्राणस्य मध्ये तिलको विभाति ।
वामे च देशे खलु गुह्यकस्य चिह्नं तिलाद्यं मुनयो वदन्ति ॥ ९ ॥

जिस प्राणी के वामलोचनके नीचे नासिकाके बीचमें तिलआदि का चिह्न सोहता हो तो उसकी गुदाके वामभागमें तिलादिका चिह्न मुनिलोग कहते हैं ॥ ९ ॥

५६–वामाम्बपातस्य च मध्यदेशे विद्योतते चेत्तिलको यदानीम् ।
अपानद्वारे मनुजस्य तस्य वामे च भागे तिलकं वदन्ति ॥ १० ॥

वामलोचनके पातस्थलके मध्यदेश में यदि तिलादिका चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी के गुदाद्वारपर वामभागमें तिलादिका चिह्न पण्डितलोग कहते हैं ॥ १० ॥

५७–वामस्य नेत्रस्य च निम्नदेशे विराजते चेत्तिलको यदानीम् ।
गुदस्य द्वारे खलु वामभागे चिह्नं तिलाद्यं त्वपरं भणन्ति ॥ ११ ॥

यदि वामलोचन के निचले भागमें तिलादिका चिह्न भासता हो तो उस प्राणी के गुदाद्वार के बायेंभाग में पण्डितलोग अपर तिलादि का चिह्न कहते हैं ॥ ११ ॥

५८–कपालपार्श्वे खलु दक्षनेत्रपातस्य रम्भे ह्यथवा च मध्ये ।
विद्योतते चेत्तिलकालको वै तुन्दस्य दक्षे त्वपरं तिलाद्यम् ॥ १२ ॥

यदि कपाल के पार्श्व में दाहिने नेत्रपात के आरम्भ में अथवा मध्य में तिल आदि निशान प्रकाशता है तो पेट के दाहिनेभाग में अपर तिलादि का निशान कहा है ॥ १२ ॥

५९–दक्षाम्बपातो परितोऽथवा चेदारम्भदेशे खलु नासिकायाः ।

---

१ दक्षिणनेत्रकोणे २ प्रधानैः ३ वामनेत्रनीचे ४ नासिकामध्ये ५ गुदायाः ६ वामलोचनपातस्य ॥

संलक्ष्यते वै तिलको हि तस्य नाभ्याश्च दक्षे तिलकं वदन्ति ॥ १३ ॥

यदि दाहिने नेत्रपात के ऊपर अथवा नासिका के आरम्भदेश में तिलादि का निशान लखाजाता हो तो उस प्राणी की नाभि के दाहिनेभाग में तिलादि को कहते हैं ॥ १३ ॥

६०-वामाम्बपातस्य च मध्यदेशे आरम्भके वा तिलकादिकं चेत् ।
तुन्दस्य वामे पुरुषस्य तस्य चिह्नं तिलाद्यं कवयो भणन्ति ॥ १४ ॥

यदि दाहिने या बायें नेत्रपात के मध्यदेश या आरम्भदेश में तिल आदि का चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के पेट के बामभाग में तिलादि का चिह्न कवियों ने कहा है ॥ १४ ॥

६१-सव्याम्बपातस्य च मध्यभागे किंवा च शेषे तिलको विभाति ।
ब्रूयात्सुधीरो मनुजस्य तस्य वामे च पार्श्वे कटकस्य चिह्नम् ॥ १५ ॥

यदि बामलोचन के पातस्थल के बिचलेभाग में अथवा शेषभाग में तिलादिका निशान सोहता हो तो उस प्राणी की कमरके बायें तरफ़ तिलादिका चिह्न पण्डितको कहना चाहिये ॥ १५ ॥

६२-नार्या यदा वा पुरुषस्य वक्त्रे दक्षाम्बपातोपरितस्तिलाद्यम् ।
वदेत्सुचिह्नं मनुजस्य तस्य मुष्कस्य पार्श्वे कटिदक्षपार्श्वे ॥ १६ ॥

जिस नारी या नरके बदन में दाहिने नेत्रपात के ऊपर तिलादिका चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के गलहरी या कमर के दाहिने तरफ़ तिलादिका चिह्न कहना चाहिये ॥ १६ ॥

६३-दक्षाम्बपातस्य च मध्यदेशे संदृश्यते चेत्तिलको यदानीम् ।
दक्षाङ्गमध्ये विशदं तिलाद्यं विद्वद्भिराद्यैर्भणितं तदानीम् ॥ १७ ॥

यदि दाहिने नेत्रपात के मध्यदेश में तिलादिका चिह्न भलीभांति देखाजाता हो तो उस प्राणी के दाहिने अङ्ग के बीच विशद तिलादि का चिह्न आद्य विद्वानों ने कहा है ॥ १७ ॥

६४-दक्षाम्बपातस्य च शेषदेशे नासान्तिके चेत्तिलको विभाति ।
कटिप्रदेशस्य च निम्नभागे चिह्नं तिलाद्यं कथितं नरस्य ॥ १८ ॥

यदि दाहिने नेत्रपात के शेषदेश में नासा के समीप तिलादिका चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी की कमर के निचलेभाग में तिलादिका चिह्न मुनियों ने कहा है ॥ १८ ॥

६५–वामाम्बपातस्य च निम्नदेशे चिह्नं यदानीं विशदं विभाति।
कुचस्य वामे मनुजस्य तस्य विद्यात्तिलाद्यं विदुषामधीशः॥ १९ ॥

यदि वामनेत्रपात के नीचेभाग में विशद तिलादि का निशान सोहता हो तो उस प्राणी के कुचके वामभाग या गलहरी के बायें तरफ़ तिलादि का चिह्न बुधेशों को जानना चाहिये ॥ १९ ॥

६६–वामाम्बपातस्य च मध्यदेशे विराजते चेत्तिलको यदानीम्।
ब्रूयाद्द्विपश्चित्पुरुषस्य तस्य गुदान्तिके वै विशदं तिलाद्यम्॥ २०॥

यदि वामनेत्रपात के मध्यदेश में तिलादि का चिह्न विराजता हो तो उस प्राणी की गुदाके निकट विशद तिलादि का निशान पण्डित को कहना चाहिये ॥ २० ॥

६७–आरम्भदेशे खलु सव्यनेत्रे घ्राणस्य मूले यदि भाति चिह्नम्।
ब्रूयात्तदानीं मनुजस्य तस्य कटेश्च वामे त्वपरं तिलाद्यम्॥ २१ ॥

यदि वामनेत्र के आरम्भदेश में या नासिका की मूल में तिलादि का चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी की कमर के वामभाग में अपर तिलादि को कहना चाहिये ॥ २१ ॥

६८–दक्षाम्बकोणस्य च निम्नदेशे समीक्ष्यते चेत्तिलको हि यस्य।
वदेद् बुधेशः खलु पञ्जरस्य दक्षे च पार्श्वे विशदं तिलाद्यम्॥ २२ ॥

जिस प्राणी के दाहिने नेत्रकोण के निचलेभाग में यदि तिलादि का निशान देखा जाता है तो उसके पांजर के दाहिने तरफ़ विशदतिलादि का चिह्न बुधेशों को कहना चाहिये ॥ २२ ॥

६९–दक्षस्य नेत्रस्य च मध्यदेशे विदृश्यते चेत्तिलको यदानीम्।
विज्ञा महान्तो मनुजस्य तस्य गुदाप्रदेशे तिलकं वदन्ति॥२३॥

यदि दाहिने नेत्र के मध्यभाग में तिलआदि का निशान देखाजाता हो तो उस प्राणी के गुदाप्रदेश में तिलादि का चिह्न बड़े विज्ञोंने कहा है यानी महात्मा विज्ञलोग कहते हैं ॥ २३ ॥

७०–वामाम्बनिम्नस्य च मध्यदेशे प्रतीयते चेत्तिलको यदानीम्।
प्राज्ञैः सुधीरैः पुरुषस्य तस्य कुचस्य वामे भणितं तिलाद्यम्॥२४॥

यदि वामलोचन के नीचे मध्यदेश में तिलादिका चिह्न प्रतीयमान होताहो तो उस प्राणी के कुच के वामभाग में सुधीर प्राज्ञलोगों ने तिलादि का चिह्न कहा है ॥ २४ ॥

७१–वामाम्बपातस्य च निम्नदेशे संलक्ष्यते चेत्तिलको यदानीम्।

गुदाप्रदेशस्य च वामपार्श्वे चिह्नं तिलाद्यं भणितं सुधीभिः ॥ २५ ॥

यदि वामनेत्रपात के नीचेभाग में तिलादि का निशान लखा जाता हो तो उस प्राणी की गुदा के बायें तरफ़ तिलादि का चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ २५ ॥

७२–वामाम्बपातस्य च कोणदेशे तथा च मध्ये तिलको विभाति ।
गुह्याङ्गमध्ये मनुजस्य तस्य चिह्नं तिलाद्यं मुनयो वदन्ति ॥ २६ ॥

यदि वामनेत्रपात के कोणदेश में एवं नेत्रपात के निचले भाग में तिलादि का चिह्न प्रतीत होता हो तो उस प्राणी की गुदा के विचले भाग में तिलादि का निशान मुनिलोग कहते हैं ॥ २६ ॥

७३–वामाम्बनिम्ने खलु पातमध्ये नासान्तिके वा तिलको विभाति ।
ब्रूयात्तदानीं पुरुषस्य तस्य मुष्कस्य वामे त्वपरं तिलाद्यम् ॥ २७ ॥

यदि वामलोचन के नीचे पात के मध्य में या नासा के निकट तिलादि का चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी की गलहरी के वामभाग में अपर तिलादि का चिह्न पण्डित को कहना चाहिये ॥ २७ ॥

७४–भालस्य पार्श्वे पुरुषस्य यस्य दक्षाम्बमध्ये यदि भाति चिह्नम् ।
वत्सस्य दक्षे जठरान्तिके वा प्रोक्तं तिलाद्यं विशदं सुधीभिः ॥ २८ ॥

जिसके भाल के पार्श्व में दाहिने लोचन के बीच में यदि चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के दाहिने तरफ़ या पेट के पास विशद तिलादि का चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ २८ ॥

७५–दक्षाम्बकोणे खलु नेत्रमध्ये नासान्तिके वा तिलको विभाति ।
वत्सस्य दक्षे पुरुषस्य चाग्रे संकीर्तितं वै विशदं तिलाद्यम् ॥ २९ ॥

यदि दाहिने नेत्रकोण यानी नेत्र के मध्य में या नासिका के समीप तिलादि का निशान सोहता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के दाहिने भाग व अग्रभाग में विशद तिलादि का चिह्न कहा है ॥ २९ ॥

७६–वामाम्बकोणे पुरुषस्य भाले विद्योतते चेत्तिलको यदानीम् ।
वत्सस्य वामे विशदं तिलाद्यं संभाषितं वै वदतां वरेण्यैः ॥ ३० ॥

जिसके भाल में वामलोचन के कोण में तिलादि का चिह्न यदि प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के बायें तरफ़ विशद तिलादि का चिह्न कहनेवालों में से प्रधान पण्डितों ने कहा है ॥ ३० ॥

७७–वामाम्बकोणस्य तु चाग्रभागे संलक्ष्यते चेत्तिलको यदानीम्।
वामे च पार्श्वे खलु वत्सकस्य संवर्णितं वै त्वपरं तिलाद्यम्॥ ३१॥

यदि वामलोचनकोण के अग्रभाग में तिलादि का चिह्न लखाजाता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के बायें तरफ़ अपर तिलादि का चिह्न मुनियों ने कहा है ॥ ३१ ॥

७८–वक्त्रस्य दक्षे खलु नासिकाया रन्ध्रस्य निम्ने तिलको विभाति।
ऊर्ध्वे च भागे किल दक्षिणांसे चिह्नं तिलाद्यं मुनयो भणन्ति॥ ३२॥

यदि मुख के दाहिने नासिकारन्ध्र के नीचे तिलादि का निशान सोहता हो तो उस प्राणी के दाहिने कन्धा के ऊपर तिलादि का चिह्न मुनिलोग कहते हैं ॥ ३२ ॥

७९–ओष्ठस्य शेषे खलु दक्षनासाशेषे च भागे तिलको यदानीम्।
ब्रूयात्तदानीं पुरुषस्य तस्य कुचोर्ध्वदेशे¹ विशदं तिलाद्यम्॥ ३३॥

यदि ओष्ठ के शेषभाग या दक्षिण नासा के शेषभाग में तिलादि का निशान सोहता हो तो उस प्राणी के कुच के ऊपर या गलहरी के ऊपर विशद तिलादि का चिह्न कहना चाहिये ॥ ३३ ॥

८०–दक्षे च भागे खलु नासिकाया ऊर्ध्वस्थितश्चेत्तिलको विभाति।
विद्याद्बुधेन्द्रो मनुजस्य तस्य गुह्याङ्गदक्षे त्वपरं तिलाद्यम्॥ ३४॥

यदि दाहिने तरफ़ नासिका के ऊपर तिलादि का निशान भासता हो तो उस प्राणी की गुदा के दाहिने तरफ़ अपर तिलादिका चिह्न बुधेन्द्र को जानना चाहिये ॥ ३४ ॥

८१–वामे च भागे खलु नासिकायाः शेषे च देशे यदि लाञ्छनं चेत्।
वत्सस्य वामे त्वपरं तिलाद्यं गायन्ति विप्रा गुणगौरवाढ्याः॥ ३५॥

यदि बायें तरफ़ नासिका के शेष देश में तिलादि का चिह्न देखा जाता हो तो उस प्राणी के वक्षस्थल के वामभाग में अपर तिलादि का चिह्न गुणगौरवसंपन्न ब्राह्मणों ने गाया है ॥ ३५ ॥

८२–घ्राणस्य निम्ने खलु वामभागे वक्त्रस्य मध्ये ह्यथवा तिलश्चेत्।
ब्रूयात्तिलाद्यं पुरुषस्य तस्य गुह्यस्य मेढ्रस्य च मध्यदेशे॥ ३६॥

---

१. मुष्कोर्ध्वदेशे इति वा पाठः ॥

यदि नासिका के नीचे वामभाग में अथवा वदन के बीच में तिलआदि का चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी की गुदा व लिङ्ग के बीच में तिलादि का निशान कहना चाहिये ॥ ३६ ॥

८३–वामे च भागे खलु नासिकाया मध्यस्थले चेत्तिलको विभाति ।
गुह्यस्य मेढ्रस्य च मध्यदेशे विद्वद्भिराद्यैर्भणितं तिलाद्यम् ॥ ३७ ॥

यदि बायें तरफ़ नासिका के बिचले भाग में तिल आदि का चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी की गुदा या लिङ्ग के मध्यभाग में तिलादि का चिह्न आदि के विद्वानों ने कहा है ॥ ३७ ॥

८४–भाले विशाले मनुजस्य यस्य नासाग्रभागे तिलको विभाति ।
वदेत्तदानीं वदतां प्रधानो गुह्याग्रभागे त्वपरं तिलाद्यम् ॥ ३८ ॥

जिसके विशालभाल में नासिका के अग्रभाग में तिलादि का चिह्न सोहता है तो उस प्राणी की गुदा के अग्रभाग में अपर तिलादि का निशान बुधेशों को कहना चाहिये ॥ ३८ ॥

८५–दक्षे च भागे खलु नासिकाया नासापुटे चेत्तिलको यदानीम् ।
विद्यात्तदानीं पुरुषस्य तस्य गुह्याङ्गदक्षे त्वपरं तिलाद्यम् ॥ ३९ ॥

यदि नासिका के दाहिने तरफ़ नासापुट के बीच में तिलादि का चिह्न भासता हो तो उस प्राणी की गुदा के दाहिने भाग में अपर तिलादि का चिह्न जानना चाहिये ॥ ३९ ॥

८६–वामे च पार्श्वे खलु नासिकाया मध्ये च नासापुटकस्य किंवा ।
विद्योतते[1] चेत्तिलको यदानीं लिङ्गस्य वामे भणितं तिलाद्यम् ॥ ४० ॥

यदि नासिका के वामपार्श्व में या नासापुट के मध्य में तिलादि का चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के लिङ्ग के वामभाग में तिलादिका चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ ४० ॥

८७–दक्षे च भागे खलु नासिकायाः पुटोपरिस्थस्तिलको विभाति ।
विज्ञा[2] महान्तो[3] मनुजस्य तस्य गुह्याङ्गदेशे तिलकं वदन्ति ॥ ४१ ॥

यदि दाहिने तरफ़ नासापुट के ऊपर टिका हुआ तिलका निशान सोहता हो तो उस प्राणी के गुह्याङ्गदेश में तिलादि का चिह्न पूज्य पण्डितलोग कहते हैं ॥ ४१ ॥

८८–नासोपरिस्थस्तिलको विभाति दक्षे च भागे पुरुषस्य यस्य ।
गुह्यस्य लिङ्गस्य च मूलमध्ये दक्षे तिलाद्यं भणितं सुधीभिः ॥ ४२ ॥

---

१ प्रकाशते २ विशेषज्ञातारः ३ पूज्याः ॥

जिसके दाहिने तरफ़ नासिका के ऊपर टिका हुआ तिलआदि का चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी के गुदा व लिङ्ग की मूल के मध्य में दाहिनी ओर तिलादि का निशान पण्डितों ने कहा है ॥ ४२ ॥

८६—घ्राणोपरिस्थः खलु वामभागे विराजते चेत्तिलको यदानीम् ।
गुदस्य मेढ्रस्य च मूलमध्ये वामे तिलाद्यं कवयो गदन्ति ॥ ४३ ॥

जिसके बायें तरफ़ नासिका के ऊपर टिका हुआ तिलादि का चिह्न यादि विराजता हो तो उस प्राणी की गुदा व लिङ्ग की मूल के मध्य में बाईं ओर तिलादिका निशान कविलोग कहते हैं ॥ ४३ ॥

९०—प्रान्ते यदानीं खलु वामगण्डे प्रतीयते चेद्विशदं तिलाद्यम् ।
गुह्याङ्गनिम्ने किल दक्षभागे चिह्नं तिलाद्यं कथितं कवीन्द्रैः ॥ ४४ ॥

यदि वामगण्ड के प्रान्तदेश में उज्ज्वलरूप तिलादि का चिह्न प्रतीत होता हो तो उस प्राणी के दाहिने तरफ़ गुदा के नीचे तिलादि का चिह्न कवीन्द्रों ने कहा है ॥ ४४ ॥

९१—वामे च भागे वदनस्य यस्य चिह्नं तिलाद्यं यदि लक्ष्यते चेत् ।
ऊर्ध्वे च भागे किल वामपाणौ वदेत्सुधीरो विशदं तिलाद्यम् ॥ ४५ ॥

जिसके वदन के वामभाग में तिलादि का चिह्न यदि लखाजाता हो तो उस प्राणी के बायें हाथ के ऊपर विशद तिलादि का चिह्न कहना चाहिये ॥ ४५ ॥

९२—ऊर्ध्वस्थले चेदधरस्य[1] मध्ये संलक्ष्यते[2] वै तिलको यदानीम् ।
गीतं तदानीं मनुजस्य तस्य गुह्याग्रभागे[3] त्वपरं तिलाद्यम् ॥ ४६ ॥

यदि ओष्ठके ऊपर बिचले भाग में तिलादि का चिह्न लखा जाता हो तो उस प्राणी की गुदा के अग्रभाग में अपर तिलादि का चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ ४६ ॥

९३—निम्नौष्ठमध्ये[4] यदि भाति चिह्नं दक्षे च जानौ भणितं[5] तिलाद्यम् ।
नो मध्यदेशे खलु वामजानौ दक्षे च दृष्टे किल दक्षजानौ ॥ ४७ ॥

यदि निचले ओष्ठ के मध्य में तिलादि का चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी की दाहिनी जानु में तिलादि का चिह्न पण्डितों ने कहा है और यदि मध्यदेश में न हो तो बाईं जानु में तिलादि को कहना चाहिये और यदि दाहिनी तरफ़ देखा जाता हो तो दाहिनी घुटनू में तिलादि चिह्न चतुरों ने कहा है ॥ ४७ ॥

---

१ ओष्ठस्य २ दृश्यते ३ गुदाग्रभागे ४ नीचाधरोष्ठमध्ये ५ कथितम् ॥

६४–मध्यस्थले चेच्चिबुकस्य यस्य प्रतीयते वै तिलको यदानीम् ।
पादोपरिस्थं तिलकं तदानीमाहुर्[1]मुनीन्द्रा मनुजस्य तस्य ॥ ४८ ॥

जिसकी चिबुक (ठोढ़ी) के बीच में तिलादि का चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी के पाँवों के ऊपर टिके हुए तिलादि का चिह्न मुनीन्द्रों ने कहा है ॥ ४८ ॥

६५–वक्त्रे विशाले चिबुकस्य मध्ये संदृश्यते चेत्तिलकालको वै ।
जङ्घोपरिस्थं त्वपरं तिलाद्यं वदन्ति विप्रा वदतांवरेण्याः ॥ ४९ ॥

विशाल वदन में ठोढ़ी के बीच में यदि तिलादि का चिह्न देखा जाता हो तो कहने वालों में प्रधान ब्राह्मणलोग जांघके ऊपर टिके हुए अपर तिलादि को कहते हैं ॥ ४९ ॥

६६–दक्षे च भागे चिबुकस्य शेषे संलक्ष्यते चेत्तिलको यदानीम् ।
ब्रूयात्तदानीं पुरुषस्य तस्य ऊरोश्च संधावपरं तिलाद्यम् ॥ ५० ॥

यदि दाहिने भाग में ठोढ़ी के शेष देश में तिलादि का चिह्न लखा जाता हो तो उस प्राणी की ऊरु की संधि में अपर तिलादि का निशान कहना चाहिये ॥ ५० ॥

६७–वामे च भागे चिबुकस्य यस्य प्रतीयते चेत्तिलको यदानीम् ।
सन्धिस्थलस्थं खलु सक्थिनोश्च चिह्नं तिलाद्यं त्वपरं वदन्ति ॥ ५१ ॥

जिसकी ठोढ़ी के वामभाग में यदि तिलादि का चिह्न प्रतीयमान होता हो तो ऊरु (निरोंह) की सन्धि में टिके हुए अपर तिलादि चिह्न को कहते हैं ॥ ५१ ॥

६८–ऊर्ध्वस्थले चेत्खलु कण्ठनल्या विराजते वै तिलको हि यस्य ।
गुह्याङ्गमध्ये किल नाभिदेशे गायन्ति चिह्नं त्वपरं तिलाद्यम् ॥ ५२ ॥

जिसकी कण्ठनली के ऊपरले भाग में यदि तिलादि का चिह्न सोहता हो तो गुदा के मध्य में या तोंदी के ऊपर अपर तिलादि का चिह्न कविलोग कहते हैं ॥ ५२ ॥

६९–गलस्य नल्याः खलु दक्षपार्श्वे[2] चिह्नं तिलाद्यं विशदं[3] विभाति ।
वदेत्[4]तदानीं मनुजस्य तस्य ऊरोश्च दक्षे[5] भणितं तिलाद्यम् ॥ ५३ ॥

यदि गले की नली के दाहिने तरफ़ विशद तिलादि का चिह्न सोहता हो तो उस प्राणी की ऊरु के दाहिने भाग में तिलादि का चिह्न पण्डितों ने कहा है ॥ ५३ ॥

---

१ वदन्ति २ दक्षिणभागे ३ उज्ज्वलवर्णम् ४ कथयेत् ५ दक्षिणे ॥

१००–कण्ठस्य नल्याः खलु वामपार्श्वे[1] प्रतीयते[2] चेद्विशदं तिलाद्यम् ।
बूयात्सुचिह्नं पुरुषस्य तस्य ऊरोश्च सन्धेः किल सव्यदेशे[3] ॥ ५४ ॥

यदि कण्ठनली के वामभाग में उज्ज्वलरूप तिलादि का चिह्न प्रतीयमान होता हो तो उस प्राणी की ऊरु सन्धि के बायें तरफ़ तिलादि का चिह्न कहना चाहिये ॥ ५४ ॥

इति तिलादिज्ञानम् ॥

भालाङ्कविज्ञानमिदं मयोक्तं नारीनराणां शुभदं शिवेशे ! ।
अभ्यासमात्रेण नराः सुपूज्याः भूयासुरुर्व्यां सकलप्रियास्ते ॥ ५५ ॥

अहो शिवेशे ! यह भालरेखा के सुलक्षणों का विज्ञान हमने कहा है, जो कि नर नारी गणों को शुभदायक है कि जिसके अभ्यासमात्र से मनुष्य लोग महापूजनीय होते हैं और वेही लोग भूमण्डल में सबों के प्यारे होंगे ॥ ५५ ॥

कल्याणं कलयत्वीशः पठतस्सादरात् प्रिये ।
लोके धन्यतरो भूयान्मङ्गलानां च मङ्गलः ॥ ५६ ॥

अहो प्रिये ! आदर समेत पढ़ते हुए मनुष्य को मङ्गलों का मङ्गलरूप होकर ईश नामक परमेश्वर कल्याण को देवे और वह, पुरुष लोक में धन्यवाद देने योग्य होवेगा ॥ ५६ ॥

इति श्रीमद्द्विजवर शक्तिधरसंकलित सामुद्रिकशास्त्रस्योत्तरार्द्धे भालरेखासुलक्षण-वर्णनंनाम प्रथमोऽङ्कः समाप्तिं पफाणेति शम् ॥

समाप्तोऽयं प्रथमोङ्कः ॥



१ वामभागे २ लक्ष्यते ३ वामदेशे ॥

अथ सामुद्रिकशास्त्रस्योत्तरार्द्धे द्वितीयाङ्कस्य सूचीपत्रम् ।

इति सामुद्रिकस्योत्तरार्द्धे द्वितीयाङ्कस्य सूचीपत्रम् ।



अथ सामुद्रिकशास्त्रस्योत्तरार्द्धे
द्वितीयाङ्कमाह ॥

मङ्गलाचरणम् ॥

नत्वाहं गजतुण्डकं गणपतिं सौख्यप्रदं शाम्भवं
धन्यं धर्मधरं धराधिपनुतं सिन्दूरभालाङ्कितम् ।
विघ्नव्यूहहरं परेशनिरतं भूत्यादिभिः सेवितं
स्वप्नाध्याययुतं स्वरोदयगतं ज्ञानं ब्रुवे विन्मुदे ॥ १ ॥

सामुद्रिकस्वप्नाध्याये सुस्वप्नानाह—

नन्द उवाच ।

केन स्वप्नेन किं पुण्यं केन पुंसां भवेत्सुखम् ।
कोपि कोपि च सुस्वप्नस्तत्सर्वं कथय प्रभो ॥ १ ॥

नन्दजी बोले कि, हे प्रभो ! किस स्वप्न से पुरुषों को क्या पुण्य होता है ? और किस स्वप्न से क्या सुख होता है और कौन कौन सुस्वप्न हैं उन सबों को कहिये ॥ १ ॥

श्रीभगवानुवाच ।

वेदेषु सामवेदश्च प्रशस्तः सर्वकर्मसु ।
तत्रैव काण्वशाखायां पुण्यकाण्डे मनोहरे ॥ २ ॥

श्रीभगवान्जी बोले कि, वेदों में सामवेद सब कर्मों में प्रशस्त है वहां ही काण्वशाखा में मनोहर पुण्यकाण्ड के उपस्थित होने में ॥ २ ॥

सुव्यक्तो यश्च सुस्वप्नः शश्वत्पुण्यफलप्रदः ।
तत्सर्वं लिखितं तात ! कथयामि निशामय ॥ ३ ॥

जो सुस्वप्न प्रकटित है वह निरन्तर पुण्यफल का दाता है हे तात ! वह सब लिखा है मैं कहता हूं सुनिये ॥ ३ ॥

स्वप्नाध्यायं प्रवक्ष्यामि बहुपुण्यफलप्रदः ।
स्वप्नाध्यायं नरः श्रुत्वा गङ्गास्नानफलं लभेत् ॥ ४ ॥

स्वप्नाध्यायको मैं कहूंगा जोकि बहुत से पुण्यफल का प्रदाता है उस स्वप्नाध्यायको सुनकर मनुष्य गङ्गास्नानका फल पाता है ॥ ४ ॥

स्वप्नस्तु प्रथमे यामे संवत्सरफलप्रदः ।
द्वितीये चाष्टभिर्मासैस्त्रिभिर्मासैस्तृतीयके ॥ ५ ॥

जो स्वप्न पहले पहर में देखाजाता है वह सालभरे में फलदायक होता है व जो दूसरे पहर में देखाजाता है वह आठ महीना में फल देता है और जो तीसरे पहर में स्वप्न देखाजाता है वह तीन महीना में फलदायक होता है ॥ ५ ॥

चतुर्थे चार्धमासेन स्वप्नः स्यात्तु फलप्रदः ।
दशाहे फलदः स्वप्नोऽप्यरुणोदयदर्शने ॥ ६ ॥

जो स्वप्न चौथे पहर में देखा जाता है वह आधे महीना (पन्द्रह दिन) में फल को देता है और जो स्वप्न अरुणोदय के दर्शन में देखाजाता है वह दश दिन में फलदायक होता है ॥ ६ ॥

प्रातः स्वप्नश्च फलदस्तत्क्षणं यदि बोधितः ।
दिने मनसि यद्दृष्टं तत्सर्वं च लभेद्ध्रुवम् ॥ ७ ॥

जो स्वप्न प्रभातकाल देखाजाता है वह जगनेपर उसी क्षण फलको देता है दिन में जो देखागया वा मनमें विचारा गया है उस सबको निश्चयकर पाता है ॥ ७ ॥

चिन्ताव्याधिसमायुक्तो नरः स्वप्नं च पश्यति ।
तत्सर्वं निष्फलं तात प्रयात्येव न संशयः ॥ ८ ॥

हे तात ! जो प्राणी चिन्ता व व्याधि से संयुक्त होता हुआ स्वप्न को देखता है वह संपूर्ण निस्सन्देह निष्फलता को प्राप्त होता है ॥ ८ ॥

जडो मूत्रपुरीषेण पीडितश्च भयाकुलः ।

दिगम्बरो मुक्तकेशो न लभेत्स्वप्नजं फलम् ॥ ९ ॥

जो प्राणी स्वप्न में जड़ होकर पेशाब व दस्त से पीड़ित व भय से व्याकुल व नङ्गा तथा छोड़े केशवाला होजाता है वह स्वप्न से उपजेहुए फल को नहीं पाता है ॥ ९ ॥

दृष्ट्वा स्वप्नं च निद्रालुर्यदि निद्रां प्रयाति च ।
विमूढव्यक्तिश्चेद्रात्रौ न लभेत्स्वप्नजं फलम् ॥ १० ॥

जो निद्रावान् प्राणी स्वप्नको देखकर निद्राको प्राप्त होता है और जो रात्रि में विमूढ़ होजाता है वह स्वप्नज फलको नहीं पाता है ॥ १० ॥

उक्त्वा काश्यपगोत्रे च विपत्तिं लभते ध्रुवम् ।
दुर्गते दुर्गतिं याति नीचे व्याधिं प्रयाति च ॥ ११ ॥

काश्यपगोत्र में कहकर निश्चय विपत्ति को पाता है, दुर्गत में दुर्गति को पाता है और नीच में व्याधि को प्राप्त होता है ॥ ११ ॥

शत्रौ भयं च लभते मूर्खे च कलहो भवेत् ।
कामिन्यां धनहानिः स्याद्रात्रौ चोरभयं भवेत् ॥ १२ ॥

वैरी के देखने में भय को पाता है, मूर्ख के देखने में लड़ाई होती है व कामिनी में धन का विनाश होता है और रात्रि में चोरों का भय होता है ॥ १२ ॥

निद्रायां लभते शोकं पण्डिते वाञ्छितं फलम् ।
न प्रकाश्यश्च सुस्वप्नः पण्डितैः काश्यपे व्रज ॥ १३ ॥

स्वप्न में निद्रा के आजाने पर शोक को पाता है, पण्डित के देखने पर वाञ्छित फल को पाता है और पण्डितों को भला स्वप्न प्रकाशित नहीं करना चाहिये इसलिये काश्यप-गोत्रीय के पास चलो ॥ १३ ॥

गवां च कुञ्जराणां च हयानां च व्रजेश्वर ।
प्रासादानां च शैलानां वृक्षाणां च तथैव च ॥ १४ ॥
आरोहणं च धनदं भोजनं रोदनं तथा ।
प्रतिगृह्य तथा वीणां सस्याढ्यां भूमिमालभेत् ॥ १५ ॥

हे व्रजेश्वर ! स्वप्न में बैल, हाथी, घोड़ा, देवमन्दिर, राजमन्दिर, पहाड़ और वृक्षों पर चढ़े तो धनदायक होता है तथा भोजन व रोदन करे और वीणा को लेकर बजावे तो सस्यसंपन्न भूमि को पाता है ॥ १४ । १५ ॥

शस्त्रास्त्रेण यदा विद्धो व्रणेन कृमिणा तथा ।
विष्ठया रुधिरेणैव संयुक्तोप्यर्थमालभेत् ॥ १६ ॥

जो स्वप्न में शस्त्र व अस्त्र से विध जावे घाव, कृमि, विष्ठा और रुधिर से संयुक्त होजावे तो वह धन को पाता है ॥ १६ ॥

स्वप्नेऽप्यगम्यागमनं भार्यालाभं करोति च ।
मूत्रसिक्तं पिबेच्छुक्रं नरकं च विशत्यपि ॥ १७ ॥
नगरं प्रविशेन्नक्तं समूत्रां वा सुधां पिबेत् ।
शुभवार्तामवाप्नोति विपुलं चार्थमालभेत् ॥ १८ ॥

जो स्वप्न में अगम्यागमन करता है तो भार्या को पाता है, जो मूत्रसिक्त बीज को पीता है और नरक में घुसता है व रात्रि में नगर को जाता है या मूत्रसमेत सुधा को पीता है तो वह शुभवार्ता को पाता हुआ बड़ेभारी धन को लहता है ॥ १७ । १८ ॥

गजं नृपं सुवर्णं च वृषभं धनुमेव च ।
दीपमन्नं फलं पुष्पं कन्यां छत्रं रथं ध्वजम् ॥ १९ ॥
कुटुम्बं लभते दृष्ट्वा कीर्तिं च विपुलां श्रियम् ।
पूर्णकुम्भं द्विजं वह्निं पूपं ताम्बूलमन्दिरम् ॥ २० ॥
शुक्लधान्यं नटं वेश्यां दृष्ट्वा श्रियमवाप्नुयात ।
गोक्षीरं च घृतं दृष्ट्वा चार्थं पुण्यं धनं लभेत् ॥ २१ ॥

हाथी, राजा, सोना, बैल, धनुष, दीपक, अन्न, फल, फूल, कन्या, छाता, रथ, ध्वजा और कुटुम्ब को देख कर यश और घनी लक्ष्मी को पाता है तथा पूर्णकुम्भ, ब्राह्मण, अग्नि, पुआ, ताम्बूल, मन्दिर, सफेद धान्य, नट और वेश्या को देख कर लक्ष्मी को पाता है और गऊ का दूध व घी को देख कर अर्थसिद्धि, पुण्य व धन को पाता है ॥ १९ । २१ ॥

पायसं पद्मपत्रे च दधि दुग्धं घृतं मधु ।
मिष्टान्नं स्वस्तिकं भुक्त्वा ध्रुवं राजा भविष्यति ॥ २२ ॥
पक्षिणां मानुषाणां च भुङ्क्ते मांसं नरो यदि ।
बह्वर्थं शुभवार्तां च लभते वाञ्छितं फलम् ॥ २३ ॥

कमल के पत्ते पर खीर, दही, दूध, घी, शहद, मीठा अन्न और स्वस्तिकों का भोजन

र निश्चय कर राजा होता है पक्षी व मनुष्यों का मांस जो प्राणी खाता है वह बहुत ला
न, शुभवार्ता और वाञ्छितफल को पाता है ॥ २२ । २३ ॥

छत्रं वा पादुकां वापि लब्ध्वाध्वानं च गच्छति ।
असिं च निर्मलं तीक्ष्णं तत्तथैव भविष्यति ॥ २४ ॥
भेलया संतरेद्यो हि सप्रधानं भविष्यति ।
दृष्ट्वा च फलिनं वृक्षं धनमाप्नोति निश्चितम् ॥ २५ ॥

छाता वा खड़ाऊं को पाकर मार्गपर चले या पैनी, निर्मल तलवार लेकर चले और
ो भेला (घन्नई) आदि से तरता है वह प्रधान होता है और फले हुए वृक्षको देखकर
नको निश्चय कर पाता है ॥ २४ । २५ ॥

यस्य श्वेतेन सर्पेण दश्यते दक्षिणे भुजे ।
सोऽचिराल्लभते भार्यां विनीतां प्रियवादिनीम् ॥ २६ ॥
सर्पेण भक्षितो यो हि अर्थलाभश्च तद्भवेत् ।
स्वप्ने सूर्यं विधुं दृष्ट्वा मुच्यते व्याधिबन्धनात् ॥ २७ ॥

जिसकी दाहिनी भुजा में सफेद सांप काट खावे तो वह थोड़े ही समय में विनीता व
प्रियवादिनी भार्या को पाता है २६ जो स्वप्न में सांप से भक्षित हो वह अर्थलाभ
ो पाताहै और स्वप्न में सूर्य व चन्द्रमा को देखकर व्याधिबन्धन से छूट जाताहै ॥ २७ ॥

वडवां कुक्कुटीं क्रौञ्चीं दृष्ट्वा भार्यां लभेद्ध्रुवम् ।
स्वप्ने यो निगडैर्बद्धः प्रतिष्ठामुत्तमां लभेत् ॥ २८ ॥

ब्राह्मणी या घोड़ी, मुर्गी और कराकुली को देखकर भार्या को निश्चय कर पाता है
और जो स्वप्न में बेड़ी हथकड़ी से बाँधा गया हो तो वह उत्तम प्रतिष्ठा को पाताहै ॥२८॥

दध्यन्नं पायसं भुङ्क्ते तडागे वा नदीतटे ।
विशीर्णे पद्मपत्रे च सोपि राजा भविष्यति ॥ २९ ॥
जलौकसं वृश्चिकं च सर्पं च यदि पश्यति ।
धनं पुत्रं च विजयं प्रतिष्ठां च लभेदिति ॥ ३० ॥

जो प्राणी स्वप्न में तालाब या नदी के किनारे फटे केला के पत्ते पर दही, भात और
ीर को खाता है वह राजा होता है और यदि स्वप्न में जोंक बीछू और सांप को देखता
है तो धन, पुत्र, विजय और प्रतिष्ठा को पाता है ॥ २९ । ३० ॥

शृङ्गिभिर्दंष्ट्रिभिः कोलैर्वानरैः पीडितो यदि ।
निश्चितं च भवेद्राजा धनं च विपुलं लभेत् ॥ ३१ ॥
मत्स्यं मांसं मौक्तिकं च शङ्खचन्दनहीरकम् ।
यस्तु पश्यति स्वप्नान्ते विपुलं धनमालभेत् ॥ ३२ ॥

यदि स्वप्न में सींगवाले, दाढ़वाले, सूअर और वानरों से पीड़ित होता है तो वह निश्चय कर राजा होता हुआ बड़े धन को पाता है और जो प्राणी मछली, मांस, मोती, शङ्ख, चन्दन और हीरा को देखता है तो वह स्वप्नान्त में भारी धनको पाताहै ॥३१।३२॥

सुरां च रुधिरं स्वर्णं भुक्त्वा विष्ठां धनं लभेत् ।
प्रतिमां शिवलिङ्गं च लभेद्दृष्ट्वा जयं धनम् ॥ ३३ ॥
फलितं पुष्पितं बिल्वमाम्रं दृष्ट्वा लभेद्धनम् ।
दृष्ट्वा च जलमग्निं च धनं बुद्धिं श्रियं लभेत् ॥ ३४ ॥

जो प्राणी स्वप्न में मदिरा, रक्त और सोना व विष्ठा को खाता है तो वह धन को पाता है व जो मूर्त्ति व शिवलिङ्ग को देखता है तो वह जय व धनको पाता है और जो फले, फूले बेल व आँब को देखता है तो वह धनको पाता है और जो जल व आगीको देखता है तो वह धन, बुद्धि और लक्ष्मी को पाता है ॥ ३३ । ३४ ॥

आमलकं धात्रीफलमुत्पलं च धनागमम् ।
देवताश्च द्विजा गावः पितरो लिङ्गिनस्तथा ॥ ३५ ॥
यद्ददाति मिथः स्वप्ने तत्तथैव भविष्यति ।
शुक्लाम्बरधरां नारीं शुक्लमाल्यानुलेपनाम् ॥
समाश्लिष्यति यः स्वप्ने तस्य श्रीः सर्वतः सुखम् ॥ ३६ ॥

जो स्वप्न में आमरा, आँवरा, कमल, देवता, ब्राह्मण, गौ, पितर और लिङ्गियों को देखता है तो वह प्राणी धनको पाता है और जो परस्पर देता है वह वैसाही होता है और जो स्वप्न में सफ़ेद वस्त्रों को धारे व सफ़ेद माला पहने व चन्दन को लगाये हुई नारी का आलिङ्गन करता है उसको लक्ष्मी मिलती है व सब कहीं सुख को पाता है ॥ ३५ । ३६ ॥

पीताम्बरधरां नारीं पीतमाल्यानुलेपनाम् ।
उपगूहति यः स्वप्ने कल्याणं तस्य जायते ॥ ३७ ॥

जो स्वप्न में पीतवस्त्र धारे, पीतमाला पहने व पीतचन्दन काही लेपन किये हुई रमणी का आलिङ्गन करता है तो उसको कल्याण होता है ॥ ३७ ॥

सर्वाणि शुक्लानि प्रशंसितानि भस्मास्थिकार्पासविवर्जितानि।
सर्वाणि कृष्णानि विनिन्दितानि गोहस्तिदेवद्विजवर्जितानि ॥ ३८ ॥

स्वप्न में राख, हड्डी, कपास से रहित सारी सफ़ेद चीज़ें प्रशंसित होती हैं और गऊ, हाथी, देवता और ब्राह्मण से वर्जित सारी काली चीज़ें विशेषता से निन्दित कहाती हैं ॥ ३८ ॥

दिव्या स्त्री संमिता विप्रा रत्नभूषणभूषिता ॥
यस्य मन्दिरमायाति स प्रियं लभते ध्रुवम् ॥ ३९ ॥

स्वप्नमें रत्नभूषणों से भूषित ब्राह्मणी प्रमाणवाली दिव्य रमणी जिस के घर आती है वह प्रियपदार्थ को निश्चयकर पाता है ॥ ३९ ॥

स्वप्ने च ब्राह्मणो देवो ब्राह्मणी देवकन्यका।
कुमारी चाष्टवर्षीया रत्नभूषणभूषिता।
यस्य तुष्टा भवेत्स्वप्ने तस्य तुष्टा च पार्वती ॥ ४० ॥

जिसके स्वप्न में ब्राह्मण, देवता, ब्राह्मणी, देवकन्या, कुमारी और रत्नभूषणों से भूषित आठ वर्ष की कन्या संतुष्ट होती है उसके ऊपर पार्वतीजी प्रसन्न होती हैं ॥ ४० ॥

ब्राह्मणो ब्राह्मणी वापि संतुष्टः संमिता सती।
फलं ददाति यस्मै च तस्य पुत्रो भविष्यति ॥ ४१ ॥
यः स्वप्ने ब्राह्मणो नन्द ! करोति च शुभाशिषम्।
यद्वदति भवेत्तस्य तस्यैश्वर्यं भवेद्ध्रुवम् ॥ ४२ ॥

ब्राह्मण या ब्राह्मणी जोकि साध्वी होकर भलीभांति मानी गई हो वह सन्तुष्ट होकर जिसके लिये फल को देती है उसके पुत्र उपजता है ४१ हे नन्द ! स्वप्न में जो ब्राह्मण शुभाशीर्वाद देता है या जो कहता है वह उस स्वप्नद्रष्टा के होता है और निश्चयकर ऐश्वर्य होता है ॥ ४२ ॥

परितुष्टो द्विजश्रेष्ठश्चायाति यस्य मन्दिरम्।
नारायणः शिवो ब्रह्मा प्रविशेत्तु तदाश्रमम् ॥ ४३ ॥
सम्पत्तिस्तस्य भवति यशश्च विपुलं शुभम्।

पदे पदे सुखं तस्य सम्मानं गौरवं लभेत् ॥ ४४ ॥

स्वप्न में जिसके घर सन्तुष्ट होकर श्रेष्ठ ब्राह्मण आता है उसके आश्रम में नारायण, शिव व ब्रह्माजी आते हैं व उसकी सम्पत्ति बढ़ती है और शुभदायक बड़ाभारी यश होता है और पद २ में उसको सुख होता है और वह सम्मान व गौरवता को पाता है ॥ ४३ । ४४ ॥

अकस्मादपि स्वप्ने तु लभते सुरभीं यदि ।
भूमिलाभो भवेत्तस्य भार्या चापि पतिव्रता ॥ ४५ ॥
करेण कृत्वा हस्ती यं मस्तके स्थापयेद्यदि ।
राज्यलाभो भवेत्तस्य निश्चितं च श्रुतौ श्रुतम् ॥ ४६ ॥

यदि स्वप्न में एकाएकी सुरभी गऊ को पाजाता है तो उसे भूमि का लाभ होता है और स्त्री पतिव्रता मिलती है ४५ स्वप्न में हाथी शूंड़ से पकड कर जिसको माथे पर धरलेता है तो उसको राज्य का लाभ होता है यह निश्चित शास्त्रों में सुनागया है ॥४६॥

स्वप्ने तु ब्राह्मणश्रेष्ठः समाश्लिष्यति यं नरम् ।
तीर्थस्नायी भवेत्सोपि निश्चितश्च श्रियान्वितः ॥ ४७ ॥

स्वप्न में श्रेष्ठ ब्राह्मण जिस नर को लिपटा लेता है तो वह निश्चयकर लक्ष्मी से संपन्न होता हुआ तीर्थस्नायी होता है ॥ ४७ ॥

स्वप्ने ददाति पुष्पं च यस्मै पुण्यवते द्विजः ।
जययुक्तो भवेत्सोपि यशस्वी च धनी सुखी ॥ ४८ ॥
स्वप्ने दृष्ट्वा च तीर्थानि सौधरत्नगृहाणि च ।
जययुक्तश्च धनवांस्तीर्थस्नायी भवेन्नरः ॥ ४९ ॥

स्वप्न में ब्राह्मण जिस पुण्यवान् के लिये फूल को देता है वह प्राणी जययुक्त होता हुआ यशस्वी, धनी व सुखी होता है ४८ स्वप्न में तीर्थ, राजघर, रत्न और घर को देख कर प्राणी जययुक्त होकर धनवान् होता हुआ तीर्थस्नायी होता है ॥ ४९ ॥

स्वप्ने तु पूर्णकलशं कश्चित्कस्मै ददाति वा ।
पुत्रलाभो भवेत्तस्य संपत्तिं वा समालभेत् ॥ ५० ॥
हस्ते कृत्वा तु कुडवमाढकं वापि सुन्दरि ।
यस्य मन्दिरमायाति स लक्ष्मीं लभते ध्रुवम् ॥ ५१ ॥

स्वप्न में कोई किसी के लिये पूर्ण कलश को देता है तो उसको पुत्र का लाभ होता है या सम्पत्ति को पाता है ५० हाथ में कुडव या आढ़क को धरकर सुन्दरी रमणी जिस के घर आती है वह लक्ष्मी को निश्चयकर पाता है ॥ ५१ ॥

दिव्या स्त्री यद्गृहं गत्वा पुरीषं विसृजेद्यदा।
अर्थलाभो भवेत्तस्य दारिद्र्यं च प्रयाति च ॥ ५२ ॥
यस्य गेहं समायाति भार्यया सह ब्राह्मणः।
पार्वत्या सह शम्भुर्वा लक्ष्मीनारायणोथवा ॥ ५३ ॥

दिव्य रमणी जिसके घर जाकर विष्ठा का त्याग करती है तो उसको अर्थ का लाभ होता है और दरिद्र चलाजाता है ५२ जिसके घर में ब्राह्मणी समेत ब्राह्मण आजाता है तो उसको पार्वती समेत महादेव या लक्ष्मी समेत नारायणजी मिलते हैं ॥ ५३ ॥

ब्राह्मणो ब्राह्मणी वापि स्वप्ने यस्मै ददाति वा।
धान्यं पुष्पाञ्जलिं वापि तस्य श्रीः सर्वतः सुखी ॥ ५४ ॥

ब्राह्मण या ब्राह्मणी स्वप्न में जिसके लिये धान्य व पुष्पाञ्जलि को देती है उसके यहां चारों ओर से लक्ष्मी आती है और वह प्राणी सुखी रहता है ॥ ५४ ॥

मुक्ताहारं पुष्पमाल्यं चन्दनं च सितं तथा।
स्वप्ने ददाति विप्रश्च तस्य श्रीः सर्वतः सुखी ॥ ५५ ॥
गोरोचनां पताकां वा हरिद्रामिक्षुदण्डकम्।
स्निग्धान्नं लभते स्वप्ने तस्य श्रीः सर्वतः सुखी ॥ ५६ ॥

मुक्ताहार, पुष्पमाला और सफ़ेद चन्दन को जो ब्राह्मण स्वप्न में जिसको देता है उसको लक्ष्मी मिलती है और वह सब कहीं सुखी रहता है ५५ गोरोचना, पताका, हरिद्रा, ईखकादण्ड, सिद्धान्न या स्निग्धान्न को जो प्राणी स्वप्न में पाता है तो उसको लक्ष्मी प्राप्त होती है और वह सब कहीं सुखी रहता है ॥ ५६ ॥

ब्राह्मणो ब्राह्मणी वापि ददाति यस्य मस्तके।
छत्रं वा शुक्लधान्यं वा स च राजा भविष्यति ॥ ५७ ॥
स्वप्ने रथस्थः पुरुषः शुक्लमाल्यानुलेपनः।
तत्रस्थो दधि भुङ्क्ते च पायसं वा नृपो भवेत् ॥ ५८ ॥

ब्राह्मण या ब्राह्मणी जिसके माथे पर छाता को धरती है या सफ़ेद धान्यको चढ़ाती

है तो वह राजा होता है ५७ स्वप्न में रथ में बैठा पुरुष सफ़ेद माला पहने व चन्दन को लगाये हुए वहां टिकाहुआ दही या खीरको खाता है तो वह राजा होता है ॥ ५८ ॥

स्वप्ने ददाति विप्रश्च ब्राह्मणी वा सुधां दधि ।
प्रशस्तपात्रं यस्मै वा सोपि राजा भवेद्ध्रुवम् ॥ ५९ ॥
ददाति पुस्तकं स्वप्ने यस्मै पुण्यवते द्विजः ।
स भवेद्विश्वविख्यातः कवीन्द्रः पण्डितेश्वरः ॥ ६० ॥

ब्राह्मण या ब्राह्मणी स्वप्न में जिसके लिये सुधा, दही और योग्यपात्र को देती है तो वह निश्चय कर राजा होता है ५९ ब्राह्मण स्वप्न में जिस पुण्यवान् के लिये पुस्तक को देता है तो वह विश्व में विख्यात होता हुआ कवीन्द्र होकर पण्डितेश्वर होता है ॥ ६० ॥

यं पाठयति स्वप्ने या मातेव च सुतं यथा ।
सरस्वती सुतः सोपि तत्परो नास्ति पण्डितः ॥ ६१ ॥
ब्राह्मणः पाठयेद्यश्च पितेव यत्नपूर्वकम् ।
ददाति पुस्तकं प्रीत्या स च तत्सदृशो भवेत् ॥ ६२ ॥

स्वप्न में जो माता पुत्र के नाईं जिसको पढ़ाती है वह सरस्वतीसुत होता है और उससे परे पण्डित कोई नहीं होता है ६१ ब्राह्मण पिता के नाईं यत्नपूर्वक जिसको पढ़ाता है और प्रीति से पुस्तक को देता है वह उसके समान होता है ॥ ६२ ॥

प्राप्नोति पुस्तकं स्वप्ने पथि वा यत्र तत्र वा ।
स पण्डितो यशस्वी च विख्यातश्च महीतले ॥ ६३ ॥
स्वप्ने यस्मै महामन्त्रं विप्रो विप्रा ददाति चेत् ।
स भवेत्पुरुषः प्राज्ञो धनवान्गुणवान्सुधीः ॥ ६४ ॥

स्वप्न में जो मनुष्य मार्ग में या जहां तहां पुस्तक को पाजाता है तो वह पण्डित व यशस्वी होकर पृथ्वीमण्डल में विख्यात होता है ६३ स्वप्न में ब्राह्मण या ब्राह्मणी जिसके लिये महामन्त्र को देती है तो वह पुरुष प्राज्ञ, धनवान् व गुणवान् होकर बड़ी बुद्धिवाला होता है ॥ ६४ ॥

स्वप्ने ददादि मन्त्रं वा प्रतिमां वा शिलामयीम् ।
यस्मै ददाति विप्रश्च मन्त्रसिद्धिश्च तद्भवेत् ॥ ६५ ॥

विप्रान्विप्रसमूहं च दृष्ट्वा नत्वाशिषं लभेत्।
राजेन्द्रः स भवेद्वापि किं वा च कविपण्डितः॥ ६६॥

स्वप्न में ब्राह्मण जिसके लिये मन्त्र या शिलामयी प्रतिमा को देता है तो उसके मन्त्र की सिद्धि होती है ६५ ब्राह्मण या ब्राह्मणसमूहों को देख व नमस्कार कर जो आशीर्वाद को पाता है वह राजेन्द्र होता है अथवा कवियों में पण्डित कहाता है॥ ६६॥

शुक्लधान्ययुतां भूमिं यस्मै विप्रः समुत्सृजेत्।
स्वप्ने च परितुष्टश्च स भवेत्पृथिवीपतिः॥ ६७॥
स्वप्ने विप्रो रथे कृत्वा नानास्वर्गं प्रदर्शयेत्।
चिरजीवी भवेदायुर्धनवृद्धिर्भवेद्ध्रुवम्॥ ६८॥

स्वप्नमें ब्राह्मण सफेद धान्य संयुक्त पृथ्वी को जिसके लिये देता है और जो परितुष्ट होता है वह पृथ्वीका स्वामी होता है ६७ स्वप्नमें ब्राह्मण जिसको रथमें करके नानाभांति स्वर्गको देखलाता है वह चिरजीवी होता है व उसकी आयु व धनकी बढ़ती निश्चय कर होती है॥ ६८॥

विप्राविप्रश्च सन्तुष्टो यस्मै कन्यां ददाति च।
स्वप्ने च स भवेन्नित्यं धनाढ्यो भूपतिः स्वयम्॥ ६९॥
स्वप्ने सरोवरं दृष्ट्वा समुद्रं वा नदीं नदम्।
शुक्लाहिं शुक्लशैलं च दृष्ट्वा प्रियमवाप्नुयात्॥ ७०॥

स्वप्न में ब्राह्मणी व ब्राह्मण जिसके लिये कन्या को देता है वह नित्यही धनशाली होता हुआ आपही राजा होता है ६९ स्वप्न में सरोवर, समुद्र, नदी, नद, सफ़ेद सांप और सफ़ेद पहाड़ को देखकर प्यारे पदार्थ को पाता है॥ ७०॥

यः पश्यति मृतं स्वप्ने स भवेच्चिरजीवनः।
अरोगो रोगिणं दृष्ट्वा सुखिनं च सुखी भवेत्॥ ७१॥
दिव्या स्त्री यं प्रवदति मम स्वामी भवान्भव।
स्वप्ने दृष्ट्वा च जागर्ति स च राजा भवेद्ध्रुवम्॥ ७२॥

स्वप्न में जो मृतक को देखता है वह चिरजीवी होता है, अरोगी को देखकर अरोगे

और सुखी को देखकर सुखी होता है ७१ स्वप्न में दिव्य रमणी जिससे कहती है कि आप मेरे स्वामी होवें ऐसा देखकर जो जाग पड़ता है तो वह निश्चय कर राजा होता है ॥ ७२ ॥

स्वप्ने च बालिकां दृष्ट्वा लब्ध्वा स्फाटिकमालिकाम् ।
इन्द्रचापं शुक्लघनं स प्रतिष्ठां लभेद्ध्रुवम् ॥ ७३ ॥
स्वप्ने विप्रो वदति यं मम दासो भवेति च ।
हरिदासस्य सद्भुक्तिं लब्ध्वा स वैष्णवो भवेत् ॥ ७४ ॥

स्वप्न में बालिका को देखकर व स्फटिक माला को पाकर इन्द्रधनु व सफ़ेद मेघ को देखकर वह निश्चयकर प्रतिष्ठा को पाता है ७३ स्वप्न में ब्राह्मण जिससे कहता है कि तुम मेरे दास होजाओ व हरिदास की जूठन पाकर वह वैष्णव होता है ॥ ७४ ॥

स्वप्ने विप्रो हरिः शम्भुर्ब्राह्मणी कमला शिवा ।
शुक्ला स्त्री वेदमाता वा जाह्नवी वा सरस्वती ॥ ७५ ॥
गोपालिका वेशधरा बालिका राधिका मम ।
बालश्च बालगोपालः स्वप्नविद्भिः प्रकाशितः ॥ ७६ ॥

जिसने स्वप्न में ब्राह्मण को देखा वह विष्णु व महादेव को देखता है व जिसने ब्राह्मणी को देखा वह लक्ष्मी व पार्वती को देखता है व जिसने श्वेताम्बर धारिणी स्त्री का आलोकन किया उसने वेदमाता का दर्शन पाया व जिसने गङ्गाजी को देखा उसने सरस्वती का दर्शन पाया व जिसने गोपालिका वेशधारिका बालिका का अवलोकन किया उसने मेरी राधिका का दर्शन किया व जिसने बालकों को देखा उसने बालगोपालों का दर्शन पाया ऐसा स्वप्नवेत्ताओंने प्रकाशित किया है ॥ ७५ । ७६ ॥

एष ते कथितो नन्द सुस्वप्नः पुण्यहेतुकः ।
श्रोतुमिच्छसि किं वा त्वं किं भूयः कथयामि ते ॥ ७७ ॥

अहो नन्दजी ! यह पुण्यहेतुक भला स्वप्न तुमसे मैंने कहा अब तुम क्या सुनने की इच्छा करते हो ? फिर मैं तुमसे क्या कहूं ॥ ७७ ॥

इति श्रीब्रह्मवैवर्ते श्रीकृष्णजन्मखण्डे सुस्वप्नदर्शनम् ॥ १ ॥

अथ दुःस्वप्ना यथा।

नन्द उवाच।

श्रुतं सर्वं महाभाग दुःस्वप्नं कथय प्रभो।
उवाच तञ्च भगवान् श्रूयतामिति तद्वचः॥ १॥

हे महाभाग! मैंने सब सुना हे प्रभो! दुःस्वप्न को कहिये ऐसा उन का वचन सुनकर श्रीभगवान् जी उन से बोले कि सुनिये मैं कहता हूं॥ १॥

स्वप्ने हसति यो हर्षाद्विवाहं यदि पश्यति।
नर्तकं गीतमिष्टं च विपत्तिस्तस्य निश्चितम्॥ २॥

स्वप्न में जो हर्ष से हँसता है और यदि विवाह तथा नाचनेवाले को देखता है या अभिलषित गीत को सुनता है तो उसको निश्चय कर विपत्ति आनकर घेरलेती है॥ २॥

दन्ता यस्य विपीड्यन्ते विचरन्तं च पश्यति।
धनहानिर्भवेत्तस्य पीडा चापि शरीरजा॥ ३॥
अभ्यङ्गितश्च तैलेन यो गच्छेद्दक्षिणां दिशम्।
खरोष्ट्रमहिषारूढो मृत्युस्तस्य न संशयम्॥ ४॥

जिस के दांत विशेषता से पीड़ित होते हैं व विचरते हुए को देखता है तो उसके धन की हानि व शरीर से उपजी हुई पीड़ा होती है ३ जो तैल से अभ्यङ्गित होकर गदहा, ऊंट व भैंसा पर चढ़ा हुआ दक्षिणदिशा को जाता है तो उसकी निस्संशय मौत होजाती है॥ ४॥

स्वप्ने चूर्णं जवापुष्पमशोकं करवीरकम्।
विपत्तिस्तस्य तैलं च लवणं यदि पश्यति॥ ५॥
नग्नां कृष्णां छिन्ननासां शूद्रस्य विधवां तथा।
कपर्दकं तालफलं दृष्ट्वा शोकमवाप्नुयात्॥ ६॥

यदि स्वप्न में चूना, गुड़हल का फूल, अशोक, कनेर, तैल और लवण को देखता है तो उसको विपत्ति होती है ५ नंगी, काली, नकटी शूद्रकी विधवा (रांड) स्त्री कौड़ी और तालफल को देखकर शोक को पाता है॥ ६॥

स्वप्ने रुष्टं ब्राह्मणं च ब्राह्मणीं कोपसंयुताम्।

विपत्तिश्च भवेत्तस्य लक्ष्मीर्याति गृहाद्ध्रुवम् ॥ ७ ॥
वनपुष्पं रक्तपुष्पं पलाशं च सुपुष्पितम् ।
कार्पासं शुक्लवस्त्रं च दृष्ट्वा दुःखमवाप्नुयात् ॥ ८ ॥

यदि स्वप्न में रुष्ट ब्राह्मण व कोपवती ब्राह्मणी को देखता है तो उसको विपत्ति होती है और उसकी लक्ष्मी घरसे निश्चय कर चली जाती है ७ वनपुष्प, रक्तपुष्प, बहुपुष्पित पलाश, कपास और सफ़ेद वस्त्र को देखकर दुःख को पाता है ॥ ८ ॥

गायन्तीं च हसन्तीं च कृष्णाम्बरधरां स्त्रियम् ।
दृष्ट्वा कृष्णां च विधवां नरो मृत्युमवाप्नुयात् ॥ ९ ॥
देवता यत्र नृत्यन्ति गायन्ति च हसन्ति च ।
आस्फोटयन्ति धावन्ति तस्य देशो विनश्यति ॥ १० ॥

गाती, हँसती, काले वस्त्र पहने काली विधवा स्त्री को देखकर प्राणी मौत को पाता है ९ जहां देवतागण नाचते, गाते व हँसते हैं और ताल ठोंकते हुए दौड़ते हैं उसके देश का विनाश होजाता है ॥ १० ॥

वान्तं मूत्रं पुरीषं वा वैद्यं रौप्यं सुवर्णकम् ।
प्रत्यक्षमथवा स्वप्ने जीवितं दशमासिकम् ॥ ११ ॥
कृष्णाम्बरधरां नारीं कृष्णमाल्यानुलेपनाम् ।
उपगूहति यः स्वप्ने तस्य मृत्युर्भविष्यति ॥ १२ ॥

वमन, मूत्र, विष्ठा, वैद्य, रूपा और सोना इनको जो प्रत्यक्ष अथवा स्वप्न में देखता है तो वह दश महीना जीता है ११ काले वस्त्र पहने, काली माला धारे व काला अनुलेपन लगाये हुई नारी को जो नर स्वप्न में आलिङ्गन करता है उसकी मौत हो जाती है ॥ १२ ॥

मृतं वत्सं च मुण्डं च मृगस्य च नरस्य वा ।
यः प्राप्नोत्यस्थिमालां च विपत्तिस्तस्य निश्चितम् ॥ १३ ॥
अभ्यङ्गितस्तु हविषा क्षीरेण मधुनापि वा ।
तक्रेणापि गुडेनैव पीडा तस्य विनिश्चितम् ॥ १४ ॥

मरा हुआ बछड़ा, हरिण व मनुष्य का मूंड़ और हड्डियों की माला को जो प्राणी स्वप्न में देखता है उसको निश्चय कर विपत्ति होती है १३ और जो प्राणी स्वप्न में घी, दूध, शहद, मठा और गुड़से अभ्यङ्गित होता है तो उसको निश्चय कर पीड़ा होती है ॥ १४ ॥

रथं खरोष्ट्रसंयुक्तमेकाकी योधिरोहयेत् ।
तत्रस्थोऽपि च जागर्ति मृत्युरेव न संशयः ॥ १५ ॥
रक्ताम्बरधरां नारीं रक्तमाल्यानुलेपनाम् ।
उपगूहति यः स्वप्ने व्याधिस्तस्य विनिश्चितम् ॥ १६ ॥

यदि स्वप्न में अकेला प्राणी गदहा व ऊंटसे जुते हुए रथपर सवार होता है और वहां [बै]ठा हुआ भी जागता रहता है तो उसकी निःसन्देह मौतही होजाती है १५ लाल वस्त्र [धा]रे, लाल माला पहने व लाल चन्दन का ही लेप लगाये हुई रमणी को जो प्राणी [स्व]प्न में आलिङ्गन करता है उसको निश्चय कर व्याधि होती है ॥ १६ ॥

पतितं नखकेशं च निर्वाणाङ्गारमेव च ।
भस्मपूर्णां चितां दृष्ट्वा लभते मृत्युमेव च ॥ १७ ॥
श्मशानं शुक्लकाष्ठं च तृणानि लोहमेव च ।
मर्षीं च किञ्चित्कृष्णां वा दृष्ट्वा दुःखं लभेद्ध्रुवम् ॥ १८ ॥

गिरेहुए नख, केश, आगीका अंगार और भस्मपूरित चिताको देखकर प्राणी मौतही [क]ो पाता है १७ श्मशान, सफ़ेद काष्ठ, तृण, लोहा या कुछेककाली स्याही को देखकर [प्र]ाणी निश्चयकर दुःखको पाता है ॥ १८ ॥

पादुकां फलकं रक्तपुष्पमाल्यं भयानकम् ।
माषं मसूरं मुद्गं वा दृष्ट्वा सद्यो व्रणं लभेत् ॥ १९ ॥
भग्नभाण्डं क्षतं शूद्रं गलत्कुष्ठं च रोगिणम् ।
रक्ताम्बरं च जटिलं शूकरं महिषं तथा ॥ २० ॥
कण्टकं सरलं काकं भल्लूकं वानरं खरम् ।
पूयं गात्रमलं स्वप्ने केवलं व्याधिकारणम् ॥ २१ ॥

खड़ाऊं, ढाल, लालफूलों की माला, भयानक पदार्थ, उड़द, मसूर या मूंग को देख कर शीघ्रही घाव को पाता है १९ फूटे बासन, घायल शूद्र, गलत्कुष्ठवाला रोगी, लालवस्त्रधारी जटिल, सूअर, भैंसा, सीधाकांटा, कौआ, रीछ, वानर, गदहा, पीब और शरीर का मैल इनको स्वप्न में देख कर केवल व्याधि का ही कारण होता है ॥ २० । २१ ॥

अन्धकारं महाघोरं मृतजीवं भयानकम् ।
दृष्ट्वा स्वप्ने योनिलिङ्गं विपत्तिं लभते ध्रुवम् ॥ २२ ॥

स्वप्नमें महाघोर अन्धकार, भयानक मरा हुआ जीव और योनिलिङ्ग को देखकर प्राणी निश्चयकर विपदा को पाता है ॥ २२ ॥

कुवेशरूपं म्लेच्छं च यमदूतं भयंकरम् ।
पाशहस्तं पाशशस्त्रं दृष्ट्वा मृत्युं लभेन्नरः ॥ २३ ॥
ब्राह्मणो ब्राह्मणी बाला बालको वा सुतः सुता ।
विदायं कुरुते कोपाद्दृष्ट्वा दुःखमवाप्नुयात् ॥ २४ ॥

निन्दितवेशरूपधारी म्लेच्छ और भयंकर पाशपाणि व पाशायुधधारी यमदूत को देख कर प्राणी मौतको पाता है २३ ब्राह्मण, ब्राह्मणी, बाला, बालक, पुत्र या पुत्री कोपसे हिस्सा को न बांटतेहुए देखकर दुःख को पाता है ॥ २४ ॥

कृष्णपुष्पं च तन्माल्यं शल्यशस्त्रास्त्रधारिणम् ।
म्लेच्छां च विकृताकारां दृष्ट्वा मृत्युं लभेद्ध्रुवम् ॥ २५ ॥
वाद्यं च नर्तनं गीतं गायनं रक्तवाससम् ।
मृदङ्गवाद्यमानद्धं दृष्ट्वा दुःखं लभेद्ध्रुवम् ॥ २६ ॥

कालाफूल या कालेफूलों की माला शल्य-शस्त्र-अस्त्रधारी और विकृतरूपिणी म्लेच्छा रमणी को देखकर प्राणी मौत को निश्चयकर पाता है २५ बजाना, नाचना, गाना, रक्तवस्त्रधारी गायक, मृदङ्गबाजा और मुरचङ्ग आदि बाजा को देखकर प्राणी निश्चयकर दुःख को पाता है ॥ २६ ॥

मत्स्यादिधारयेद्यो हि तद्भ्रातुर्मरणं ध्रुवम् ।
छिन्नं वापि कबन्धं वा विकृतं मुक्तकेशिनम् ॥ २७ ॥
क्षिप्तं नृत्यं च कुर्वन्तु दृष्ट्वा मृत्युं लभेन्नरः ।
मृतो वापि मृता वापि कृष्णां म्लेच्छां भयानकाम् ॥
उपगूहति यः स्वप्ने तस्य मृत्युर्विनिश्चितः ॥ २८ ॥

स्वप्न में जो प्राणी मत्स्य आदि जीवों को पकड़ता है तो उसके भाई का मरण निश्चय कर होता है कटाहुआ या विना शिरका धड़, बीमार, बालों को छिटकाये, हाथ पैर च- लाते और नाचते हुए जन को देखकर प्राणी मौतको पाता है मृतकपुरुष, या मरीहुई काली भयानक म्लेच्छा रमणी को जो स्वप्न में लिपटा लेता है तो उसकी मौत निश्चय कर होती है ॥ २७ । २८ ॥

येषां दन्ताश्च भग्नाश्च केशाश्चापि पतन्ति च ।

धनहानिर्भवेत्तेषां पीडा वा तच्छरीरजा ॥ २९ ॥

स्वप्न में जिनके दांत टूटजाते और बाल गिरपड़ते हैं उनके धन की हानि या उनके शरीर से उपजी हुई पीड़ा होती है ॥ २९ ॥

उपद्रवन्ति यं स्वप्ने शृङ्गिणो दंष्ट्रिणोपि वा ।
बालका मानवाश्चैव तस्य राजकुलाद्भयम् ॥ ३० ॥
छिन्नवृक्षं पतन्तं च शिलावृष्टिं तुषं क्षरम् ।
रक्ताङ्गारं भस्मवृष्टिं दृष्ट्वा दुःखमवाप्नुयात् ॥ ३१ ॥

स्वप्न में सींगवाले या दाढ़वाले, बालक और मानवगण जिससे उपद्रव करते हैं उस को राजकुल से भय होती है ३० गिराहुआ कटावृक्ष, शिलावृष्टि, भूसी, खार, लाल अंगार और भस्मवृष्टि को देख कर दुःख को पाता है ॥ ३१ ॥

गृहं पतन्तं शैलं वा धूमकेतुं भयानकम् ।
भग्नस्कन्धं तरोर्वापि दृष्ट्वा दुःखमवाप्नुयात् ॥ ३२ ॥
रथगेहशैलवृक्षगोहस्तितुरगात्खरात् ।
पतन्ति भूमौ ये स्वप्ने विपत्तिस्तस्य संकुला ॥ ३३ ॥

गिरता हुआ घर, पहाड़, भयानक धूमकेतु और वृक्षका टूटा स्कन्ध इनको स्वप्न में देखकर दुःख को पाता है ३२ स्वप्न में जो प्राणी रथ-घर, पहाड़, वृक्ष, बैल, हाथी, घोड़ा और गदहा से भूमिमें गिरते हैं उनको बड़ीभारी विपत्ति होती है ॥ ३३ ॥

उच्चैः पतन्ति गर्त्तेषु भस्माङ्गारचितासु च ।
क्षारकुण्डेषु चूर्णेषु मृत्युस्तेषां न संशयः ॥ ३४ ॥
बलाद्गृह्णाति दुष्टश्च छत्रं च यस्य मस्तकात् ।
पितुर्नाशो भवेत्तस्य गुरोर्वापि नृपस्य वा ॥ ३५ ॥

गड़हा, भस्म, अँगार, चिता, क्षारकुण्ड और चूना में जो ऊंचा से गिरते हैं उनकी मौत निस्सन्देह होजाती है ३४ जिसके मस्तक से छाता को कोई दुष्ट बलसे लेलेता है तो उसके पिता, गुरु वा राजा का विनाश होता है ॥ ३५ ॥

सुरभी यस्य गेहाच्च याति त्रस्ता सवत्सिका ।
प्रयाति पापिनस्तस्य लक्ष्मीरपि वसुन्धरा ॥ ३६ ॥
पाशेन कृत्वा बन्धं च यं गृहीत्वा प्रयान्ति च ।
यमदूताश्च ये म्लेच्छास्तस्य मृत्युर्न संशयः ॥ ३७ ॥

जिस के घर से बछड़ासमेत डरीहुई सुरभी गऊ चली जाती है उस पापी के घर से लक्ष्मी और वसुन्धरा भी जाती रहती है ३६ स्वप्न में यमराज के दूत जोकि म्लेच्छरूपधारी हैं वे जिस को पकड़ के पाश से बाँधकर लेजाते हैं उसको मौत निस्सन्देह होजाती है ॥ ३७ ॥

गणको ब्राह्मणो वापि ब्राह्मणी वा गुरुस्तथा ।
परिरुष्टः शपति यं विपत्तिस्तस्य निश्चितम् ॥ ३८ ॥
विरोधिनश्च काकाश्च कुक्कुरा भल्लुकास्तथा ।
पतन्त्यागत्य यद्गात्रे तस्य मृत्युर्न संशयः ॥ ३९ ॥
महिषा भल्लुका उष्ट्राः शूकरा गर्दभास्तथा ।
रुष्टा धावन्ति यं स्वप्ने स रोगी निश्चितं भवेत् ॥ ४० ॥

ज्योतिषी, ब्राह्मण वा ब्राह्मणी तथा गुरुदेव ये स्वप्न में नाराज होकर जिसको शाप देते हैं उसको निश्चयकर विपदा घेरती है ३८ शत्रुगण, कौआ, कूकुर तथा रीछ ये आकर जिसके अङ्गपर गिरते हैं उसकी निस्सन्देह मौत होजाती है ३९ भैंसा, भल्लूक, ऊंट, सूअर और गदहा ये स्वप्नमें नाराज होकर जिसके ऊपर दौड़ते हैं वह निश्चयकर रोगी होजाता है ॥ ४० ॥

इति श्रीब्रह्मवैवर्ते श्रीकृष्णजन्मखण्डे दुस्स्वप्नदर्शनम् ॥ २ ॥

अथ मृत्युचिह्नसामुद्रिकमाह ।

उत्तराभिमुखस्थो यो यदि गच्छति दक्षिणम् ।
दिङ्मूढः स तदा ज्ञेयः सप्तमासान्न जीवति ॥ १ ॥

जो प्राणी उत्तरदिशा के सामने टिका हुआ यदि दक्षिणदिशा को जाता है तो उसे दिङ्मूढ जानना चाहिये वह सात महीना से अधिक नहीं जीता है ॥ १ ॥

शुद्धनिर्मलमादित्ये विवरं यदि पश्यति ।
तद्वर्षान्ते क्षयं याति नान्यथा भैरवोदितः ॥ २ ॥

यदि कोई प्राणी सूर्यमण्डल में निर्मल विवर (गड़हा) को देखता है तो वह वर्षान्त में क्षयको प्राप्त होता है अन्यथा नहीं होसक्ता ऐसा भैरवने कहा है ॥ २ ॥

सितं कृष्णं हरिद्राभं समूलं भानुमण्डलम्।
यदि पश्यति सदा सो वै वर्षार्द्धं न जीवति॥ ३॥

यदि कोई प्राणी मूलसमेत सूर्यमण्डलको सफ़ेद, काला और हल्दीसमान वर्णवाला सदैव देखता है वह छः महीना से अधिक नहीं जीता है॥ ३॥

रविबिम्बे जले दृष्टे संपूर्णे न मृतिः क्वचित्।
खण्डे दिक्षु क्रमान्मृत्युरेकद्वित्रिषु मासतः॥
मध्यच्छिद्रे दशाहेन तज्जले धूमसङ्कुले॥ ४॥

जब जलमें सूर्यका मण्डल पूरा देख पड़ता है तो कभी मौत नहीं होती है व दिशाओं में खण्ड क्रमसे एक मास, दो मास व तीन मास में मौत होती है और यदि धूमसंकुलित उस जल में सूर्य के मण्डल में मध्यवर्ती छेद देखा जाता है तो दश दिवस में मौत होती है॥ ४॥

अरुन्धतीं ध्रुवं सोमं छायायां वा महापथम्।
यो न पश्यति निस्तेजो वर्षान्ते म्रियते ध्रुवम्॥ ५॥

अरुन्धती, ध्रुव, सोम वा छाया में निस्तेज महापथ को जो नहीं देखता है वह वर्षान्त में निश्चयकर मर जाता है॥ ५॥

सच्छिद्रो दृश्यते चन्द्रस्तद्वद्वा दर्पणे रविः।
दृश्यते निस्पृहो वापि यस्यासौ म्रियतेऽब्दतः॥ ६॥

जो प्राणी दर्पण (शीशा) में चन्द्रमा और सूर्य को छेदसमेत देखता है या निस्पृह देखा जाता है तो वह वर्ष के भीतरही मर जाता है॥ ६॥

संपूर्णो वहते सूर्यो यस्य सोमो न दृश्यते।
वर्षान्ते जायते मृत्युः कालज्ञानं शिवोदितम्॥ ७॥

जिसकी सूर्यनाड़ी (इड़ा) पूर्ण बहती हो और चन्द्रनाड़ी (पिङ्गला) नहीं देख पड़ती हो तो उसकी वर्षान्त में मौत होती है यह कालज्ञान श्रीशिवजीने कहा है॥ ७॥

यस्य वा स्नानमात्रेण हृदयं यदि शुष्यति।
धूमो वा दर्शने यस्य सप्तमासान्तजीवनम्॥ ८॥

जिसके स्नानमात्रसे यदि हृदय सूखजाता है या जिसके दर्शन में धुआं देख पड़ता है उसकी सातमहीना के बीचमें हीं मौत होती है॥ ८॥

अग्रतः पृष्ठतो वापि यस्य स्यात्खण्डितं पदम् ।
कर्दमेपांशुपुञ्जे वा सप्तमासान्तर्जीवनम् ॥ ९ ॥

आगे या पीछे जिसका पैर कीचड़ या धूलिसमूह में खण्डित भासता हो उसकी सात महीना के भीतरही मौत होजाती है ॥ ९ ॥

कृष्णरक्तानि वस्त्राणि रक्तमाल्यानुलेपनम् ।
स्वप्ने यो लभतेऽकस्मात्षण्मासान्ते न जीवति ॥ १० ॥

जो प्राणी एकाएकी स्वप्नमें काले व लालकपड़े लालमाला व लालचन्दनकाही अनुलेपन पाजाता है तो वह प्राणी छः महीनाके भीतर नहीं जीता है ॥ १० ॥

भक्तिः शीलं स्मृतिस्त्यागो बुद्धिर्बलमहेतुकम् ।
यस्यैतानि निवर्तन्ते षण्मासान्तं न जीवति ॥ ११ ॥

भक्ति (प्रेम) शील (स्वभाव) स्मरण शक्ति, त्याग, बुद्धि और बल ये जिसके अकारण बदल जाते हैं तो वह छः मासके भीतर नहीं जीता है ॥ ११ ॥

राक्षसैर्भूतवेतालैः श्वानशूकरगर्दभैः ।
गृध्रैः काकैरुलूकैश्च महिषैर्वा क्रमेलकैः ॥
स्वप्ने वेष्टितमात्मानं पश्येदब्दान्न जीवति ॥ १२ ॥

जो स्वप्न में राक्षस, भूत, वेताल, कुत्ता, सूअर, गदहा, गीध, कौआ, उल्लू, भैंसा और ऊंट इन्होंसे घेरा हुआ अपनाको देखता है तो वह प्राणी साल के भीतर नहीं जीता है ॥ १२ ॥

आसोरस्कां यदा पश्येदात्मच्छायामथापि वा ।
सुकृष्णास्तारकाः पश्येत्षण्मासान्ते न जीवति ॥ १३ ॥

जो अपनी छाया को वक्षस्थल पर्यन्त देखता है अथवा आकाश में तारागणों को काले वर्णवाला देखता है तो वह प्राणी छः महीना के भीतर नहीं जीता है ॥ १३ ॥

निशि चापं दिवा चोल्कामभेघे निशि दर्शनम् ।
यः पश्येन्म्रियते सोपि षण्मासाच्छङ्करोदितम् ॥ १४ ॥

जो रात्रिमें इन्द्रधनु व दिन में उल्का व मेघरहित समयमें रात्रिका दर्शन करता है वह भी प्राणी छः महीनामें मरजाता है ऐसा शंकरने कहा है ॥ १४ ॥

शङ्खावर्ते भ्रुवोर्मध्ये गुल्फयोर्मर्मसन्धिषु ।
स्पन्दनं यस्य नैवास्ति मासादूर्ध्वं न जीवति ॥ १५ ॥

ललाट, भौंह का बिचला भाग, गण्ठा और मर्मसन्धियां इन्होंमें जिसके पसीना नहीं आता है वह महीना से ऊपर नहीं जीता है ॥ १५ ॥

चक्षुषी स्रवतो नित्यं न शृणोत्यपि निश्चितम् ।
दीपगन्धं न जानाति पक्षादूर्ध्वं न जीवति ॥ १६ ॥

जिसके दोनों नेत्र निरन्तर बहा करते हों व जो निश्चयकर सुनता न हो और दीप की गन्ध को भी न जानता हो तो वह प्राणी पक्ष से अधिक नहीं जीता है ॥ १६ ॥

ओष्ठयोर्धूसरत्वं च शुष्कं वा तालुदेशकम् ।
स्कन्धौ च भग्नमायान्तौ षण्मासान्ते न जीवति ॥ १७ ॥

जिसके दोनों ओठ धूसरवर्ण से हो गये हों व तालू सूखगया हो और दोनों कन्धे टूटेसे विदित होते हों तो वह प्राणी छः महीना के बीच में नहीं जीता है ॥ १७ ॥

भुञ्जतो यस्य वा नित्यं यूका वा मक्षिकादयः ।
त्यजतो वाथ वैरस्यं षण्मासान्ते न जीवति ॥ १८ ॥

जो जुआं या मक्खी आदिकों को सदैव खाता या विरसता को त्यागता है तो वह प्राणी छः महीना के भीतर नहीं जीता है ॥ १८ ॥

अहोरात्रद्वयं यस्य पिङ्गलायां सदागतिः ।
तस्य वर्षद्वयं ज्ञेयं जीवितं तत्त्ववेदिभिः ॥ १६ ॥

जिसका पवन दो दिन पिङ्गला (चन्द्रनाड़ी) में बहता रहे तो उसका जीवन दो वर्ष का तत्त्ववेदियों को जानना चाहिये ॥ १६ ॥

त्रिरात्रं वहते यस्य वायुरेकपुटे स्थितः ।
वत्सरं यावदायुःस्यात्प्रवदन्ति मनीषिणः ॥ २० ॥

जिसका वायु एक नासापुट में टिका हुआ तीनरात बराबर बहता रहे तो उसका जीवन एक वर्ष का पण्डितों ने कहा है ॥ २० ॥

रात्रौ चन्द्रो दिवा सूर्यो वहेद्यस्य निरन्तरम् ।
तस्य मृत्युं विजानीयात्षण्मासाभ्यन्तरे सुधीः ॥ २१ ॥

जिसकी चन्द्रनाड़ी रात्रि में और दिन में सूर्यनाड़ी निरन्तर बहती रहे तो उसकी मौत छः महीना के भीतर पण्डितों को जानना चाहिये ॥ २१ ॥

एकादिषोडशाहानि यदि भानुर्निरन्तरम् ।

वहेद्यस्य च वै मृत्युः शेषाहेन च मासिकैः ॥ २२ ॥

जिसकी सूर्यनाड़ी पक्ष, मास, वर्ष के पहले दिन से लेकर सोलह दिन पर्यन्त बराबर बहती रहे तो उस प्राणी की मृत्यु महीना के शेषदिन में कहना चाहिये ॥ २२ ॥

संपूर्णं वहते सूर्यश्चन्द्रमा नैव दृश्यते ।
पक्षेण जायते मृत्युः कालज्ञानेन भाषितम् ॥ २३ ॥

वर्ष–मास व पक्ष के पहले दिन में जिसके दक्षिण नासापुटकी वायु लगातार बहती रहे एवं वामनासापुटकी पवन नहीं चलती देखी जावे तो उस प्राणी की पक्ष भर में मृत्यु होजाती है ऐसा स्वरज्ञानी योगियों ने कहा है ॥ २३ ॥

संपूर्णं वहते चन्द्रः सूर्यो नैव च दृश्यते ।
मासेन दृश्यते मृत्युः कालज्ञानेन भाषितम् ॥ २४ ॥

वर्ष–मास व पक्ष के पहले दिन में जिसकी चन्द्रनाड़ी यानी वाम नासापुटकी श्वास निरन्तर बहती रहे और दक्षिण नासापुटकी पवन नहीं बहती देखी जावे तो उस प्राणी की मास भर में मौत होजाती है ऐसा कालज्ञानी योगी ने कहा है ॥ २४ ॥

मूत्रं पुरीषं वायुश्च समकालं प्रजायते ।
तदासौ चलितो ज्ञेयो दशाहे म्रियते ध्रुवम् ॥ २५ ॥

जिसके एक काल में ही मूत्र–मल और अधोवायु निकलते हैं तो उसको चलित जानना चाहिये और वह प्राणी दश दिवस के बीच में निश्चयकर मरजाता है ॥ २५ ॥

एवं चन्द्रप्रवाहश्च सुखलाभो जयस्तथा ।
सूर्यचन्द्रप्रणाशे तु सद्यो मृत्युर्न संशयः ॥ २६ ॥

इस प्रकार चन्द्रप्रवाह चलता रहे यानी इड़ानाड़ी से पवन समकाल में बहता रहे तो सुखका लाभ और जय होता है और जिसका दक्षिण नासापुट व वामनासापुट का पवन एकबारही बन्द होजावे तो शीघ्रही उस प्राणी की मौत निस्सन्देह होजाती है ॥ २६ ॥

अरुन्धतीं ध्रुवञ्चैव विष्णोस्त्रीणि पदानि च ।
आयुर्हीना न पश्यन्ति चतुर्थं मातृमण्डलम् ॥ २७ ॥

अरुन्धती, ध्रुव, विष्णुपदत्रय और चौथे मातृमण्डल को आयुहीनलोग नहीं देखते हैं ॥ २७ ॥

अरुन्धती भवेज्जिह्वा ध्रुवो नासाग्रमुच्यते ।
भ्रुवोर्मध्यो विष्णुपदं तारकं मातृमण्डलम् ॥ २८ ॥

जिह्वा 'अरुन्धती' होती है, नासिका का अग्रभाग 'ध्रुव' कहाता है, भौंहों का बिचला भाग विष्णुपद और चक्षुस्ताराको मातृमण्डल कहते हैं ॥ २८ ॥

नव ध्रुवः सप्तमो वा पञ्चतारा त्रिनासिका ।
जिह्वामेकदिनं प्रोक्तं म्रियते मानवो ध्रुवम् ॥ २६ ॥

जो भौंहों का मध्यभाग नहीं देखता है तो वह प्राणी उसी दिन से नव या सात दिवस में मरजाता है जो चक्षुताराको नहीं देखता है तो वह पांच दिन में, जो नासाका अग्रभाग नहीं देखता है वह तीन दिन में और जो जिह्वा को नहीं देखता है तो वह प्राणी एकही दिनमें निश्चयकर मर जाता है ॥ २६ ॥

कोणमक्ष्णोङ्गुलीभ्यान्तु किञ्चित्पीडां निरीक्षयेत् ।
यदा न दृश्यते बिन्दुर्दशाहेन जनो मृतः ॥ ३० ॥

आंखों के कोण को अँगुलियों से कुछेक पीड़ित कर देखे यदि विन्दु नहीं देखा जाता हो तो वह प्राणी दश दिवस के भीतरही मर जाता है ॥ ३० ॥

याम्ये नासापुटे वायुर्यस्य वाति दिवानिशम् ।
अखण्डं तस्य चैवायुः क्षयेदह्नत्रयेण हि ॥ ३१ ॥

जिसके दक्षिणनासापुट में वायु दिन रात बहता हो तो उसकी अखण्डित आयुर्दाय तीन दिन में क्षीण हो जाती है ॥ ३१ ॥

द्व्यहोरात्रं त्र्यहोरात्रं वायुर्वहति सन्ततम् ।
सार्धैकमासं तस्येह जीवितं खलु चोच्यते ॥ ३२ ॥

दो दिन व दो रात किंवा तीन दिन व तीन रात पर्यन्त जिसका वायु निरन्तर बहता रहे तो उसका जीवन डेढ़ महीना पर्यन्त रहता है ॥ ३२ ॥

बहिर्नासापुटे युग्मे दशाहनि निरन्तरम् ।
वायुश्चेत्सहसंक्रान्तः स जीवति दिनद्वयम् ॥ ३३ ॥

जिसका श्वासा दोनों नासापुट में दश दिन पर्यन्त लगातार बहता रहे तो वह प्राणी दो दिन तक जीता रहता है ॥ ३३ ॥

नासावंर्त्मद्वयं हित्वा यस्य वायुर्मुखाद्व्रजेत् ।
स चेद्दिनद्वयं स्थित्वा ततो यमपुरं व्रजेत् ॥ ३४ ॥

---

१ रन्ध्रयुग्मम् ॥

जिसका श्वास दोनों नासारन्ध्रों को छोड़कर केवल मुखसेही चलता रहे तो वह प्राणी दो दिन टिककर यमालय को जाता है ॥ ३४ ॥

अकस्माद्वीक्षते यस्तु पुरुषं कृष्णपिङ्गलम् ।
तस्मिन्नेव क्षणे रूपं स जीवेद्वत्सरद्वयम् ॥ ३५ ॥

जो प्राणी एकाएकी पुरुषको काले पीले वर्णवाला देखता है एवं उसी क्षण में रूपान्तर को निहारता है तो वह दो वर्ष पर्यन्त जीता है ॥ ३५ ॥

यत्र वीर्यं मलं मूत्रं क्षुतं नूनमनन्तरम् ।
इत्येकदा भवेद्वापि अब्दमायुश्च नश्यति ॥ ३६ ॥

जिसके एकही समय में बीज, मल, मूत्र और छींक ये होते हैं उसकी एक वर्ष की आयु शेष रहजाती है यानी वह प्राणी एक साल भर के बाद नहीं जीता है ॥ ३६ ॥

इन्द्रनीलनिभं व्योम्नि नाकं धूम्रं समीक्षते ।
इतस्ततः प्रसृमरं षण्मासं च स जीवति ॥ ३७ ॥

जो प्राणी आकाश में इन्द्रनीलमणि के समान वर्ण को देखता है या धुमैले इधर उधर घूमते हुए आकाश को ही निहारता है तो वह छः मास पर्यन्त जीता है ॥ ३७ ॥

अरुन्धतीं ध्रुवञ्चैव विष्णोस्त्रीणि पदानि च ।
आसन्नमृत्युर्न पश्येच्चतुर्थं मातृमण्डलम् ॥ ३८ ॥

जिसकी मृत्यु निकटवर्ती होती है तो वह प्राणी अरुन्धती, ध्रुव, विष्णुपदत्रय और चौथे मातृमण्डल को नहीं देखता है ॥ ३८ ॥

भाद्रेह्निवारे सूर्यस्य पृष्ठीकृत्य दिवाकरम् ।
प्रकृत्याप्सु न तम्पश्येत्षण्मासेन स मृत्युभाक् ॥ ३९ ॥

भाद्रमास इतवार के दिवस दिवाकर को पुष्ठकर प्रकृति से जल में उनको न देख पावे तो वह छः महीना के बीच में मरजाता है ॥ ३९ ॥

वेत्ति नीरादिवस्त्वन्यत्कट्वम्लादिरसस्य च ।
अकस्मादन्यथाभावं षण्मासेन स मृत्युभाक् ॥ ४० ॥

जो प्राणी जलका स्वाद नहीं पाता हो एवं कड़वे व खट्टे आदि अन्यान्य वस्तुओं का स्वाद विपरीत जानता हो तो वह छः महीना से अधिक नहीं जीता है ॥ ४० ॥

---

१ पश्यति २ रविवारे ३ जानाति ॥

षण्मासमृत्युलोकस्य कण्ठौष्ठरसना यदा ।
शुष्यन्ति सततं तस्य नरस्य तालुपञ्चमाः ॥ ४१ ॥

जिसके कण्ठ, ओठ, जीभ और तालु ये सदैव सूखते रहते हों तो वह छः मास के मध्य में मृत्युके लोक को जाता है ॥ ४१ ॥

रेतःकवचनेत्रान्ता मलिनानि भवन्ति वै ।
स एव यामनगरं षष्ठे मासि व्रजेन्नरः ॥ ४२ ॥

जिसके वीर्य, वक्षस्थल और नेत्रों के किनारे ये मैलेसे भासते हों तो वह प्राणी छः महीना में यमपुर को जाता है ॥ ४२ ॥

द्रुतमारुह्य शकटं त्रिवर्गं यस्य मस्तकम् ।
ध्रुवं प्रयाति तस्यायुः षण्मासात्परिसंक्षयम् ॥ ४३ ॥

गाड़े पर जल्द चढ़कर जिसका माथा घूमजावे तो उस प्राणी की आयुर्दाय छः महीना के भीतरही निश्चयकर क्षीणता को प्राप्त होती है ॥ ४३ ॥

सुस्नातस्यापि यस्याशु हृदयं परिशुष्यति ।
चरणौ च करौ वापि त्रिमासं तस्य जीवितम् ॥ ४४ ॥

भलीभांति नहाये हुए जिस प्राणी का हृदय जल्द सूखजाता हो और दोनों पैर व हाथ भी शीघ्रही सूखजाते हों तो उसका जीवन तीनमास पर्यन्त रहता है यानी वह प्राणी तीन महीना में ही मरजाता है ॥ ४४ ॥

पृथिवीद्विभवेद्यस्य पादं खण्डपदाकृतिः ।
पार्श्वे च कुण्डलं वापि पञ्चमासान्स जीवति ॥ ४५ ॥

जो प्राणी स्वप्नमें या अचानकही पृथिवी के दो खण्ड व खण्डितपदाकृति और पार्श्वों में कुण्डलाकृति को निहारता है तो वह पांच महीना से अधिक नहीं जीता है ॥ ४५ ॥

देहः प्रकम्पते यस्य देहबन्धोऽपि निश्चलः ।
कृतान्तदूता बध्नन्ति चतुर्थे मासि निश्चितम् ॥ ४६ ॥

जिसकी देह बहुतही कांपती हो और देहका बन्धनभी निश्चल (अकड़तासा) भासता हो तो उस प्राणी को चौथे महीना में यमदूत निश्चयकर बांधते हैं ॥ ४६ ॥

निजस्य प्रतिबिम्बस्य निश्चलेष्वूदकेषु च ।
उत्तमाङ्गं न पश्येद्यः षण्मासेन विनश्यति ॥ ४७ ॥

---

१ यमपुरं २ क्लीबेऽनः शकटोऽस्त्री स्यादित्यमरः ३ शीघ्रम् ॥

जो प्राणी निश्चल जलों में अपनी छाया (परछाहीं) को शीश विना देखता है तो वह छः महीना के भीतरही मरजाता है ॥ ४७ ॥

मतिर्भ्रंश्येत्स्थले वापि धनुरैन्द्रं न पश्यति ।
चन्द्रस्य मण्डलं यस्तु रात्रौ व्योम्नि दिवावसु ॥ ४८ ॥
युगपच्च चतुर्दिक्षु शक्रकोदण्डमण्डलम् ।
भूधरो भूधराग्रो वा गन्धर्वनगरालयम् ॥
दिवा निशा च नृत्यञ्च एते पञ्चत्वहेतवः ॥ ४९ ॥

जिसका स्थल में मतिभ्रम हो जावे और जो इन्द्रधन्वा को न देखता हो व रात्रि के समय आकाश में चन्द्रमण्डल को न निहारता हो और दिन में आकाश को नक्षत्रपूर्ण देखता हो और एकही समय चारों दिशाओं में इन्द्र का चापमण्डल और पर्वत पर्वताग्र, गन्धर्वनगरालय और दिन रात में नाच का दर्शन करता हो तो वह प्राणी शीघ्रही मरजाता है ॥ ४८ । ४९ ॥

करावरुद्धश्रवणः संशृणोति न च ध्वनिम् ।
स्थूलः कृशः कृशस्स्थूलस्तदा मासान्न वर्तते ॥ ५० ॥

जो प्राणी हाथों से कानों को दबाता हुआ शब्द को नहीं सुनता है और जिसको मोटा दुबला व दुबला मोटासा भासता हो तो वह प्राणी महीना से अधिक नहीं बचता है ॥ ५० ॥

यः पश्येदात्मनश्छायां दक्षिणाशासमाश्रिताम् ।
दिनानि पञ्च जीवित्वा पञ्चत्वमुपयाति सः ॥ ५१ ॥

जो प्राणी दक्षिण दिशामें टिकीहुई अपनी छाया को नहीं देखता है वह पांच दिवस जीवित रहकर मरजाता है ॥ ५१ ॥

प्रेक्ष्यते भक्ष्यते यस्तु पिशाचासुरराक्षसैः ।
भूतैः प्रेतैः श्वभिर्गृध्रैर्गोमायुमृगसूकरैः ॥ ५२ ॥
शरभैः शलभैः श्येनैर्वायसैरपि कोरकैः ।
स्वप्ने संजीवितं दृष्ट्वा वर्षान्ते यममीक्षते ॥ ५३ ॥

स्वप्न में जिस प्राणी को पिशाच, असुर, राक्षस, भूत, प्रेत, कुत्ते, गीध, सियार, मृग, सूअर, शरभ (मृगभेद) पतङ्ग, बाज, कौआ और चकोर ये देखते या खाये लेते हैं तो

वह साल भरके बाद यमराज को देखता है अथवा स्वप्न में पिशाचादिकों को जीवित देखता है तो वह वर्षान्त में मर जाता है ॥ ५२ । ५३ ॥

गन्धपुष्पांशुकैः श्वेतैः स्वां तनुं भूषितां नरः ।
यः पश्येत्स्वप्नसमये त्वष्टौ मासान्न जीवति ॥ ५४ ॥

जो प्राणी स्वप्न के समय चन्दन, फूल और सफ़ेद वस्त्रों से भूषित अपने शरीर को देखता है वह आठ महीना से अधिक नहीं जीता है ॥ ५४ ॥

पांशुराशिञ्च वल्मीकं यूपं दण्डमथापि च ।
योऽधिरोहति वै स्वप्ने सोष्टमासात्प्रणश्यति ॥ ५५ ॥

जो प्राणी स्वप्न में धूलिराशि, बमौर, यूपकाष्ठ और दण्ड पै चढ़ता है वह आठ महीना के भीतर ही मरजाता है ॥ ५५ ॥

रासभारूढमात्मानं तैलाभ्यक्तञ्च मण्डितम् ।
यमालये नीयमानः स्वप्ने पश्येत्स पूर्वजान् ॥ ५६ ॥

जो प्राणी स्वप्न में गदहे पर चढ़े व तैल से भूषित अपना को निहारता है तथा पूर्वज लोगों को देखता है तो वह शीघ्रही यमालय को पहुँचाया जाता है ॥ ५६ ॥

स्वमौलौ स्वतनौ वापि यः पश्येत्स्वप्नगोचरः ।
तृणानि शुष्ककाष्ठानि षष्ठे मासि न जीवति ॥ ५७ ॥

जो प्राणी स्वप्न में अपने शीश या अपने शरीर के ऊपर तृण या सूखे काठोंको देखता है तो वह छह महीना से अधिक नहीं जीता है ॥ ५७ ॥

लोहदण्डधरं कृष्णपूरुषं कृष्णवाससम् ।
स्वयं योऽग्रे स्थितं पश्येत्रिमासान्नात्र संशयः ॥ ५८ ॥

जो प्राणी स्वप्न में लोहदण्डधारी व काले वस्त्र पहने हुए काले पुरुष को आगे खड़ा हुआ आपही देखता है तो वह निस्सन्देह तीन महीना से अधिक नहीं जीता है ॥ ५८ ॥

कालीं कुमारीं यः स्वप्ने बध्नीयाद्बाहुपाशकैः ।
षण्मासेन च वीक्षेत नगरीं शमनाश्रयाम् ॥ ५९ ॥

जो प्राणी स्वप्नमें काली कुमारी को बाहुरूप पाशों से बांधलेता है तो वह छह महीना के भीतरही यमपुरी को देखता है ॥ ५९ ॥

अरश्मिबिम्बं सूर्यञ्च वह्निं चैवांशुमालिनम् ।
दृष्ट्वैकादशमासाच्च न चोर्ध्वं स तु जीवति ॥ ६० ॥

जो प्राणी स्वप्नमें सूर्यको किरणरहितमण्डलवाला व अग्निको अंशुमाली देखता है तो वह प्राणी ग्यारहमाससे ऊपर नहीं जीता है ॥ ६० ॥

हन्यते काकपङ्क्तीभिः पांशुर्वर्षति वामतः ।
स्वच्छायामन्यथा दृष्ट्वा चतुःपञ्च स जीवति ॥ ६१ ॥

जो प्राणी स्वप्न में काकगणों से ठुनकाया जाता है व जिसके वामभाग में धूरि वर्षती हो और जो अपनी छाया को अन्यथा देखता हो तो वह चार या पांच मास पर्यन्त जीता है ॥ ६१ ॥

घृतैस्तैलैस्तथादर्शैस्तोयेन तनुमात्मनः ।
यश्च पश्येदशिरस्कां मासाच्चोर्ध्वं न जीवति ॥ ६२ ॥

जो प्राणी स्वप्न में घी, तैल, शीशा और जल के द्वारा अपनी काया को शीश विना निहारता है तो वह एक मास से अधिक नहीं जीता है ॥ ६२ ॥

यस्य नित्यं शवगन्धो गात्रवसनयोरपि ।
तस्यार्धं मासिकं ज्ञेयं योगी चापि न जीवति ॥ ६३ ॥

जिस प्राणी के शरीर व वस्त्रों में सदा मुरदे कीसी गन्ध आती हो तो उसका जीवन अर्धमासपर्यन्त जानना चाहिये और यदि योगी हो तो भी नहीं जीता है ॥ ६३ ॥

यस्य वै स्नानमात्रन्तु कपालं चाशु शुष्यति ।
पीतं चापि जलं पश्येद्दशाहं तस्य जीवनम् ॥ ६४ ॥

स्नानमात्र से जिस प्राणी का कपाल (मत्था) शीघ्र सूख जाता हो और पिये हुए पानी को देखता हो यानी पानी पीचुका हो प्यास न वुझाती हो बारम्बार पीता हो तो उसका जीना दश दिवसपर्यन्त रहता है ॥ ६४ ॥

ऋक्षवानरयानस्थो यो गच्छेद्दक्षिणां दिशम् ।
स्वप्ने पश्यति तस्यापि मृत्युरेव न संशयः ॥ ६५ ॥

जो प्राणी स्वप्न में रीछ व वानर की सवारी पै चढ़ा दक्षिण दिशा को जाते हुए अपना को देखता है तो उस की निस्सन्देह मौत ही होजाती है ॥ ६५ ॥

रक्तकृष्णाम्बरधरा गायन्ति वा हसन्ति च ।
दक्षिणाशां नयेद्वापि स्वप्ने सोपि न जीवति ॥ ६६ ॥

स्वप्न में लाले व काले कपड़े पहने हुई कामिनियां जिस प्राणी को गाती या हँसती हैं या कि दक्षिण दिशा को ले जाती हैं तो भी वह नहीं जीता है ॥ ६६ ॥

आम्रमस्तकमूलाद्वा निमग्नं पङ्कसागरे ।
स्वप्ने पश्येत्तदा यस्तु स सद्यो म्रियते नरः ॥ ६७ ॥

जो प्राणी स्वप्न में आम्रवृक्ष की फुनगी या जड़ से कीचड़ के सागर में गिरे हुए अपना को देखता है वह शीघ्रही मर जाता है ॥ ६७ ॥

केशाङ्गारचिताभस्मभुजगानजलां नदीम् ।
दृष्ट्वा स्वप्ने दशाहे वा मृत्युरेकादशे दिने ॥ ६८ ॥

जो प्राणी स्वप्न में केश, अंगार, चिताभस्म, सांप और निर्जल नदी को निहारता है तो उसकी दश दिन या ग्यारह दिन में ही मौत होजाती है ॥ ६८ ॥

सूर्योदये शिवा यस्य क्रोशन्याति च सम्मुखम् ।
विपरीतं पुरीषं वा सद्यो मृत्युं स गच्छति ॥ ६९ ॥

सूर्योदय के समय सियार जिसके सामने फेकरता हुआ चला जाता है एवं जिसके मल बहुत सा निकलता है तो वह प्राणी शीघ्र ही मृत्यु को पाता है ॥ ६९ ॥

यस्य वै भुक्तमात्रन्तु हृदयं बाध्यते क्षुधा ।
जायन्ते दन्तहर्षाश्च स गतायुर्न संशयः ॥ ७० ॥

भोजन करचुक ने पर भी जिसका हृदय भूख से व्याकुल बना रहता हो और दन्तहर्ष होते हों तो वह निस्सन्देह मरजाता है ॥ ७० ॥

शक्रायुधं चार्धरात्रे चन्द्रस्य ग्रहणं दिवा ।
दृष्ट्वा तेन च संक्षीणजीवितं नात्र संशयः ॥ ७१ ॥

जो प्राणी अर्धरात्र के समय इन्द्रधन्वा और दिन में चन्द्रग्रहण को देखता है तो उस प्राणी का जीवन जल्द क्षीण होजाता है इसमें संशय नहीं है ॥ ७१ ॥

नासिका वक्रतामेति कर्णौ नयनकौ तथा ।
नेत्रे बाष्पं सरेद्यस्य स गच्छेद्यमसादनम् ॥ ७२ ॥

जिस प्राणी की नाक टेढ़ी होजावे तथा कान व नेत्र टेढ़े होजावें और जिसके नेत्रों में अंसुआं निकलता होवे तो वह प्राणी यमालय को जाता है ॥ ७२ ॥

इति मृत्युसूचकस्वप्नाध्यायः ॥

---

१ शीतरूक्षप्रवाताम्लस्पर्शानामसहा द्विजाः । यत्र स्युर्वातपित्ताभ्यां दन्तहर्षः स कीर्तितः ॥ (इति भावप्रकाशः) ॥

अथ शारीरकाध्यायो व्याख्यायते ।

तार्क्ष्य उवाच ।

कथमुत्पद्यते जन्तुर्भूतग्रामे चतुर्विधे ।
त्वचा रक्तं तथा मांसं मेदो मज्जास्थिजीवनम् ॥ १ ॥

गरुड़जी बोले कि अहो भगवन् ! चार प्रकारवाले प्राणिसमूहों में प्राणी कैसे उपजता है ? तथा खाल, रुधिर, मांस, मेदा, मज्जा, हाड़ और जीवन ये किस भांति उपजते हैं ॥ १ ॥

पादौ पाणी गुदं जिह्वा दन्ताः केशा नखानि च ।
सन्धिमार्गा ह्यनेकाश्च रेखानेकविधास्तथा ॥ २ ॥

पांव, हाथ, गुदा, जिह्वा, दांत, केश, नख और अनेक सन्धिमार्ग तथा अनेक प्रकार की रेखायें किस भांति उपजती हैं ॥ २ ॥

कामः क्रोधो भयं लज्जा मनोहर्षः शुभाशुभम् ।
विचित्रं छिद्रितं चापि नाडीजालेन वेष्टितम् ॥ ३ ॥

काम, क्रोध, भय, लज्जा, मनोहर्ष और नाड़ीजाल से वेष्टित विचित्र छिद्र किस भांति उपजते हैं ॥ ३ ॥

इन्द्रजालमिदं मन्ये संसारेऽसारसागरे ।
कर्ता कोऽत्र महाबाहो संसारेऽसारसागरे ॥ ४ ॥

हे महाबाहो ! असार सागरसंसार में इस दृश्य को इन्द्रजाल के नाईं मैं मानता हूं और इस असार सागरसंसार में कर्ता कौन है ? उसे कहिये ॥ ४ ॥

श्रीभगवानुवाच ।

कथयामि परं गोप्यमनाख्येयं तु कस्यचित् ।
येन विज्ञानमात्रेण सर्वज्ञत्वं प्रजायते ॥ ५ ॥

श्रीभगवान्‌जी बोले कि; परमगोपनीय जो कि किसी से कहने योग्य नहीं है उस को मैं कहता हूं जिसके विज्ञानमात्र से सर्वज्ञता उपजती है ॥ ५ ॥

साधु पृष्टं त्वया लोके सदा संजीवकारणम् ।
वैनतेय शृणुष्वाद्य एकाग्रकृतमानसः ॥ ६ ॥

---

१ इन्द्रजाल (इन्द्र=ऐश्वर्य अर्थात् चतुराई) जाल आंखों को ढकना, (जल=ढकना) पु० मन्त्र अथवा औषधी से चीज़ें और तरह से दीखना, बाज़ीगरी, छलकपट, फरफन्द, धोखा ॥

अहो गरुड़जी! तुम ने बहुत अच्छा पूछा है जो कि सदैव भली भांति जीवों का कारण है उसको आज सावधान मनवाले होकर सुनो ॥ ६ ॥

ऋतुकालन्तु नारीणां त्यजेद्दिनचतुष्टयम्।
यतस्तस्मिन्ब्रह्महत्या पुरावृत्तसमुत्थिता ॥ ७ ॥

नारियों का ऋतुकाल (मासिकधर्म) चार दिन पर्यन्त त्याग देना चाहिये "यानी ऋतु समय स्त्री से चार दिन संभोग बचाना चाहिये" क्योंकि उसमें पुरातन समय इन्द्रको वृत्रासुरके मारडालने से उपजी ब्रह्महत्या लगी थी उसे उन्होंने चार भागों में बांट दिया था उसका एक भाग स्त्रियों में भी आया है ॥ ७ ॥

प्रथमेहनि चाण्डाली द्वितीये ब्रह्मघातिनी।
तृतीये रजकी ज्ञेया चतुर्थेऽहनि शुध्यति ॥ ८ ॥

जिस समय स्त्री रजस्वला हो तो पहले दिन चाण्डाली, दूसरे दिन ब्रह्मघातिनी, तीसरे दिन धोबिन जानना चाहिये और चौथे दिन शुद्ध होजाती है ॥ ८ ॥

सप्ताहात्पितृदेवानां भवेद्योग्या व्रतार्चने।
सप्ताहमध्ये यो गर्भस्तत्संभूतिर्मलिम्लुचा ॥ ९ ॥

सात दिवस के अनन्तर नारी पितर व देवताओं के व्रतार्चन में सुयोग्य होती है और जो सात दिन के बीच में गर्भ रह जाता है तो उसकी पैदायश मल कहलाती है ॥ ९ ॥

युग्मासु पुत्रा जायन्ते स्त्रियो युग्मासु रात्रिषु।
पूर्वसप्तकमुत्सृज्य तस्माद्युग्मासु संविशेत् ॥ १० ॥

पहले के सात दिन छोड़ कर युग्म (सम) रात्रियों में पुत्र पैदा होते हैं और विषम रात्रियों में कन्यायें उपजती हैं इसलिये युग्म रात्रियों में ही नरको नारी से समागम करना चाहिये ॥ १० ॥

षोडशास्तु निशाः स्त्रीणां सामान्याः समुदाहृताः।
यावच्चतुर्दशी रात्रिर्गर्भस्तिष्ठति तत्र चेत् ॥ ११ ॥

ऋतुकाल से रमणियों के लिये सोलह रात्रियां सामान्य कहलाती हैं उनमें से चौदह रात्रियों तक यदि गर्भ टिक जाता है ॥ ११ ॥

गुणभाग्यनिधिः पुत्रस्ततो जायेत धार्मिकः।
सा निशा तत्र सामान्यैर्न लभ्येत खगाधिप ॥ १२ ॥

तो उससे गुण व भाग्य का निधान होता हुआ धार्मिक होकर पुत्र उपजता है यानी

उस गर्भ से जो लड़का पैदा होता है तो वह गुणवान् व भाग्यवान् होकर धार्मिक कहाता है हे खगनायक ! उस रात्रि को सामान्य पुरुष नहीं पासक्ते हैं ॥ १२ ॥

पञ्चमेहनि साश्नीयाच्छौक्ल्यमाधुर्यभोजनम् ।
कटुक्षारं च तीक्ष्णं च त्यजेद्यत्नेन भोजनम् ॥ १३ ॥

पांचवें दिन वह स्त्री सफ़ेद मीठे भोजन को करे और कड़ुआ खारा तथा तीखा भोजन उपाय से त्याग देवे ॥ १३ ॥

स्त्रीक्षेत्रमोषधीपात्रं तस्माच्छीतलसेवनम् ।
ताम्बूलं चाथ श्रीखण्डं शुभं च संगमेऽहनि ॥ १४ ॥

स्त्री क्षेत्र होकर ओषधियों का पात्र है इसलिये शीतल वस्तुओं का सेवन करे तदनन्तर संगम के दिन में पान खावे व सिखरन आदि शुभपदार्थों का भोजन करै ॥ १४ ॥

निषेकसमये यादृक् नरे चित्तविकल्पना ।
तादृक्स्वभावसंभूतिर्जन्तुर्भवति पक्षिप ॥ १५ ॥

अहो खगनायक ! गर्भाधान के समय जैसे पुरुष में चित्त लगजाता है वैसीही सन्तान पैदा होती है ॥ १५ ॥

शुक्रशोणितयोर्योगे पिण्डोत्पत्तिः प्रजायते ।
जठरे च स्थितो जन्तुस्तारापत्युश्च विच्युतः ॥ १६ ॥

बीज व रुधिर के संयोग होने पर पिण्ड की उत्पत्ति होती है और चन्द्रमण्डल से गिरा हुआ जीव धान्यद्वारा पेट में टिकजाता है ॥ १६ ॥

चैतन्यबीजरूपो हि पुंशुक्रे च व्यवस्थितः ।
कामं चित्तञ्च शुक्रं च यदा ह्येकत्वमाप्नुयात् ॥ १७ ॥

चैतन्य बीजरूप होकर पुरुष के रेतस में स्थित है काम, चित्त, वीर्य और रुधिर ये जब एकता को प्राप्त होजाते हैं तबहीं गर्भ टिकता है ॥ १७ ॥

रक्ताधिके भवेन्नारी शुक्राधिक्ये भवेत्पुमान् ।
शुक्रशोणितयोः साम्ये गर्भः षण्ढत्वमाप्नुयात् ॥ १८ ॥

रक्त अधिक होवे तो कन्या उपजती है, वीर्य अधिक होवे तो पुत्र उपजता है और जब वीर्य व रुधिर ये दोनों बराबर होते हैं तो गर्भ नपुंसकता को प्राप्त होता है ॥ १८ ॥

कललं त्वेकरात्रेण बुद्बुदं पञ्चभिर्दिनैः ।

चतुर्दशैर्भवेन्मांसं धातुभिश्च समन्वितम् ॥ १९ ॥

एक रात्रि में कलल होता है, पांच दिनों में बुलबुला सा उठता है और चौदह दिनों में धातु समेत मांस होजाता है ॥ १९ ॥

एकमासे न पूर्णेन पञ्चतत्त्वं च जायते।
मासद्वये च पूर्णे च त्वचा मेदश्च जायते ॥ २० ॥

एक मास के पूर्ण होने से पांच तत्त्व उपजते हैं दूसरे मास के पूर्ण होने पर खाल और मेदा उपजती है ॥ २० ॥

मज्जास्थीनि त्रिमासेन केशाङ्गुल्यश्चतुर्थके।
कर्णौ तु नासिका चैव वक्त्रं मासे तु पञ्चमे ॥ २१ ॥

तीन मास के पूर्ण होने पर मज्जा और हड्डियां उपजती हैं व चार मास के पूर्ण होजाने पर केश व अँगुलियां उपजती हैं और पांचवें मास में कान, नाक व मुख उपजते हैं ॥ २१ ॥

कण्ठरन्ध्रोदरं षष्ठे गुदगुह्ये तु सप्तमे।
अङ्गप्रत्यङ्गसंपूर्णो गर्भो मासे तथाष्टमे ॥ २२ ॥

छठे मास कण्ठरन्ध्र और उदर उपजता है, सातवें मास गुदा व लिङ्ग होता है तथा आठवें मास में गर्भ अङ्ग व प्रत्यङ्गों से पूर्ण होजाता है ॥ २२ ॥

नवमे मासि संप्राप्ते गर्भस्थश्चरति स्वयम्।
चिकित्सा जायते तस्य गर्भवासं परित्यजे ॥ २३ ॥

नवयें मासके प्राप्त होजानेपर गर्भस्थ प्राणी आपही चलता है और उसको चाहना होती है कि मैं गर्भ का वास कब परित्याग करूंगा ॥ २३ ॥

रक्ताधिके भवेन्नारी पुमाञ्छुक्राधिके भवेत्।
नपुंसका समे द्रव्ये त्रिविधं पिण्डसंभवम् ॥ २४ ॥

जो रुधिर अधिक होवे तो कन्या उपजती है व वीर्य अधिक होवे तो पुत्र उपजता है और रज व बीज दोनों समान होवें तो नपुंसक होता है इसभांति पिण्डकी उत्पत्ति तीन प्रकार की कहाती है ॥ २४ ॥

शक्तित्रयं विशालाक्ष षाट्कौशिकसमाकुलम्।
पञ्चेन्द्रियसमायुक्तं दशनाडीविभूषितम् ॥ २५ ॥

अहो विशालाक्ष ! तीन शक्तियोंवाला, छह कोशों से व्याप्त, पञ्चेन्द्रियों से संयुक्त होकर दश नाड़ियों से विभूषित होता हुआ देह कहाजाता है ॥ २५ ॥

दशप्राणगुणोपेतं यो जानाति स वेत्ति तम् ।
मज्जास्थिशुक्रमांसानि रोमरक्तबलं तथा ॥ २६ ॥

दश प्राणों के गुणों से संयुक्त देहको जो जानता है वह उसका वेत्ता कहाता है और मज्जा, हड्डी, वीर्य, मांस, रोम और रक्त इनका पुतला है ॥ २६ ॥

षाट्कौशिकमिदं पिण्डे तस्यान्ते पञ्चभूतकम् ।
क्षितिर्वारि हविर्भोक्ता पवनाकाशमेव च ॥ २७ ॥

पिण्डमें यह छह कोश हैं उसके बाद पृथ्वी, जल, अग्नि, पवन और आकाश ये पञ्चभूत हैं ॥ २७ ॥

एभिर्भूतैश्च पिण्डस्तु बद्धः स्नायुनिबन्धनः ।
स्थूलभूता इमे प्रोक्ताः सप्तनाड्योऽन्तरे स्थिताः ॥ २८ ॥

इन पञ्चभूतों से देह जो कि नसोंसे बँधनेवाली है वह बँधी है ये स्थूलभूत कहाते हैं और इसके भीतर सात नाड़ियां भी रहती हैं ॥ २८ ॥

त्वचास्थिनाड्यो रोमाणि मांसञ्चैव तु पञ्चमे ।
क्षितेः पञ्चगुणाः प्रोक्ताः समासेन प्रकीर्तिताः ॥ २६ ॥

खाल, हड्डी, नाड़ी, रोवां और मांस ये पांचवें मास में उपजे हैं ये पांच धरती के गुण संक्षेप से कहे हैं ॥ २६ ॥

लाला मूत्रं तथा शुक्रं मज्जा रक्तं च पञ्चमम् ।
अपां पञ्चगुणाः प्रोक्ता ज्ञातव्यास्ते प्रयत्नतः ॥ ३० ॥

लार, मूत्र, शुक्र, मज्जा (चर्बी) और रक्त ये पांच जल के गुण कहे हैं वे बड़े यत्न के साथ जानना चाहिये ॥ ३० ॥

क्षुधा तृषा तथा निद्रा आलस्यं कान्तिरेव च ।
तेजःपञ्चगुणाः प्रोक्ता ज्ञातव्या हि प्रयत्नतः ॥ ३१ ॥

भूख, तृषा, निद्रा, आलस्य और कान्ति ये पांच तेज के गुण कहे हैं जो कि बड़े यत्न के साथ जानने चाहियें ॥ ३१ ॥

रागद्वेषौ तथा लज्जा भयं मोहस्तथैव च ।
पाणिपादौ गुदा वाचा गुह्यं वायोर्गुणा नव ॥ ३२ ॥

---

१ "पिण्डो बोले बले सान्द्रे देहागारैकदेशयोः । देहमात्रे निवापे च गोलसिह्लकयोरपि । ओण्ड्रपुष्पे च पुंसि स्यात्क्लीबमाजीवनायसोः" (इति मेदिनी) ॥

राग, वैर, लज्जा, भय, मोह, हाथ, पांव, गुदा, वाणी ये नव वायु के गुण कहे हैं ॥ ३२ ॥

दर्पश्चिन्ता तु गाम्भीर्यं श्रवणं गमनं क्रमात्।
आकाशस्य गुणाः पञ्च प्रोक्ताः सर्वत्र योगिभिः ॥ ३३ ॥

अहंकार, चिन्ता, गम्भीरपना, सुनना और चलना ये पांच आकाश के गुण क्रम से सर्वग्रन्थों में योगियों ने कहे हैं ॥ ३३ ॥

श्रोत्रं त्वक् चक्षुषी जिह्वा नासा बुद्धेरितीन्द्रियाः।
इडा च पिङ्गला चैव सुषुम्ना च तृतीयका ॥ ३४ ॥

कान, खाल, नेत्र, जिह्वा और नासिका ये पांच ज्ञानेन्द्रियां कहलाती हैं और इडा, पिङ्गला व तीसरी सुषुम्ना ॥ ३४ ॥

गान्धारी हस्तिनी जिह्वा पूषैव सहजा स्थिता।
अलम्बुषा कुहूश्चैव शङ्खिनी दशमी स्मृता ॥ ३५ ॥

गान्धारी, हस्तिनी, जिह्वा, पूषा, सहजा, अलम्बुषा, कुहू और शङ्खिनी ये दश नाड़ियां कहाती हैं ॥ ३५ ॥

पिण्डमध्ये स्थिताः प्रोक्ताः प्रधाना दशनाडिकाः।
प्राणोऽपानः समानश्च उदानो व्यान एव च ॥ ३६ ॥

शरीर के भीतर टिकीहुई प्रधान दश नाडिकायें कही हैं प्राण, अपान, समान, उदान और व्यान ये पांच प्राण कहलाते हैं यानी हृदय में प्राण, गुदा में अपान, नाभिमण्डल में समान, कण्ठ में उदान और व्यान सर्वशरीर में रहता है ॥ ३६ ॥

नागः कूर्मोऽथ कृकरो देवदत्तो धनञ्जयः।
केवलं भुक्तमन्नं च पुष्टिदं सर्वदेहिनाम् ॥ ३७ ॥

नाग, कूर्म, कृकर, देवदत्त और धनञ्जय ये पांच उपप्राण कहाते हैं यानी उद्गार[1] (वमन) में नाग, नेत्रों के उघाड़ने में कूर्म, छींकने में कृकर, जँभाई में देवदत्त और मृतक शरीर में धनञ्जय पवन रहता है व केवल खाया हुआ अनाज सब देहधारियों को पुष्टिदायक होता है ॥ ३७ ॥

---

१ उद्गारे नाग आख्यातः कूर्म उन्मीलने स्मृतः। कृकलः क्षुतकृज्ज्ञेयो देवदत्तो विजृम्भणे ॥ न जहाति मृतं वापि सर्वव्यापी धनञ्जयः। एते नाडीषु सर्वासु भ्रमन्ते जीवरूपिणः ॥

संप्रविश्य गुदे सम्यक् पृथगन्नं पृथक् जलम् ।
ऊर्ध्वमार्गं जलं कृत्वा तदन्नं च जलादधः ॥ ३८ ॥

सो वायु गुदा में प्रविष्ट होकर अन्न व जल को न्यारा न्यारा करता है व जलको ऊ-पर करके अन्नको नीचे कर देता है ॥ ३८ ॥

अग्नेस्त्वधः स्वयं प्राप्तो ह्यग्निं चैव धमेच्छनैः ।
वायुना ध्मायमानोऽग्निः पृथक्किट्टं पृथग्रसम् ॥ ३९ ॥

अग्निके नीचे आपही प्राप्त हुआ प्राणवायु अग्नि को धीरे धीरे जलाता है व वायु से जलाया हुआ अग्नि कीट व रसको न्यारा न्यारा करता है यानी रसको न्यारा करके मैल को अलग कर देता है ॥ ३९ ॥ ग. पु. अ. १९ ॥

श्रीभगवानुवाच ।

आलयैर्दशभिः किट्टो भिन्नो देहाद्बहिर्व्रजेत् ।
कर्णाक्षिनासिका जिह्वा दन्ता नाभिर्वपुर्गुदम् ॥ १ ॥
नखमाला शिरः शेषं विष्ठामूत्रमनन्तकम् ।
शुक्रशोणितसंयोगात्षाट्कौशिकमुदाहृतम् ॥ २ ॥

श्रीभगवान्जी बोले कि, अहो खगनायक ! कान, नेत्र, नाक, जीभ, दांत, नाभि, लिङ्ग, गुदा, नख और शीश इन दश घरों से निकला हुआ मैल देह से बाहर जाता है यानी अल्प मैल, विष्ठा व मूत्र आदि अनन्त बहते हैं और बीज-रज के संयोग से छह कोशोंवाला देह कहाजाता है ॥ १ । २ ॥

रोमकोट्यस्तथा तिस्रो ह्यर्धकोटिसमन्विताः ।
द्वात्रिंशद्दशनाः प्रोक्ताः सामान्यात्समुदाहृताः ॥ ३ ॥

इस देह में साढे तीन करोड़ रोम हैं और सामान्य से बत्तीस दांत कहाते हैं ॥ ३ ॥

विंशतिस्तु नखाः केशाः सप्तविंशतिकोटयः ।
मांसं पलसहस्रैकं सामान्यं देहसंस्थितम् ॥ ४ ॥

बीस नख, सत्ताईस करोड़ केश और एक हज़ार पल मांस है जो कि सामान्य होकर देह में टिका है ॥ ४ ॥

रक्तं पलशतं तार्क्ष्य वक्ष्यते वै पुरातनैः ।
पलानि दश मेदश्च त्वचा चैव ततः समा ॥ ५ ॥

अहो गरुड़जी! सौपल रुधिर पुरातनों ने कहा है दश पल मेदा है और उसी के बराबर खाल भी है ॥ ५ ॥

पलद्वादशकं मज्जा महारक्तं पलत्रयम् ।
शुक्रं द्विकुडवं ज्ञेयं शोणितं कुडवद्वयम् ॥
श्लेष्मा त्रिकुडवं चोर्ध्वं विष्ठामूत्रं तु तत्समम् ॥ ६ ॥

बारह पल मज्जा, तीन पल महारक्त, दो कुड़व वीर्य, दो कुड़व रुधिर, तीन कुड़व कफ और उसी के समान मल व मूत्र भी है ॥ ६ ॥

बलपिण्डं समाख्यातं ज्ञेयं वै वेदपारगैः ।
ब्रह्माण्डे ये गुणाः सन्ति शरीरे ते व्यवस्थिताः ॥ ७ ॥

देह का बल कहा गया जो कि वेदवेत्ताओं को जानना चाहिये और ब्रह्माण्ड में जो गुण विद्यमान हैं वे सब शरीर में भी टिके हैं ॥ ७ ॥

पातालं पर्वता लोकास्तथान्ये द्वीपसागराः ।
आदित्यादिग्रहाः सर्वे पिण्डमध्ये व्यवस्थिताः ॥ ८ ॥

पाताल, पर्वत, लोक, द्वीप, सागर और सूर्य आदि ग्रह ये सब देह के बीच में व्यवस्थित हैं यानी टिके हैं ॥ ८ ॥

पादाधस्त्वतलं ज्ञेयं पादोर्ध्वं वितलं तथा ।
जानुभ्यां सुतलं विद्धि ह्यूरू चैव महातलम् ॥ ९ ॥

पांव के नीचे अतललोक, पांव के ऊपर वितल, घुटनुओं में सुतल और जांघों में महातल तथा तलातल है ॥ ९ ॥

तथा तलातलं चैव गुह्यदेशे रसातलम् ।
पातालं पादतलयोरेवं लोकाः प्रतिष्ठिताः ॥ १० ॥

गुह्यदेश में रसातल और पादतलों में पाताल लोक है इस भांति सातों लोक प्रतिष्ठित हैं ॥ १० ॥

भूर्लोकोनाभिमध्ये तु भुवर्लोकस्तदूर्ध्वके ।
स्वर्लोको हृदये प्रोक्तः कण्ठमध्ये महस्तथा ॥ ११ ॥

नाभिमण्डल में भूर्लोक, उदर में भुवर्लोक, हृदय में स्वर्लोक और कण्ठ के बीच में महर्लोक कहा है ॥ ११ ॥

---

१ कुडव=पावसेर को कहते हैं ॥

त्रिकोणे संस्थितो मेरुरधः कोणेतु मन्दरः ।
दक्षिणे चैव कैलासो वामकोणे हिमालयः ॥ १२ ॥

त्रिकोण में सुमेरु, निचले कोण में मन्दराचल, दक्षिण कोण में कैलास और वाम कोण में हिमालय है ॥ १२ ॥

निषधश्चोर्ध्वभागे वै दक्षिणे गन्धमादनः ।
रमणो वामरेखायां सप्तैते कुलपर्वताः ॥ १३ ॥

ऊर्ध्वभाग में निषध, दक्षिण में गन्धमादन और वामरेखा में रमण पर्वत है ये सात कुलपर्वत कलेवर में टिके हैं ॥ १३ ॥

अस्थिस्थाने गतं जम्बु शाकं मज्जासु संस्थितम् ।
कटिदेशे भवेत्प्लक्षं क्रौञ्चः शिरसि वर्तते ॥ १४ ॥

हाड़ों में जम्बूद्वीप, मज्जा में शाकद्वीप, कमर में प्लक्षद्वीप और शीश में क्रौञ्चद्वीप वर्तता है ॥ १४ ॥

त्वचायां शाल्मलीद्वीपं गोमेदं रोमसंचये ।
नखस्थं पुष्करं द्वीपं सागरास्तदनन्तरम् ॥ १५ ॥

खाल में शाल्मलीद्वीप, रोमसमूहों में गोमेदद्वीप और पुष्करद्वीप नखों में रहता है और इसके अनन्तर समुद्र रहते हैं ॥ १५ ॥

क्षारोदश्च तथा मूत्रे क्षीरोदसागरोरसे ।
सुरोदधिः श्लेष्मसंस्थो मज्जायां घृतसागरः ॥ १६ ॥

मूत्र में खारा समुद्र, रसमें क्षीरसागर, कफ में सुरा का समुद्र और चर्बी में घी का सागर है ॥ १६ ॥

दन्तेष्विक्षुरसं तस्थौ शौणिते दधिसागरम् ।
सलिलं लम्बिकास्थाने गर्भोदं शुक्रसंस्थितो ॥ १७ ॥

दांतों में पौंड़े का रस, रुधिर में दही का सागर, लम्बिका में सलिलसमुद्र और वीर्यस्थान में गर्भोदसमुद्र है ॥ १७ ॥

नादचक्रे स्थितः सूर्यो बिन्दुचक्रे तु चन्द्रमाः ।
लोचनाभ्यां कुजो ज्ञेयो हृदये बुधसंज्ञितः ॥ १८ ॥

---

१ मिनोति प्रक्षिपति उच्चत्वाज्ज्योतींषि इति ॥

नादचक्र में सूर्य स्थित है, विन्दुचक्रमें चन्द्रमा है, लोचनों में मङ्गल जानना चाहिये और हृदय में बुध रहता है ॥ १८ ॥

विष्णुस्थाने गुरुं विद्याच्छुक्रः शुक्रे व्यवस्थितः ।
नाभिस्थाने स्थितो मन्दो मुखे राहुर्व्यवस्थितः ॥ १९ ॥

विष्णुस्थानमें बृहस्पति, वीर्यस्थान में शुक्र, नाभिस्थान में शनैश्चर और मुख में राहु टिका रहता है ॥ १९ ॥

वायुस्थाने स्थितः केतुः शरीरे ग्रहमण्डलम् ।
विभक्तं च समाख्यातमापदां नियतं पदम् ॥ २० ॥

वायुस्थानमें केतु रहता है यह शरीर में ग्रहों का मण्डल विभक्त होता हुआ कहागया है जो कि निश्चयकर आपदाओं का स्थान है ॥ २० ॥

इति शारीरकाध्यायः ॥

अथ सृष्टिक्रमं व्याख्यायते ।

आत्मा ज्योतिश्चिदानन्दरूपो नित्यश्च निस्पृहः ।
निर्गुणः प्रकृतेर्योगात्सगुणः कुरुते जगत् ॥ १ ॥
सत्त्वं रजस्तमश्चेति गुणास्ते प्रकृतिः समाः ।
सा जडापि जगत्कर्त्री परमात्मचिदव्ययात् ॥ २ ॥

अब सृष्टिक्रम कहते हैं–आत्मा ज्योतिःस्वरूप, चिदानन्दरूप, नित्य, निस्पृह और निर्गुण है वह प्रकृति के योग से इच्छावान् होकर जगत् को रचता है सतोगुण, रजोगुण और तमोगुण समान होनेसे 'प्रकृति' कहलाते हैं और न्यूनाधिक यानी कमबढ़ होकर 'विकृति' कहाते हैं वह प्रकृति स्वयं जड़ होकर भी अविनाशी सच्चिदानन्द परमात्मा के सहारे से जगत् को बनाती है ॥ १ । २ ॥

अथ सुश्रुतोपदेशं कुर्वाणो धन्वन्तरिः प्रकृतिस्वरूपमाह—

सर्वभूतानां कारणमकारणं सत्त्वरजस्तमोलक्षणमष्टरूप-
मखिलस्य जगतः सम्भवहेतुरव्यक्तं नामेति ॥ ३ ॥

अब सुश्रुत का उपदेश करतेहुए धन्वन्तरिजी प्रकृति के स्वरूप विशेषण को कहते हैं–अव्यक्त (मूलप्रकृति) सर्व प्राणियों की (समवायि) कारण स्वयं अकारण तथा सम सत्त्व रज तम स्वरूपवान् होकर अव्यक्त, महान्, अहंकार और पञ्चतन्मात्रा ऐसे आठ रूप वाली तथा अखिल जगत् की संभवका हेतु है ॥ ३ ॥

उभावप्यनादी उभावप्यनन्तावुभावप्यलिङ्गावुभावपि
नित्यावुभावप्यपरावुभावपि सर्वगताविति ॥ ४ ॥

प्रकृति-पुरुष दोनों अनादि, दोनों अनन्त, दोनों अलिङ्ग, दोनों नित्य, दोनों ऊपर और दोनों सर्वगत (सर्वव्यापक) हैं ॥ ४ ॥

एका तु प्रकृतिरचेतना त्रिगुणा बीजधर्मिणी ।
प्रसवधर्मिण्यमध्यस्थधर्मिणी चेति ॥ ५ ॥

प्रकृति-पुरुषका वैधर्म्य दिखाते हैं-कि, एक प्रकृति चैतन्यता रहित, तीन गुणवाली, बीजधर्मिणी, प्रसवधर्मिणी और अमध्यस्थधर्मिणी है यानी सुख दुःखादि की भोगने वाली है ॥ ५ ॥

पुरुषस्तु चेतनावान्निर्गुणोऽप्रसवधर्माऽबीज-
धर्मा मध्यस्थधर्मा चेति ॥ ६ ॥

पुरुष-चेतनावान् (चैतन्यतायुक्त) गुणरहित, अनुत्पत्तिकर्ता होकर अबीजधर्मा होता हुआ मध्यस्थधर्मा यानी सुख-दुःख-इच्छा और दोषादि से उदासीन बना रहता है ॥ ६ ॥

प्रकृतिनामानि—

प्रधानं प्रकृतिः शक्तिर्नित्या चाविकृतिस्तथा ।
एतानि तस्या नामानि पुरुषं या समाश्रिता ॥ ७ ॥

अब प्रकृति के नाम कहते हैं कि, प्रधान, प्रकृति, शक्ति, नित्या और अविकृति ये ५ उस प्रकृति के नाम हैं जो कि पुरुष के आश्रित रहती है ॥ ७ ॥

प्रकृतिगुणानाह—

सत्त्वं रजस्तमस्त्रीणि विज्ञेयाः प्रकृतेर्गुणाः ।
तैश्च युक्तस्य चित्तस्य कथयाम्यखिलान् गुणान् ॥ ८ ॥

सत्त्व, रज और तम ये तीन प्रकृति के गुण जानने चाहियें उन गुणों से युक्त चित्तके सारे गुणों को मैं कहता हूं ॥ ८ ॥

सत्त्वादियुक्तमनोलक्षणान्याह—

आस्तिक्यं प्रविभज्य भोजनमनूतापश्च तथ्यं वचो
मेधाबुद्धिधृतिक्षमाश्च करुणा ज्ञानं च निर्दम्भता ।
कर्मानिन्दितमस्पृहं च विनयो धर्मः सदैवादरा-

देते सत्त्वगुणान्वितस्य मनसो गीता गुणा ज्ञानिभिः ॥ ९ ॥

वेद, शास्त्र, लोक व परलोक में विश्वास रखना, कुटुम्ब को बांटकर भोजन करना, क्रोधरहित, सत्य वचन बोलना, मेधा, बुद्धि, धृति, क्षमा, करुणा, ज्ञान, निर्दम्भता, अनिन्दितकर्मकर्ता, निष्काम विनय और सदैव धर्मका आदर करनेवाला ये सतोगुणयुक्त मनके गुण ज्ञानियोंने गाये हैं ॥ ९ ॥

रजोगुणयुक्तमनोलक्षणान्याह—

क्रोधस्ताडनशीलता च बहुलं दुःखं सुखेच्छाधिका
दम्भः कामुकताऽप्यलीकवचनं चाधारताहंकृतिः।
ऐश्वर्यादभिमानितातिशयितानन्दोऽधिकश्चाटनं
प्रख्याता हि रजोगुणेन सहितस्यैते गुणाश्चेतसः ॥ १० ॥

क्रोध, ताड़नशीलता, घना दुःख, अधिक सुखेच्छा, कपट, कामुकता, झूंठा वचन, सहनशीलता, अहंकार, ऐश्वर्य से अभिमानता, अत्यन्त आनन्द और पृथ्वी में बहुत विचरना ये रजोगुणयुक्त चित्त के गुण कहाते हैं ॥ १० ॥

तमोगुणयुक्तमनोलक्षणान्याह—

नास्तिक्यं सुविषण्णतातिशयितालस्यं च दुष्टामतिः
प्रीतिर्निन्दितकर्मशर्मणि सदा निद्रालुताहर्निशम्।
अज्ञानं किल सर्वतोऽपि सततं क्रोधान्धता मूढता
प्रख्याताहि तमोगुणेन सहितस्यैते गुणाश्चेतसः ॥ ११ ॥

नास्तिकपना, अतिखेद, अत्यन्त आलस्य, दुर्मति, निन्दितकर्म में प्रीति सदैव रखना, दिन राति सोना, सर्वत्र अज्ञान, सदैव क्रोध से अन्धा बना रहना और मूढ़ता ये तमोगुणयुक्त चित्त के गुण कहलाते हैं ॥ ११ ॥

तत्र प्रभूतसत्त्वस्तु सात्त्विकः पुरुषः स्मृतः।
राजसस्तामसश्चैव त्रिविधस्तेन मानवः ॥ १२ ॥

वहां अधिक सतोगुणवाला पुरुष सात्विक कहलाता है इसी प्रकार राजसी व तामसी कहेजाते हैं उसीसे मानव तीन भांति के होते हैं ॥ १२ ॥

महत्तत्त्वोत्पत्तिमाह—

ततोऽभवन्महत्तत्त्वं बुद्धितत्त्वापराभिधम्।
त्रिगुणं सत्त्वबहुलं निर्मलं स्फटिकोपमम् ॥

चिच्छाया प्राप्तचैतन्यं तदिच्छामयमीरितम् ॥ १३ ॥

उस प्रकृति से महत्तत्त्व प्रकट हुआ और उसका दूसरा नाम बुद्धितत्त्व भी है यह त्रिगुण अधिक सत्त्ववाला व निर्मल होकर स्फटिक के समान है तथा चिच्छाया अर्थात् चिदानन्द की छाया से चैतन्यता को प्राप्त होकर उस परमात्मा की इच्छामय कहा है यद्यपि उस महत्तत्व में प्रकृति के तीनों गुण विद्यमान रहते हैं तो भी सत्त्वगुण की अधिकता है इसका यह अभिप्राय है कि जैसे निश्चल सरोवर में बहुतसी वस्तुओं के गेरने से उसका जल बढ़ता जाता है ऐसेही चिद्रूपपुरुष के आक्रमण होने से तुल्य गुणत्रयात्मिका प्रकृतिका ज्ञानहेतु प्रकाश ऐसा सतोगुण बढ़ता है, फिर बढ़े हुए सतोगुण से प्रकृति का सत्त्वबहुल बुद्धितत्त्व हुआ ॥ १३ ॥

महतास्त्रिगुणाज्जातोहंकारस्त्रिगुणान्वितः ।
सात्त्विको राजसश्चापि तामसश्चेति स त्रिधा ॥ १४ ॥

त्रिगुणात्मक महत्तत्त्व से त्रिगुणात्मक अहंकार प्रकट हुआ सात्त्विक, राजस और तामस इन भेदों से वह तीन प्रकार का होता है ॥ १४ ॥

जातानि सात्त्विकात्तस्मादिन्द्रियाणि सराजसात् ।
तानि श्रोत्रं त्वचो नेत्रं रसना नासिका तथा ॥
वाग्घस्तचरणोपस्थं गुदान्येकादशो मनः ॥ १५ ॥

रजोगुणसमेत उस सात्त्विक अहंकार से इन्द्रियां उपजी हैं उनको कहते हैं कि, कान, खाल, नेत्र, जीभ, नाक, वाणी, हाथ, पांव, लिङ्ग, गुदा और ग्यारहवां मन है ॥ १५ ॥

पञ्चबुद्धीन्द्रियाण्याहुः प्राक्तनानीतराणी च ।
कर्मेन्द्रियाणि पञ्चैव कथयन्ति विपश्चितः ॥ १६ ॥

बुद्धिके आश्रित होनेसे पहली पांच बुद्धीन्द्रियां यानी ज्ञानेन्द्रियां कहाती हैं और दूसरी पांचों को पण्डितों ने कर्मेन्द्रियां कहा है ॥ १६ ॥

मनोबुद्धीन्द्रियं विज्ञैः कर्मेन्द्रियमपि स्मृतम् ।
मनोधिष्ठितमेवेदमिन्द्रियं यत्प्रवर्तते ॥ १७ ॥

विद्वानों ने मन को बुद्धीन्द्रिय व कर्मेन्द्रिय भी कहा है यानी ज्ञानेन्द्रिय व कर्मेन्द्रियों का पण्डितों ने मनही अधिष्ठान कहा है क्योंकि मनके वशीभूत होकर इन्द्रियां अपने अपने कर्मों को करती हैं ॥ १७ ॥

शब्दः स्पर्शश्च रूपं च रसो गन्धो ह्यनुक्रमात् ।
बुद्धीन्द्रियाणां विषयाः समाख्याता महर्षिभिः ॥ १८ ॥

कर्णेन्द्रिय का विषय शब्द, त्वचाका विषय स्पर्श, नेत्रों का विषय रूप, जिह्वा का षय रस और नासिका का विषय गन्ध ये क्रम से बुद्धीन्द्रियों के विषय महर्षियों ने हे हैं ॥ १८ ॥

वाच्यं ग्राह्यं च गन्तव्यमानन्दं त्याज्यमेव च ।
कर्मेन्द्रियाणां विषया ज्ञातव्यं विषयो हृदः ॥ १९ ॥

वाणी का विषय बोलना, हाथोंका विषय लेना-देना, पैरों का विषय चलना, लिङ्गे-द्रय का विषय आनन्द भोगना और गुदाका विषय मलका त्याग करना ये कर्मेन्द्रियों के षय हैं और ज्ञातव्य (जानना) मनका विषय है ॥ १९ ॥

तामसादप्यहंकारात्तन्मात्राणि सराजसात् ।
पञ्चाल्पसत्त्वसम्बन्धात्तल्लिङ्गानि भवन्ति हि ॥ २० ॥

राजस अहंकार समेत तामस अहंकार से भी पञ्चतन्मात्रायें प्रकट हुईं, इनमें सतोगुण अल्पसम्बन्ध होने से राजस और तामस के मोहादिक लिङ्ग (चिह्न) मिलते हैं ॥ २० ॥

शब्दतन्मात्रकं स्पर्शतन्मात्रं रूपमात्रकम् ।
रसतन्मात्रकं गन्धतन्मात्रमिति तानि तु ॥ २१ ॥

शब्दतन्मात्रा, स्पर्शतन्मात्रा, रूपतन्मात्रा, रसतन्मात्रा और गन्धतन्मात्रा ये पांच तन्मात्रा ननी चाहियें उनको योगीलोग ही जानते हैं ॥ २१ ॥

तन्मात्रेभ्यो वियद्वायुर्वह्निर्वारि वसुन्धरा ।
एतानि पञ्च जायन्ते महाभूतानि तत्क्रमात् ॥ २२ ॥

उन तन्मात्राओं से एकोत्तरवृद्धि करके आकाश आदि पञ्चभूत प्रकट होते हैं, जैसे कि ब्दतन्मात्रा से शब्दगुणवाला आकाश, शब्दतन्मात्रा सहित स्पर्शतन्मात्रा से शब्द, र्शगुणवाला पवन प्रकट हुआ, शब्दतन्मात्रा व स्पर्शतन्मात्रा सहित रूपतन्मात्रा से शब्द, र्श, रूपगुणवान् अग्नि प्रकट हुआ, शब्द स्पर्श, रूपतन्मात्रा सहित रसतन्मात्रा से शब्द, र्श, रूप, रसगुणवान् जल प्रकट हुआ एवं शब्द, स्पर्श, रूप, रसतन्मात्रा सहित गन्धतन्मात्रा शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्धगुणवाली पृथ्वी प्रकट हुई ॥ २२ ॥

शब्दः श्रोत्रेन्द्रियं वापि छिद्राणि च विविक्तता ।
वियतः कथिता एते गुणा गुणविचारिभिः ॥ २३ ॥

शब्द, कर्णेन्द्रिय, छिद्र (शिरा, स्नायु, अस्थि, पेशी आदि) शारीरिकभावों का जाति यक्ति करके आपस में अलग अलग होना ये आकाश के गुण गुणविचारियों ने कहेहैं ॥ २३ ॥

स्पर्शस्त्वगिन्द्रियं चापि लघुता स्यन्दनं तनोः।
चेष्टः सर्वशरीरस्य वायोरेते गुणाः स्मृताः॥ २४॥

स्पर्श का होना, त्वगिन्द्रिय, हलकापना, देह का कुछ कुछ हिलना और सर्वदेह की चेष्टा होना ये पवन के गुण कहे हैं॥ २४॥

रूपं नेत्रेन्द्रियं पाकः संतापस्तीक्ष्णता तथा।
वर्णौ भ्राजिष्णुतामर्षः शौर्यं वह्नेर्गुणा अमी॥ २५॥

रूप, नेत्रेन्द्रिय, पाक (उदर की आगी से आहार का पचना) संताप (गरमी) तीक्ष्णता (शीघ्रकारित्व) वर्ण (गौरादि) भ्राजिष्णुता (दीप्ति) अमर्ष (क्रोध) और शूरता ये अग्नि के गुण हैं॥ २५॥

रसो रसेन्द्रियं शैत्यं स्नेहश्च गुरुता तथा।
सर्वद्रव्यसमूहश्च शुक्रं वारिगुणाः स्मृताः॥ २६॥

रस, रसनेन्द्रिय, शीतलता, चिकनाई, भारीपना, समस्त द्रवपदार्थों का एकत्र होना और वीर्य ये जल के गुण कहे हैं॥ २६॥

गन्धो घ्राणेन्द्रियं चापि काठिन्यं गौरवस्तथा।
वसुन्धरा गुणा एते गदिता गुणवेदिभिः॥ २७॥

गन्ध, नासेन्द्रिय, कठोरता, भारीपना ये गुणज्ञाताओं ने पृथ्वी के गुण कहे हैं॥ २७॥

शब्दः स्पर्शश्च रूपं च रसो गन्धश्च तत्क्रमात्।
तन्मात्राणां विशेषाः स्युः स्थूलभावमुपागताः॥ २८॥

स्थूलभाव को प्राप्त होकर शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गन्ध ये शब्दतन्मात्रादि के क्रम से तन्मात्राओं के विशेष हैं यानी अनुभव योग्य सुख दुःख मोहरूप धर्म विशेष हैं परन्तु अतिसूक्ष्म होने से तन्मात्रा सुखादिक के विशेष नहीं हैं॥ २८॥

प्रकृतेः कारणा योगान्मता प्रकृतिरेव सा।
महत्तत्त्वादयः सप्त शक्तेर्विकृतयः स्मृताः॥ २९॥

सब की कारणरूप होने से यानी कार्यरूप न होने से प्रकृति को ही प्रकृति माना है और महत्तत्त्वादिक सातों उस प्रकृति की विकृतियां कही हैं प्रकृति, महत्तत्त्व, अहंकार, और पांच तन्मात्रा ये आठ प्रकृतियां कहलाती हैं॥ २९॥

इन्द्रियाणां च भूतानां कारणत्वान्महर्षिभिः।

महत्तत्त्वादयः सप्त प्रोक्ताः प्रकृतयोपि च ॥ ३० ॥

इन्द्रियों के कार्य और भूतों के कारण होनेसे महत्तत्त्वादि सातों को भी महर्षियों ने प्रकृति कहा है ॥ ३० ॥

दशेन्द्रियाणि चित्तं च महाभूतानि पञ्च च ।
एतानि सृष्टिं जानद्भिर्विकाराः षोडश स्मृताः ॥ ३१ ॥

दश इन्द्रियां, चित्त और पञ्चमहाभूत इनको सृष्टि ज्ञाताओं ने सोलह विकार (कार्य) कहे हैं ॥ ३१ ॥

एवं चतुर्विंशतिभिस्तत्त्वैः सिद्धे वपुर्गृहे ।
जीवात्मा नियतेर्निघ्नो वसति स्वान्तदूतवान् ॥ ३२ ॥

इस प्रकार चौवीस तत्त्वों से रचेहुए देहरूप घरमें महत्तत्त्वादि प्रकृतिभाव (शुभाशुभ कर्म) के आधीन होकर मनरूप दूतवाला होता हुआ जीवात्मा वसता है ॥ ३२ ॥

सदेही कथ्यते पापपुण्यदुःखसुखादिभिः ।
व्याप्तो बद्धश्च मनसा कृत्रिमैः कर्मबन्धनैः ॥ ३३ ॥

जोकि पाप, पुण्य, दुःख व सुख आदिकों से व्याप्त होकर मनके द्वारा कृत्रिम कर्मबन्धनों से बँधाहुआ है वह देही कहाजाता है ॥ ३३ ॥

इच्छाद्वेषसुखासुखानि विषयज्ञानं प्रयत्नो मनः
संकल्पश्च विचारणा स्मृतिरथो बुद्धिः कलाविज्ञता ।
प्राणस्योपरियापनं गुदवशाद्वायोरधः प्रेरणं
नेत्रोन्मेषनिमेषकृत्यकरणोत्साहाश्च जीवे गुणाः ॥ ३४ ॥

इच्छा (सुख की अभिलाषा) द्वेष (वैर करना) सुख (प्रीति) दुःख (अप्रीति) विषयज्ञान (शब्दादिज्ञान) प्रयत्न (कार्य में तत्परता यानी उद्योग) मन (संशयात्मक) संकल्प (मन का कर्म) विचार (ऊहापोह यानी तर्क वितर्क करके वस्तु का जान लेना) स्मृति (पूर्वानुभूत अर्थ का स्मरण करना) बुद्धि (निश्चयात्मिका) कलाविज्ञता (शिल्पशास्त्रादि बोध) प्राण का उपरियापन (हृदयस्थित वायु को मुखादि ऊपर के भाग में लाना) गुदा के वश से अधोवायु का नीचे प्रेरणा करना, नेत्रों का खोलना मूंदना और कार्य करने में उत्साह रखना ये मनोयुक्त जीवात्मा के गुण कहे हैं ॥ ३४ ॥

इति सृष्टिप्रकरणम् ॥

अथ शिवस्वरोदयाध्यायः ॥

देव्युवाच ।

देवदेव महादेव कृपां कृत्वा ममोपरि ।
सर्वसिद्धिकरं ज्ञानं कथयस्व मम प्रभो ॥ १ ॥

देवीजी बोलीं कि, अहो देवताओं के देव, महादेव, प्रभुजी ! मेरे ऊपर कृपाकर सर्वसिद्धिकारक ज्ञानको मुझसे कहिये ॥ १ ॥

कथं ब्रह्माण्डमुत्पन्नं कथं वा परिवर्तते ।
कथं विलीयते देव वद ब्रह्माण्डनिर्णयम् ॥ २ ॥

अहो देव ! यह ब्रह्माण्ड कैसे उत्पन्न होता है वा किसभांति पालन किया जाता है और किस प्रकार लीन हो जाता है ? इस ब्रह्माण्ड का निर्णय मुझ से कहो ॥ २ ॥

ईश्वर उवाच ।

तत्त्वाद् ब्रह्माण्डमुत्पन्नं तत्त्वेन परिवर्तते ।
तत्त्वे विलीयते देवि तत्त्वाद् ब्रह्माण्डनिर्णयः ॥ ३ ॥

श्रीसदाशिवजी बोले कि, हे देवि ! यह ब्रह्माण्ड तत्त्वों से उत्पन्न होता है व तत्त्वों सेही पालन कियाजाता है और तत्त्वों मेंही लीन होजाता है इसलिये तत्त्वों से ब्रह्माण्ड का निर्णय समझना चाहिये ॥ ३ ॥

देव्युवाच ।

तत्त्वमेव परंमूलं निश्चितं तत्त्ववादिभिः ।
तत्त्वस्वरूपं किं देव तत्त्वमेव प्रकाशय ॥ ४ ॥

देवीजी बोलीं कि, तत्त्ववादियों ने तत्त्वकोही परम मूल निश्चित किया है इसलिये हे देव ! तत्त्वका स्वरूप क्या है ? उसको आपही प्रकाश करें ॥ ४ ॥

ईश्वर उवाच ।

निरञ्जनो निराकारो ह्येको देवो महेश्वरः ।
तस्मादाकाशमुत्पन्नमाकाशाद्वायुसंभवः ॥ ५ ॥

श्रीशिवजी बोले कि निरञ्जन, निराकार, एकदेव परमेश्वर है उससे आकाश पैदाहुआ और आकाश से वायु उपजा है ॥ ५ ॥

वायोस्तेजस्ततश्चापस्ततः पृथ्वीसमुद्भवः ।

एतानि पञ्चतत्त्वानि विस्तीर्णानि च पञ्चधा ॥ ६ ॥

वायु से तेज व तेज से जल व जल से पृथ्वी उपजी है ये पांच तत्त्व एक एक प्रति पांच प्रकार से विस्तार को प्राप्त होते हैं यानी पञ्चीकरण करने से पच्चीस तत्त्व हो जाते हैं ॥ ६ ॥

तेभ्यो ब्रह्माण्डमुत्पन्नं तैरेव परिवर्तते ।
विलीयते च तत्रैव तत्रैव रमते पुनः ॥ ७ ॥

उनसे ब्रह्माण्ड उत्पन्न होता है व उन्हींसे ब्रह्माण्डकी पालना होती है और उन्हीं में ही लीन होजाता है फिर सूक्ष्मरूपसे वहीं रमता है ॥ ७ ॥

पञ्चतत्त्वमये देहे पञ्चतत्त्वानि सुन्दरि ।
सूक्ष्मरूपेण वर्तन्ते ज्ञायन्ते तत्त्वयोगिभिः ॥ ८ ॥

अहो सुन्दरि ! पांच तत्त्वोंसे उपजे हुए देहमें पांचों तत्त्व सूक्ष्मरूप से वर्तते हैं उनको तत्त्वज्ञाता योगीजन जानते हैं ॥ ८ ॥

अथ स्वरं प्रवक्ष्यामि शरीरस्थस्वरोदयम् ।
हंसचारस्वरूपेण भवेज्ज्ञानं त्रिकालजम् ॥ ६ ॥

अब जिसमें शरीरस्थ स्वरों का उदय होता है उस स्वर को कहूंगा जिसके ज्ञानद्वारा हंस चारस्वरूप से भूत-भविष्य-वर्तमान तीनों कालों का ज्ञान होता है ॥ ६ ॥

गुह्याद्गुह्यतरं सारमुपकारप्रकाशनम् ।
इदं स्वरोदयं ज्ञानं ज्ञानानां मस्तके मणिः ॥ १० ॥

यह स्वरोदय ज्ञान गुह्यसे गुह्यतर होकर साररूप होता हुआ उपकारों का प्रकाशक है जो कि ज्ञानों का शिरोमणि कहाजाता है ॥ १० ॥

सूक्ष्मात्सूक्ष्मतरं ज्ञानं सुबोधं सत्यप्रत्ययम् ।
आश्चर्यं नास्तिके लोके आधारं त्वास्तिके जने ॥ ११ ॥

यह स्वरोदय ज्ञान सूक्ष्म से सूक्ष्मतर व बड़े बोधका दायक व जिसमें सत्य की प्रतीति होती है व नास्तिकलोकों में आश्चर्यकारक दीखता है व आस्तिकजनों का आधार कहाता है ॥ ११ ॥

अथ शिष्यलक्षणम्—

शान्ते शुद्धे सदाचारे गुरुभक्त्यैकमानसे ।
दृढचित्ते कृतज्ञे च देयं चैव स्वरोदयम् ॥ १२ ॥

शान्तस्वभाव व शुद्धस्वरूप, उत्तम आचरणशील व जिसका मन गुरु की भक्ति में रहता हो व चित्त दृढ हो व उपकारों का ज्ञाता हो उस शिष्य को स्वरोदय देना चाहिये ॥ १२ ॥

दुष्टे च दुर्जने क्रुद्धे नास्तिके गुरुतल्पगे ।
हीनसत्त्वे दुराचारे स्वरज्ञानं न दीयते ॥ १३ ॥

जो दुष्ट, दुर्जन, क्रोधी, नास्तिक, गुरुदारगामी, अधीर और दुराचारी हो उसको स्वरका ज्ञान नहीं दियाजाता है ॥ १३ ॥

शृणु त्वं कथितं देवि देहस्थं ज्ञानमुत्तमम् ।
येन विज्ञानमात्रेण सर्वज्ञत्वं प्रणीयते ॥ १४ ॥

अहो देवि ! मेरे से कहे हुए देह में स्थित उत्तम ज्ञानको तुम सुनो कि जिसके विज्ञानमात्र से सर्वज्ञता प्राप्त की जाती है ॥ १४ ॥

स्वरे वेदाश्च शास्त्राणि स्वरे गान्धर्वमुत्तमम् ।
स्वरे च सर्वत्रैलोक्यं स्वरमात्मस्वरूपकम् ॥ १५ ॥

स्वर में चारो वेद व षट्शास्त्र स्थित हैं व स्वर में उत्तम गान्धर्वशास्त्र रहता है व स्वर में सारा त्रैलोक्य टिका रहता है व स्वरही आत्मस्वरूप है ॥ १५ ॥

स्वरहीनश्च दैवज्ञो नाथहीनं यथा गृहम् ।
शास्त्रहीनं यथा वक्त्रं शिरोहीनं च यद्वपुः ॥ १६ ॥

जैसे स्वरहीन ज्योतिर्विद्, नाथहीन घर व शास्त्रहीन वदन और स्वरहीन शरीर नहीं सोहता है ॥ १६ ॥

नाडीभेदं तथा प्राणतत्त्वभेदं तथैव च ।
सुषुम्ना मिश्रभेदं च यो जानाति स मुक्तिगः ॥ १७ ॥

जो मनुष्य नाड़ी, प्राण, तत्त्व और सुषुम्ना आदि मिश्रित तीन नाड़ियों के भेद को जानता है वह मुक्ति को प्राप्त होता है ॥ १७ ॥

साकारे वा निराकारे शुभं वायुबलात्कृते ।
कथयन्ति शुभं केचित्स्वरज्ञानं वरानने ॥ १८ ॥

साकार या निराकार में वायु (स्वर) के बलसे शुभ होता है अहो वरानने ! कितेक आचार्य स्वरज्ञान को ही शुभदायक कहते हैं ॥ १८ ॥

ब्रह्माण्डखण्डपिण्डाद्याः स्वरेणैव हि निर्मिताः।
सृष्टिसंहारकर्ता च स्वरः साक्षान्महेश्वरः॥ १९॥

ब्रह्माण्ड के खण्ड व पिण्डआदि को स्वरनेही बनाया है और सृष्टि व संहार का करने वाला साक्षात् महेश्वररूप स्वरही है॥ १९॥

स्वरज्ञानात्परं गुह्यं स्वरज्ञानात्परं धनम्।
स्वरज्ञानात्परं ज्ञानं नवा दृष्टं नवा श्रुतम्॥ २०॥

स्वरके ज्ञान से परे गुह्य, स्वरके ज्ञानसे परे धन और स्वरके ज्ञानसे परे ज्ञान न देखा गया और न सुना गया है॥ २०॥

शत्रुं हन्यात्स्वरबले तथा मित्रसमागमः।
लक्ष्मीप्राप्तिः स्वरबले कीर्तिः स्वरबले सुखम्॥ २१॥

जो स्वरका बल होवे तो वैरी को मारडाले तथा मित्रों से मिलाप करे व स्वरबल के होने पर लक्ष्मी की प्राप्ति होती है और जब स्वरका बल होता है तभी कीर्ति और सुख मिलता है॥ २१॥

कन्याप्राप्तिः स्वरबले स्वरतो राजदर्शनम्।
स्वरेण देवतासिद्धिः स्वरेण क्षितिपो[1] वशः॥ २२॥

स्वरबल के होने पर कन्या की प्राप्ति (विवाह) होती है, स्वरसेही राजा का दर्शन होता है, स्वरसेही देवता की सिद्धि मिलती है और स्वरसेही राजा वश होजाता है॥ २२॥

स्वरेण गम्यते देशो भोज्यं स्वरबले तथा।
लघुशङ्कां स्वरबले मलं चैव निवारयेत्॥ २३॥

स्वरकेही बलसे देशको जाता है व स्वरबलके होने पर भोजन मिलता है और स्वरबलके होतेही पेशाब और मलका त्याग करे॥ २३॥

सर्वशास्त्रपुराणादिस्मृतिवेदाङ्गपूर्वकम्।
स्वरज्ञानात्परं तत्त्वं नास्ति किञ्चिद्वरानने॥ २४॥

अहो वरानने! समस्त शास्त्र, पुराण आदि, स्मृति और वेदाङ्गपूर्वक स्वरज्ञान से परे कुछ तत्त्व नहीं है॥ २४॥

नामरूपादिकः सर्वो मिथ्या सर्वेषु विभ्रमः।

---

१ क्षितिं पृथ्वीं पाति रक्षतीति क्षितिपः पृथ्वीनाथः॥

अज्ञानमोहिता मूढा यावत्तत्त्वं न विद्यते ॥ २५ ॥

तभीतक सबोंमें नाम रूपादिक सर्व विभ्रम मिथ्या है व तभीतक मूढ़लोग अज्ञान से मोहित रहते हैं जबतक तत्त्वका ज्ञान नहीं होता है ॥ २५ ॥

इदं स्वरोदयं शास्त्रं सर्वशास्त्रोत्तमोत्तमम् ।
आत्मघटप्रकाशार्थं प्रदीपकलिकोपमम् ॥ २६ ॥

यह स्वरोदय शास्त्र समस्त उत्तम शास्त्रों में उत्तम है और आत्मारूपी घट के प्रकाशार्थ दीपक की कलिकाके समान है ॥ २६ ॥

यस्मै कस्मै परस्मै वा न प्रोक्तं प्रश्नहेतवे ।
तस्मादेतत्स्वयं ज्ञेयमात्मनो वात्मनात्मनि ॥ २७ ॥

यह स्वरोदय प्रश्नके लिये जिस किसी से या पर से नहीं कहा गया है किन्तु अपने लिये अपनीही देह में अपनी बुद्धि से स्वयं जानना चाहिये ॥ २७ ॥

न तिथिर्न च नक्षत्रं न वारो ग्रहदेवता ।
न च विष्टिर्व्यतीपातो वैधृत्याद्यास्तथैव च ॥ २८ ॥

इस स्वरोदय में तिथि, नक्षत्र, वार, ग्रह, देवता, भद्रा, व्यतीपात और वैधृति आदिकों का दोष नहीं विचारा जाता है ॥ २८ ॥

कुयोगो नास्तिको देवि भविता वा कदाचन ।
प्राप्ते स्वरबले शुद्धे सर्वमेव शुभं फलम् ॥ २९ ॥

अहो देवि ! इसमें कोई कुयोग नहीं है और न कभी होगा जब स्वर का शुद्ध बल प्राप्त होता है तब सारा फल शुभही होजाता है ॥ २९ ॥

देहमध्ये स्थिता नाड्यो बहुरूपाः सुविस्तरात् ।
ज्ञातव्याश्च बुधैर्नित्यं स्वदेहज्ञानहेतवः ॥ ३० ॥

देह के मध्य में बड़े विस्तार से अनेक रूपवाली नाड़ियां स्थित हैं उन सबों को अपने देह के ज्ञानार्थ पण्डितों को सदैव जानना चाहिये ॥ ३० ॥

नाभिस्थानगकन्दोर्ध्वमङ्कुरादेव निर्गताः ।
द्विसप्ततिसहस्राणि देहमध्ये व्यवस्थिताः ॥ ३१ ॥

नाभिस्थानगामी कन्द के ऊपर अंकुर से ही निकली हुई बहत्तर हज़ार नाड़ियां देह के मध्य में स्थित हैं ॥ ३१ ॥

नाडिस्था कुण्डली शक्तिर्भुजङ्गाकारशायिनी ।
ततो दशोर्ध्वगा नाड्यो दशैवाधःप्रतिष्ठिताः ॥ ३२ ॥

नाड़ी में टिकी व सर्पाकार के समान सोती हुई कुण्डलिनी शक्ति है उससे ऊपर को गई हुई दश नाड़ियां हैं और दशही निचले भाग में प्रतिष्ठित हैं ॥ ३२ ॥

द्वे द्वे तिर्यग्गते नाड्यौ चतुर्विंशतिसंख्यया ।
प्रधाना दशनाड्यस्तु दश वायुप्रवाहकाः ॥ ३३ ॥

दो दो नाड़ियां तिरछी गई हैं ये चौबीस नाड़ियां हैं उनमें दशनाड़ियां प्रधान हैं और दश नाड़ियां वायुको बहाती हैं ॥ ३३ ॥

तिर्यगूर्ध्वास्तथा नाड्यो वायुदेहसमन्विताः ।
चक्रवत्संस्थिता देहे सर्वाः प्राणसमाश्रिताः ॥ ३४ ॥

तिरछी—ऊपर और नीचे स्थित और वायु व देह के आश्रित सारी नाड़ियां देह में टिकी हुई प्राण के अधीन रहती हैं ॥ ३४ ॥

तासां मध्ये दशश्रेष्ठा दशानां तिस्र उत्तमाः ।
इडा च पिङ्गला चैव सुषुम्ना च तृतीयिका ॥ ३५ ॥

उन सब नाड़ियों मेंसे दश नाड़ियां प्रधान हैं और उन दशों में से इडा, पिङ्गला और तीसरी सुषुम्ना ये तीनों उत्तम कहलाती हैं ॥ ३५ ॥

गान्धारी हस्तिजिह्वा पूषा चैव यशस्विनी ।
अलम्बुषा कुहूश्चैव शङ्खिनी दशमी तथा ॥ ३६ ॥

गान्धारी, हस्तिजिह्वा, पूषा, यशस्विनी, अलम्बुषा, कुहू और दशवीं शङ्खिनी जानना चाहिये ॥ ३६ ॥

इडा वामे स्थिता भागे पिङ्गला दक्षिणे स्मृता ।
सुषुम्ना मध्यदेशे तु गान्धारी वामचक्षुषि ॥ ३७ ॥

वामभाग में इडानाड़ी स्थित है और दक्षिणभाग में पिङ्गला कही है तथा मध्यदेश में सुषुम्ना और बायें नेत्रमें गान्धारी जानना चाहिये ॥ ३७ ॥

दक्षिणे हस्तिजिह्वा च पूषा कर्णे च दक्षिणे ।
यशस्विनी वामकर्णे आनने चाप्यलम्बुषा ॥ ३८ ॥

दाहिने नेत्रमें हस्तिजिह्वा व दाहिने कान में पूषा व बायें कानमें यशस्विनी और मुखमें अलम्बुषा रहती है ॥ ३८ ॥

कुहूश्च लिङ्गदेशे तु मूलस्थाने तु शङ्खिनी ।
एवं द्वारं समाश्रित्य तिष्ठन्ति दश नाडिकाः ॥ ३९ ॥

लिङ्गदेशमें कुहू और गुदास्थान में शङ्खिनी जानना चाहिये इस प्रकार द्वारों का सहारा लेकर दश नाड़िकायें टिकी रहती हैं ॥ ३९ ॥

इडा पिङ्गला सुषुम्ना च प्राणमार्गे समाश्रिताः ।
एता हि दश नाड्यस्तु देहमध्ये व्यवस्थिताः ॥ ४० ॥

इडा, पिङ्गला, सुषुम्ना ये तीनों प्राणमार्ग में आश्रित हैं ये दश नाड़ियां देहके मध्यमें स्थित हैं ॥ ४० ॥

नामानि नाडिकानान्तु वातानां तु वदाम्यहम् ।
प्राणोऽपानः समानश्च उदानो व्यान एव च ॥ ४१ ॥
नागः कूर्मोऽथ कृकलो देवदत्तो धनञ्जयः ।
हृदि प्राणो वसेन्नित्यमपानो गुदमण्डले ॥ ४२ ॥

वातलनाड़ियों के नामों को मैं कहताहूं कि प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त और धनञ्जय ये दश हैं उनमें से प्राण हमेशा हृदयमें बसता है और गुदामण्डल में अपान रहता है ॥ ४१ । ४२ ॥

समानो नाभिदेशे तु उदानः कण्ठमध्यगः ।
व्यानो व्यापी शरीरेषु प्रधाना दश वायवः ॥ ४३ ॥

नाभिमण्डल में समान, कण्ठमध्यगामी उदान और सर्वशरीरव्यापी व्यान कहाता है ये दशवायु प्रधान हैं ॥ ४३ ॥

प्राणाद्याः पञ्च विख्याता नागाद्याः पञ्च वायवः ।
तेषामपि च पञ्चानां स्थानानि च वदाम्यहम् ॥ ४४ ॥

प्राणआदि पांच विख्यात होचुके हैं अब नागादि जो पांच वायु हैं उन पांचों के स्थानों कोभी बतलाताहूं ॥ ४४ ॥

उद्गारे नाग आख्यातः कूर्म उन्मीलने स्मृतः ।
कृकलः क्षुतकृज्ज्ञेयो देवदत्तो विजृम्भणे ॥ ४५ ॥

उगलने में नाग, नेत्रों के उघाड़ने में कूर्म, छींकने में कृकल और जँभाई लेने में देवदत्त कहलाता है ॥ ४५ ॥

न जहाति मृतं वापि सर्वव्यापी धनञ्जयः।
एते नाडीषु सर्वासु भ्रमन्ते जीवरूपिणः॥ ४६॥

सर्वव्यापी धनञ्जय पवन मृतक शरीर को भी नहीं त्यागता है ये दश पवन जीवरूपी होकर सारी नाड़ियों में भ्रमते हैं॥ ४६॥

प्रकटं प्राणसंचारं लक्षयेद्देहमध्यतः।
इडापिङ्गलासुषुम्नाभिर्नाडीभिस्तिसृभिर्बुधः॥ ४७॥

देहके बीचमें जो प्रकट प्राणोंका संचार होताहै उसको इडा, पिङ्गला और सुषुम्ना इन तीनों नाड़ियों सेही पण्डित को लखना चाहिये॥ ४७॥

इडा वामे च विज्ञेया पिङ्गला दक्षिणे स्मृता।
इडानाडी स्थिता वामा ततो व्यस्ता च पिङ्गला॥ ४८॥

वामभागमें इडा जानना चाहिये और दक्षिणभागमें पिङ्गला कहलाती है, इडा नाड़ी वामारूप से स्थित है और पिङ्गला व्यस्तरूप से रहती है॥ ४८॥

इडायां तु स्थितश्चन्द्रः पिङ्गलायां च भास्करः।
सुषुम्ना शम्भुरूपेण शम्भुर्हंसस्वरूपतः॥ ४९॥

इडानाड़ी में चन्द्रमा स्थित है व पिङ्गला नाड़ी में सूर्य टिकाहै और सुषुम्ना शम्भुरूप से रहती है और शम्भु हंसरूपसे स्थित है॥ ४९॥

हकारो निर्गमे प्रोक्तः सकारेण प्रवेशनम्।
हकारः शिवरूपेण सकारः शक्तिरुच्यते॥ ५०॥

श्वास के निकलने में हकार कहा है और सकार से श्वासका प्रवेश होता है और हकार शिवरूप से रहता है व सकार शक्तिरूप कहाती है॥ ५०॥

शक्तिरूपः स्थितश्चन्द्रो वामनाडीप्रवाहकः।
दक्षनाडीप्रवाहश्च शम्भुरूपो दिवाकरः॥ ५१॥

वामनाड़ीका चलानेवाला चन्द्रमा शक्तिरूप से स्थित है और दक्षिण नाड़ीका बहाने वाला सूर्य शम्भुरूप से टिकारहता है॥ ५१॥

श्वासे सकारसंस्थे तु यद्दानं दीयते बुधैः।
तद्दानं जीवलोकेस्मिन्कोटिकोटिगुणं भवेत्॥ ५२॥

जब श्वास सकार में टिकता है तब पण्डितों करके जो दान दियाजाता है वह दान इस जीवलोक में करोड़ का करोड़गुणा फलदायक होता है॥ ५२॥

अनेन लक्षयेद्योगी चैकचित्तः समाहितः ।
सर्वमेव विजानीयान्मार्गे वै चन्द्रसूर्ययोः ॥ ५३ ॥

सावधान व एकाग्रचित्त होता हुआ योगी इसी मार्ग से देखे और चन्द्रमा व सूर्यकी मार्गमें ही सबको जानलेवे ॥ ५३ ॥

ध्यायेत्तत्त्वं स्थिरे जीवे अस्थिरे न कदाचन ।
इष्टसिद्धिर्भवेत्तस्य महालाभो जयस्तथा ॥ ५४ ॥

जब जीव स्थिर होजावे तो मनुष्य तत्त्वका ध्यान करे और जब स्थिर न होवे तो कदापि ध्यान न करे उसके इष्टकी सिद्धि होती है और महालाभ तथा जय होताहै ॥ ५४ ॥

चन्द्रसूर्यसमभ्यासं ये कुर्वन्ति सदा नराः ।
अतीतानागतज्ञानं तेषां हस्तगतं भवेत् ॥ ५५ ॥

जो मनुष्य सदैव चन्द्र व सूर्यके स्वरोंका भलीभांति अभ्यास करते हैं उनको भूत-भविष्य का ज्ञान प्रत्यक्ष भासने लगता है ॥ ५५ ॥

वामे चामृतरूपा स्याज्जगदाप्यायनं परम् ।
दक्षिणे चरभागेन जगदुत्पादयेत्सदा ॥ ५६ ॥

वामभाग में इडानाड़ी अमृतरूप होकर जगत् को परम पोषण करती है और दक्षिणभाग में चरभाग से पिङ्गलानाड़ी सदैव जगत् को उपजाती है ॥ ५६ ॥

मध्यमा भवति क्रूरा दुष्टा सर्वत्र कर्मसु ।
सर्वत्र शुभकार्येषु वामा भवति सिद्धिदा ॥ ५७ ॥

मध्यमा (सुषुम्ना) नाड़ी कठोर होकर सबकामों में निन्दित कहलाती है और वामा नाड़ी सब शुभकार्योंमें सिद्धिदायक होती है ॥ ५७ ॥

निर्गमे तु शुभा वामा प्रवेशे दक्षिणा शुभा ।
चन्द्रः समस्तुविज्ञेयो रविस्तु विषमः सदा ॥ ५८ ॥

गमन के समय वामा नाड़ी और प्रवेश के समय दक्षिण (पिङ्गला) नाड़ी शुभदायक कहाती है और चन्द्रमा को सम व सूर्यको विषम सदैव जानना चाहिये ॥ ५८ ॥

चन्द्रः स्त्री पुरुषः सूर्यश्चन्द्रो गौरोसितो रविः ।
चन्द्रनाडीप्रवाहेण सौम्यकार्याणि कारयेत् ॥ ५९ ॥

चन्द्रमा स्त्रीसंज्ञक और सूर्य पुरुषसंज्ञक कहाजाता है, चन्द्रमा गौरवर्ण और सूर्य

यामवर्ण कहलाते हैं और जब चन्द्रमाकी नाड़ी का प्रवाह होता हो उस समय सौम्य कार्यों को करावे ॥ ५९ ॥

सूर्यनाडीप्रवाहेण रौद्रकर्माणि कारयेत्।
सुषुम्नायाः प्रवाहेण भुक्तिमुक्तिफलानि च ॥ ६० ॥

जब सूर्यकी नाड़ीका प्रवाह होता हो उससमय रौद्रकर्मों (उग्रकामों) को करे और जब सुषुम्ना नाड़ीका स्वर बहता हो तो भुक्ति-मुक्तिदायक कर्मों को करना चाहिये ॥ ६० ॥

आदौ चन्द्रः सिते पक्षे भास्करो हि सितेतरे।
प्रतिपत्तो दिनान्याहुस्त्रीणि त्रीणि कृतोदयौ ॥ ६१ ॥

शुक्लपक्ष में पहले चन्द्रमा का स्वर और कृष्णपक्ष में पहले सूर्यका स्वर चलता है और परेवासे लेकर तीन २ दिन चन्द्रमा व सूर्यका स्वर बलवान् होता है ॥ ६१ ॥

सार्धद्विघटिके ज्ञेयः शुक्ले कृष्णे शशीरविः।
वहत्येकदिनेनैव यथा षष्टिघटीःक्रमात् ॥ ६२ ॥

ढाईढाई २½ घटी शुक्लपक्ष में चन्द्रमा और ढाईढाई २½ घटी कृष्णपक्ष में सूर्य एकदिनमें साठघटी पर्यन्त बहते हैं अर्थात् दोनों स्वरों की क्रमसे चौबीस २ आवृत्तियां होतीहैं ॥ ६२ ॥

वहेयुतद्घटीमध्ये पञ्च तत्त्वानि निर्दिशेत्।
प्रतिपत्तो दिनान्याहुर्विपरीते विवर्जयेत् ॥ ६३ ॥

उन प्रत्येक ढाई २½ घटियों में पांचों तत्त्वों को कहे और प्रतिपदा से लेकर जो चन्द्रमा व सूर्य के दिन कहे हैं उनसे विपरीत होवें यानी चन्द्रमा के स्वर में सूर्यका और सूर्यके स्वर में चन्द्रमा का स्वर चले तो उसको वर्ज देना चाहिये क्योंकि वह अशुभदायक कहा जाता है ॥ ६३ ॥

शुक्लपक्षे भवेद्वामा कृष्णपक्षे च दक्षिणा।
जानीयात्प्रतिपत्पूर्वा योगी तद्गतमानसः ॥ ६४ ॥

शुक्लपक्ष में परेवा से लेकर पहले वामा नाड़ी और कृष्णपक्ष में दक्षिणा नाड़ी को एकाग्रमनवाला योगी जाने ॥ ६४ ॥

शशाङ्कं वारयेद्रात्रौ दिवावारयभास्करम्।
इत्यभ्यासरतो नित्यं स योगी नात्र संशयः ॥ ६५ ॥

रात्रिके समय चन्द्रस्वर को और दिनमें सूर्यस्वरको वर्जिदेवे इस भांति सदैव अभ्यास में लगा हुआ वह निस्सन्देह योगी कहलाता है ॥ ६५ ॥

सूर्येण बध्यते सूर्यश्चन्द्रश्चन्द्रेण बध्यते ।
यो जानाति क्रियामेतां त्रैलोक्यं वशगं क्षणात् ॥ ६६ ॥

सूर्यके स्वर से सूर्य और चन्द्रमा के स्वर से चन्द्रमा बन्द किया जाता है इस क्रिया को जो मनुष्य जानता है उसके वश में त्रैलोक्य क्षणमात्र में आ जाता है ॥ ६६ ॥

उदयं चन्द्रमार्गेण सूर्येणास्तमनं यदि ।
तदा ते गुणसंघाता विपरीतं विवर्जयेत् ॥ ६७ ॥

यदि चन्द्रमा के स्वरमें सूर्यका उदय हो और सूर्यके स्वर में अस्त हो तो उस समय अनेक गुणों के समुदाय पैदा हो जाते हैं इससे उलटा हो तो उसको वर्जिदेना चाहिये ॥६७॥

गुरुशुक्रबुधेन्दूनां वासरे वामनाडिका ।
सिद्धिदा सर्वकार्येषु शुक्लपक्षे विशेषतः ॥ ६८ ॥

बृहस्पति, शुक्र, बुध और सोम इन वारों में वामा नाड़ी सवकार्यों में सिद्धिदायक होती है और शुक्लपक्ष में विशेषता से फलदायक होती है ॥ ६८ ॥

अर्काङ्गारकसौरीणां वासरे दक्षनाडिका ।
स्मर्तव्या चरकार्येषु कृष्णपक्षे विशेषतः ॥ ६९ ॥

सूर्य, मङ्गल, शनैश्चर इन वारों में दक्षिण नाड़ी चर कार्यों में स्मरण करना चाहिये और कृष्णपक्ष में विशेषता से स्मरणीय है ॥ ६९ ॥

प्रथमं वहते वायुर्द्वितीयं च तथानलः ।
तृतीयं वहते भूमिश्चतुर्थं वारुणी वहेत् ॥ ७० ॥

पहले वायुतत्त्व बहता है दूसरी वार अग्नितत्त्व व तीसरीवार भूमितत्त्व व चौथीवार जलतत्त्व और पांचवींवार आकाशतत्त्व वहता है ॥ ७० ॥

सार्धद्विघटिके पञ्च क्रमेणोदयन्ति च ।
क्रमादेकैकनाड्यां च तत्त्वानां पृथगुद्भवः ॥ ७१ ॥

ढाईघड़ी के समय में पूर्वोक्त पांचों तत्त्व क्रम से उदय करते हैं और एक २ नाड़ी में भी क्रम से पृथक् पांचों तत्त्वों का उदय होता है ॥ ७१ ॥

अहोरात्रस्य मध्ये तु ज्ञेया द्वादशसंक्रमाः ।
वृषकर्कटकन्यालिमृगमीना निशाकरे ॥ ७२ ॥

दिन और रात्रिके मध्य में चन्द्रमा व सूर्य की बारह संक्रान्तियां कहलाती हैं उनमें वृष, कर्क, कन्या, वृश्चिक, मकर और मीन ये चन्द्रमा की संक्रान्तियां होती हैं ॥ ७२ ॥

मेषसिंहौ च कुम्भश्च तुला च मिथुनं धनम् ।
उदये दक्षिणे ज्ञेयः शुभाशुभविनिर्णयः ॥ ७३ ॥

मेष, सिंह, कुम्भ, तुला, मिथुन और धन ये सूर्य की संक्रान्तियां जाननी चाहियें इस भांति उदय व दक्षिण में शुभाशुभका निर्णय जानना चाहिये ॥ ७३ ॥

तिष्ठेत्पूर्वोत्तरे चन्द्रो भानुः पश्चिमदक्षिणे ।
दक्षनाड्याः प्रसारे तु न गच्छेद्याम्यपश्चिमे ॥ ७४ ॥

पूर्व व उत्तर में चन्द्रमा टिकता है और पश्चिम व दक्षिण में सूर्य रहता है और दक्षिण नाड़ी के प्रवाह (स्वर) में दक्षिण व पश्चिम में न जावे ॥ ७४ ॥

वामाचारप्रवाहे तु न गच्छेत्पूर्व उत्तरे ।
परिपन्थिभयं तस्य गतोऽसौ न निवर्तते ॥ ७५ ॥

वामानाड़ी के प्रचार में पूर्व और उत्तर में न जावे यदि जावे तो उसको वैरियों से भय होती है और गया हुआ वह फिर लौटकर नहीं आता है ॥ ७५ ॥

तत्र तस्मान्न गन्तव्यं बुधैः सर्वहितैषिभिः ।
तदा तत्र तु संजाते मृत्युरेव न संशयः ॥ ७६ ॥

इसलिये वहां पर सर्वहितैषी पण्डितों को नहीं जाना चाहिये और यदि उस समय वहां पर जावें तो मौत के होनेमें संदेह नहीं होती है ॥ ७६ ॥

शुक्लपक्षे द्वितीयायामर्के वहति चन्द्रमाः ।
दृश्यते लाभदः पुंसां सौम्ये सौख्यं प्रजायते ॥ ७७ ॥

यदि शुक्लपक्षकी द्वितीया के दिवस सूर्यके प्रवाह में चन्द्रमा बहता हो तो पुरुषों को लाभदायक देखा जाता है और यदि सौम्यकार्य किया जावे तो सौख्य उपजाता है ॥७७॥

सूर्योदये यदा सूर्यश्चन्द्रश्चन्द्रोदये भवेत् ।
सिध्यन्ति सर्वकार्याणि दिवरात्रिगतान्यपि ॥ ७८ ॥

जिस समय सूर्य के उदय में सूर्य और चन्द्रमा के उदय में चन्द्रमा का ही स्वर बहता हो उस समय दिन व राति में किये हुए सब काम सिद्ध हो जाते हैं ॥ ७८ ॥

चन्द्रकाले यदा सूर्यः सूर्यश्चन्द्रोदये भवेत् ।
उद्वेगः[1] कलहो हानिः शुभं सर्वं निवारयेत् ॥ ७९ ॥

१ "उद्वेग उद्भ्रमे" (इत्यमरः) ॥

जबकि चन्द्रमा के समय में सूर्य और सूर्य के समय में चन्द्रमा होय तब चिन्ता, लड़ाई और हानि होती है और सारे शुभकामों की निवृत्ति हो जाती है ॥ ७९ ॥

सूर्यस्य वाहे प्रवदन्ति विज्ञा ज्ञानं ह्यगम्यस्य तु निश्चयेन ।
श्वासेन युक्तस्य तु शीतरश्मेः प्रवाहकाले फलमन्यथा स्यात् ॥ ८० ॥

सूर्य के प्रवाह में विज्ञलोग अगम्य वस्तुका ज्ञान निश्चयकर बतलाते हैं और श्वासयुक्त चन्द्रमा के प्रवाहकाल में फल अन्यथा हो जाता है ॥ ८० ॥

अथ विपरीतलक्षणम्—

यदा प्रत्यूषकालेन विपरीतोदयो भवेत् ।
चन्द्रस्थाने वहत्यर्को रविस्थाने च चन्द्रमाः ॥ ८१ ॥

जब प्रभातकाल से ही विपरीतस्वरों का उदय होता है यानी चन्द्रमा के स्थानमें सूर्य और सूर्य के स्थान में चन्द्रमा बहता है ॥ ८१ ॥

प्रथमे मनउद्वेगं धनहानिर्द्वितीयके ।
तृतीये गमनं प्रोक्तमिष्टनाशं चतुर्थके ॥ ८२ ॥

प्रथम में मनका उद्वेग (घबराहट) होती है दूसरे में धन की हानि होती है तीसरे में गमन कहा है और चौथे में इष्टका विनाश हो जाता है ॥ ८२ ॥

पञ्चमे राज्यविध्वंसं षष्ठे सर्वार्थनाशनम् ।
सप्तमे व्याधिदुःखानि अष्टमे मृत्युमादिशेत् ॥ ८३ ॥

पांचवें में राज्य का विध्वंस, छठे में समस्त अर्थों का नाश, सातवें में व्याधि और दुःख होते हैं और आठवें में मौत को कहना चाहिये ॥ ८३ ॥

कालत्रये दिनान्यष्टौ विपरीतं यदा वहेत् ।
तदा दुष्टफलं प्रोक्तं किञ्चिन्न्यूनं तु शोभनम् ॥ ८४ ॥

प्रातःकाल, मध्याह्नकाल और सायंकाल इन तीनों कालों में यदि आठ दिन पर्यन्त बराबर विपरीत स्वर बहता रहे तो अशुभ फल कहा है और यदि कुछेक कम विपरीत चले तो शुभफल जानना चाहिये ॥ ८४ ॥

प्रातर्मध्याह्नयोश्चन्द्रः सायंकाले दिवाकरः ।
तदा नित्यं जयो लाभो विपरीतं विवर्जयेत् ॥ ८५ ॥

जिसदिन प्रातःकाल व मध्याह्नसमय चन्द्रमाका स्वर और सायंकाल में सूर्यका स्वर चलता हो तो नित्यही जय व लाभ होता है और यदि विपरीत चले तो वर्जिदेवे ॥८५॥

वामे वा दक्षिणे वापि यत्र संक्रमते शिवः।
कृत्वा तत्पादमादौ च यात्रा भवति सिद्धिदा ॥ ८६ ॥

यात्रा के समय बांयां या दांयां जो स्वर चलता हो उसी पैर को पहले आगे धरकर यात्रा करे तो वह यात्रा सिद्धिदायक होती है ॥ ८६ ॥

चन्द्रः समपदः कार्यो रविस्तु विषमः सदा।
पूर्णपादं पुरस्कृत्य यात्रा भवति सिद्धिदा ॥ ८७ ॥

यदि चन्द्रमा का स्वर चलता हो तो समपद २-४-६ आदि आगे रखना चाहिये और यदि सूर्यका स्वर बहता हो तो विषमपद १-३-५ आदि सदैव आगे रखना इस भांति पूर्णपादको आगे धरकर यात्रा करे तो सिद्धिदायक होती है ॥ ८७ ॥

यत्राङ्गे वहते वायुस्तदङ्गकरसंतलात्।
सुप्तोत्थितो मुखं स्पृष्ट्वा लभते वाञ्छितं फलम् ॥ ८८ ॥

जिस अङ्गमें वायु बहता हो उसी अङ्गके करतल से शयन से उठाहुआ मनुष्य मुखका स्पर्श करे तो वाञ्छित फलको पाताहै ॥ ८८ ॥

परदत्ते तथा ग्राह्ये गृहान्निर्गमनेऽपि च।
यदङ्गे वहते नाडी ग्राह्यं तेन कराङ्घ्रिणा ॥ ८६ ॥

दूसरे को दानदेने या ग्रहण करने में या घरसे बाहर जाने में जिस अङ्गकी नाड़ी चलती हो उसी हाथ या पैर से वस्तु को पकड़ लेना चाहिये ॥ ८६ ॥

न हानिः कलहो नैव कण्टकैर्नापि भिद्यते।
निवर्तते सुखी चैव सर्वोपद्रववर्जितः ॥ ६० ॥

तो न हानि हो न कलह हो और न शत्रुओं से भेदन कियाजावे और वह सुखी होकर सब उपद्रवों से रहित होताहुआ निवृत्त होजाता है ॥ ६० ॥

गुरुबन्धुनृपामात्येष्वन्येषु शुभदायिनी।
पूर्णाङ्गे खलु कर्तव्या कार्यसिद्धिर्मनःस्थिता ॥ ६१ ॥

गुरु, बान्धव, राजा, मन्त्री व अन्य महन्तलोगों से यदि शुभदायक कार्यकी सिद्धि चाहता हो तो पूर्णहाथ से करनी चाहिये यानी हाथमें कोई फल आदि वस्तु को लेकर पूर्वोक्त लोगों के पास जावे तो मनवाञ्छित सिद्धि को पाताहै ॥ ६१ ॥

अग्निचौराधर्मधर्मा अन्येषां वादिनिग्रहः।
कर्तव्याः खलु रिक्तायां जयलाभसुखार्थिभिः ॥ ६२ ॥

यदि अग्निदाह–चौरकर्म–अधर्मकार्य–धर्मकार्य तथा अन्य व सुखके अभिलाषी लोगों के वादी को दण्ड देना चाहे तो खाली हाथ सेही जय, लाभ, जनों को कार्यसिद्धि करनी चाहिये ॥ ६२ ॥

दूरदेशे विधातव्यं गमनं तु हिमद्युतौ ।
अभ्यर्णदेशे दीसे तु तरणाविति केचन ॥ ६३ ॥

कितेक आचार्य ऐसा कहतेहैं कि यदि दूरदेश में गमन करना चाहे तो चन्द्रमा के स्वर में चलाजावे और यदि समीप देशमें जानाचाहे तो सूर्य के स्वर में जावे ॥ ६३ ॥

यत्किञ्चित्पूर्वमुद्दिष्टं लाभादिसमरागमः ।
तत्सर्वं पूर्णनाडीषु जायते निर्विकल्पकम् ॥ ६४ ॥

जो कुछ लाभादि व युद्धागम पहले कहागया है वह सब पूर्णनाड़ियों मेंही निस्सन्देह होता है ॥ ६४ ॥

शून्यनाड्या विपर्यस्तं यत्पूर्वं प्रतिपादितम् ।
जायते नान्यथा चैव यथा सर्वज्ञभाषितम् ॥ ६५ ॥

पहले कहाहुआ शून्यनाड़ी का जो उलटा फल है वह अन्य भांति का नहीं होता है जैसेकि शिवजी ने कहाहै ॥ ६५ ॥

व्यवहारे खलोच्चाटे द्वेषि विद्यादिवञ्चके ।
कुपितस्वामिचौराद्ये पूर्णस्थाः स्युर्भयंकराः ॥ ६६ ॥

व्यवहार, खलोंका उच्चाटन, वैरी, विद्याआदि से ठगना, स्वामी का कोप और चौरआदि क्रूर कामों में पूर्णस्वर भयकारक होते हैं ॥ ६६ ॥

दूराध्वनि शुभश्चन्द्रो निर्विघ्नोभीष्टसिद्धिदः ।
प्रवेशकार्यहेतौ च सूर्यनाडी प्रशस्यते ॥ ६७ ॥

जो मनुष्य दूरमार्ग में जाना चाहे तो उसको चन्द्रमा का स्वर शुभदायक होताहुआ निर्विघ्नता से अभीष्ट सिद्धिका देनेवाला होता है. और प्रवेश कार्य में सूर्य की नाड़ी प्रशस्त होती है ॥ ६७ ॥

अयोग्ये योग्यता नाड्या योग्यस्थानेऽप्ययोग्यता ।
कार्यानुबन्धनो जीवो यथा रुद्रस्तथा चरेत् ॥ ६८ ॥

अयोग्य कार्य में नाड़ी की योग्यता और योग्यकार्य में अयोग्यता को कार्य का अनुबन्धी

---

१ "सर्पः क्रूरः खलः क्रूरः सर्पात्क्रूरतरः खलः । सर्प एकाकिनं हन्ति खलः सर्वविनाशकृत्"

जीव प्राप्त होता है इसलिये जैसा स्वर बहता हो वैसाही मनुष्य आचरण करे ॥ ९८ ॥

चन्द्राचारे विषहते सूर्यो बलिवशं नयेत्।
सुषुम्नायां भवेन्मोक्ष एको देवस्त्रिधास्थितः ॥ ९९ ॥

चन्द्रमा का स्वर चले तो मनुष्य किसीके किये अपराध को भी सहलेता है और यदि सूर्य का स्वर चलताहो तो बलवान् को भी वश में लासक्ता है और यदि सुषुम्ना नाड़ी का स्वरहो तो मोक्ष होता है इसभांति एकदेव (स्वर) तीन प्रकार से स्थित रहता है ॥ ९९ ॥

शुभान्यशुभकार्याणि क्रियन्तेऽहर्निशं यदा।
तदा कार्यानुरोधेन कार्यं नाडीप्रचालनम् ॥ १०० ॥

जिस समय दिनरात शुभ व अशुभकार्य किये जाते हैं उससमय कार्य के अनुसार नाड़ी को चलाना चाहिये ॥ १०० ॥

अथ इडा ॥

स्थिरकर्मण्यलंकारे दूराध्वगमने तथा।
आश्रमे धर्मप्रासादे वस्तूनां संग्रहेऽपि च ॥ १ ॥

स्थिरकार्य, अलङ्कार (गहना), दूरमार्ग में चलना, आश्रम, धर्ममन्दिर और वस्तुओं के संचय करने में भी ॥ १ ॥

वापीकूपतडागादिप्रतिष्ठा स्तम्भदेवयोः।
यात्रा दाने विवाहे च वस्त्रालंकारभूषणे ॥ २ ॥

बावड़ी,कुँवां, तालाब, देवता व स्तम्भ की प्रतिष्ठा, यात्रा, दान, विवाह, वस्त्र, अलङ्कार और भूषण में ॥ २ ॥

शान्तिके पौष्टिके चैव दिव्यौषधिरसायने।
स्वस्वामिदर्शने मित्रे वाणिज्ये कणसंग्रहे ॥ ३ ॥

शान्तिकर्म, पौष्टिक कार्य, दिव्यौषधि, रसायन, अपने स्वामी का दर्शन, मित्र, व्यापार और धान्यसंग्रह में ॥ ३ ॥

गृहप्रवेशे सेवायां कृषौ च बीजवापने।
शुभकर्माणि सन्धौ च निर्गमे च शुभः शशी ॥ ४ ॥

गृहप्रवेश, सेवा, खेती, बीजका बोना, शुभकर्म, सन्धि और गमन इनमें चन्द्रमा का स्वर शुभदायक होता है ॥ ४ ॥

विद्यारम्भादिकार्येषु बान्धवानां च दर्शने ।
जन्ममोक्षे च धर्मे च दीक्षायां मन्त्रसाधने ॥ ५ ॥

विद्यारम्भ आदि कार्य, बान्धवों का दर्शन, जन्म, मोक्ष, धर्मकृत्य, यज्ञादिकों की दीक्षा और मन्त्रसिद्धि में इडानाड़ी शुभदायक होती है ॥ ५ ॥

कालविज्ञानसूत्रे तु चतुष्पादगृहागमे ।
कालव्याधिचिकित्सायां स्वामिसम्बोधने तथा ॥ ६ ॥

काल व विज्ञान की सूचना, पशुओं का घरमें आना, काल व व्याधि की चिकित्सा और स्वामीका बुलाना इनमें चन्द्रमा का स्वर शुभदायक होता है ॥ ६ ॥

गजाश्वारोहणे धन्विगजाश्वानां च बन्धने ।
परोपकरणे चैव निधीनां स्थापने तथा ॥ ७ ॥

हाथी व घोड़े की सवारी, धनुषका धारना, हाथी व घोड़े का बांधना, परोपकार करना और खज़ाना का स्थापन करना इनमें इडा शुभदायक होती है ॥ ७ ॥

गीतवाद्यादिनृत्यादौ नृत्यशास्त्रविचारणे ।
पुरग्रामनिवेशे च तिलकक्षेत्रधारणे ॥ ८ ॥

गाना, बजाना आदि, नाचना आदि, नृत्यशास्त्र का विचार, पुर व ग्राम का प्रवेश, तिलक और क्षेत्र के धारने में चन्द्रनाड़ी का स्वर शुभदायक होता है ॥ ८ ॥

आर्तिशोकविषादे च ज्वरिते मूर्च्छितेपि वा ।
स्वजनस्वामिसम्बन्धे अन्नादेर्दारुसंग्रहे ॥ ९ ॥

रोग, शोक, विषाद (उदासी) ज्वर, मूर्च्छा, अपने जन व स्वामी के सम्बन्ध में और अन्नआदि तथा काष्ठसंचय में भी चन्द्रनाड़ी शुभदायक होती है ॥ ९ ॥

स्त्रीणां दन्तादिभूषायां वृष्टेरागमने तथा ।
गुरुपूजाविषादीनां चालने च वरानने ॥ १० ॥

स्त्रियों के दांत आदिका भूषण, वर्षा का आगमन, गुरुपूजा और विषआदिकों के चलाने यानी निकालने में हे वरानने ! चन्द्रनाड़ी शुभदायक कहलाती है ॥ १० ॥

इडायां सिद्धिदं प्रोक्तं योगाभ्यासादिकर्म च ।
तत्रापि वर्जयेद्वायुं तेज आकाशमेव च ॥ ११ ॥

चन्द्रनाड़ी में योगाभ्यास आदि कर्म सिद्धिदायक कहाहै वहांभी जब वायु–अग्नि और आकाश तत्त्व बहतेहों तब योगाभ्यासादिकों को वर्जिदेवे ॥ ११ ॥

सर्वकार्याणि सिध्यन्ति दिवारात्रिगतान्यपि ।
सर्वेषु शुभकार्येषु चन्द्रचारः प्रशस्यते ॥ १२ ॥

दिन व रात्रि में कियेहुए सबकाम चन्द्रनाड़ी में सिद्ध होते हैं और सारे शुभकामों में चन्द्रमा का चार प्रशस्त होता है यानी सर्वोत्तम गिना जाता है ॥ १२ ॥

अथ पिङ्गला ॥

कठिनक्रूरविद्यानां पठने पाठने तथा ।
स्त्रीसंगवेश्यागमने महानौकाधिरोहणे ॥ १३ ॥

कठिन व क्रूरकर्म मारणआदि कृत्य, विद्याओं का पढ़ना, पढ़ाना, स्त्रीसमागम, वेश्यागमन और जहाज़ में चढ़ना इनमें पिङ्गलानाड़ी शुभदायक होती है ॥ १३ ॥

भ्रष्टकार्ये सुरापाने वीरमन्त्राद्युपासने ।
विह्वलोद्ध्वंसदेशादौ विषदाने च वैरिणाम् ॥ १४ ॥

भ्रष्टकार्य, मद्यपान, वीरमन्त्रआदि की उपासना, विह्वलहोना, देश आदिकों का विध्वंस होजाना और शत्रुओं को विष देना इनमें सूर्यका चार शुभदायक होताहै ॥ १४ ॥

शास्त्राभ्यासे च गमने मृगया पशुविक्रये ।
इष्टिकाकाष्ठपाषाणरत्नघर्षणदारणे ॥ १५ ॥

शास्त्रोंका अभ्यास, ग्रामान्तर का गमन, शिकारखेलना, पशुओंका बेंचना, ईंट–काठ–पत्थर और रत्नोंका घिसना व तोड़ना इनमें पिङ्गला शुभदायक होती है ॥ १५ ॥

गत्यभ्यासे यन्त्रतन्त्रे दुर्गपर्वतरोहणे ।
द्यूते चौर्ये गजाश्वादिरथसाधनवाहने ॥ १६ ॥

चलने का अभ्यास, यन्त्र, तन्त्र, क़िला व पर्वत पर चढ़ना, जुआखेलना, चोरी करना, हाथी, घोड़ा, बैल और रथका साधना व चलाना इनमें सूर्य का चार शुभदायक होता है ॥ १६ ॥

व्यायामे मारणोच्चाटे षट्कर्मादिकसाधने ।
यक्षिणीयक्षवेतालविषभूतादिनिग्रहे ॥ १७ ॥

व्यायाम (कसरतकरना) मारण व उच्चाटन आदि षट्कर्मों का साधना यक्षिणी, यक्ष, वेताल, विष और भूत आदिकोंका रोकना इनमें पिङ्गला नाड़ी शुभदायक होती है ॥ १७ ॥

खरोष्ट्रमहिषादीनां गजाश्वारोहणे तथा ।
नदीजलौघतरणे भेषजे लिपिलेखने ॥ १८ ॥

गधा, ऊंट, भैंसादि, हाथी व घोड़ा पर चढ़ना और नदी के जलसमूह को तैरना या पार होना, दवाई करना, लीपना और लिखना इनमें सूर्यका स्वर शुभदायक होताहै ॥ १८ ॥

मारणे मोहने स्तम्भे विद्वेषोच्चाटने वशे ।
प्रेरणे कर्षणे क्षोभे दाने च क्रयविक्रये ॥ १९ ॥

मारण, मोहन, स्तम्भन (रोकदेना), विद्वेषण, उच्चाटन, वशीकरण, प्रेरण, खेतीकरना, क्षोभ, दान, खरीदना और बेंचना इनमें सूर्यका चार उत्तम होता है ॥ १९ ॥

प्रेताकर्षणविद्वेषशत्रुनिग्रहणेपि च ।
खड्गहस्ते वैरियुद्धे भोगे वा राजदर्शने ॥
भोज्ये स्नाने व्यवहारे दीप्तकार्ये रविः शुभः ॥ २० ॥

प्रेतोंका बुलाना, वैर, वैरियों को वशमें लाना, तलवार को हाथ में लेना, वैरियों से लड़ना, भोग, राजदर्शन, भोजन, स्नान, व्यवहार और दीप्तकार्य में सूर्यका स्वर शुभदायक कहा है ॥ २० ॥

भुक्तमार्गेण मन्दाग्नौ स्त्रीणां वश्यादिकर्मणि ।
शयनं सूर्यवाहेन कर्तव्यं सर्वदा बुधैः ॥ २१ ॥

भोजनकी मार्ग से मन्दाग्नि का होना, स्त्रियों को वशीकरण आदि करना और सोना ये सब काम पण्डितों को सूर्यस्वर के चलते समय मेंही करना चाहिये ॥ २१ ॥

क्रूराणि सर्वकर्माणि चराणि विविधानि च ।
तानि सिध्यन्ति सूर्येण नात्र कार्या विचारणा ॥ २२ ॥

समस्त कठिन काम और अनेक चर काम वे सूर्य के स्वर सेही सिद्ध होते हैं इसमें विचार नहीं करना चाहिये ॥ २२ ॥

अथ सुषुम्ना ॥

क्षणं वामे क्षणं दक्षे यदा वहति मारुतः ।
सुषुम्ना सा च विज्ञेया सर्वकार्यहरा स्मृता ॥ २३ ॥

जिस समय वायु क्षणभर वामभाग में और क्षणभर दाहिने भाग में बहती हो वह सुषुम्ना जानना चाहिये जोकि सर्वकार्यों की हरनेहारी कही है ॥ २३ ॥

---

१ पचनः २ कथिता ॥

तस्यां नाड्यां स्थितो वह्निर्ज्वलते कालरूपकः ।
विषवन्तं विजानीयात्सर्वकार्यविनाशनम् ॥ २४ ॥

उस नाड़ी में टिकी हुई आगी कालरूप होकर जलती है उसको विषवाली व सर्वकार्य विनाशनेवाली जानना चाहिये ॥ २४ ॥

यदानुक्रम[1]मुल्लङ्घ्य यस्य नाडीद्वयं वहेत् ।
तदा तस्य विजानीयादशुभं नात्र संशयः ॥ २५ ॥

जिस समय अपने २ स्वाभाविक क्रमका उल्लङ्घन कर जिस पुरुष की दोनों नाड़ी बहती हों तो उसको अशुभ जानना चाहिये इसमें सन्देह नहीं है ॥ २५ ॥

क्षणं वामे क्षणं दक्षे विषमं भावमादिशेत् ।
विपरीतं फलं सर्वं ज्ञातव्यं च वरानने ॥ २६ ॥

क्षणभर वामभाग व क्षणभर दाहिनेभाग में पवन चले उसको विषमभाव कहै अहो वरानने ! उसका सारा फल विपरीत (उलटा) जानना चाहिये ॥ २६ ॥

उभयोरेव संचारं विषवन्तं विदुर्बुधाः ।
न कुर्यात्क्रूरसौम्यानि तत्सर्वं विफलं भवेत् ॥ २७ ॥

इडा व पिङ्गला दोनों नाड़ियों केही संचारको पण्डितलोग विषवान् कहतेहैं उसमें क्रूर व सौम्यकार्यों को न करे यदि करे तो वह सारे काम विफल होजाते हैं ॥ २७ ॥

जीविते मरणे प्रश्ने लाभालाभे जयाजये ।
विषमे विपरीते च संस्मरेज्जगदीश्वरम् ॥ २८ ॥

जीने, मरने, पूछने, लाभ, अलाभ, जय, पराजय और विषम व विपरीत स्वर के चलने में जगदीश का स्मरण करे ॥ २८ ॥

ईश्वरे चिन्तिते कार्यं योगाभ्यासादि कर्म च ।
अन्यत्तत्र न कर्तव्यं जयलाभसुखैषिभिः ॥ २९ ॥

जब ईश्वर का चिन्तन करे उस समय योगाभ्यास आदि कर्मही करना चाहिये वहां पर जय, लाभ व सुख के अभिलाषी जनोंको और कोई काम करना उचित नहीं है ॥२९॥

सूर्येण वहमानायां सुषुम्नायां मुहुर्मुहुः ।
शापं दद्याद्वरं दद्यात्सर्वथैव तदन्यथा ॥ ३० ॥

---

1 " आनुपूर्वीस्त्रियां वा वृत् परिपाटी अनुक्रमः " (इत्यमरः) ॥

जब सुषुम्ना नाड़ी सूर्यके स्वर से बारम्बार बहती हो तब जो शाप या वरको देवे वह सर्वथा अन्यथा (झूंठा या उलटा) हो जाता है ॥ ३० ॥

नाडीसंक्रमणे काले तत्त्वसंगमनेपि च ।
शुभं किञ्चिन्न कर्तव्यं पुण्यदानादिकानि च ॥ ३१ ॥

नाड़ी के संक्रमणकाल और तत्त्वों के संचलन में भी कुछ पुण्यदान आदि शुभकर्म नहीं करना चाहिये ॥ ३१ ॥

विषमस्योदयो यत्र मनसापि न चिन्तयेत् ।
यात्रा हानिकरी तस्य मृत्युः क्लेशो न संशयः ॥ ३२ ॥

जिस समय विषमस्वर का उदय हो तब मनसे भी किसी कार्य की चिन्तना न करे यदि करे तो उस मनुष्यकी यात्रा हानिकारिणी होती है और मृत्यु और पीड़ा निस्सन्देह होती है ॥ ३२ ॥

पुरो वामोर्ध्वतश्चन्द्रो दक्षाधः पृष्ठतो रविः ।
पूर्णरिक्तविवेकोयं ज्ञातव्यो देशिकैः सदा ॥ ३३ ॥

जब चन्द्रमा का स्वर बहता हो उस समय आगे, बायें व ऊपरले भाग में खड़ा हुआ प्रष्टा प्रश्न करे तो वह पूर्ण होता है और जब सूर्य का स्वर चले उस समय पूछने वाला दाहिने, निचले या पीठ के पीछे आनकर पूछे तो वह झूंठा हो जाता है यह पूर्ण रिक्त-(खाली) का विचार पण्डितों को सदैव जानना चाहिये ॥ ३३ ॥

ऊर्ध्ववामाग्रतो दूतो ज्ञेयो वामपथि स्थितः ।
पृष्ठे दक्षे तथाऽधस्तात्सूर्यवाहागतः शुभः ॥ ३४ ॥

जब इडानाड़ी का स्वर वाममार्ग में स्थित हो उस समय ऊपर बायें व आगे आया हुआ दूत शुभदायक जानना चाहिये और जब सूर्यका स्वर बहता हो उस समय पीछे, दाहिने तथा नीचे तरफ़ आया हुआ दूत शुभदायक होता है ॥ ३४ ॥

अनादिर्विषमः सन्धिर्निराहारो निराकुलः ।
परे सूक्ष्मे विलीयेत सा सन्ध्या सद्भिरुच्यते ॥ ३५ ॥

आदिरहित, विषमरूप, सन्धि (सुषुम्ना) निराहार व निराकुल होकर पर व सूक्ष्म रूप ब्रह्म में लीन हो जावे उसको सज्जनों ने सन्ध्या कहा है ॥ ३५ ॥

न वेदं वेद इत्याहुर्वेदो वेदो न विद्यते ।

---

१ पुण्यदानादिकोटिकेत्यपपाठः ॥

परात्मा विद्यते येन स वेदो विद्भिरुच्यते ॥ ३६ ॥

सज्जनलोग वेद को वेद नहीं कहते हैं और न वेद वेदरूप होकर विद्यमान रहता है रन जिससे परात्मा जाना जाता है उसीको विद्वानों ने 'वेद' कहा है ॥ ३६ ॥

न सन्ध्यां सन्धिरित्याहुः सन्ध्या सन्धिर्न गद्यते।
विषमः सन्धिगः प्राणः स सन्धिस्सद्भिरुच्यते ॥ ३७ ॥

पण्डितलोग सन्ध्या को सन्धि नहीं कहते हैं और न सन्ध्या को सन्धि कहसक्ते हैं रन जब प्राण विषम सन्धि में जाता है उसीको सज्जनों ने सन्धि कहा है ॥ ३७ ॥

इति नाडीभेदः ।

श्रीदेव्युवाच ।

देवदेव महादेव सर्वसंसारतारक ।
स्थितं त्वदीयहृदये रहस्यं वद मे प्रभो ॥ ३८ ॥

श्रीपार्वतीजी बोलीं कि हे देवों के देव, महादेव, सर्वसंसारतारक, प्रभुजी! जो स्य आपके हृदय में टिका है उसको मुझसे कहो ॥ ३८ ॥

ईश्वर उवाच ।

स्वरज्ञानरहस्यात्तु न काचिदिष्टदेवता ।
स्वरज्ञानरतो योगी[1] स योगी परमो मतः ॥ ३९ ॥

श्रीमहादेवजी बोले कि, स्वरज्ञान के रहस्य से परे कोई इष्टदेवता नहीं और जो गी स्वरज्ञान में रत रहता है वही योगी परम माना जाता है ॥ ३९ ॥

पञ्चतत्त्वाद्भवेत्सृष्टिस्तत्त्वे तत्त्वं प्रलीयते ।
पञ्चतत्त्वं परन्तत्त्वं तत्त्वातीतं निरञ्जनम् ॥ ४० ॥

पांचों तत्त्वों से सृष्टि उपजती है व तत्त्व में ही तत्त्व लीन हो जाता है व पञ्चतत्त्व ही मतत्त्व कहाता है और परब्रह्म तत्त्वों से पर माना जाता है ॥ ४० ॥

तत्त्वानां नाम विज्ञेयं सिद्धियोगेन योगिनाम् ।
भूतानां दुष्टचिह्नानि जानातीह स्वरोत्तमः ॥ ४१ ॥

योगीजनों को सिद्धियोग से तत्त्वों का नाम जानना चाहिये जो प्राणी स्वरों को म समझता है वह सर्वप्राणियों के दुष्टचिह्नों को भी जानसक्ता है ॥ ४१ ॥

पृथिव्यापस्तथा तेजो वायुराकाशमेव च ।
पञ्चभूतात्मकं विश्वं यो जानाति स पूजितः ॥ ४२ ॥

१ योगश्चित्तवृत्तिनिरोधस्सोऽस्त्यस्येति योगी ॥

पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश इन पञ्चभूतों से उपजे विश्वको जो जानता है वही पूजित होता है ॥ ४२ ॥

सर्वलोकस्थजीवानां न देहो भिन्नतत्त्वकः ।
भूलोकात्सत्यपर्यन्तं नाडीभेदः पृथक् पृथक् ॥ ४३ ॥

भूलोक से लेकर सत्यलोकपर्यन्त सबलोकों में रहते हुए जितने जीव हैं उनका देह भिन्न भिन्न तत्त्वरूप नहीं है परन्तु नाड़ी का भेद अलग अलग रहता है ॥ ४३ ॥

वामे वा दक्षिणे वापि उदयाः पञ्च कीर्तिताः ।
अष्टधा तत्त्वविज्ञानं शृणु वक्ष्यामि सुन्दरि ॥ ४४ ॥

वामभाग या दक्षिणभाग में भी पांच पांच उदय कहे हैं उन तत्त्वों का विज्ञान आठ भांति का होता है अहो सुन्दरि ! उसे मैं कहूंगा तुम सुनो ॥ ४४ ॥

प्रथमे तत्त्वसंख्यानं द्वितीये श्वाससन्धयः ।
तृतीये स्वरचिह्नानि चतुर्थे स्थानमेव च ॥ ४५ ॥

पहले भेद में तत्त्वों की गणना, दूसरे भेद में श्वास की सन्धि, तीसरे भेद में स्वरों के निशान और चौथे भेद में स्वरों का स्थानही कहा है ॥ ४५ ॥

पञ्चमे तस्य वर्णाश्च षष्ठे तु प्राण एव च ।
सप्तमे स्वादसंयुक्ता अष्टमे गतिलक्षणम् ॥ ४६ ॥

पांचवें भेद में उन तत्त्वों का रङ्ग, छठेभेद में प्राण, सातवें भेद में स्वाद का संयोग और आठवें भेद में गतिके लक्षण कहे हैं ॥ ४६ ॥

एवमष्टविधं प्राणं विषुवन्तं चराचरम् ।
स्वरात्परतरं देवि नान्यथा त्वम्बुजेक्षणे ॥ ४७ ॥

इसप्रकार चराचर में व्यापक आठ प्रकारका प्राण होता है अहो देवि ! अयि कञ्जलोचने ! स्वर से परतर इतर ज्ञान कोई नहीं है ॥ ४७ ॥

निरीक्षितव्यं यत्नेन सदा प्रत्यूषकालतः ।
कालस्य वञ्चनार्थाय कर्म कुर्वन्ति योगिनः ॥ ४८ ॥

प्रभातकाल से लेकर सदैव यत्न के साथ स्वर को देखना चाहिये क्योंकि योगीजन कालक्षेप के लिये कर्मों को करते हैं इसीलिये उनको स्वर व तत्त्व का विज्ञान बना रहता है ॥ ४८ ॥

श्रुत्योरङ्गुष्ठकौ मध्याङ्गुल्यौ नासापुटद्वये ।
वदनप्रान्तके चान्याङ्गुलीर्दद्याच्च नेत्रयोः ॥ ४९ ॥

कानों में दोनों अँगूठे देवे, दोनों नासा पुटों में मध्यमा अँगुली और मुखप्रान्त तथा त्रों में अन्य शेष अँगुलियों को देवे यानी नेत्रों में तर्जनी और अनामिका व कनिष्ठा को ुखप्रान्त में लगाना चाहिये ॥ ४९ ॥

अस्यान्तस्तु पृथिव्यादितत्त्वज्ञानं भवेत्क्रमात् ।
पीतश्वेतारुणश्यामैर्बिन्दुभिर्निरुपाधिकम् ॥ ५० ॥

इसके बीचमें पृथ्वी आदितत्त्वों का ज्ञान क्रमसे पीला, सफ़ेद, लाल और काले न्दुओं से उपाधिरहित प्रतीत होता है यानी पृथ्वी का पीलावर्ण, जलका सफ़ेद, ागी का लाल, वायुका श्याम और आकाश का चित्रवर्ण कहाजाता है ॥ ५० ॥

दर्पणेन समालोक्य तत्र श्वासं विनिक्षिपेत् ।
आकारैस्तु विजानीयात्तत्त्वभेदं विचक्षणः ॥ ५१ ॥

वहां दर्पण में मुखका अवलोकनकर श्वास को छोड़े और आकारों से तत्त्वों का द पण्डित को जानना चाहिये ॥ ५१ ॥

चतुरस्रं चार्धचन्द्रं त्रिकोणं वर्तुलं स्मृतम् ।
बिन्दुभिस्तु नभो ज्ञेयमाकारैस्तत्त्वलक्षणम् ॥ ५२ ॥

चतुष्कोण, अर्धचन्द्र, त्रिकोण, वर्तुल (गोल) और बिन्दुरूप इन आकारों से तत्त्वों ा लक्षण जानना चाहिये यानी पृथ्वी चतुष्कोण (चौकोर) जल अर्धचन्द्राकार, तेज त्रिकोणाकार, वायु वर्तुलाकार और आकाश बिन्द्वाकार कहलाता है ॥ ५२ ॥

मध्ये पृथ्वी ह्यधश्चापश्चोर्ध्वं वहति चानलः ।
तिर्यग्वायुप्रवाहश्च नभो वहति संक्रमे ॥ ५३ ॥

बीचमें पृथ्वी, नीचे जल, ऊपर आगी और तिरछा वायु का प्रवाह चलता है और दो स्वरों के चलनेपर आकाशतत्त्व बहता है ॥ ५३ ॥

आपः श्वेतः क्षितिः पीता रक्तवर्णो हुताशनः ।
मारुतो नीलजीमूत आकाशः सर्ववर्णकः ॥ ५४ ॥

जल श्वेतवर्ण, पृथ्वी पीतवर्ण, अग्नि रक्तवर्ण, वायु श्यामवर्ण और आकाश सर्व वर्णोंवाला कहाता है ॥ ५४ ॥

अथ स्थानपरत्वात्तत्त्वज्ञानम्—

स्कन्धद्वये स्थितो वह्निर्नाभिमूले प्रभञ्जनः ।
जानुदेशे क्षितिस्तोयं पादान्ते मस्तके नभः ॥ ५५ ॥

दोनों कन्धों पर आगी, नाभिमूल में वायु, जुट्ठनुओं में पृथ्वी, पादान्त में जल और मस्तक में आकाशतत्त्व टिका रहता है ॥ ५५ ॥

अथ स्वादात्तत्त्वज्ञानप्रकारमाह—

माहेयं मधुरं स्वादे कषायं जलमेव च ।
तीक्ष्णं तेजः समीरोऽम्ल आकाशं कटुकं तथा ॥ ५६ ॥

स्वाद में पृथ्वी का तत्त्व मीठा, जलका तत्त्व कषैला, अग्नि का तत्त्व तीखा, वायु का तत्त्व खट्टा और आकाश का तत्त्व कडुआ कहलाता है ॥ ५६ ॥

अथ गत्या तत्त्वज्ञानम्—

अष्टाङ्गुलं वहेद्वायुरनलश्चतुरङ्गुलम् ।
द्वादशाङ्गुलं माहेयं वारुणं षोडशाङ्गुलम् ॥ ५७ ॥

वायुतत्त्व आठ अङ्गुल बहता है, अग्नितत्त्व चार अङ्गुल, पृथ्वीतत्त्व बारह अङ्गुल और जलतत्त्व सोलह अङ्गुल चलता है ॥ ५७ ॥

ऊर्ध्वं मृत्युरधः शान्तिस्तिर्यगुच्चाटनं तथा ।
मध्ये स्तम्भं विजानीयान्नभः सर्वत्र मध्यमम् ॥ ५८ ॥

जब ऊर्ध्व स्वर चले तो मृत्यु, नीचा स्वर चले तो शान्ति, तिरीछा स्वर चले तो उच्चाटन और मध्य का स्वर चले तो स्तम्भ और आकाशतत्त्व सर्वत्र मध्यम जानना चाहिये ॥ ५८ ॥

पृथिव्यां स्थिरकर्माणि चरकर्माणि वारुणे ।
तेजसि क्रूरकर्माणि मारणोच्चाटनेऽनिले ॥ ५९ ॥

पृथ्वीतत्त्व में स्थिर कार्य, जल में चरकाम, तेज में क्रूरकर्म और वायुतत्त्व में मारण और उच्चाटन सिद्ध होता है ॥ ५९ ॥

व्योम्नि किञ्चिन्न कर्तव्यमभ्यसेद्योगसेवनम् ।
शून्यता सर्वकार्येषु नात्र कार्या विचारणा ॥ ६० ॥

आकाशतत्त्व में कुछ काम नहीं करना चाहिये वरन केवल योग सेवन काही अभ्यास रक्खे और सब कामों में शून्यता होती है इसमें विचार नहीं करना चाहिये ॥६०॥

पृथ्वीजलाभ्यां सिद्धिः स्यान्मृत्युर्वह्नौ क्षयोऽनिले ।
नभसो निष्फलं सर्वं ज्ञातव्यं तत्त्ववादिभिः ॥ ६१ ॥

पृथ्वी व जलतत्त्व से सिद्धि होती है अग्नितत्त्व में मृत्यु और वायुतत्त्व में क्षय होजाता है और आकाशतत्त्व से सब काम निष्फल होजाते हैं यह तत्त्ववादियों को जानना चाहिये ॥ ६१ ॥

चिरलाभः क्षितेर्ज्ञेयस्तत्क्षणे तोयतत्त्वतः ।
हानिः स्याद्वह्निवाताभ्यां नभसो निष्फलं भवेत् ॥ ६२ ॥

पृथ्वीतत्त्व से बहुतसा लाभ जानना चाहिये, जलतत्त्व से उसी क्षणमें लाभ होताहै अग्नि और वायुतत्त्व से हानि होती है और आकाशतत्त्वसे सब काम निष्फल होजाते हैं ॥ ६२ ॥

पीतः शनैर्मध्यवाही हनुर्यावद्गुरुध्वनिः ।
कवोष्णः पार्थिवो वायुः स्थिरकार्यप्रसाधकः ॥ ६३ ॥

पीला, धीरे धीरे या मध्यगति से चलनेवाला, ठोढ़ीपर्यन्त भारी शब्दका रखनेहारा, कुछेक गरम पृथ्वीसम्बन्धी वायु स्थिरकार्यों का साधक होता है ॥ ६३ ॥

अधोवाही गुरुध्वानः शीघ्रगः शीतलः स्थितः ।
यः षोडशाङ्गुलो वायुः स आपः शुभकर्मकृत् ॥ ६४ ॥

नीचवाही, महाध्वनिकारी, शीघ्रगामी, ठण्ढा होकर टिकाहुआ जो सोलह अङ्गुलवाल वायु वह जलसम्बन्धी है जोकि शुभकर्मों का करनेवाला होता है ॥ ६४ ॥

आवर्तगश्चात्युष्णश्च शोणाभश्चतुरङ्गुलः ।
ऊर्ध्ववाही च यः क्रूरकर्मकारी स तैजसः ॥ ६५ ॥

चक्कर देकर जानेवाला, बड़ागरम, लाल, चारअङ्गुल ऊपर जानेवाला जो वायु वह तैजस होकर क्रूर कर्मोंका करनेवाला होता है ॥ ६५ ॥

ऊष्णः शीतः कृष्णवर्णस्तिर्यग्गाम्यष्टकाङ्गुलः ।
वायुः पवनसंज्ञस्तु चरकर्मप्रसाधकः ॥ ६६ ॥

जो गरम, ठण्ढा, श्यामवर्ण, तिरीछा जानेवाला, आठ अङ्गुल का हो वह वायु पवनसंज्ञक होकर चरकर्मों का प्रसाधक होता है ॥ ६६ ॥

यः समीरः समरसः सर्वतत्त्वगुणावहः ।
आम्बरन्तं विजानीयाद्योगिनां योगदायकम् ॥ ६७ ॥

जो वायु समरस यानी एकरस होकर समस्त तत्त्वों के गुणों का वाहक होता है वह आकाशसम्बन्धी जानना चाहिये जोकि योगियों को योगदायक होता है ॥ ६७ ॥

पीतवर्णं चतुष्कोणं मधुरं मध्यमाश्रितम् ।
भोगदं पार्थिवं तत्त्वं प्रवाहे द्वादशाङ्गुलम् ॥ ६८ ॥

पीले वर्णवाला, चौकोर, मीठा, बीचमें टिकाहुआ जोकि प्रवाह में बारह अङ्गुलका होता है वह पृथ्वीतत्त्व भोगदायक जानना चाहिये ॥ ६८ ॥

श्वेतमर्धेन्दुसंकाशं स्वादुकाषायमार्द्रकम् ।
लाभकृद्वारुणं तत्त्वं प्रवाहे षोडशाङ्गुलम् ॥ ६९ ॥

जिसका वर्ण सफ़ेद हो जोकि अर्धचन्द्राकार, स्वादिल, कषैला व गीला होकर प्रवाह में सोलह अङ्गुलका रहता है उसे जलतत्त्व कहते हैं और वह लाभकारी होता है ॥ ६९ ॥

रक्तं त्रिकोणं तीक्ष्णं च ऊर्ध्वभागप्रवाहकम् ।
दीप्तं च तैजसं तत्त्वं प्रवाहे चतुरङ्गुलम् ॥ ७० ॥

जिसका वर्ण लाल हो जोकि तिकोना, तीखा व ऊपरले भाग में बहनेवाला होताहुआ प्रकाशित होकर प्रवाह में चार अङ्गुलका रहता है उसे तैजसतत्त्व कहते हैं ॥ ७० ॥

नीलं च वर्तुलाकारं स्वाद्वम्लं तिर्यगाश्रितम् ।
चपलं मारुतं तत्त्वं प्रवाहेऽष्टाङ्गुलं स्मृतम् ॥ ७१ ॥

जोकि श्यामवर्ण, गोलाकार, स्वाद में खट्टा, तिर्यग्गामी होकर चपल होताहुआ प्रवाह में आठ अंगुलवाला कहाता है उसे वायुतत्त्व कहते हैं ॥ ७१ ॥

वर्णाकारे स्वादवाहे अव्यक्तं सर्वगामिनम् ।
मोक्षदं नाभसं तत्त्वं सर्वकार्येषु निष्फलम् ॥ ७२ ॥

वर्ण, आकार, स्वाद और प्रवाह में छिपाहुआ सबों में जानेवाला व मोक्षदायक होकर आकाशतत्त्व कहलाता है जोकि सब कार्यों में निष्फल होता है ॥ ७२ ॥

पृथ्वीजले शुभे तत्त्वे तेजोमिश्रफलोदयम् ।
हानिमृत्युकरौ पुंसामशुभौ व्योममारुतौ ॥ ७३ ॥

पृथ्वीतत्त्व व जलतत्त्व ये दोनों शुभदायक होते हैं व अग्नितत्त्व मिश्रफल का उदय

वाला होता है और आकाशतत्त्व व वायुतत्त्व ये दोनों पुरुषों को अशुभदायक होकर हानि व मौतके करनेवाले होते हैं ॥ ७३ ॥

आपूर्वपश्चिमे पृथ्वी तेजश्च दक्षिणे तथा ।
वायुश्चोत्तरदिग्ज्ञेयो मध्ये कोणगतं नभः ॥ ७४ ॥

पूर्वसे लेकर पश्चिमपर्यन्त पृथ्वीतत्त्व, दक्षिण में तेजतत्त्व, उत्तर में वायुतत्त्व और मध्य कोण में गयाहुआ आकाशतत्त्व जानना चाहिये ॥ ७४ ॥

चन्द्रे पृथ्वी जले स्यातां सूर्ये चाग्निर्यदा भवेत् ।
तदा सिद्धिर्न सन्देहः सौम्यासौम्येषु कर्मसु ॥ ७५ ॥

जिससमय चन्द्रमा के स्वर में पृथ्वी व जलतत्त्व हों और सूर्य के स्वर में अग्नितत्त्व हो उससमय शुभाशुभकामों में निस्सन्देह सिद्धि होती है ॥ ७५ ॥

पृथ्वीलाभकृदह्नि स्यान्निशायां लाभकृज्जलम् ।
वह्नौ मृत्युः क्षयो वायुर्नभस्थानं दहेत्क्वचित् ॥ ७६ ॥

जो दिनमें पृथ्वीतत्त्व और रात्रि में जलतत्त्व हो तो लाभकारी होता है और वह्नितत्त्व में मृत्यु, वायुतत्त्व में विनाश और आकाशतत्त्व कभी स्थानको जलाता है ॥ ७६ ॥

जीवितव्ये जये लाभे कृष्यां च धनकर्मणि ।
मन्त्रार्थे युद्धप्रश्ने च गमनागमने तथा ॥ ७७ ॥

जीवन, जय, लाभ, खेती, धनका कर्म, मन्त्रका कार्य, युद्ध, प्रश्न, गमन और आगमन इनमें पृथ्वीतत्त्व शुभदायक होता है ॥ ७७ ॥

आयाति वारुणे तत्त्वे शत्रुरस्ति शुभं क्षितौ ।
प्रयाति वायुतोऽन्यत्र हानिमृत्यू नभोनले ॥ ७८ ॥

यदि जलका तत्त्व होवे तो वैरी आता है, पृथ्वीतत्त्व होवे तो शुभ होता है यदि वायुतत्त्व होतो वैरी अन्य स्थान को पधारता है और यदि आकाश व अग्नितत्त्व हो तो हानि व मृत्यु होती है ॥ ७८ ॥

पृथिव्यां मूलचिन्ता स्याज्जीवस्य जलवातयोः ।
तेजसा धातुचिन्ता स्याच्छून्यमाकाशतो वदेत् ॥ ७९ ॥

यदि प्रश्न करने के समय पृथ्वीतत्त्व हो तो मूलचिन्ता होती है, जल व वायुतत्त्व हो तो जीवकी चिन्ता यदि अग्नितत्त्व हो तो धातुकी चिन्ता कहना चाहिये और यदि आकाश-तत्त्व हो तो शून्य बतलाना चाहिये ॥ ७९ ॥

पृथिव्यां बहुपादाः स्युर्द्विपदस्तोयवायुतः ।
तेजस्येव चतुष्पादो नभसा पादवर्जितः ॥ ८० ॥

यदि पृथ्वीतत्त्व हो तो बहुतसे पैरोंवाले जीवकी चिन्ता कहे यदि जल व वायुतत्त्व हो तो द्विपदकी चिन्ता, अग्नितत्त्व हो तो चौपाये की चिन्ता बतलावे और यदि आकाशतत्त्व हो तो बेपैर की चिन्ता कहना चाहिये ॥ ८० ॥

कुजो वह्नी रविः पृथ्वी सौरिशपः प्रकीर्तितः ।
वायुस्थानस्थितो राहुर्दक्षरन्ध्रप्रवाहकः ॥ ८१ ॥

यदि दाहिना स्वर बहता हो तो अग्नितत्त्व में मङ्गल, पृथ्वीतत्त्व में सूर्य, जलतत्त्व में शनैश्चर और वायुतत्त्व में राहु टिकारहता है ॥ ८१ ॥

जलं चन्द्रो बुधः पृथ्वी गुरुर्वातः सितोऽनलः ।
वामनाड्यां स्थिताः सर्वे सर्वकार्येषु निश्चिताः ॥ ८२ ॥

जलतत्त्व में चन्द्रमा, पृथ्वीतत्त्व में बुध, वायुतत्त्व में बृहस्पति और अग्नितत्त्व में शुक्र ये सब ग्रह वामनाड़ी में टिकेहुए सम्पूर्ण कार्यों में निश्चित हैं ॥ ८२ ॥

पृथ्वी बुधो जलादिन्दुः शुक्रो वह्नी रविः कुजः ।
वायू राहुशनीव्योमगुरुरेव प्रकीर्तितः ॥ ८३ ॥

पृथ्वीतत्त्व में बुध, जलतत्त्व में चन्द्रमा व शुक्र अग्नितत्त्व में सूर्य व मङ्गल वायुतत्त्व में राहु व शनैश्चर और आकाशतत्त्व में बृहस्पति कहा है ॥ ८३ ॥

प्रवासप्रश्न आदित्ये यदि राहुर्गतोनिले ।
तदासौ चलितो ज्ञेयः स्थानान्तरमपेक्षते ॥ ८४ ॥

सूर्यस्वर के चलने के समय प्रवासप्रश्न में यदि राहु वायुतत्त्वमें गया हो तो वह प्रवासी स्थानान्तर को चलचुका है ऐसा जानना चाहिये ॥ ८४ ॥

आयाति वारुणे तत्त्वे तत्रैवास्ति शुभं क्षितौ ।
प्रवासी पवनेऽन्यत्र मृत्युरेवानले भवेत् ॥ ८५ ॥

यदि जलतत्त्व हो तो परदेशी आता है व जो पृथ्वीतत्त्व हो तो परदेशी जहां गया था वहां ही सुखी है यदि वायुतत्त्व हो तो प्रवासी अन्य स्थान को चला गया और यदि अग्नितत्त्व हो तो प्रवासी की मौतही होजाती है ॥ ८५ ॥

पार्थिवे मूलविज्ञानं शुभं कार्यं जले तथा ।
आग्नेये धातुविज्ञानं व्योम्नि शून्यं विनिर्दिशेत् ॥ ८६ ॥

पृथ्वीतत्त्व में मूलका विज्ञान होता है, जलतत्त्व में शुभकार्य, अग्नि तत्त्व में धातुओं का विज्ञान और आकाशतत्त्व में शून्यता को कहै ॥ ८६ ॥

तुष्टिः पुष्टी रतिः क्रीडा जयहर्षौ धराजले ।
तेजोवाय्वोश्च सुप्ताक्षो ज्वरकम्पः प्रवासिनः ॥ ८७ ॥

यदि प्रवासी के प्रश्न के समय पृथ्वी व जलतत्त्व हो तो तुष्टि, पुष्टि, रति, क्रीड़ा, जय और हर्ष होता है और यदि तेज और वायुतत्त्व हो तो परदेशी आंखें मीचे सोता हुआ ज्वर से कांपता है ॥ ८७ ॥

गतायुर्मृत्युराकाशे तत्त्वस्थाने प्रकीर्तिताः ।
द्वादशैताः प्रयत्नेन ज्ञातव्या देशिकैः सदाः ॥ ८८ ॥

यदि आकाशतत्त्व हो तो आयुरहित परदेशी की मौत कही है ये बारह प्रश्न बड़े यत्न से पण्डितों को सदैव जानना चाहिये ॥ ८८ ॥

पूर्वस्यां पश्चिमे याम्ये उत्तरस्यां यथाक्रमम् ।
पृथिव्यादीनि भूतानि बलिष्ठानि विनिर्दिशेत् ॥ ८९ ॥

पूर्व, पश्चिम, दक्षिण और उत्तर इन चारों दिशाओं में क्रमसे पृथ्वी, जल, तेज और वायु ये चारों भूत बलवान् कहलाते हैं ॥ ८९ ॥

पृथिव्यापस्तथा तेजो वायुराकाशमेव च ।
पञ्चभूतात्मको देहो ज्ञातव्यश्च वरानने ॥ ९० ॥

अहो वरानने ! पृथ्वी, जल, आगी, वायु और आकाश इन पञ्चभूतवाले देह को जानना चाहिये ॥ ९० ॥

अस्थि मांसं त्वचा नाडी रोम चैव तु पञ्चमम् ।
पृथ्वीपञ्चगुणाः प्रोक्ता ब्रह्मज्ञानेन भाषितम् ॥ ९१ ॥

हाड़, मांस, खाल, नाड़ी और पांचवां लोम ये पृथ्वी के पांच गुण कहे हैं यह ज्ञान वेदान्तवेत्ता ब्रह्मज्ञानी कहते हैं ॥ ९१ ॥

शुक्रशोणितमज्जाश्च मूत्रं लालां च पञ्चमम् ।
आपः पञ्चगुणाः प्रोक्ता ब्रह्मज्ञानेन भाषितम् ॥ ९२ ॥

ब्रह्मज्ञानी लोग कहते हैं कि, बीज, रुधिर, मज्जा, मूत्र और पांचवां लार ये जलके पांच गुण कहे हैं ॥ ९२ ॥

क्षुधा तृषा तथा निद्रा कान्तिरालस्यमेव च ।
तेजः पञ्चगुणं प्रोक्तं ब्रह्मज्ञानेन भाषितम् ॥ ६३ ॥

ब्रह्मज्ञानी ने कहा है कि, क्षुधा, तृषा, निद्रा, कान्ति और आलस्य ये पांच अग्नि के गुण कहे हैं ॥ ६३ ॥

धावनं चलनं ग्रन्थिः संकोचनप्रसारणे ।
वायोः पञ्चगुणाः प्रोक्ता ब्रह्मज्ञानेन भाषितम् ॥ ६४ ॥

वेदान्ती लोग कहते हैं कि, दौड़ना, चलना, गांठना, सिकोड़ना और पसारना ये वायु के पांच गुण कहे हैं ॥ ६४ ॥

रागद्वेषौ तथा लज्जा भयं मोहश्च पञ्चमः ।
नभः पञ्चगुणं प्रोक्तं ब्रह्मज्ञानेन भाषितम् ॥ ६५ ॥

ब्रह्मज्ञाता वेदान्ती का कथन है कि, प्रीति, वैर, लज्जा, भय और पांचवां मोह ये आकाश के पांच गुण कहे हैं ॥ ६५ ॥

पृथ्व्याः पलानि पञ्चाशच्चत्वारिंशत्तथाम्भसः ।
अग्नेस्त्रिंशत्पुनर्वायोर्विंशतिर्नभसो दश ॥ ६६ ॥

इस काया में पृथ्वी पचास पल, जल चालीस पल, आगी तीस पल, वायु बीस पल और आकाश दश पल रहता है ॥ ६६ ॥

पृथिव्यां चिरकालेन लाभश्चापः क्षणाद्भवेत् ।
जायते पवने स्वल्पः सिद्धोप्यग्नौ विनश्यति ॥ ६७ ॥

लाभप्रश्न करने के समय पृथ्वीतत्त्व हो तो देर में लाभ होता है, यदि जलतत्त्व हो तो उसी क्षण लाभ होता है, यदि वायुतत्त्व प्रतीत हो तो थोड़ासा लाभ होजाता है और यदि अग्नि तत्त्व हो तो सिद्ध हुआ कार्य भी विनष्ट होजाता है ॥ ६७ ॥

पृथ्व्याः पञ्च ह्यपां भेदा गुणास्तेजो द्विवायुतः ।
नभस्येकगुणश्चैव तत्त्वज्ञानमिदं भवेत् ॥ ६८ ॥

पृथ्वी के पांच गुण, जलके चार गुण, आगी के तीन गुण, वायु के दो गुण और आकाश का एक गुण कहा है यह तत्त्वों का ज्ञान होता है ॥ ६८ ॥

फूत्कारकृत्प्रस्फुटिता विदीर्णा पतिता धरा ।

१ लाभोऽधिकं फलमित्यमरः ॥

दधाति सर्वकार्येषु अवस्थासदृशं फलम् ॥ ९९ ॥

फूत्कार की करनेहारी, फूटी, फटी व वृथा पड़ी हुई पृथ्वी सब कार्यों में अवस्था के अनुसार फल को देती है ॥ ९९ ॥

धनिष्ठा रोहिणी ज्येष्ठानुराधा श्रवणं तथा।
अभिजिदुत्तराषाढा पृथ्वीतत्त्वमुदाहृतम् ॥ २०० ॥

धनिष्ठा, रोहिणी, ज्येष्ठा, अनुराधा, श्रवण, अभिजित् और उत्तराषाढा ये सात नक्षत्र पृथ्वीतत्त्ववाले कहे हैं ॥ २०० ॥

पूर्वाषाढा तथाश्लेषा मूलमार्द्रा च रेवती।
उत्तराभाद्रपदातोयतत्त्वं शतभिषक् प्रिये ॥ १ ॥

अयि प्रिये ! पूर्वाषाढा, आश्लेषा, मूल, आर्द्रा, रेवती, उत्तराभाद्रपदा और शतभिषा ये सात नक्षत्र जलतत्त्ववाले कहे हैं ॥ १ ॥

भरणी कृत्तिका पुष्यो मघा पूर्वा च फाल्गुनी।
पूर्वाभाद्रपदा स्वाती तेजस्तत्त्वमिति प्रिये ! ॥ २ ॥

अहो प्रिये ! भरणी, कृत्तिका, पुष्य, मघा, पूर्वाफाल्गुनी, पूर्वाभाद्रपदा और स्वाती ये सात नक्षत्र अग्नितत्त्ववाले कहलाते हैं ॥ २ ॥

विशाखोत्तरफाल्गुन्यौ हस्तचित्रे पुनर्वसु।
अश्विनीमृगशीर्षे च वायुतत्त्वमुदाहृतम् ॥ ३ ॥

विशाखा, उत्तराफाल्गुनी, हस्त, चित्रा, पुनर्वसु, अश्विनी और मृगशिरा ये सात नक्षत्र वायुतत्त्ववाले कहे हैं ॥ ३ ॥

वहन्नाडीस्थितो दूतो यत्पृच्छति शुभाशुभम्।
तत्सर्वं सिद्धिमाप्नोति शून्ये शून्यं न संशयः ॥ ४ ॥

वहती हुई नाड़ी की ओर टिका हुआ दूत जिस शुभ व अशुभ को पूछता है वह सब सिद्धिको प्राप्त होता है और यदि शून्य में पूछे तो निस्सन्देह शून्य होजाता है ॥४॥

पूर्णोऽपि निर्गमश्वासे सुतत्त्वेऽपि न सिद्धिदः।
सूर्यश्चन्द्रोऽथवा नृणां संग्रहे सर्वसिद्धिदः ॥ ५ ॥

यदि शुभतत्त्ववाले निकले श्वास में सूर्यस्वर या चन्द्रस्वर पूर्ण होकर भी प्रतीत होवे तो मनुष्यों को सिद्धिदायक नहीं होता है और यदि दोनों स्वरों का संग्रह (मेल) हो तो सर्वसिद्धिदायक होजाता है ॥ ५ ॥

तत्त्वे रामो जयं प्राप्तः सुतत्त्वे च धनञ्जयः ।
कौरवा निहताः सर्वे युद्धे तत्त्वविपर्ययात् ॥ ६ ॥

शुभतत्त्व में ही रामजीने जयको पाया और शुभतत्त्व में ही अर्जुनजी विजयको प्राप्त हुए और तत्त्वों के विपरीत होनेसे सारे कौरवलोग लड़ाई में मारेगये ॥ ६ ॥

जन्मान्तरीयसंस्काराात्प्रसादादथवा गुरोः ।
केषांचिज्जायते तत्त्ववासना विमलात्मनाम् ॥ ७ ॥

अनेक जन्मान्तरों के संस्कारबलसे अथवा गुरुकी प्रसन्नता से कितेक विमल आत्मावाले जनों को तत्त्वों की वासना उपजती है ॥ ७ ॥

लं बीजं धरणीं ध्यायेच्चतुरस्रां सुपीतभाम् ।
सुगन्धं स्वर्णवर्णाभं प्राप्नुयाद्देहलाघवम् ॥ ८ ॥

जो योगी चौकोर व पीली पृथ्वीके तत्त्व में (लं) बीजका ध्यान करे तो वह सुगन्ध सोनेकीसी कान्ति और देहकी लघुताको पाता है ॥ ८ ॥

वं बीजं वारुणं ध्यायेत्तत्त्वमर्धशशिप्रभम् ।
क्षुत्तृष्णादिसहिष्णुत्वं जलमध्ये च मज्जनम् ॥ ९ ॥

अर्धचन्द्रसम प्रभावाले जलतत्त्व में जो (वं) बीज का ध्यान करे तो वह भूख, प्यास आदि सहने व पानी के बीच डुब्बी लगाने की सामर्थ्य को पाता है ॥ ९ ॥

रं बीजमग्निजं ध्यायेत्त्रिकोणमरुणप्रभम् ।
बह्वन्नपानभोक्तृत्वमातपाग्निसहिष्णुता ॥ १० ॥

तिकोने, लालवर्णवाले अग्नितत्त्वमें जो योगी (रं) बीज का ध्यान करे तो वह बहुतसे अन्नपान भक्षण करने की सामर्थ्य को पाताहुआ घाम व आगीका वेग भी सहसक्ता है ॥ १० ॥

यं बीजं पावनं ध्यायेद्वर्तुलं श्यामलप्रभम् ।
आकाशगमनाद्यं च पक्षिवद्गमनं तथा ॥ ११ ॥

गोलाकार, श्यामप्रभावाले वायुतत्त्व में जो (यं) बीजका ध्यान करे तो वह आकाश में गमन करने आदिकी और पक्षी के समान उड़ने की भी सामर्थ्य को पाता है ॥ ११ ॥

हं बीजं गगनं ध्यायेन्निराकारं बहुप्रभम् ।
ज्ञानं त्रिकालविषयमैश्वर्यमणिमादिकम् ॥ १२ ॥

निराकार अधिक प्रभाववाले आकाशतत्त्व में जो (हं) बीजका ध्यान करे तो वह त्रिकालविषयक ज्ञान व अणिमादि आठसिद्धिवाले ऐश्वर्य को भी पाता है ॥ १२ ॥

स्वरज्ञानी नरो यत्र धनं नास्ति ततः परम् ।
गम्यते स्वरज्ञानेन ह्यनायासं फलं भवेत् ॥ १३ ॥

जिस स्थानपर स्वरज्ञानी नर बसता है उससे परे अन्य कोई धन नहीं है-जो मनुष्य स्वरज्ञान से गमन करता है उसको अनायास (बेप्रयास) फल मिलता है ॥ १३ ॥

श्रीदेव्युवाच ।

देवदेव महादेव महाज्ञानं स्वरोदयम् ।
त्रिकालविषयं चैव कथं भवति शंकर ॥ १४ ॥

श्रीदेवीजी बोलीं कि अहो देवताओंके देव, महादेव, शिवशंकरजी ! यह स्वरोदय महाज्ञान है जोकि भूत, भविष्य, वर्तमान कालका प्रकाशक है वह कैसे होता है ? कहिये ॥ १४ ॥

ईश्वर उवाच ।

अर्थकालजयप्रश्नशुभाशुभमिति त्रिधा ।
एतत्त्रिकालविज्ञानं नान्यद्भवति सुन्दरि ॥ १५ ॥

श्रीमहादेवजी बोले कि, अहो सुन्दरि ! अर्थ (मतलब या धन) काल (समय) और जय के प्रश्न का जो शुभाशुभ वह तीन भांति का है यह स्वरोदयज्ञान त्रिकालविषयक विज्ञान कहलाता है इससे बढ़कर कोई ज्ञान नहीं होता है ॥ १५ ॥

तत्त्वे शुभाशुभं कार्यं तत्त्वे जयपराजयौ ।
तत्त्वे सुभिक्षदुर्भिक्षे तत्त्वं त्रिपदमुच्यते ॥ १६ ॥

तत्त्व मेंही शुभ, अशुभ कार्य होते हैं, तत्त्व मेंही जय-पराजय होते हैं और तत्त्व मेंही सुभिक्ष-दुर्भिक्ष टिके रहते हैं इसलिये तत्त्व ही त्रिपद कहलाता है ॥ १६ ॥

श्रीदेव्युवाच ।

देवदेव महादेव ! सर्वसंसारसागरे ।
किं नराणां परं मित्रं सर्वकार्यार्थसाधकम् ॥ १७ ॥

श्रीदेवीजी बोलीं कि, अहो देवाधिदेव, महादेव ! समस्त संसारसागर में मनुष्यों का परम मित्र व सर्वकार्यार्थों का साधक क्या है ? उसे कहिये ॥ १७ ॥

ईश्वर उवाच ।

प्राण एव परं मित्रं प्राण एव परः सखा ।
प्राणतुल्यः परो बन्धुर्नास्ति नास्ति वरानने ॥ १८ ॥

श्रीमहादेवजी बोले कि, अहो वरवदने ! प्राणही परम मित्र है, प्राणही परम सखा (मिलापी) है और प्राणों के बराबर अन्य बान्धव नहीं है नहीं है ॥ १८ ॥

श्रीदेव्युवाच ।

कथं प्राणस्थितो वायुर्देहः किं प्राणरूपकः ।
तत्त्वेषु संचरन्प्राणो ज्ञायते योगिभिः कथम् ॥ १६ ॥

श्रीपार्वतीजी बोलीं कि अहो देव ! वायु प्राण में कैसे टिका रहता है व देह प्राणरूप कैसे होसक्ता है और तत्त्वों में विचरता हुआ प्राण योगियों से कैसे जाना जाता है ॥ १६ ॥

श्रीशिव उवाच ।

कायानगरमध्यस्थो मारुतो रक्षपालकः ।
प्रवेशे दशभिः प्रोक्तो निर्गमे द्वादशाङ्गुलः ॥ २० ॥

श्रीसदाशिवजी बोले कि, अहो देवि ! कायारूपी नगर के बीच में टिका हुआ प्राणवायु रक्षपाल (चौकीदार) कहलाता है जोकि प्रवेशमें दश अंगुल और निकलने में बारह अंगुलवाला कहा है ॥ २० ॥

गमने तु चतुर्विंशन्नेत्रवेदास्तु धावने ।
मैथुने पञ्चषष्टिश्च शयने च शताङ्गुलम् ॥ २१ ॥

चलने में चौबीस अङ्गुल, दौड़ने में बयालीस अङ्गुल, मैथुन में पैंसठ अङ्गुल और सोने में सौ अङ्गुलवाला कहा है ॥ २१ ॥

प्राणस्य तु गतिर्देवि स्वभावाद् द्वादशाङ्गुलम् ।
भोजने वमने चैव गतिरष्टादशाङ्गुलम् ॥ २२ ॥

अहो देवि ! प्राणकी गति स्वभाव से बारह अङ्गुल की होती है और भोजन तथा वमन (क़य) करने के समय प्राणकी गति अट्ठारह अङ्गुल की होजाती है ॥ २२ ॥

एकाङ्गुलं कृते न्यूने प्राणे निष्कामता मता ।
आनन्दस्तु द्वितीये स्यात्कविशक्तिस्तृतीयके ॥ २३ ॥

जिस समय प्राणवायु एक अङ्गुल कमती कीजाती है उस समय योगी को निष्कामता

प्राप्त होती है जब दो अङ्गुल कमती की जाती है तब आनन्द मिलता है और जब तीन अङ्गुल कमती की जाती है तब कविता की शक्ति आकर प्राप्त होती है ॥ २३ ॥

वाचा सिद्धिश्चतुर्थे च दूरदृष्टिस्तु पञ्चमे ।
षष्ठे त्वाकाशगमनं चण्डवेगश्च सप्तमे ॥ २४ ॥

जब चार अङ्गुल कम की जाती है तो वाणी की सिद्धि होती है पांच अङ्गुल कम की जाती है तो दूरदृष्टि छः अङ्गुल कम होने पर आकाश में चलना और सात अङ्गुल कम होजाने पर चण्डवेग होजाता है ॥ २४ ॥

अष्टमे सिद्धयश्चैव नवमे निधयो नव ।
दशमे दशमूर्त्तीश्च छाया नैकादशे भवेत् ॥ २५ ॥

आठ अङ्गुल कम करलेने पर आठों सिद्धियों, नव अङ्गुल कम हो ने पर नवनिधियों, दश अङ्गुल कम होजाने पर दश मूर्तियों (अनेकरूपों) की प्राप्ति होती है और ग्यारह अङ्गुल कम होने पर छायाअभाव यानी अन्तर्धान की शक्ति प्राप्त होती है ॥ २५ ॥

द्वादशे हंसचारश्च गङ्गामृतरसं पिबेत् ।
आनखाग्रं प्राणपूर्णे कस्य भक्ष्यं च भोजनम् ॥ २६ ॥

बारह अङ्गुल प्राणकी गति कमतीकर लेवे तो वह योगी हंस के समान चलता हुआ गङ्गामृतरस को पीता है और यदि शिखा से लेकर नखपर्यन्त प्राण पूर्ण होजावे तो किस का भक्ष्य व किसका भोजन है ॥ २६ ॥

एवं प्राणविधिः प्रोक्तः सर्वकार्यफलप्रदः ।
जायते गुरुवाक्येन न विद्याशास्त्रकोटिभिः ॥ २७ ॥

इस प्रकार सब कार्यों के फलकी देनेवाली प्राणविधि कही है कि जिसका ज्ञान केवल गुरुके वाक्य सेही उपजता है करोड़ों विद्यायें व शास्त्रों से नहीं ॥ २७ ॥

प्रातश्चन्द्रो रविः सायं यदि दैवान्न लभ्यते ।
मध्याह्नान्मध्यरात्राच्च परतस्तु प्रवर्तते ॥ २८ ॥

यदि प्रभात समय चन्द्रस्वर व सायं समय सूर्यस्वर दैवयोग से न मिलता हो तो दोपहर या आधी रात के उपरान्त मिलजाते हैं ॥ २८ ॥

दूरयुद्धे जयी चन्द्रः समासन्ने दिवाकरः ।
वहन्नाड्यागतः पादः सर्वसिद्धिप्रदायकः ॥ २९ ॥

यदि दूरदेशी युद्ध में चन्द्रमा का स्वर होतो जयकारी होता है और यदि समीपी युद्ध में सूर्य का स्वर बहता हो तो जयकारी होता है और यदि बहती हुई नाड़ी में चलने के स-मय पैर रक्खा जावे तो सारी सिद्धियों को देता है ॥ २९ ॥

यात्रारम्भो विवाहश्च प्रवेशो नगरादिके ।
शुभकार्याणि सिध्यन्ति चन्द्रचारेषु सर्वदा ॥ ३० ॥

यात्रारम्भ, विवाह, नगर व गृह आदिका प्रवेश और शुभ कार्य ये चन्द्रस्वर के चार में सदैव सिद्ध होते हैं ॥ ३० ॥

अयनतिथिदिनेशैः स्वीयतत्त्वे च युक्ते
यदि वहति कदाचिद्दैवयोगेन पुंसाम् ।
स जयति रिपुसैन्यं स्तम्भमात्रस्वरेण
प्रभवति न च विघ्नं केशवस्यापि लोके ॥ ३१ ॥

कदापि दैवयोग से पुरुषों का अपना स्वर व तत्त्व अयन, तिथि और दिन के स्वामियों से युक्त होता हुआ यदि बहता हो तो वह स्वर के रोकनेमात्र सेही शत्रु सेना को जीत लेता है और वैकुण्ठलोक में भी उसको विघ्न नहीं सताता है ॥ ३१ ॥

रक्ष जीवं रक्ष जीवं जीवाङ्गे परिधाय च ।
जीवो जपति यो युद्धे जीवञ्जयति मेदिनीम् ॥ ३२ ॥

अपने अङ्गपर वस्त्रों को पहिरकर जो जीवयुद्ध में (जीवं रक्ष जीवं रक्ष) ऐसा जपता है वह पुरुष जीता हुआ सारी पृथ्वी को जीतता है ॥ ३२ ॥

भूमौ जले च कर्तव्यं गमनं शान्तिकर्मसु ।
वह्नौ वायौ प्रदीप्तेषु खे पुनर्नो भयेष्वपि ॥ ३३ ॥

शान्तिकर्मों में पृथ्वीतत्त्व व जलतत्त्व में गमन करना चाहिये और उग्रकर्मों में तेज तत्त्व व वायुतत्त्व में गमन करना चाहिये और आकाशतत्त्व में पूर्वोक्त दोनों कर्मों के उपस्थित होने पर गमन नहीं करना चाहिये ॥ ३३ ॥

जीवेन शस्त्रं बध्नीयाज्जीवेनैव विकाशयेत् ।
जीवेन प्रक्षिपेच्छस्त्रं युद्धे जयति सर्वदा ॥ ३४ ॥

जीवस्वरसे शस्त्रको बांधे यानी जिस तरफ़ का स्वर चलता हो उसी तरफ़के हाथ से हथियार को धारे व जीवस्वर से ही हथियार को निकाले व जीवस्वरसे ही हथियार को फेंके तो वह योद्धा पुरुष लड़ाई में सदैव जयको पाता है ॥ ३४ ॥

आकृष्य प्राणपवनं समारोहेत वाहनम्।
समुत्तरे पदं दद्यात्सर्वकार्याणि साधयेत्॥ ३५॥

जो पुरुष प्राणवायु को खींचकर घोड़े आदि सवारी पर चढ़े और पवनके उतारपर
ैर को रकाब में देवे तो वह सब कामों को साधता है॥ ३५॥

अपूर्णे शत्रुसामग्रीं पूर्णे वा स्वबलं तथा।
कुरुते पूर्णतत्त्वस्थो जयत्येको वसुन्धराम्॥ ३६॥

पूर्णतत्त्व में टिका हुआ जो पुरुष अपूर्ण स्वर में शत्रुकी सामग्री (सेना) और पूर्ण
वर में अपनी सेना को स्थापित करता है वह अकेलाही पृथ्वी को जीतता है॥ ३६॥

या नाडी वहते चाङ्गे तस्यामेवाधिदेवता।
सम्मुखेऽपि दिशा तेषां सर्वकार्यफलप्रदा॥ ३७॥

जिन वीरों के अङ्ग में जो नाड़ी बहती हो उसका अधिदेवता और उसकी दिशा सा-
ने हो तो उनको सर्वकार्यों का फल देती है॥ ३७॥

आदौ तु क्रियते मुद्रा पश्चाद्युद्धं समाचरेत्।
सर्पमुद्रा कृता येन तस्य सिद्धिर्न संशयः॥ ३८॥

पुरुष पहले मुद्रा करलेवे पीछे से युद्ध को करे और जिसने सर्पमुद्राको किया है उसकी
निस्सन्देह सिद्धि होती है॥ ३८॥

चन्द्रप्रवाहेऽप्यथ सूर्यवाहे भटाः समायान्ति च योद्धुकामाः।
समीरणस्तत्त्वविदां प्रतीतो या शून्यता सा प्रतिकार्यनाशम्॥ ३९॥

यदि चन्द्रमा का स्वर या सूर्य का स्वर बहता हो और तत्त्ववेत्ताओं को वायुतत्त्व भी
प्रतीत होता हो तो लड़नेवाले योद्धालोग भलीभांति आते हैं और यदि शून्यता प्रतीत
होती हो यानी आकाशतत्त्व बहता हो तो प्रतिकार्यों को विनाश करता है॥ ३९॥

यां दिशं वहते वायुर्युद्धं तद्दिशि दापयेत्।
जयत्येव न संदेहः शक्रोऽपि यदि चाग्रतः॥ ४०॥

जिस दिशा में वायुतत्त्व बहता हो उसी दिशा में फ़ौज को भेजे यदि इन्द्रभी आगे
आजावे तोभी निस्सन्देह जीतता है॥ ४०॥

यत्र नाड्यां वहेद्वायुस्तदङ्गे प्राणमेव च।
आकृष्य गच्छेत्कर्णान्तं जयत्येव पुरन्दरम्॥ ४१॥

जिस नाड़ी में वायुतत्त्व बहता हो उसी नाड़ी की प्राणवायुको कर्णपर्यन्त खींचकर जो योद्धा युद्ध के लिये जाता है वह इन्द्रकोभी जीतसक्ता है ॥ ४१ ॥

प्रतिपक्षप्रहारेभ्यः पूर्णाङ्गं योभिरक्षति ।
न तस्य रिपुभिः शक्तिर्बलिष्ठैरपि हन्यते ॥ ४२ ॥

जो योद्धा वैरियोंके प्रहारों से अपने सारे अङ्गों की रक्षा करता है उसकी शक्तिको बलवान् वैरीभी नहीं विनाश करसक्ते हैं ॥ ४२ ॥

अङ्गुष्ठतर्जनीवंशे पादाङ्गुष्ठे तथाध्वनिः ।
युद्धकाले च कर्तव्यो लक्षयोद्धाजयी भवेत् ॥ ४३ ॥

अँगूठा व तर्जनी अँगुली की पोर तथा पैरके अँगूठे में जो योद्धा युद्धके समय ध्वनिको करे तो लाख योद्धाओं को जीतसक्ता है ॥ ४३ ॥

निशाकरे रवौ चारे मध्ये यस्य समीरणः ।
स्थितो रक्षेद्दिगन्तानि जयकाङ्क्षी गतः सदा ॥ ४४ ॥

जिसके चन्द्रस्वर व सूर्यस्वर के चलने के बीच में वायुतत्त्व टिका हो तो युद्धमें गया हुआ जयाभिलाषी वीर दिगन्तों की सदैव रक्षा करता है ॥ ४४ ॥

श्वासप्रवेशकाले तु दूतो जल्पति वाञ्छितम् ।
तस्यार्थः सिद्धिमायाति निर्गमे नैव सुन्दरि ॥ ४५ ॥

अहो सुन्दरि ! जिस मनुष्य के श्वास प्रवेश करने के समय दूत वाञ्छित कार्य को कहता है तो उसका अर्थ सिद्ध होजाता है और जब श्वास निकलने के समय दूत वाञ्छित कार्य को कहता है तो उसका अर्थ सिद्ध नहीं होता है ॥ ४५ ॥

लाभादीन्यपि कार्याणि पृष्टानि कीर्तितानि च ।
जीवे विशति सिद्ध्यन्ति हानिर्निस्सारणे भवेत् ॥ ४६ ॥

जिस समय प्राणवायु प्रविष्ट होती है उस समय पूछे या कहे हुए लाभादिक कार्य सिद्ध होजाते हैं और जब प्राणवायु निकलती है उस समय पूर्वोक्त कार्यों का विनाश होजाता है ॥ ४६ ॥

नरे दक्षा स्वकीया च स्त्रियां वामा प्रशस्यते ।
कुम्भको युद्धकाले च तिस्रो नाड्यस्त्रयीगतिः ॥ ४७ ॥

पुरुषों की अपनी दाहनी नाड़ी व स्त्रियों की वामनाड़ी और युद्ध में कुम्भकनाड़ी प्रशस्त होती है इस भांति तीन नाड़ियां हैं और उनकी तीनही गति हैं ॥ ४७ ॥

हकारस्य सकारस्व विना भेदं स्वरः कथम् ।
सोहं हंसपदेनैव जीवो जयति सर्वदा ॥ ४८ ॥

हकार और सकार के भेद विना स्वरका ज्ञान कैसे होसक्ता है ? इससे जीव 'सोहं'
ौर 'हंस' इन दो पदों सेही सदैव जयको प्राप्त होता है ॥ ४८ ॥

शून्याङ्कं पूरितं कृत्वा जीवाङ्के गोपयेज्जयम् ।
जीवाङ्के घातमाप्नोति शून्याङ्कं रक्षते सदा ॥ ४९ ॥

यदि शून्याङ्ग को पूरितकर जीवाङ्ग की रक्षा करे तो जयको पाता है और यदि जीवाङ्ग
रक्षा न करे तो घात को पाता है इसलिये शून्याङ्ग की सदैव रक्षा करे ॥ ४९ ॥

वामे वा यदि वा दक्षे यदि पृच्छति पृच्छकः ।
पूर्णे घातो न जायेत शून्ये घातं विनिर्दिशेत् ॥ ५० ॥

यदि बाईं या दाहिनी तरफ़ बैठा हुआ पूछनेवाला पूछे उस समय पूर्णस्वर बहता हो
घात नहीं होगा और यदि शून्यस्वर प्रतीत हो तो घात (नाश) कहना चाहिये ॥ ५० ॥

भूतत्वेनोदरे घातः पदस्थानेऽम्बुना भवेत् ।
ऊरुस्थानेऽग्नितत्त्वेन करस्थाने च वायुना ॥ ५१ ॥

पूछने के समय यदि पृथ्वीतत्त्व प्रतीत हो तो उदर में, जलतत्त्व हो तो पैरों में, अग्नि
व हो तो जङ्घाओं में घाव होगा और यदि वायुतत्त्व प्रतीत हो तो हाथों में हथियार
गेगा ॥ ५१ ॥

शिरसि व्योमतत्त्वेन ज्ञातव्यो घातनिर्णयः ।
एवं पञ्चविधो घातः स्वरशास्त्रे प्रकाशितः ॥ ५२ ॥

यदि आकाशतत्त्व प्रतीत हो तो शीश में घावका निर्णय जानना चाहिये इस भांति
वरशास्त्र में पांच प्रकार का घाव प्रकाशित किया है ॥ ५२ ॥

युद्धकाले यदा चन्द्रः स्थायी जयति निश्चितम् ।
यदा सूर्यप्रवाहस्तु यायी विजयते तदा ॥ ५३ ॥
जयमध्ये तु सन्देहे नाडीमध्यं तु लक्षयेत् ।
सुषुम्नायां गते प्राणे समरे शत्रुसंकटम् ॥ ५४ ॥

युद्ध के समय जब चन्द्रमा का स्वर बहता हो तो स्थायी (ठहरनेवाले) का विजय
नश्चय कर होता है और जब सूर्यस्वर का प्रवाह चलता हो तो यायी (चढ़नेवाले)

का विजय होता है और यदि विजय में सन्देह हो तो नाड़ी का मध्य देखे यदि सुषुम्ना नाड़ी में प्राण चला गया हो तो संग्राम में शत्रुको संकट आनकर घेरलेता है ॥ ५३ । ५४ ॥

यस्या नाड्या भवेच्चारस्तां दिशं युधि संश्रयेत् ।
तदासौ जयमाप्नोति नात्र कार्या विचारणा ॥ ५५ ॥

जिस नाड़ी का चलना हो उसी दिशा में जाकर संग्राम में खड़ा होवे तो वह लड़ने वाला वीर विजय को पाता है इसमें विचार नहीं करना चाहिये ॥ ५५ ॥

यदि संग्रामकाले तु वामनाडी यदा वहेत् ।
स्थायिनो विजयं विद्याद्रिपुवश्योदयोऽपि च ॥ ५६ ॥

यदि संग्राम के समय वामनाड़ी का स्वर बहता हो तो स्थायी का विजय जानना और यायी का शत्रुके वश में पड़जाने को समझना चाहिये ॥ ५६ ॥

यदि संग्रामकाले तु सूर्यस्तु व्यावृतो वहेत् ।
तदा यायिजयं विद्यात्सदेवासुरमानवे ॥ ५७ ॥

यदि लड़ाई लड़ने के समय सूर्य का स्वर लगातार बहता रहे तो देवता व राक्षस समेत मानवीयुद्ध में यायी का विजय जानना चाहिये ॥ ५७ ॥

रणे हरति शत्रुस्तं वामायां प्रविशेन्नरः ।
स्थानं विषुवचारेण जयः सूर्येण धावता ॥ ५८ ॥

जो मनुष्य वामनाड़ी स्वर के चलते समय लड़ाई में जाता है तो उसको वैरी मार लेता है और यदि सुषुम्ना नाड़ी के बहते हुए लड़ाई में जावे तो स्थान मिलता यानी युद्ध नहीं होता है और यदि सूर्यस्वर के बहते धावा करे तो विजय को पाता है ॥ ५८ ॥

युद्धद्वयकृते प्रश्ने पूर्णस्य प्रथमे जयः ।
रिक्ते चैव द्वितीयस्तु जयी भवति नान्यथा ॥ ५९ ॥

जिस समय युद्धविषयक दो प्रश्न किये जावें उस समय पूर्णस्वर बहता हो तो पहली लड़ाई में जय होती है और यदि रिक्तस्वर चलता हो तो दूसरी लड़ाई में विजय मिलती है अन्यथा नहीं होसक्ता है ॥ ५९ ॥

पूर्णनाडीगतः पृष्ठे शून्याङ्गं च तदाग्रतः ।
शून्यस्थाने कृतः शत्रुर्म्रियते नात्र संशयः ॥ ६० ॥

यदि पूर्णनाड़ी में गया हो तो वैरी पीठ देकर भाग जाता है और यदि शून्यनाड़ी का अङ्ग हो तो शत्रु आगे आता है अथवा पूर्णस्वर बहता हो तो यायी पीछे से धावा करे

और जो शून्य नाड़ी हो तो आगे से धावा करे तो विजयी होता है क्योंकि शून्य स्थान में किया हुआ शत्रु निःसन्देह मरजाता है ॥ ६० ॥

वामचारे समं नाम यस्य तस्य जयो भवेत् ।
पृच्छको दक्षिणे भागे विजयी विषमाक्षरः ॥ ६१ ॥

वामस्वर के चलते समय वामभाग में टिका हुआ पृच्छक युद्ध का प्रश्न करे कि जिसका नाम समान अक्षरोंवाला हो तो उसका विजय होता है और यदि दाहिने स्वर के चलते दाहिनी तरफ़ बैठा हुआ पूछनेवाला लड़ाई को पूछे कि जिसका नाम विषम अक्षरोंवाला हो तो वह विजयी होता है और यदि समान अक्षरवाला नाम हो तो पराजय होजाता है ॥ ६१ ॥

यदा पृच्छति चन्द्रस्य तदा सन्धानमादिशेत् ।
पृच्छेद्यदा तु सूर्यस्य तदा जानीहि विग्रहम् ॥ ६२ ॥

यदि चन्द्रमा के स्वर में पृच्छक पूछता है तो सन्धि (मिलाप) होजाने को कहना चाहिये और यदि सूर्यस्वर के चलते समय पूछे तो लड़ाई को जानो ॥ ६२ ॥

पार्थिवे च समं युद्धं सिद्धिर्भवति वारुणे ।
युद्धेहि तेजसो भङ्गो मृत्युर्वायौ नभस्यपि ॥ ६३ ॥

यदि पृथ्वीतत्त्व में युद्ध का आरम्भ हो तो समान युद्ध होता है यानी लड़ाई में बराबरी रहती है, यदि जलतत्त्व में युद्ध हो तो सिद्धि होती है यदि अग्नितत्त्व में युद्ध हो तो भङ्ग होता है और यदि वायु व आकाशतत्त्व में लड़ाई हो तो मौत होजाती है ॥ ६३ ॥

निमित्तकप्रमादाद्वा यदा न ज्ञायतेऽनिलः ।
पृच्छाकाले तदा कुर्यादिदं यत्नेन बुद्धिमान् ॥ ६४ ॥

यदि किसी कारण या असावधानी से प्रश्न के समय प्राणवायु नहीं जानाजाता हो तो बुद्धिमान् मनुष्यको यत्न के साथ यह काम करना चाहिये ॥ ६४ ॥

निश्चलां धारणां कृत्वा पुष्पं हस्तान्निपातयेत् ।
पूर्णाङ्गे पुष्पपतनं शून्यं वा तत्परं भवेत् ॥ ६५ ॥

निश्चल धारणा को कर फूलको हाथ से गिरावे यदि पूर्णाङ्ग में फूलका पतन हो तो कार्य पूर्ण होजाता है और यदि शून्याङ्ग में फूल का गिरना हो तो कार्य निष्फलता को पाता है ॥ ६५ ॥

तिष्ठन्नुपविशन्वापि प्राणमाकर्षयन्निजम् ।

मनोभङ्गमकुर्वाणः सर्वकार्येषु जीवति ॥ ६६ ॥

जो मनुष्य खड़ा होता या बैठता या मन को नहीं विगाड़ता हुआ अपनी प्राणवायु को खींचता है तो वह समस्त कार्यों में जीता है यानी उसके सम्पूर्ण कार्य सिद्ध होजाते हैं ॥ ६६ ॥

न कालो विविधं घोरं न शस्त्रं नच पन्नगाः ।
न शत्रुव्याधिचौराद्याः शून्यस्था नाशितुं क्षमाः ॥ ६७ ॥

काल, अनेक भयकारी हथियार, सांप, वैरी, व्याधि (रोग) और चौर आदि ये शून्यस्थान में टिकेहुए विनाश करने को समर्थ नहीं होसक्के हैं ॥ ६७ ॥

जीवेन स्थापयेद्वायुं जीवेनारम्भयेत्पुनः ।
जीवेन क्रीडते नित्यं द्यूते जयति सर्वथा ॥ ६८ ॥

जीवस्वरसे वायुको स्थापित करे व जीवसेही आरम्भ करे व जीवस्वरसेही हमेशा जुआ खेलता रहे तो सर्वथा जुआ में जय होती है ॥ ६८ ॥

स्वरज्ञानिबलादग्रे निष्फलं कोटिधा भवेत् ।
इहलोके परत्रापि स्वरज्ञानी बली सदा ॥ ६९ ॥

स्वरज्ञानी के बलके सामने करोड़ों प्रकारका बल निष्फल होजाता है क्योंकि इस लोक या परलोक में स्वरज्ञानीही सदैव बलवान् होता है ॥ ६९ ॥

दशशतायुतं लक्षं देशाधिपबलं क्वचित् ।
शतक्रतुसुरेन्द्राणां बलं कोटिगुणं भवेत् ॥ ७० ॥

कितेक मनुष्य को दश, कितेक को सौ, कितेक को दश हज़ार, कितेक को लाख, कितेक को देशाधिपत्य का बल होता है इससे इन्द्र और ब्रह्मा आदि देवताओं का बल कोटिगुना होता है ऐसेही सब बलों में से स्वरका बल कोटिगुना कहा है ॥ ७० ॥

देव्युवाच ।

परस्परं मनुष्याणां युद्धे प्रोक्तो जयस्त्वया ।
यमयुद्धे समुत्पन्ने मनुष्याणां कथं जयः ॥ ७१ ॥

श्रीदेवीजी बोलीं कि मनुष्यों के परस्पर युद्ध में आपने जय को कहा जब यमराज के साथ युद्ध हो तब मनुष्यों की जय कैसे होसक्की है ॥ ७१ ॥

ईश्वर उवाच ।

ध्यायेद्देवं स्थिरो जीवं जुहुयाज्जीवसंगमे ।

इष्टसिद्धिर्भवेत्तस्य महालाभो जयस्तथा ॥ ७२ ॥

श्रीसदाशिवजी बोले कि, अहो प्राणप्रिये! जो मनुष्य स्थिर होकर इष्टदेवका ध्यान करे और जीवसंगम (नाभिचक्र) में जीव (प्राणवायु) का होम करे तो उस मनुष्य की इष्टसिद्धि व महालाभ होकर जय प्राप्त होती है ॥ ७२ ॥

निराकारात्समुत्पन्नं साकारं सकलं जगत्।
तत्साकारं निराकारं ज्ञाने भवति तत्क्षणात् ॥ ७३ ॥

निराकारसे सारा जगत् साकार होकर उपजा है और जब ज्ञान होता है तब वह साकार (जगत्) उसीक्षण निराकार होजाता है ॥ ७३ ॥

देव्युवाच।

नरयुद्धं यमयुद्धं त्वया प्रोक्तं महेश्वर।
इदानीं देवदेवानां वशीकरणकं वद ॥ ७४ ॥

श्रीपार्वतीजी बोलीं कि हे देवाधिदेव महेश्वरजी! नरयुद्ध और यमयुद्ध को तो आपने कहा अब वशीकरण को भी बतलाइये ॥ ७४ ॥

ईश्वर उवाच।

चन्द्रं सूर्येण चाकृष्य स्थापयेज्जीवमण्डले।
आजन्मवशगा रामा कथितेयं तपोधनैः ॥ ७५ ॥

श्रीमहादेवजी बोले कि, स्त्री के चन्द्रस्वर को सूर्यस्वर से खींचकर जीवमण्डल में स्थापित करे तो वह रमणी जन्मपर्यन्त वश में रहती है यह तपस्वियोंने कहा है ॥ ७५ ॥

जीवेन गृह्यते जीवो जीवो जीवस्य दीयते।
जीवस्थाने गतो जीवो बाला जीवान्तकारकः ॥ ७६ ॥

पुरुष जीवस्वर से स्त्री के जीवस्वर को ग्रहण करे और रमणी के जीवस्वर में अपना जीवस्वर दे इस भांति जीवके स्थान में गया हुआ जीव जिसका हो वह नर जन्मपर्यन्त रमणी के वश में रहता है ॥ ७६ ॥

रात्र्यन्तयामवेलायां प्रसुप्ते कामिनीजने।
ब्रह्मजीवं पिबेद्यस्तु बालाप्राणहरो नरः ॥ ७७ ॥

रात्रिके पिछले प्रहर के समय कामिनीजनके सोते हुए जो पुरुष ब्रह्मजीव (चन्द्रस्वर) को पीता है वह मनुष्य स्त्रियों के प्राणों को वश में करता है ॥ ७७ ॥

अष्टाक्षरं जपित्वा तु तस्मिन्काले गते सति ।
तत्क्षणं दीयते चन्द्रो मोहमायाति कामिनी ॥ ७८ ॥

उस समय के व्यतीत होजाने पर अष्टाक्षर मन्त्र को जप कर जो पुरुष अपना चन्द्रस्वर स्त्री को देता है तो वह कामिनी उसीक्षण मोह को प्राप्त होती है ॥ ७८ ॥

शयने वा प्रसङ्गे वा युवत्यालिङ्गनेऽपि वा ।
यः सूर्येण पिबेच्चन्द्रं स भवेन्मकरध्वजः[1] ॥ ७९ ॥

शयन करने के समय या स्त्रीप्रसंग या युवती के आलिङ्गन में भी जो पुरुष सूर्यस्वर से चन्द्रस्वर को पीता है वह कामदेव के समान मोह करनेवाला होता है ॥ ७९ ॥

शिवं[2] आलिङ्ग्यते शक्त्या[3] प्रसङ्गे दक्षिणेऽपि वा ।
तत्क्षणादापयेद्यस्तु मोहयेत्कामिनीशतम् ॥ ८० ॥

चन्द्रस्वर से सूर्यस्वर आलिङ्गन किया जाता है इसलिये दक्षिणावर्त प्रसंग के होते हुए जो पुरुष कामिनी के चन्द्रस्वर में अपने सूर्यस्वर को देता है तो वह सैकड़ों कामिनियों को मोहित कर सक्ता है ॥ ८० ॥

सप्तनवत्रयः पञ्चवारान्संगस्तु सूर्यभे ।
चन्द्रे द्वितुर्यषट् कृत्वा वश्या भवति कामिनी ॥ ८१ ॥

स्त्रीके चन्द्रस्वरको अपने सूर्यस्वर में देने के बाद सात ७ नव ९ तीन ३ या पांचवार संग होजावे अथवा स्त्रीके चन्द्रस्वरमें अपना सूर्यस्वर देकर दो २ चार ४ या छः ६ बार मिलजावे तो वह कामिनी वशमें होती है ॥ ८१ ॥

सूर्यचन्द्रौ समाकृष्य सर्पाक्रान्त्याधरोष्ठयोः ।
महापद्मे मुखं स्पृष्ट्वा वारं वारमिदं चरेत् ॥ ८२ ॥

अपने सूर्य व चन्द्रस्वर को सर्प की गति से खींच कर अधरोंष्ठों पर स्त्री के मुखमें अपना मुख लगाकर वारम्वार पूर्वोक्त प्रकार से चन्द्र और सूर्यस्वरका मेल करता रहे ॥ ८२ ॥

आप्राणमिति पद्मस्य यावन्निद्रावशंगता ।
पश्चाज्जागर्तिवेलायां चोष्यते गलचक्षुषी ॥ ८३ ॥

जब तक स्त्री निद्रा के वश में रहे तबतक पूर्वोक्तप्रकार से रमणी के मुखपद्म का पान करे पीछे जागने के समय गला व नेत्रों का चुम्बन करे ॥ ८३ ॥

---

१ कामदेवः २ सूर्यस्वरः ३ चन्द्रस्वरेण ॥

अनेन विधिना कामी वशयेत्सर्वकामिनीः।
इदं न वाच्यमन्यस्मिन्नित्याज्ञा पारमेश्वरी॥ ८४॥

कामीपुरुष इसी विधि से सब कामिनियों को वश में करता है यह वशीकरण ज्ञान अन्यलम्पट पुरुष से नहीं कहना चाहिये यह परमेश्वर की आज्ञा है॥ ८४॥

इति वशीकरणम्॥

अथ गर्भप्रकरणम्।

ऋतुकालभवा नारी पञ्चमेऽह्नि यदा भवेत्।
सूर्याचन्द्रमसोर्योगे सेवनात्पुत्रसंभवः॥ ८५॥

ऋतुकाल के अनन्तर जब स्त्री को पांचवां दिन हो और पुरुष का सूर्यस्वर व स्त्री का चन्द्रस्वर बहता हो उस समय सेवन करने से पुत्रका संभव होता है॥ ८५॥

शङ्खवल्लीगवां दुग्धे पृथ्व्यापो वहते यदा।
भर्तुरेव वदेद्वाक्यं दर्पं देहि त्रिभिर्वचः॥ ८६॥

जिस समय पृथ्वी और जलतत्त्व बहते हों उस समय स्त्री को गौके दूध में शङ्खवल्ली को खिलावे फिर रमणी अपने स्वामी से तीन बार भोग करने की प्रार्थना करे॥ ८६॥

ऋतुस्नाता पिबेन्नारी ऋतुदानन्तु योजयेत्।
रूपलावण्यसम्पन्नो नरसिंहः प्रसूयते॥ ८७॥

जब ऋतुस्नाता रमणी उक्त औषधका पान करलेवे उस समय पुरुष ऋतुदान को देवे तो रूप व सुन्दरता से संपन्न होता हुआ नरसिंहरूप होकर बालक पैदा होता है॥ ८७॥

सुषुम्ना सूर्यवाहेन ऋतुदानं तु योजयेत्।
अङ्गहीनः पुमान्यस्तु जायते त्रासविग्रहः॥ ८८॥
विषमाङ्के दिवारात्रौ विषमाङ्के दिनाधिपः।
चन्द्रनेत्राग्नितत्त्वेषु बन्ध्यापुत्रत्वमाप्नुयात्॥ ८९॥

जो मनुष्य सूर्यस्वर के प्रवाह के साथ सुषुम्ना स्वर के बहने के समय ऋतुदान को देता है तो उसके अङ्गहीन व कुरूप होकर बालक उपजता है व ऋतु के अनन्तर विषमाङ्कवाले दिन-रात्रि हों व विषमाङ्क में ही सूर्यस्वर बहता हो और पृथ्वी, जल व अग्नितत्त्व बहते हों उस समय बन्ध्या रमणी भी यदि गर्भको धारे तो पुत्रको पाती है॥ ८८। ८९॥

ऋत्वारम्भे रविः पुंसां स्त्रीणां चैव सुधाकरः।

उभयोः संगमे प्राप्ते बन्ध्या पुत्रमवाप्नुयात् ॥ ९० ॥

यदि ऋतुकालके आरम्भ में पुरुषों का सूर्यस्वर चलता हो व स्त्रियों का चन्द्रस्वर बहता हो उस समय दोनों का संगम प्राप्त होजावे तो बन्ध्या भी पुत्रको पाती है ॥ ९० ॥

ऋत्वारम्भे रविः पुंसां शुक्रान्ते च सुधाकरः ।
अनेन क्रमयोगेन नादत्ते देवि दारकम् ॥ ९१ ॥

यदि भोग के आरम्भ में पुरुषों का सूर्यस्वर चले और वीर्यपात के समय चन्द्रस्वर बहने लगे तो हे देवि ! इस क्रमयोग से स्त्री गर्भको नहीं धारती है ॥ ९१ ॥

चन्द्रनाडी यदा प्रश्ने गर्भे कन्या तदा भवेत् ।
सूर्यो भवेत्तदा पुत्रो द्वयोर्गर्भो विहन्यते ॥ ९२ ॥

यदि गर्भिणी के प्रश्न समय चन्द्रनाड़ी चले तो गर्भ में कन्या उपजती है और यदि सूर्य स्वर बहे तो पुत्र होता है और यदि दोनों चलते हों तो गर्भही विनष्ट होजाता है ॥ ९२ ॥

पृथ्वी पुत्री जले पुत्रः कन्यका तु प्रभञ्जने ।
तेजसि गर्भपातः स्यान्नभस्यपि नपुंसकः ॥ ९३ ॥

यदि प्रश्न के समय पृथ्वीतत्त्व हो तो पुत्री, जलतत्त्व हो तो पुत्र, वायुतत्त्व हो तो कन्या, तेजतत्त्व हो तो गर्भ का पात और यदि आकाशतत्त्व हो तो नपुंसक पैदा होता है ॥ ९३ ॥

चन्द्रे स्त्री पुरुषः सूर्यो मध्यमार्गे नपुंसकः ।
गर्भप्रश्ने यदा दूतः पूर्णे पुत्रः प्रजायते ॥ ९४ ॥

यदि गर्भप्रश्न के समय चन्द्रस्वर चलता हो तो पुत्री, सूर्यस्वर चलता हो तो पुत्र, सुषुम्ना स्वर हो तो नपुंसक होता है और यदि पूर्णस्वर में दूत प्रश्न करे तो पुत्र पैदा होता है ॥ ९४ ॥

शून्ये शून्यं युगे युग्मं गर्भपातश्च संक्रमे ।
तत्त्ववित्स विजानीयात्कथितं तत्तु सुन्दरि ॥ ९५ ॥

अहो सुन्दरि ! पूछनेवाला शून्यस्वर में प्रश्न करे तो शून्य, दोनों स्वर में जो पूछे तो जोड़ा (कन्या, पुत्र) पैदा होता है और यदि स्वरों का संक्रम या सुषुम्ना हो तो गर्भ का पात तत्त्ववेत्ताओं को जानना चाहिये ॥ ९५ ॥

गर्भाधानं मारुते स्याच्च दुःखी दिक्षु ख्यातो वारुणे सौख्ययुक्तः ।
गर्भस्रावः स्वल्पजीवश्च वह्नौ भोगी भव्यः पार्थिवेनार्थयुक्तः ॥ ९६ ॥

यदि वायुतत्त्व में गर्भाधान हो तो दुःखी, जलतत्त्व में हो तो दिशाओं में विख्यात होकर सुखी, अग्नितत्त्व में हो तो गर्भपात या अल्पजीवी होता है और यदि पृथ्वीतत्त्व हो तो भोगी व धनी होकर भाग्यवान् पुत्र पैदा होता है ॥ ६६ ॥

धनवान्सौख्ययुक्तश्च भोगवानर्थसंस्थितिः ।
स्यान्नित्यं वारुणे तत्त्वे व्योम्नि गर्भो विनश्यति ॥ ६७ ॥

यदि जलतत्त्व में गर्भाधान हो तो धनवान्, सौख्यवान्, भोगवान् कि जिसके समीप सदैव धन रहता है ऐसा पुत्र पैदा होता है और यदि आकाशतत्त्व में गर्भाधान हो तो गर्भही विनष्ट होजाता है ॥ ६७ ॥

माहेन्द्रे सुसुतोत्पत्तिर्वारुणे दुहिता भवेत् ।
शेषेषु गर्भहानिः स्याज्जातमात्रस्य वा मृतिः ॥ ६८ ॥

यदि पृथ्वीतत्त्व में गर्भाधान होवे तो पुत्रकी उत्पत्ति होती है यदि जलतत्त्व में गर्भ रहे तो पुत्री होती है और यदि शेषतत्त्वों में गर्भ रहे तो उसकी हानि होजाती है या पैदा होते ही मरजाता है ॥ ६८ ॥

रविमध्यगतश्चन्द्रश्चन्द्रमध्यगतो रविः ।
ज्ञातव्यं गुरुतः शीघ्रं न वेदैः शास्त्रकोटिभिः ॥ ६९ ॥

सूर्यस्वर के मध्य में चन्द्रस्वर की व चन्द्रस्वर के बीच में सूर्यस्वर की गति गुरु से शीघ्र जानना चाहिये क्योंकि वह गति वेदों व करोड़ों शास्त्रों से भी नहीं जानी जाती है ॥ ६९ ॥

चैत्रशुक्लप्रतिपदि प्रातस्तत्त्वविभेदतः ।
पश्येद्विचक्षणो योगी दक्षिणे चोत्तरायणे ॥ ३०० ॥

चैत्रमास शुक्लपक्ष प्रतिपदा को प्रभात के समय तत्त्वों के विचार से दक्षिणायन और उत्तरायण का फल चतुरयोगी को देखना चाहिये यानी तत्त्वों के विभेद से सालभरे का फल बता देना चाहिये ॥ ३०० ॥

चन्द्रोदयस्य वेलायां वहमानोऽथ तत्त्वतः ।
पृथिव्यापस्तथा वायुः सुभिक्षं सर्वसस्यजम् ॥ १ ॥

चन्द्रस्वर के उदय के समय यदि पृथ्वी, जल और वायुतत्त्व बहता हो तो सब खेती बारी के लिये सुभिक्ष होता है ॥ १ ॥

तेजोव्योम्नोर्भयं घोरं दुर्भिक्षं कालतत्त्वतः ।
एवं तत्त्वफलं ज्ञेयं वर्षे मासे दिनेष्वपि ॥ २ ॥

यदि चन्द्रोदय के समय अग्नि और आकाशतत्त्व बहता हो तो घोरभय और अकाल पड़ता है इस भांति समय के तत्त्वानुसार वर्ष, मास और दिनों में भी समस्त तत्त्वों का फल जानना चाहिये ॥ २ ॥

मध्यमा भवति क्रूरा दुष्टा सर्वेषु कर्मसु ।
देशभङ्गमहारोगक्लेशकष्टादिदुःखदा ॥ ३ ॥

मध्यमा (सुषुम्ना) नाड़ी क्रूर व सब कर्मों में बुरी होकर देशभङ्ग, महारोग, क्लेश और कष्टआदि दुःखों की देनेवाली होती है ॥ ३ ॥

मेषसंक्रान्तिवेलायां स्वरभेदं विचारयेत् ।
सँव्वत्सरफलं ब्रूयाल्लोकानां तत्त्वचिन्तकः ॥ ४ ॥

यदि मेषकी संक्रान्ति के समय स्वरभेद का विचार करे तो तत्त्वचिन्तक योगीजन लोगों से साल भरे का फल कहसक्ता है ॥ ४ ॥

पृथिव्यादिकतत्त्वेन दिनमासाब्दजं फलम् ।
शोभनं च यथा दुष्टं व्योममारुतवह्निभिः ॥ ५ ॥

मेषसंक्रान्ति के समय पृथ्वीआदिक तत्त्वों से दिन, मास और वर्ष का फल भला जानना चाहिये और आकाश, वायु व अग्नितत्त्वों से निन्दित फल कहना चाहिये ॥ ५ ॥

सुभिक्षं राष्ट्रवृद्धिः स्याद्बहुसस्या वसुन्धरा ।
बहुवृष्टिस्तथा सौख्यं पृथ्वीतत्त्वं वहेद्यदि ॥ ६ ॥

यदि मेषसंक्रान्ति के दिन पृथ्वीतत्त्व बहता हो तो सुभिक्ष, देशवृद्धि, अधिक धान्य वाली पृथ्वी, घनी वृष्टि और बड़ा सुख होता है ॥ ६ ॥

अतिवृष्टिः सुभिक्षं स्यादारोग्यं सौख्यमेव च ।
बहुसस्या तथा पृथ्वी अप्तत्त्वं वै वहेद्यदि ॥ ७ ॥

यदि जलतत्त्व बहता हो तो महावृष्टि, सुकाल, आरोग्य, सौख्य और पृथ्वी अधिक धान्यवाली होती है ॥ ७ ॥

दुर्भिक्षं राष्ट्रभङ्गः स्यादुत्पत्तिश्च विनश्यति ।
अल्पादल्पतरा वृष्टिरग्नितत्त्वं वहेद्यदि ॥ ८ ॥

यदि मेषसंक्रान्ति के दिवस अग्नितत्त्व बहता हो तो अकाल पड़ता है, देशका भङ्ग होजाता है, उपज की क्षय होती है और वर्षा बहुत ही कम होती है ॥ ८ ॥

---

१ बसा हुआ देश या मुल्क ॥

उत्पातोपद्रवा भीतिरल्पा वृद्धिः स्युरीतयः ।
मेषसंक्रान्तिवेलायां वायुतत्त्वं वहेद्यदि ॥ ९ ॥

यदि मेष की संक्रान्ति के समय वायुतत्त्व बहता हो तो उत्पात, उपद्रव, भीति, थोड़ी सी वृद्धि और ईतियां होती हैं ॥ ९ ॥

मेषसंक्रान्तिवेलायां व्योमतत्त्वं वहेद्यदि ।
तत्रापि शून्यता ज्ञेया सस्यादीनां सुखस्य च ॥ १० ॥

यदि मेषकी संक्रान्ति के समय आकाशतत्त्व बहता हो तो धान्य आदि और सुखकी शून्यता जानना चाहिये ॥ १० ॥

पूर्णप्रवेशने श्वासे सस्यं तत्त्वेन सिद्धयति ।
सूर्यचन्द्रेऽन्यथाभूते संग्रहः सर्वसिद्धिदः ॥ ११ ॥

यदि श्वासका पूर्णप्रवेश होजावे तो तत्त्व से धान्य की सिद्धि होती है और यदि तत्त्वोदय के समय सूर्य व चन्द्रस्वर विपरीत होवें यानी चन्द्र के योगमें सूर्यस्वर व सूर्य के योग में चन्द्रस्वर बहता हो तो अन्न का संग्रह सर्वसिद्धिदायक होता है ॥ ११ ॥

विषमे वह्नितत्त्वं स्याज्ज्ञायते केवलं नभः ।
तत्कुर्याद्वस्तुसंग्राहो द्विमासे च महर्घता ॥ १२ ॥

यदि दक्षिणस्वर में अग्नितत्त्व या केवल आकाशतत्त्व ही जाना जाता हो तो वस्तुओं का संग्रह करे क्योंकि दो महीने में महँगी पड़ेगी उससे बड़ा लाभ होगा ॥ १२ ॥

रवौ संक्रमते नाडी चन्द्रमन्ते प्रसर्पिता ।
खानिले वह्नियोगेन रौरवं जगतीतले ॥ १३ ॥

यदि रात्रि के समय सूर्य की नाड़ी बहती हो और प्रभात के समय चन्द्रमा की नाड़ी चलती हो और उसी समय आकाश, वायु और अग्नितत्त्व का योग हो तो पृथ्वीतल में बड़ा अनर्थ होता है ॥ १३ ॥

इति संवत्सरप्रकरणम् ॥

अथ रोगप्रकरणम् ।

महीतत्त्वे स्वरोगश्च जले च जलमातृतः ।
तेजसि खेटवाटीस्थशाकिनीपितृदोषतः ॥ १४ ॥

यदि रोगप्रश्न के समय पृथ्वीतत्त्व बहता हो तो अपने पापसे रोग होता है और यदि जलतत्त्व चलता हो तो जलमातृकाओं के दोष से बाधा होती है और यदि अग्नितत्त्व बहता हो तो खेटवाटी में टिकी शाकिनी या पितरों के दोष से पीड़ा उपजती है ॥ १४ ॥

आदौ शून्यगतो दूतः पश्चात्पूर्णे विशेद्यदि ।
मूर्च्छितोऽपि ध्रुवं जीवेद्यदर्थं प्रतिपृच्छति ॥ १५ ॥

यदि प्रश्न करनेवाला दूत पहले शून्य अङ्गकी तरफ़ आया हो व पीछे से पूर्णाङ्ग की तरफ़ बैठजावे तो जिस रोगी के लिये पूछता है वह मूर्च्छित भी होगया हो तो भी निश्चय से जीता है ॥ १५ ॥

यस्मिन्नङ्गे स्थितो जीवस्तत्रस्थः परिपृच्छति ।
तदा जीवति जीवोसौ यदि रोगैरुपद्रुतः ॥ १६ ॥

· जिस अङ्ग में प्राणवायु टिका हो उसी तरफ़ बैठा हुआ दूत जिस रोगी को पूछता है वह यदि रोगों से घिर भी गया हो तो भी जीता है ॥ १६ ॥

दक्षिणेन यदा वायुर्दूतो रौद्राक्षरो वदेत् ।
तदा जीवति जीवोऽसौ चन्द्रे समफलं भवेत् ॥ १७ ॥

यदि दाहिने स्वर से वायु बहता हो उसी समय आया हुआ दूत मुख से भयानक वचनों को बोले तो वह जीव जीता है और यदि चन्द्रस्वर चलता हो तो समान फल होताहै ॥ १७ ॥

जीवाकारं च वा धृत्वा जीवाकारं विलोक्य च ।
जीवस्थो जीवितप्रश्ने तस्य स्याज्जीवितं फलम् ॥ १८ ॥

जीवाकार को धारकर और जीवाकार को देखकर जिस तरफ़ प्राणवायु बहता हो उस तरफ़ बैठा हुआ दूत जीवित का प्रश्न करे तो उस रोगी का जीवित फल होता है ॥ १८ ॥

वामचारे तथा दक्षप्रवेशे यत्र वाहने ।
तत्रस्थः पृच्छते दूतस्तस्य सिद्धिर्न संशयः ॥ १९ ॥

वामनाड़ी (इडा) तथा दक्षिणनाड़ी (पिङ्गला) इन दोनों के चलने या प्रवेश करने के समय जिस तरफ़ का स्वर बहता हो उसी तरफ़ बैठा हुआ दूत जिस रोगी को पूछता है उसकी निस्सन्देह सिद्धि होती है ॥ १९ ॥

प्रश्ने चाधस्थितो जीवो नूनं जीवोहि जीवति ।
ऊर्ध्वचारस्थितो जीवो जीवो याति यमालयम् ॥ २० ॥

---

१ प्राणधारणं करोति २ यमलोकम् ॥

यदि प्रश्न के समय दूत अधोभाग में बैठा हो तो वह रोगी निश्चय कर जीता है और दि दूत ऊपरले भाग में टिका हो तो जीव यमालय को जाता है ॥ २० ॥

विषमाक्षरयुते प्रश्ने रिक्तायां पृच्छको यदि।
विपर्ययं च विज्ञेयं विषमस्योदये सति ॥ २१ ॥

यदि विषम नाड़ी (सुषुम्ना) का उदय हो और प्रश्नकर्ता रिक्तनाड़ी में प्रश्न करे कि जिसके अक्षर विषम हों तो विपरीत फल जानना चाहिये ॥ २१ ॥

चन्द्रस्थाने स्थितो जीवः सूर्यस्थाने तु पृच्छकः।
तदा प्राणवियुक्तोसौ यदि वैद्यशतैर्वृतः ॥ २२ ॥

यदि प्राणवायु चन्द्रमाके चारमें टिकी हो और पूछनेवाला सूर्य के चार में बैठा हो तो वह रोगी चाहे सैकड़ों वैद्यों से घिरा भी हो तो भी मरजाता है ॥ २२ ॥

पिङ्गलायां स्थितो जीवो वामे दूतस्तु पृच्छति।
तदापि म्रियते रोगी यदि त्राता महेश्वरः ॥ २३ ॥

यदि प्राणवायु पिङ्गला नाड़ी में टिकी हो और दूत वामभाग में पूछता हो तो भी रोगी मरजाता है चाहे महादेव भी रक्षा क्यों न करें ॥ २३ ॥

एकस्य भूतस्य विपर्ययेण रोगाभिभूतिर्भवतीह पुंसाम्।
तयोर्द्वयोर्बन्धुसुहृद्विपत्तिः पक्षद्वये व्यत्ययतो मृतिः स्यात् ॥ २४ ॥

एक तत्त्व के विपरीत होने से पुरुषों को रोग पीड़ित करते हैं और दो तत्त्वों के विपरीत होनेसे बन्धुओं व मित्रों से विपदा आकर घेरती है और यदि मासपर्यन्त व्यत्यय चलाजावे तो मरण ही होजाता है ॥ २४ ॥

इति रोगप्रकरणम् ॥

अथ कालप्रकरणम्।

मासादौ चैव पक्षादौ वत्सरादौ यथाक्रमम्।
क्षयकालं परीक्षेत[1] वायुचारवशात्सुधीः[2] ॥ २५ ॥

मास, पक्ष और वर्ष इनके आदि में क्रमसे विद्वान् योगी वायुचार के वश से मरण समय की परीक्षा करे ॥ २५ ॥

पञ्चभूतात्मकं दीपं शिवस्नेहेन सिञ्चितम्।

---

१ परितः पश्येत् २ सुष्ठुध्यायति- शोभनाधीर्यस्येति वा ॥

रक्षयेत्सूर्यवातेन प्राणी जीवः स्थिरो भवेत् ॥ २६ ॥

. शिवरूप तैलसे सींचेहुए पञ्चभूतवाले दीप (देह) को जो प्राणी सूर्यरूप वायुसे रक्षा करता है उसका जीव स्थिर बनारहता है ॥ २६ ॥

मारुतं बन्धयित्वा तु सूर्यं बन्धयते यदि ।
अभ्यासाज्जीवते जीवः सूर्यकालेऽपि वञ्चिते ॥ २७ ॥

जो मनुष्य प्राणवायु को बांध कर दिन भर सूर्य स्वर को बांधे रहता है इस भांति जब अभ्यास के बल से सूर्यकाल भी वञ्चित होजाता है तब जीव जीवित रहता है ॥ २७ ॥

गगनात्स्रवते चन्द्रः कायपद्मानि सिञ्चयेत् ।
कर्मयोगात्सदाभ्यासैरमरः शशिसंश्रयात् ॥ २८ ॥

आकाश से झिरता हुआ चन्द्रमा कायारूप पद्मों को सींचता है इस प्रकार योगी चन्द्रमा का आश्रय लेने से सदा अभ्यास के द्वारा अमर होजाता है ॥ २८ ॥

शशाङ्कं वारयेद्रात्रौ दिवा वार्यो दिवाकरः ।
इत्यभ्यासरतो नित्यं स योगी नात्र संशयः ॥ २६ ॥

जो रात्रिमें चन्द्रस्वर और दिनमें सूर्यस्वर को वराता है इस भांति सदैव अभ्यास में लगारहता है वह निस्सन्देह योगी कहलाता है ॥ २६ ॥

अहोरात्रे यदैकत्र वहते यस्य मारुतः ।
तदा तस्य भवेन्मृत्युः संपूर्णे वत्सरत्रये ॥ ३० ॥

जिसका प्राणवायु दिन रात एकही स्थानमें बहता रहे तो उस मनुष्य की पूरे तीन वर्षमें ही मृत्यु होजाती है ॥ ३० ॥

अहोरात्रद्वयं यस्य पिङ्गलायां सदागतिः[1] ।
तस्य वर्षद्वयं प्रोक्तं जीवितं तत्त्ववेदिभिः ॥ ३१ ॥

जिसका प्राणवायु दो दिन रात लगातार पिङ्गलानाड़ी मेंही बहता रहे उसका जीवन तत्त्ववेत्ताओंने दो वर्षका कहा है ॥ ३१ ॥

त्रिरात्रे वहते यस्य वायुरेकपुटे स्थितः ।
तदा संवत्सरायुस्तं प्रवदन्ति मनीषिणः ॥ ३२ ॥

---

१ "श्वसनः स्पर्शनो वायुर्मातरिश्वा सदागतिः" (इत्यमरः) ॥

जिस मनुष्यका प्राणवायु एकही नासापुट में तीनराल पर्यन्त बहतारहे तो पण्डितलोग
सकी आयुर्दाय सालभरे की कहते हैं॥ ३२॥

रात्रौ चन्द्रो दिवासूर्यो वहेद्यस्य निरन्तरम्।
जानीयात्तस्य वै मृत्युः षण्मासाभ्यन्तरे भवेत्॥ ३३॥

जिस मनुष्य का रात्रि में चन्द्रस्वर और दिन में सूर्यस्वर लगातार बहता रहे
ो उसकी मृत्यु छः महीना के भीतर ही होजाती है ऐसा जानना चाहिये॥ ३३॥

लक्ष्ये लक्षितलक्षणेन सलिले भानुर्यदा दृश्यते
क्षीणो दक्षिणपश्चिमोत्तरपुरः षट्त्रिद्विमासैकतः।
मध्यं छिद्रमिदं भवेद्दशदिनं धूमाकुलं तद्दिने
सर्वज्ञैरपि भाषितं मुनिवरैरायुः प्रमाणं स्फुटम्॥ ३४॥

लखे हुए लक्षणवाले पुरुष को लक्ष्यरूप जलमें जब सूर्य का मण्डल दक्षिण,
श्चिम, उत्तर व पूर्व की तरफ कटा हुआ देख पड़ता हो तो क्रमसे छः तीन दो और
क मास की आयुर्दाय समझनी चाहिये यानी दक्षिण में कटा सा दीखे तो छः मास,
श्चिम में तीन मास, उत्तर में दो मास और पूर्व में एक मास की आयु कहना उचित
। यदि मण्डल के मध्य में छेद दीखे तो दशदिन की आयु जानना चाहिये और
दि पूर्णमण्डल में धुवां सा प्रतीत होता हो तो उसी दिन मृत्यु होती है यह सर्वज्ञाता
निवरों ने आयुर्दाय का प्रकट प्रमाण कहा है॥ ३४॥

दूतः कृष्णकषायकृष्णवसनो दन्तक्षतो मुण्डित-
स्तैलाभ्यक्तशरीररज्जुककरो दीनश्च पूर्णोत्तरः।
भस्माङ्गारकपालपाशमुशलीसूर्यास्तमायाति यः
काली शून्यपदस्थितो गदयुतः कालानलस्यादृतः॥ ३५॥

यदि पूछनेवाला दूत काले या भगवें कपड़े पहने हो कि जिसके दांतों में घाव हो
शीश मुँड़ाये हो व बदन में तेल लगाये हो व हाथ में रस्सी लिये हो व दीन हो व
त्तर देने में समर्थ और भस्म, अँगार, कपाल व मूसल को धारे कालाव नङ्गे पैरोंवाला
होकर सूर्यास्त के समय पूछने को आवे तो रोगी कालानल से आदर किया जाता यानी
रजाता है॥ ३५॥

अकस्माच्चित्तविकृतिरकस्मात्पुरुषोत्तमः।
अकस्मादिन्द्रियोत्पातः सन्निपाताग्रलक्षणम्॥ ३६॥

जिस रोगी के चित्त में एकाएकी विकार आजावे व अकस्मात् पुरुषों में उत्तम होजावे व अकस्मात् इन्द्रियों में उत्पात देखेजावें तो यह सन्निपात का पूर्व लक्षण होता है॥ ३६॥

शरीरं शीतलं यस्य प्रकृतिर्विकृता भवेत्।
तदरिष्टं समासेन व्यासतस्तु निबोध मे॥ ३७॥

जिस मनुष्य का शरीर शीतल होगया हो और प्रकृति विकारयुक्त होगई हो यानी स्वभाव बदल गया हो वह अरिष्ट संक्षेप से जानना चाहिये अब विस्तार से मुझ से सुनो॥ ३७॥

दुष्टशब्देषु रमते शुद्धशब्देषु चाप्यति।
पश्चात्तापो भवेद्यस्य तस्य मृत्युर्न संशयः॥ ३८॥

जो मनुष्य बुरे वचनों को बकता हुआ शुद्धशब्दों को बहुतही बोलता है और जिसको पीछे से पछितावा होता है उसकी निस्संदेह मृत्यु होजाती है॥ ३८॥

हुंकारः शीतलो[1] यस्य फूत्कारो वह्निसन्निभः[2]।
महावैद्यो भवेद्यस्य तस्य मृत्युर्भवेद् ध्रुवम्[3]॥ ३९॥

जिस मनुष्य का 'हुंकार' शीतल हो और 'फूत्कार' आगी के समान हो और जिस के पास महावैद्य (बड़ा डाक्टर या हकीम) भी विद्यमान हो तौ भी उसकी मृत्यु निश्चय कर होजाती है॥ ३९॥

जिह्वां विष्णुपदं ध्रुवं सुरपदं सन्मातृकामण्डल-
मेतान्स्वेवमरुन्धतीममृतगुं शुक्रं ध्रुवं वा क्षणम्।
एतेष्वेकमपि स्फुटं न पुरुषः पश्येत्पुरः प्रेषितः
सोऽवश्यं विशतीह कालवदनं संवत्सरादूर्ध्वतः॥ ४०॥

जीभ, आकाश, ध्रुव, देवमार्ग, मातृकामण्डल, अरुन्धती, चन्द्रमा, शुक्र और अगस्ति इन्हों में से एक को भी पहले से भेजा हुआ जो पुरुष प्रकट नहीं देखता है वह वर्षभरे के बाद काल के मुख में अवश्य समाजाता है॥ ४०॥

अरश्मिबिम्बं सूर्यस्य वह्नेः शीतांशुमालिनः।
दृष्ट्वैकादशमासायुर्नरश्चोर्ध्वं न जीवति॥ ४१॥

जो मनुष्य सूर्य, आगी और चन्द्रमाके मण्डलको किरणरहित देखता है वह ग्यारह मासकी आयुवाला होता हुआ उससे अधिक नहीं जीसक्ता है॥ ४१॥

---

१ शीतलतासमेतः २ अग्निसमानः ३ निश्चितम्॥

वाप्यां पुरीषमूत्राणि सुवर्णं रजतं तथा ।
प्रत्यक्षमथवा स्वप्ने दशमासान्न जीवति ॥ ४२ ॥

जो पुरुष स्वप्न अथवा जाग्रत् अवस्था में बावलीके भीतर विष्ठा, मूत्र, सुवर्ण और चांदी को देखता है वह दशमास से अधिक नहीं जीता है ॥ ४२ ॥

क्वचित्पश्यति यो दीपं सुवर्णं च कषान्वितम् ।
विरूपाणि च भूतानि नव मासान्न जीवति ॥ ४३ ॥

जो मनुष्य दीपक व कसौटी पर कसा हुआ सोना और समस्त प्राणियों को कभी कभी विपरीतसा देखता है वह नवमाससे अधिक नहीं जीसक्ता है ॥ ४३ ॥

स्थूलाङ्गोऽपि कृशः कृशोपि सहसा स्थूलत्वमालभ्यते
प्राप्तो वा कनकप्रभां यदि भवेत्क्रूरोऽपि कृष्णच्छविः ।
शूरो भीरु सुधीरधर्मनिपुणः शान्तो विकारी पुमा-
न्नित्येवं प्रकृतिः प्रयाति चलनं मासाष्टकं जीवति ॥ ४४ ॥

जिस पुरुष का स्वभाव ऐसा बदल जावे कि जिससे मोटा हो वह दुबला, जो दुबला वह मोटा व जो क्रूर या काला वर्ण वह सुवर्णसा, जो शूरवीर वह डरपोक, जो धर्मी वह अधर्मी और जो शान्तिमान् वह विकारवान् भासने लगे तो वह आठ महीना पर्यन्त जीता है ॥ ४४ ॥

पीडा भवेत्पाणितले च जिह्वा मूले तथा स्याद्रुधिरं च कृष्णम् ।
विद्धं नच ग्लायति यत्र यष्ट्या जीवेन्मनुष्यः सहि सप्तमासम् ॥ ४५ ॥

जिस पुरुष की हथेली और जीभ के जड़ में पीड़ा होती हो व रुधिर काला पड़गया हो और जिस अङ्ग में लाठी से मारागया हो वहां दुखता न हो तो वह मनुष्य सातमास पर्यन्त जीता रहता है ॥ ४५ ॥

मध्याङ्गुलीनां त्रितयं न वक्रं रोगं विना शुष्यति यस्य कण्ठः ।
मुहुर्मुहुः प्रश्नवशेन जाड्यात् षड्भिः स मासैः प्रलयं[1] प्रयाति ॥ ४६ ॥

जिस मनुष्य की बीचकी तीन अंगुलियां न मुड़तीहों व रोग के विना कण्ठ (गला) सूखता हो और बारम्बार पूछने से जड़ता होजावे यानी पूर्वापर का अनुसन्धान न रहे तो वह छः मास में मरजाता है ॥ ४६ ॥

---

१ विनाशं प्राप्नोति ॥

न यस्य स्मरणं किञ्चिद्विद्यते स्तनचर्मणि ।
सोऽवश्यं पञ्चमे मासि स्कन्धारूढो भविष्यति ॥ ४७ ॥

जिसके देहकी खाल में कुछ स्मरण नहीं रहता है यानी चाम शून्य पड़जाती है वह मनुष्य पांचवें महीना में अवश्य चार जनों के कन्धेपर चढ़ा हुआ जाता है यानी मरजाताहै ॥ ४७ ॥

यस्य न स्फुरति ज्योतिः पीड्यते नयनद्वयम् ।
मरणं तस्य निर्दिष्टं चतुर्थे मासि निश्चितम् ॥ ४८ ॥

जिसकी आंखों की ज्योति फुरती न हो और दोनों नेत्रों में पीड़ा होती हो तो उस का मरण चौथे मास में अवश्य कहा है ॥ ४८ ॥

दन्ताश्च वृषणौ यस्य न किञ्चिदपि पीड्यते ।
तृतीयं मासमावश्यं कालाज्ञायां भवेन्नरः ॥ ४९ ॥

जिस मनुष्य के दांत और अण्डकोश दबाने परभी कुछ पीड़ित न होते हों तो वह तीसरे मास में अवश्य ही कालकी आज्ञा में होजावेगा ॥ ४९ ॥

कालो दूरस्थितो वापि येनोपायेन लक्ष्यते ।
तं वदामि समासेन यथादिष्टं शिवागमे ॥ ५० ॥

दूरपर टिका हुआ भी काल जिस उपाय से लखाजाता है, उस उपाय को मैं शिव शास्त्रानुसार संक्षेप से कहता हूं कि ॥ ५० ॥

एकान्तं विजनं गत्वा कृत्वाऽऽदित्यं च पृष्ठतः ।
निरीक्षयेन्निजच्छायां कण्ठदेशे समाहितः ॥ ५१ ॥

एकान्त विजन वन में जाकर सूर्य को पीठ देकर सावधान होता हुआ जो मनुष्य अपनी छाया को कण्ठदेश में निहारता है ॥ ५१ ॥

ततश्चाकाशमीक्षेत ह्रीं परब्रह्मणे नमः ।
अष्टोत्तरशतं जप्त्वा ततः पश्यति शंकरम् ॥ ५२ ॥

और आकाश को देखता हुआ "ॐ ह्रीं परब्रह्मणे नमः" इस मन्त्र को एकसौ आठ वार जपता है वह शंकर जी का दर्शन करता है ॥ ५२ ॥

शुद्धस्फटिकसंकाशं नानारूपधरं हरम् ।

---

१ कथितम् ॥

षण्मासाभ्यासयोगेन भूचराणां पतिर्भवेत्॥
वर्षद्वयेन तेनाथ कर्ता हर्ता स्वयं प्रभुः॥ ५३॥

कि जिनका शरीर साफ़ बिल्लौर पत्थर के समान सफ़ेद सोहता है जो कि अनेकानेक रूपों को धरते हुए पापों को हरते हैं इस भांति छः मास अभ्यास करने से योगी प्राणियों का स्वामी होता है और दो वर्ष अभ्यास रखने से कर्ता व हर्ता होकर स्वयं प्रभु हो जाता है॥ ५३॥

त्रिकालज्ञत्वमाप्नोति परमानन्दमेव च।
सतताभ्यासयोगेन नास्ति किञ्चित्सुदुर्लभम्॥ ५४॥

नित्य अभ्यास करने से भूत, भविष्यत्, वर्तमान तीनों कालों का ज्ञान व परम आनन्द को पाता है और कोई ऐसा पदार्थ नहीं जो उसको दुर्लभ हो॥ ५४॥

तद्रूपं कृष्णवर्णं यः पश्यति व्योम्नि[1] निर्मले।
षण्मासान्मृत्युमाप्नोति स योगी नात्र संशयः॥ ५५॥

निर्मल आकाश में जो योगी उस पूर्वोक्त शिवरूप को कालावर्ण देखता है वह निःसन्देह छः मास में मृत्यु को पाता है॥ ५५॥

पीते व्याधिर्भयं रक्ते नीले हानिं विनिर्दिशेत्।
नानावर्णेऽथ चेत्तस्मिन्सिद्धश्च गीयेते[2] महान्॥ ५६॥

पीला देखे तो व्याधि, लाल देखे तो भय, नीला देखे तो हानि कहना चाहिये और यदि नानावर्ण देखे तो वह योगी बड़ा भारी सिद्ध गाया जाता है॥ ५६॥

पादे गुल्फे[3] च जठरे[4] विनाशः क्रमशो भवेत्।
विनश्यतो यदा बाहू स्वयन्तु म्रियते ध्रुवम्॥ ५७॥

यदि छाया में क्रम से पांव, टखना और पेट को नहीं देखता है तो उस योगी का विनाश होजाता है अथवा भुजाओं को नहीं देखता है तो वह योगी निश्चय कर आपही मरजाता है॥ ५७॥

वामबाहुस्तथा भार्या नश्यतीति न संशयः।
दक्षिणे बन्धुनाशोहि मृत्युं मासं विनिर्दिशेत्[5]॥ ५८॥

यदि बाईं भुजा को न देखे तो निस्संदेह भार्या का विनाश होजाता है और यदि

---

१ आकाशे २ कथ्यते ३ तद्ग्रन्थी घुटिके गुल्फौ ४ उदरे ५ कथयेत्॥

दाहिनी भुजा को न देखे तो बन्धुओं का विनाश होता है और महीना भरे में उस योगी की भी मृत्यु कहना चाहिये ॥ ५८ ॥

अशिरो मासमरणं विना जङ्घे दिनाष्टकम् ।
अष्टाभिः स्कन्दनाशेन छायालोपेन तत्क्षणात् ॥ ५६ ॥

यदि शीश न देखे तो मास भर में, जङ्घा न दीखे तो आठ दिन में, कन्धों को न देखे तो भी आठ दिन में मरण होता है और यदि छाया का लोप होजाता है तो उसी क्षण में योगी मरजाता है ॥ ५६ ॥

प्रातः पृष्ठगते रवौ च निमिषाच्छायाङ्गुलीश्चाधरं
दृष्ट्वार्धेन मृतिस्त्वनन्तरमहोच्छायां नरः पश्यति ।
तत्कर्णांसकरास्यपार्श्वहृदयाभावेक्षणार्धात्स्वयं
दिङ्मूढो हि नरः शिरो विगमतो मासांस्तु षड् जीवति ॥ ६० ॥

जो पुरुष प्रभातसमय सूर्य को पीठ की तरफ़ देकर छाया पुरुष की अंगुलियों व ओठों को नहीं देखता है वह निमिषमात्र में मरजाता है और जो छाया को ही नहीं देखता है वह आधे निमिष में मरता है और जो छाया के कान, कन्धे, हाथ, मुख, पार्श्व और हृदय को नहीं देखता है तो उसका आधे क्षण में मरण होजाता है और जो छाया का शीश नहीं देखता है व जिसमें दिशाओं का ज्ञान नहीं रहता है वह छः मास पर्यन्त जीता रहता है ॥ ६० ॥

एकादिषोडशाहानि यदि भानुर्निरन्तरम् ।
वहेद्यस्य च वै मृत्युः शेषाहेन च मासिके ॥ ६१ ॥

यदि मास के पहले दिनसे लेकर सोलह दिन पर्यन्त जिसका सूर्यस्वर ही लगातार बहता रहे तो उसकी मृत्यु शेष दिन में होजाती है ॥ ६१ ॥

संपूर्णं वहते सूर्यश्चन्द्रमा नैव दृश्यते ।
पक्षेण जायते मृत्युः कालज्ञानेन भाषितम् ॥ ६२ ॥

जिस मनुष्य का सूर्यस्वर ही पूरा बहता रहे और चन्द्रस्वर न देखा जाता हो तो उस की मृत्यु पक्षभर में होजाती है यह कालज्ञाताओं ने कहा है ॥ ६२ ॥

मूत्रं पुरीषं वायुश्च समकालं प्रवर्तते ।
तदाऽसौ चलितो ज्ञेयो दशाहे म्रियते ध्रुवम् ॥ ६३ ॥

जिस पुरुषके मूत्र, मल और वायु एकही बार निकलते हैं तो उसको चलित जानना चाहिये और वह दश दिन में अवश्य ही मरजाता है ॥ ६३ ॥

संपूर्णं वहते चन्द्रः सूर्यो नैव च दृश्यते ।
मासेन जायते मृत्युः कालज्ञेनानुभाषितम् ॥ ६४ ॥

जिस मनुष्य का चन्द्रस्वरही पूरा वहता रहे और सूर्यस्वर न देखाजाता हो तो उसकी मृत्यु एकमास में होजाती है ऐसा कालवेत्ताओं ने कहा है ॥ ६४ ॥

अरुन्धतीं ध्रुवं चैव विष्णोस्त्रीणि पदानि च ।
आयुर्हीना न पश्यन्ति चतुर्थं मातृमण्डलम् ॥ ६५ ॥

अरुन्धती, ध्रुव, विष्णुपद और चौथा मातृमण्डल इनको आयुहीन लोग नहीं देखते हैं ॥ ६५ ॥

अरुन्धती भवेज्जिह्वा ध्रुवो नासाग्रमेव च ।
भ्रुवौ विष्णुपदं ज्ञेयं तारकं मातृमण्डलम् ॥ ६६ ॥

जिह्वा को अरुन्धती, नासिका के अग्रभाग को ध्रुव, भौंहों को विष्णुपद और नेत्रस्थ तारा को मातृमण्डल कहते हैं ॥ ६६ ॥

नवभ्रुवं सप्तघोषं पञ्चतारां त्रिनासिकाम् ।
जिह्वामेकदिनं प्रोक्तं म्रियते मानवो ध्रुवम् ॥ ६७ ॥

यदि भौंहों को न देखे तो नवदिन में, कानों का शब्द न सुने तो सात दिन में, चक्षुस्थ तारा को न देखे तो पांच दिन में, नासा को न देखे तो तीन दिन में और जीभ को न देखे तो मनुष्य एक दिन में निश्चय कर मरजाता है ॥ ६७ ॥

कोणावक्ष्णोरङ्गुलिभ्यां किञ्चित्पीड्य निरीक्षयेत् ।
यदा न दृश्यते बिन्दुर्दशाहेन भवेन्मृतः ॥ ६८ ॥

आंखों के कोनों को अंगुलियों से कुछेक दबाकर निहारे यदि दबाने से जलका बिन्दु न देख पड़ता हो तो वह मनुष्य दश दिवस में मृतक होजाता है ॥ ६८ ॥

तीर्थस्नानेन दानेन तपसा सुकृतेन च ।
जपैर्ध्यानेन योगेन जायते कालवञ्चना ॥ ६९ ॥

तीर्थों में स्नान, दान, तपस्या, पुण्य, जप, ध्यान और योग करने से काल की वञ्चना होजाती है यानी ऊपर आया हुआ भी काल टलजाता है ॥ ६९ ॥

शरीरं नाशयन्त्येते दोषा धातुमलास्तथा ।
समस्तु वायुर्विज्ञेयो बलतेजोविवर्धनः ॥ ७० ॥

धातु व मल आदि ये दोष शरीर को विनष्ट कर देते हैं और सम वायु बल व तेज का बढ़ानेवाला जानना चाहिये ।। ७० ।।

रक्षणीयस्ततो देहो यतो धर्मादिसाधनम् ।
योगाभ्यासत्वमायान्ति साधिजप्यास्तु साध्यताम् ॥
असाध्या जीवितं घ्नन्ति न तत्रास्ति प्रतिक्रिया ॥ ७१ ॥

उसी से देह की रक्षा करनी चाहिये कि जिससे धर्म आदिकों का साधन होता है और साधिजप्य साध्यता को साधते हुए योगाभ्यास को प्राप्त होते हैं और असाध्य होते हुए जीवन को विनाशते हैं इसलिये उसका कोई प्रतीकार नहीं है ॥ ७१ ॥

येषां हृदि स्फुरति शाश्वतमद्धितीयं
तेजस्तमोनिवहनाशकरं रहस्यम् ।
तेषामखण्डशशिरम्यसुकान्तिभाजां
स्वप्नेऽपि नो भवति कालभयं नराणाम् ॥ ७२ ॥

जिनके हृदय में अनादि, अद्वितीय, अन्धकारसमूहनाशक, गोपनीय तेज (शिव-स्वरोदयज्ञान) फुरता है उन अखण्डित चन्द्रसम रमणीय सुकान्तिभाजी नरों के स्वप्न में भी कालकी भय नहीं रहती है ॥ ७२ ॥

इडा गङ्गेति विज्ञेया पिङ्गला यमुना नदी ।
मध्ये सरस्वतीं विद्यात्प्रयागादिसमस्तथा ॥ ७३ ॥

इडा नाड़ी गङ्गा, पिङ्गलानाड़ी यमुनानदी और बीचकी सुषुम्ना नाड़ी सरस्वती जाननी चाहिये और इन तीनों नाड़ियों के संगम को प्रयाग आदि के समान समझना उचित है ॥ ७३ ॥

आदौ साधनमाख्यातं सद्यः प्रत्ययकारकम् ।
बद्धपद्मासनो योगी बन्धयेदुड्डियानकम् ॥ ७४ ॥

आदिमें साधनकोही शीघ्र प्रत्ययकारक कहा है इसलिये पद्मासनको बांधेहुए योगी उड्डियानक नामक आसनको बांधे यानी अपानकी गतिको ऊपर करके नाभिरन्ध्रके समीप लावे ॥ ७४ ॥

पूरकः कुम्भकश्चैव रेचकश्च तृतीयकः ।
ज्ञातव्यो योगिभिर्नित्यं देहसंशुद्धिहेतवे ॥ ७५ ॥

पूरक, कुम्भक और तीसरा रेचक ये तीनों प्राणायाम योगियों को देहकी शुद्धिके लिये सदैव जानना चाहिये ॥ ७५ ॥

पूरकः कुरुते वृष्टिं धातुसाम्यं तथैव च ।
कुम्भके स्तम्भनं कुर्याज्जीवरक्षाविवर्धनम् ॥ ७६ ॥

उन तीनों में से पूरक प्राणायाम (बाहर की वायु को भीतर खींचना) वृष्टि से देह को सींचता है और समस्त धातुओं को समान करता है और कुम्भक प्राणायाम (बाहर भीतर की वायु को स्थिर रखना) देहकी धातुओं का स्तम्भन (जहां की तहां रखना) करता है और जीवरक्षा का बढ़ानेवाला होता है ॥ ७६ ॥

रेचको हरते पापं कुर्याद्योगपदं व्रजेत् ।
पश्चात्संग्रामवत्तिष्ठेल्लयबन्धं च कारयेत् ॥ ७७ ॥

रेचक प्राणायाम (भीतर की वायु बाहर निकालना) पाप को हरता है इस भांति जो प्राणायाम करता है वह योगपद को पाता है और जो पीछे से संग्राम के समान टिकता है वह लयबन्ध कोभी करासक्ता है ॥ ७७ ॥

कुम्भयेत्सहजं वायुं यथाशक्ति प्रकल्पयेत् ।
रेचयेच्चन्द्रमार्गेण सूर्येणापूरयेत्सुधीः ॥ ७८ ॥

बुद्धिमान् मनुष्य स्वाभाविक वायु को अपनी शक्ति के अनुसार कुम्भक प्राणायाम से रोके व चन्द्रस्वर से रेचक करे और सूर्यस्वर से पूरक प्राणायाम को करे ॥ ७८ ॥

चन्द्रं पिबति सूर्यश्च सूर्यं पिबति चन्द्रमाः ।
अन्योन्यकालभावेन जीवेदाचन्द्रतारकम् ॥ ७९ ॥

जिसके चन्द्रस्वर को सूर्यस्वर और सूर्यस्वर को चन्द्रस्वर परस्पर समय समय पर पीता है वह चन्द्रमा व तारों की स्थिति पर्यन्त जीता है ॥ ७९ ॥

स्वीयाङ्गे बहते नाडी तन्नाडीरोधनं कुरु ।
मुखबन्धममुञ्चन्वै पवनं जायते युवा ॥ ८० ॥

अपने अङ्ग में जो नाड़ी बहती हो उसको रोककर व मुखको बांध कर जो योगी पवन को नहीं छोड़ता है वह वृद्ध हुआ भी युवा होजाता है या कि वह योगी सदैव ज्वानही बना रहता है ॥ ८० ॥

---

१ एवं यो योगी प्राणायामत्रयं कुर्यात् २ कुम्भकप्राणायामं कुर्यात् ३ रेचकप्राणायामम् ४ पिङ्गलया पूरयेदिति ॥

मुखनासाक्षिकर्णान्तानङ्गुलीभिर्निरोधयेत् ।
तत्त्वोदयमिति ज्ञेयं षण्मुखीकरणं प्रियम् ॥ ८१ ॥

मुख, नासिका, आंखी और कान पर्यन्त भाग को अंगुलियों से रोके यानी कनिष्ठा व अनामिका से मुँहको, व मध्यमासे नथुनों को, तर्जनी से आंखों को और अँगूठे से कानों को रोकदेवे तो इससे तत्त्वों के उदयका भान होजाता है यह प्यारा षण्मुखीकरण जानना चाहिये ॥ ८१ ॥

तस्य रूपं गतिः स्वादो मण्डलं लक्षणं त्विदम् ।
स[2]वेत्ति मानवो लोके संसर्गादपि मार्गवित्[3] ॥ ८२ ॥

उसका रूप, गति, स्वाद, मण्डल और लक्षण इस सबों को जो मनुष्य लोक में जानता है वह हेलमेल से भी मार्गवेत्ता होजाता है ॥ ८२ ॥

निराशो[4] निष्कलो योगी न किञ्चिदपि चिन्तयेत् ।
वासनामुन्मनां कृत्वा कालं जयति लीलया[5] ॥ ८३ ॥

जो योगी आशारहित व शुद्धरूप होकर किसी पदार्थ की भी चिन्ता नहीं करता है तो वह वासना को त्याग कर लीला (अनायास) से काल को जीतता है ॥ ८३ ॥

विश्वस्य[6] वेदिका शक्तिर्नेत्राभ्यां[7] परिदृश्यते ।
तत्रस्थन्तु मनो यस्य याममात्रं[8] भवेदिह ॥ ८४ ॥
तस्यायुर्वर्धते नित्यं घटिकात्रयमानतः ।
शिवेनोक्तं[9] पुरा तन्त्रे सिद्धस्य गुणगह्वरे ॥ ८५ ॥

विश्वकी जाननेहारी शक्ति नेत्रों से देखी जाती है वहां पर जिसका मन एक पहर मात्र टिकजाता है तो उसकी आयुर्दाय तीन घटियों के प्रमाण से नित्य बढ़ा करती है पुरातन समय सिद्धों के गुणसमूहवाले तन्त्रशास्त्र में शिवजी ने कही है ॥ ८४ । ८५ ॥

बद्धं पद्मासनस्था गुदगतपवनं सन्निरुद्ध्यामुमुच्चै-
स्तं तस्या पानरन्ध्रक्रमजितमनिलं प्राणशक्त्या निरुध्य ।
एकीभूतं सुषुम्ना विवरमुपगतं ब्रह्मरन्ध्रे च नीत्वा
निक्षिप्याकाशमार्गे शिवचरणरता यान्तिते केऽपि धन्याः ॥ ८६ ॥

---

१ नितरामपवारयेदिति २ जानाति ३ मार्गं वेत्तीति मार्गवेत्ता भवतीति ४ निर्गता आशालिप्सायस्मादिति ५ "लीलां विदुः केलिविलासखेलाश्रृंगारभावप्रभवक्रियासु" (इति विश्वप्रकाशः) ६ विशन्ति भूतान्यस्मिन्निति विश्वम् संसारस्तस्य वेदिका ज्ञात्री ७ लोचनाभ्याम् ८ प्रहरमात्रम् ९ सदाशिवेन भणितम् ॥

पद्मासन को बांधकर गुदा में टिके अपानवायु को रोककर उसे ऊंचे को ले जावे व पानरन्ध्रमें जीतेहुए पवनको प्राणशक्ति के साथ रोककर दोनों की एकता करे जब वे नों एक होजावें तब सुषुम्ना नाड़ी के विवर (रन्ध्र) में पहुँचावें फिर ब्रह्मरन्ध्रमें लेकर आकाश मार्ग में छोड़ दें इस भांति शिवजी के चरणों में रतहुए जो कोई योगी ोग मरजाते हैं वे धन्य कहलाते हैं ॥ ८६ ॥

एतज्जानाति यो योगी एतत्पठति नित्यशः।
सर्वदुःखविनिर्मुक्तो लभते वाञ्छितं फलम् ॥ ८७ ॥

जो योगी इस स्वरोदय ज्ञानको जानता है व सदैव पढ़ता है तो वह सर्वदुःखों से ट हुआ वाञ्छितफल को पाता है ॥ ८७ ॥

स्वरज्ञानं नरे यत्र लक्ष्मीः पादतले भवेत्।
सर्वत्र च शरीरेऽपि सुखं तस्य सदा भवेत् ॥ ८८ ॥

जिस मनुष्यमें स्वरका ज्ञान रहता है उसके पादतल में लक्ष्मी वास करती है और सब ानों में उसके शरीरमें सुख सदैव मिलता है ॥ ८८ ॥

प्रणवः[1] सर्ववेदानां ब्राह्मणो[2] भास्करो[3] यथा।
मृत्युलोके तथा पूज्यः स्वरज्ञानी पुमानपि ॥ ८९ ॥

जैसे कि सब वेदों के मध्य में प्रणव (ॐकार) व मृत्युलोक में ब्राह्मण व सूर्य नीय होते हैं वैसेही स्वरज्ञानी पुरुष भी पूज्य होता है ॥ ८९ ॥

नाडीत्रयं विजानाति तत्त्वज्ञानं तथैव च।
नैव तेन भवेत्तुल्यं लक्षकोटिरसायनम् ॥ ९० ॥

जो मनुष्य पूर्वोक्त तीनों नाड़ियों को जानता है और जिसको तत्त्वों का ज्ञान होता है सके समान लाखों व करोड़ों रसायन नहीं हैं ॥ ९० ॥

एकाक्षरप्रदातारं नाड़ीभेदविवेचकम्।
पृथिव्यां नास्ति तद्द्रव्यं यद्दत्त्वा चानृणो भवेत् ॥ ९१ ॥

नाड़ीभेदका विवेचन करनेवाला जो एकाक्षरमात्रका भी दाता हो तो उसके लिये वीमण्डल में वह द्रव्य नहीं है जिसको देकर उऋण होजावे यानी एकाक्षरप्रदाता गुरुसे उद्धार नहीं होसक्ता है ॥ ९१ ॥

---

१ ध्रुवस्तारस्त्रिवृद्ब्रह्मवेदादिस्तारकोऽव्ययः । प्रणवश्च त्रिमात्रोथ ॐकारो ज्योतिरादिमः (इति मात्रिकानिघण्टुः) २ ब्रह्म वेदं वेत्ति जानाति वा ब्राह्मणः ३ भास्कारः सूर्यः ॥

स्वरस्तत्त्वं तथा युद्धं देवि वश्यं स्त्रियस्तथा ।
गर्भाधानं च रोगश्च कलार्धेनैव मुच्यते ॥ ९२ ॥

अहो देवि ! स्वर, तत्त्व, युद्ध, स्त्रियोंका वशीकरण, गर्भाधान और रोग इन सबों का ज्ञान आधी कलासेही कहा जाता है ॥ ९२ ॥

एवं प्रवर्तितं लोके प्रसिद्धं सिद्धयोगिभिः ।
चन्द्रार्कग्रहणे जाप्यपठतां सिद्धिदायकम् ॥ ९३ ॥

इसप्रकार लोक में प्रवृत्त हुआ व सिद्ध योगियों से प्रसिद्ध किया हुआ भी स्वरोदय का ज्ञान चन्द्र व सूर्य के ग्रहण में जपते व पढ़ते हुए जनों को सिद्धिदायक होता है ॥ ९३ ॥

स्वस्थाने तु समासीनो निद्रां चाहारमल्पकम् ।
चिन्तयेत्परमात्मानं यो वेद स भविष्यति ॥ ९४ ॥

जो मनुष्य अपने स्थानपर बैठाहुआ निद्रा व भोजन को अल्प करता व परमात्मा को चिन्तन करता व जानता है वह स्वरज्ञानी होजाता है ॥ ३९४ ॥

इति शिवस्वरोदयाध्यायः ॥

अथ ग्रन्थमुपसंहरन्कविवंशवर्णनमाह ।

शाके शैलगुणाष्टभूपरिमिते वर्षे द्विगोत्राङ्ककौ
भाद्रे मास्यसिते गृहेशतिथिके भूनन्दने वासरे ।
नानाग्रन्थमतानुगोतिविशदो ग्रन्थो मया भाषितो
भूयाद्भव्यतराय सर्वविदुषां सामुद्रिको नित्यशः ॥ १ ॥

शाके १८३७ संवत् १९७२ भाद्रमास कृष्णपक्ष षष्ठी मङ्गलवार दिवस में नानाग्रन्थ मतानुयायी विशदरूप सामुद्रिक ग्रन्थको मैंने कहा है वह सदैव सर्वविद्वान्महोदयों के मङ्गल के लिये होवे ॥ १ ॥

सामुद्रिकं शास्त्रवरं विशुद्धं प्रोक्तं शिवायै शशिशेखरेण ।
आदाय सर्वं भणितं मयैतद् भूयान्मुदे मण्डितपण्डितानाम् ॥ २ ॥

विशुद्ध, शास्त्रों में श्रेष्ठ जिस सामुद्रिकशास्त्र को चन्द्रचूड शिवजीने शिवा (पार्वती) से कहा है वह सब लेकर इस सामुद्रिक को मैंने बनाया है वह गुणगणमण्डित पण्डित महोदयों की प्रीति के लिये होवे ॥ २ ॥

सामुद्रिकं शास्त्रमिदं मनोज्ञं द्वाविंशमब्दं मृगितं नितान्तम् ।
नो देयमेतत्सुधिया कदापि लोकद्रुहां निन्दनतत्पराणाम् ॥ ३ ॥

यह सामुद्रिकशास्त्र मनोज्ञ है कि जिसको बाईसवर्षपर्यन्त , पुराण, अंगरेज़ी, फ़ारसी तथा बंगला व महाराठी आदिकों में अत्यन्त ही गवेषण किया है इसको लोकद्रोही निन्दकजनों के लिये विद्वानों को कदापि नहीं देना चाहिये ॥ ३ ॥

शान्ताय शाक्ताय शिवप्रियाय शिष्याय देयं गुरुभक्तकाय ।
वाणी भवेन्नो विफलः कदापि स्वधर्मपालात्सफलं समस्तम् ॥ ४ ॥

शान्त, शाक्त, शिवप्रिय, गुरुभक्त शिष्य के लिये देना चाहिये उसकी वाणी कदापि निष्फल नहीं होसक्ती है क्योंकि अपने धर्म की पालना से सबही सफल होताहै ॥ ४ ॥

सामुद्रिकाभ्यासपरा नितान्तं सत्येन युक्ताः सरलस्वभावाः ।
सद्धर्मवन्तो मनुजा हि नूनं कीर्तिं लभन्तां विमलां दिगन्ते ॥ ५ ॥

सत्यवान् सरलस्वभाववाले जो मनुष्य सामुद्रिक के अभ्यास में अत्यन्त परायण होवेंगे वे लोग अवश्य सच्चेधर्मवाले होकर दिगन्तों में विमल कीर्ति को पावेंगे ॥ ५ ॥

फलन्ति वाण्यो मनुजस्य तस्य सत्येन युक्तं हृदयं हि यस्य ।
तेनोदितं वै वचनं जनेभ्यः प्राप्नोति सिद्धिं न मृषा कदापि ॥ ६ ॥

जिस मानव का हृदय सत्यसम्पन्न होता है उसकी वाणियां सफल होती हैं उस करके जनों के लिये जो वचन कहा जाता है वह सिद्धि को पाता हुआ झूठा कभी नहीं होसक्ता है ॥ ६ ॥

पठन्तु नित्यं सुधियो महान्तो धनं लभन्तां जनयूथकेभ्यः ।
पुत्रप्रपौत्रादियुता भवन्तु चायुष्यवन्तो नितरामुदाराः ॥ ७ ॥

जो विद्वान्लोग इसको सदैव पढ़ेंगे वे महन्त होकर जनसमूहों से धन को पावेंगे और पुत्र, प्रपौत्र आदिकों से संयुक्त होवेंगे व आयुर्दायवाले होकर बड़ेही उदार गिनेजावेंगे ॥ ७ ॥

श्रीमत्प्राज्ञनरायणेन प्रभुणा सद्धर्मविद्याविदा
सर्वेषामुपकारकाय नितरामाज्ञापितोहं मुदा ।
नाम्ना शक्तिधरः सदाशिवपदद्वन्द्वे रतो नित्यश-
श्चक्रे ग्रन्थमनुत्तमं मतिमतां सामुद्रिकं सौख्यदम् ॥ ८ ॥

श्रीमान् रायबहादुर मुंशी प्रयागनारायणजी भार्गव मेरे स्वामी जोकि सच्चे धर्म व विद्या के जाननेवाले हैं उन्होंसे सबों के उपकार के लिये आज्ञापित, सदाशिवजी के युगल पदारविन्द के सेवक शक्तिधरनामक मैंने मतिमानों को सदैव सौख्यदायक सर्वोत्तम सामुद्रिक ग्रन्थ को बनाया है ॥ ८ ॥

पुरे मुरादाबादाख्ये शुक्लवंशोद्भवः सुधीः ।
आसीद्दुर्गाप्रसादाख्यो बलभद्रस्तु तत्सुतः ॥ ९ ॥
तस्यात्मजः शक्तिधरः शिवपादार्चने रतः ।
चक्रे सामुद्रिकं शास्त्रं सरलं सर्वसम्मतम् ॥ १० ॥

इति श्रीमद्रायबहादुरमुंशीप्रयागनारायणाज्ञापितद्विजवरशक्तिधरसंकलितः सामुद्रिकः समाप्तिं पफाणेति शम् ॥

समाप्तोयं ग्रन्थः ॥

विक्रयार्थ पुस्तकों का सूचीपत्र ।

संग्रहशिरोमणिमूल	२)
सिद्धान्तशिरोमणि गोलाध्याय	१॥)
जातकाभरण मूल	।)
मुहूर्त्तचन्द्रिका	)॥
मुहूर्त्तचिन्तामणिसटीक	।≈)
मुहूर्त्तगणपति	।–)॥
मुहूर्त्तमार्त्तण्ड संस्कृतटीका	।–)।
होरामकरन्द	–)॥।
जातकपारिजातमूल	–)।
स्वप्नविचार	)॥
मुहूर्त्तचक्रदीपिका	–)॥।
ग्रहलाघव	–)
नारचन्द्रदीपिका	≈)
सामुद्रिकसंस्कृत	–)॥
प्रश्नविद्याद्रेष्काणनिरूपण	≋)
नरपतिजयचर्या	।)
समरसार सटीक	≈)
अद्भुततरंगिणी	॥)
बृहत्संहिता अर्थात् वाराहीसंहिता	१।)
तथा	१॥)
कर्मविपाकसंहिता	≋)॥
तथा	॥।)
बालविवेकिनी सटीक	)॥
जातकचन्द्रिका	≋)।
जातकाभरण सटीक	१।)
जातकालंकार सटीक	≈)
तथा सटीक	≋)
तथा भाषा	–)
लग्नचन्द्रिका सटीक	≋)॥।
ज्योतिस्सारावली	–)।
तथा	–)॥
ज्योतिस्सिद्धान्तसारसंग्रह	।)
रमलनवरत्न	–)।
रमलसार	)।
तथा	)॥
दैवज्ञाभरण	

मिलने का पताः—

रायबहादुर मुंशी प्रयागनारायण

मालिक नवलकिशोर प्रे